THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180558

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—902—26-3-70—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83 S56Na Accession No. GH217

Author शुक्ल, रामेश्वर प्रसाद

Title नई इमारत

This book should be returned on or before the date last **marked bel**

नई इमारत

[मौलिक क्रान्तिकारी उपन्यास]

रामेश्वर प्रसाद [illegible]

अंचल

हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन्स,
शाहगंज, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण] १९· [मूल्य ६)

प्रकाशक—
गयाप्रसाद तिवारी, बी० काम०,
अध्यक्ष हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन्स,
शाहगंज, इलाहाबाद ।

मुद्रक—
गयाप्रसाद तिवारी, बी० काम०,
नारायण प्रेस, नारायण बिल्डिंग्स,
शाहगंज, इलाहाबाद ।

प्रकाशकीय—

'चढ़ती धूप' के बाद अंचल का दूसरा उपन्यास प्रकाशित करने का अवसर हमें मिल रहा है। उपन्यास १९४२ के अगस्त आन्दोलन को चित्रित करता है। वह उस नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना पर ज़ोर देता है जिसमें मानव को मानव से अलग करने वाले असहिष्णु धार्मिक और संप्रदायिक संस्कारों का स्थान नहीं होता। इसमें अगस्त क्रान्ति की चेतन, प्रगतिशील शक्ति को पहचान कर तदनुरूप मनोवैज्ञानिक तीव्रता और क्रान्तिकारी अनुभूति का स्वस्थ, तटस्थ चित्रण किया गया है। आज़ादी की लड़ाई और अँगरेज़ी साम्राज्यवाद की राख पर अभिनव भारत का निर्माण उपन्यास के प्रत्येक पात्र के जीवन की प्रेरक शक्ति है। 'नई इमारत' हमारे राष्ट्र को क्रान्तिकारी व्यक्तित्व

प्रदान करने वाली नयी चेतना का वाहक कही जा सकती है।

भाषा और मनोविज्ञान पर अंचल का असाधारण अधिकार है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में शीघ्र ही अपनी नई धारा प्रवाहित कर देंगे ऐसा हमारा विनीत विश्वास है। प्रेम की परिपूर्णता और आत्म-समर्पण और आत्मविस्मरण की जीवन-कल्पना इससे अधिक चटकीले रंगों में शायद नहीं रची जा सकती है। भारतीय जीवन की शाश्वत मान्यताओं को सामाजिक चेतना के स्पंदनशील स्वरों के साथ चित्रित करना अंचल जैसे जागरुक कलाकार का ही काम है।

राष्ट्रीयता की बढ़ती हुई शक्ति और समाजवादी आलोक ने हमारे जातीय जीवन को जो नया स्वरूप दिया है उसकी सबल अभिव्यक्ति महमूद और आरती के चरित्रों में हुई है। दोनों एक नई क़ौमी परम्परा बनाने की धुन में हैं; उन्हें अपनी राह की पहचान भी है।

पराधीन देश में प्रत्येक जागरूक व्यक्ति का जीवन सियासत के साथ चलता है यह बलराज और शीला के चरित्रों से व्यंजित हुआ है। कुशल लेखक के सामने साधन और साध्य का नक्शा बिलकुल साफ़ है। वह युग की माँग को पहचानता है और कोई भी इस प्रकार का निष्कर्ष नहीं निकालना चाहता जिससे क़ौमी अहसास और राष्ट्रीय प्रबोध को कोई धक्का लगे।

अंचल 'चढ़ती धूप' और 'नई इमारत' दोनों में अपने इस

कर्तव्य के प्रति जागरूक हैं। मार्क्सवाद के प्रबल समर्थक होने के कारण ही उन्होंने अपनी कला को किसी वाद के घेरे में परिवेष्ठित न कर केवल जनक्रान्ति की अनुवर्तिनी बनाया है।

हमें विश्वास है कि अगस्त क्रान्ति का विकसित अधिक बुद्धि-संगत और सुदृढ़ रूप ही हमारे राष्ट्र की इस 'नई इमारत' की नींव बनेगा जिसके रोड़े कंकड़ हमारे ये शत शत तरुण तरुणियाँ हैं जिनका जीवन संघर्ष ही प्रस्तुत उपन्यास का प्रेरक रहा है।

—गयाप्रसाद तिवारी

श्रीकृष्णदास और सुश्री सरोजिनीदास को—

[जो अगस्त क्रान्ति की लपटों में बढ़े, मिले
और सदा के लिये बँध गये]

एक

महमूद ने कहा—'तब ? तब क्या हुआ ?'

सन्यासिनी ने मुँह पर आती हुई रूखी अलकों के गुच्छों को पीछे करते हुए कहा—'इसके बाद वे केवल दो वर्ष जीवित रहे। जेल की आदमखोर तनहाई ने—हथकड़ी बेड़ी के कठोर बन्धन ने—कालकोठरी की ज़ुल्मी विभीषिका ने उन्हें तिल तिलकर गला डाला। उन्हें जितनी तकलीफें दी गईं—जिस प्रकार उनके इस्पाती मनोबल को हृदयहीन अत्याचारों से तोड़ा गया वह राक्षसों को भी लज्जित कर देगा। दिसम्बर-जनवरी की खूनी, तूफान उगलती रातों में उन्हें बर्फ की गलती शिलाओं पर लिटाया गया। मई-जून की जलती—भट्टी की तरह फुँकती तन्दूरी दोपहरियों में उन्हें धूप से सुलगती चट्टानों पर लोहे की मोटी जन्जीरों से बाँधकर दिन दिन भर लू और रेगिस्तानी बवंडरों में तिलमिलाने के लिये छोड़ दिया गया.....।'

महमूद ने अपने सलोने मुँह पर घिरी पसीने की बूँदों को कुर्ते दामन से पोंछते हुए कहा—'पर···पर उनका कसूर क्या था ! क्यों उन्हें ज़िलावतन किया गया ! अपने मुल्क की आज़ादी की माँग करना कोई गुनाह नहीं !'

सन्यासिनी ने आम की फाँक जैसी बड़ी दोनों आँखों के कोने से झाँकते एक एक जलबिन्दु को भीतर घुटकते हुए सिक्त किन्तु अस्थिर स्वर से कहा—'वे अपराधी न थे पर अपराधियों के बीच आ फँसे थे। गुलाम देश का प्रत्येक नौजवान अपराधी होता है—प्रत्येक नवयुवती गुनहगार होती है क्योंकि उसके अन्दर आज़ादी की धूनी जलती रहती है। आत्मा के बदले उन्हें अपराध मिलता है। हृदय और चेतना देकर वे मर मिटने का उन्माद खरीदते हैं। अर-

मानों के चीथड़ों के अन्दर विद्रोह की चिनगारी पालते पालते वे परिपक्व व्रण की तरह दण्डनीय हो जाते हैं। वे तो अपराधों के उपनिवेश में—गुनाहों के बदनाम ख़ीमे में अपनी दूकान खोले थे जहाँ अपराध बिकते थे। तुम जैसे गर्मागरम जवान आशा और अभिलाषा की थपकियों को ठुकरा कर विप्लव और बग़ावत का भयंकर जाल गूँथा करते थे। मैं देखती थी वे नौनिहाल आकर हँसते हँसते यह भयंकर सौदा खरीदते थे। विस्फारित नेत्रों से हँस हँसकर देश की बलिवेदी पर न केवल अपनी वरन अपने सारे परिवार की कुर्बानी कर देने वाले जीवित शहीदों का ज्वलन्त त्याग देख देख उन जैसे बनने की शपथ लेते थे। चमकते सितारों की तरह वे टूट जाते थे पर उनकी चमक सूरज की किरण बनकर अमर हो जाती थी। उनके प्राणदान की लपट मुल्क को रोशन करती थी—उसकी गर्मी मुरझाये दिलों को जिन्दा करती थी.....उनका गुनाह हिमालय की तरह असीम और आसमान जैसा अनन्त था।'

महमूद ने फिर कहा—'तुम्हारा...तुम्हारा उनसे क्या नाता था? तुम उनकी कौन थीं जो उनकी याद में जोगनी बन कर गाँव गाँव घूमती फिरती हो—दहकते सूरज जैसी रंगीन जवानी को जंगलों जंगलों —गाँवों गाँवों—खेतों खेतों फ़ना करती डोलती हो?'

सन्यासिनी ने बैचैनी से कहा—'मेरा उनसे नाता? यही तो भैया! मैं दिन रात —उठते बैठते, सोते जागते, चलते फिरते सोचा करती हूँ। दुनिया में लोगों के तरह तरह के नाते होते हैं पर मेरा उनका विफलता का वह नाता था जो न कभी पुराना हुआ है—न होगा। जो नाता आत्मा का प्यास से होता है—हृदय का नशे से होता है—प्राण का हारी हुई बाजी से होता है—मुहब्बत का शबाब के हुबाबों से होता है वह मेरा उनका था। पर मुझे उन्हें छूने का अधिकार न था—मेरा दिल मुझे मना करता था—मेरे ही ईमान को यह गवारा न था.....'

महमूद ने ऊबते हुए कहा—'आखिर तुम उन्हें किस

रूप में देखती थीं ? भाई, स्वामी, पिता या और कुछ····· पहेली क्यों बुझाती हो—साफ साफ कहो न ! तुमने मुझे छोटा भाई कहा है—राखी के दिन मेरे नापाक हाथ में अपने नूरानी, पुर-उमीद ख्वाब—बरबाद जिन्दगी की जाँफिसानियों से चमकते हाथों से शहादत की आरज़ू के रँग में रँगा गुलाबी डोरा बाँधा है ! मुझसे छिपाना कैसा ! जिसे तुमने कुछ घन्टों में एक माँ के पेट से निकले भाई की तरह प्यार और एतबार करना शुरू कर दिया उसे अपनी ख़ाना-ख़राब जिन्दगी का हासिल तो बता दो !'

सन्यासिनी की अथाह वेदना से भरी आँखों में एक दीप्ति जगमगा उठी—कपोलों के पचके हुए गड्ढ़ों में खिन्न चंचलता की खुशबू भरभरा आई। महमूद के सिर पर हाथ फेरती बोली—'तुमसे क्या छिपाऊँगी बीरन—तुम जैसा भाई किसी अभागिनी को जीवन में बार बार मिलता है ! तुम तो मेरे लक्ष्य के बढ़ते काफ़िले की मशाल हो—मेरे जगमगाते कारवाँ की उम्मीद के आफताब। तुमसे छिपाकर कैसे अपनी नजरों में टिकूँगी ! गाँव में रहते मुझे एक साल से ऊपर हो गया। तुमने जैसा सलूक मेरे साथ किया है वैसा फरिश्ते ऊँची से ऊँची आत्मा के साथ नहीं करते.....तुमने मेरे मुर्दा दिल को जिलाया है—निराश आँखों में आसरे की हरियाली पैदा की है—मेरे दिल के जोश को—उम्मीद की चाह को कायम रक्खा है। तुम्हे पाकर मैंने समझा है जिस क़ौम की गोद में तुम्हारे जैसे फूल फूलते हैं उसकी जवानियाँ कभी रायगाँ नहीं होतीं। भगवान तुम्हारी हज़ार वर्ष की आयु करे !'

महमूद ने सन्यासिनी के झंखाड़ की तरह कटे फटे पैरों को माथे से छुआते हुए कहा—'और तुम्हारी ! तुम्हारी दो हज़ार साल की !... क्यों !—तुम्हारी उम्र मेरी दुगनी होनी चाहिये। तुम मुझसे शिक्षा, अनुभव, खूबसूरती और नेकनीयती सब में दुगनी हो। दुनिया के तजुरबे, जिन्दगी के उलटफेर और गुलाम ज़हनियत से पस्त समाजी संगदिली और कड़आहट मुझसे दूनी झेली है तुमने ! तुम ज़रूर

दो हज़ार साल जिओगी—' कहते कहते महमूद जोर की तृष्णा हँसी हँसा—उसके ठहाके की देवत्वभरी ध्वनि से सामने के खेत और पीछे के बियाबान जंगल गूँज गये।

सन्यासिनी ने महमूद के घुँघराले बालों पर अपने कृतज्ञ श्वास उच्छ्वासों से उमड़ते मुखड़े को टेककर कहा—'ना मेरे अभिमान!—न न! ऐसा न कहो! मैं इतना जोकर क्या करूँगी। मैं तो जल्द से जल्द दुनिया से उठ जाना चाहती हूँ। देश के दीप्त अग्नि कुण्ड में—स्वतन्त्रता के प्रज्वलित हुताशन में भस्म होती जवानी की जाँनिसार आहुतियाँ देखती देखती मैं ऊब गई हूँ। सदियों में यह बलिदानी माला पूरी होगी.....कब तक मैं इस मरघट की वैकाली बनी अपने हाथों से तुम जैसे सहोदरों के खून की होली फूँकूँगी। न न मेरे गुलाब!—ऐसा न कहो।'

महमूद ने मचलकर कहा—'कम से कम मुल्क के आजाद होने तक जिन्दा रहो। तब देखो पूरी खुली और खुशी के आँसुओं से लबरेज़ आँखों से स्वतन्त्रता का मंज़र—भरपेट खाना और भरतन कपड़ा पाने वाले किसानों मज़दूरों के खुशी से लहकते चेहरों का जुनून! दीदी मेरी! तुम तब तक बनी रहो! हमें तुम्हारी जैसी देवियों की तब तक दरकार है जब तक यह गुलामी की—सरमायादारी की काली जन्ज़ीर तुकड़े तुकड़े न हो जाय! परसों आरती कह रही थी.....जानती हो दीदी! वह क्या कह रही थी.....ओफ़! मैं उसके लब्जों की शोलेभरी रवानी ला नहीं सकता.....'

'क्या कह रही थी आरती! तुम दोनों एक दीपक की लौ हो—एक फूल की सुगन्ध हो—एक बादल की बूँद हो—एक ही सोत की दो धार हो। अगर वह तुमसे मेरे बारे में कहती रहती है तो मेरे पास भी तुम्हारी इबादत की थाली सजाया करती है। तुमको कितना प्यार करती है यह राजपूत की भोलीभाली बेमिसाल लड़की .....पर...पर ..पर यह मीठी कहानी—यह संगमरमरी अफ़साना

यह पूजा के पवित्र मन्त्रों से भरा दास्तान कहाँ जाकर समाप्त होगा ? मेरा दिल कभी कभी डूबने उतराने लगता है भैया !'

'फिक्र न करो बड़ी बहन ! मेरी मुहब्बत वह नहीं जो एवज़ की तलबगार हो। मुझे कुछ नहीं चाहिये। मुझे क्या समझती हो जो आगे की फिक्र कर घबरा उठती हो। मुझे दुआयें दो—आशीश दो..... कभी मेरी किसी हरकत से—मेरी किसी उम्मीद से—मेरे किसी हौंसले से मेरे भैया और भाभी की पाक आत्माओं को दुख न हो। मैं आरती को नहीं चाहता—उसे जहाँ जाना हो चली जाय पर मेरे भैया और भाभी मुझसे न छूटें। अम्बा के मरने के बाद भैया ने मुझे पढ़ाया लिखाया, पालापोसा और मेरी जमोदारी की हिफ़ाजत की। अपनी औलाद की भी कोई इतनी रक्षा नहीं करता। और भावज ! मेरी भावज ने अम्मी की जो सेवा की है—मरते मरते उन्हें जो ढारस और सन्तोष दिया है वह बेनज़ीर है बहन ! सगी पतोहू भी सास की इतनी ख़िदमत नहीं करती—अपनी कोख की लड़की भी तपेदिक के कीड़ों और ख़ून के अँखड़ों से भरे थूक को हँसते हँसते दिन रात में पचीसों बार हथेली पर नहीं ले लेती ! मुझे पूरा होश भी नहीं है। ऐसे देवता खान्दान को मैं कभी अपनी हसरत के हमले से परीशान करूँगा ऐसा तुम सोचती हो ! जाने मुझे क्या समझती हो ?'

'मैं तुम्हें जो समझती हूँ वह मेरी छाती के बीच की ढलान पर आग के दहकते ठप्पे से अंकित है। तुमको पहली बार देखकर जान गई थी जिस स्वर्गीय आत्मा को मेरी माँ की कोख से पैदा होना था वह यहाँ पर्वतपूर के एक पठान के घर अवतीर्ण हुई। भगवान करे तुम इसी प्रकार देश की सेवा का बाना लिये—स्वराज्य की अलख जगाते युग युग तक जीवित रहो और मैं तुम्हारा अडिग, धीर और लावण्यलोहित मुँह देखती रहूँ। मैं तुम्हारे दिल की गहराइयों और चरित्र की ऊँचाइयों को जानती हूँ बीरन ! मुझे पूरे हिन्दुस्तान में कोई शिवाला—कोई मन्दिर नहीं दिखता जहाँ बैठाकर तुम्हारी अर्चना करूँ।

केवल आरती का दिल ऐसा दिखा था जहाँ तुम्हें प्रतिष्ठित कर—जिसके सतयुगी हाथों में तुम्हें सौंपकर निश्चिन्त हो जाती। पर वहाँ संगीनों का पहरा है—तोपों के ठंडे दहानों से वह घिरा है जो तनिक इशारे पर गोले बरसाने लगेंगे। बर्बरता, दानवता और पशुता से भरे इस कमीने हिन्दू समाज में तुम जैसी देव प्रतिमा किस हृदय-मन्दिर में जाकर स्थापित कर दूँ यही सोचा करती हूँ। अपना ही अंग भंग कर भून भून जो आततायियों और चाण्डालों को—समाज के कुत्तों और भेड़ियों को खिलाया करता है उस धर्म के ठेकेदार—विवेक के पहरेदार हिन्दू समाज में तुम क्यों इतने घुलमिल गये भाई! क्यों तुमने अपने खून के तिनकों से बनाये आशियाने को फूँकने के लिये—अपने हाथों फ़ना करने के लिये ऐसी धीमी धीमी आँच सुलगाई? और आरती... आरती का क्या होगा? उस अनबींधे मोती जैसी निर्मल.....अछूती नवकलिका सी पवित्र.....गंगाजल जैसी दोशीज़गी से जगमगाती प्यार और ममत्व की रूपशिखा का क्या होगा? तुम तो उसके अंग अंग में रमे हो.....साँस साँस में बसे हो.....चितवन चितवन में पिनहाँ हो।'

'कुछ नहीं होगा बहन! उसकी शादी होगी—अपने घर जायगी। जाकर भूल जायगी उसके मायके में उसका महमूद नाम का नाशादो नाकारा—आवारा भाई था जो अपनी हसरतों की आँधी में पामाल हो गया—जिसकी मदभरी जवानी के नशीले इरादोंने उसे बहार की पहली रात में ही मिटा दिया। उसके जीवन के चँदोवे को मैं खुशी और शौक के सलमेसितारों से गुँथा देखना चाहता हूँ। आग लगने के लिये क्या मेरी जिन्दगी का उखड़ा पुखड़ा ख़ीमा काफी नहीं। जाने दो इन बातों को.....तुमने मुझे बताया नहीं उनसे तुम्हारा क्या नाता था—बातों को बहलाकर हवा में उड़ा देना तुम्हें खूब आता है.....'

सन्यासिनी फिर सिहर उठी। आज उसे अपने मक्खन जैसे मुलायम, चन्द्रमा जैसे शीतल पीयूषवर्षी इस मुसलमान और मुस्लिम-ईमान

भाई के सामने वर्षों से बन्द स्मृतियों के खिलौनाघर को खोलना पड़ेगा। बोली—'नाता आकाश से तो आता नहीं—जमीन की गीली मिट्टी पर उसकी नींव पड़ती है। पर मेरे उनके नाते का पता दुनिया क्या उन्हें भी न था। यह बात उनसे भी छिपी थी। मैं ईश्वर के सामने अपने नाते को गौरव के साथ कह सकती हूँ और तुम्हारे सामने.. मैं बड़ा से बड़ा पाप स्वीकार कर सकती हूँ—हत्या और व्यभिचार जैसे जघन्य पातकों का इज़हार कर सकती हूँ। वह तो कुछ न था—केवल एक क्षण का नाता था—केवल एक चुम्बन—एक स्फूर्तिभरे आलिंगन का नाता था। केवल एक बार मैं उनकी शहीद गोद में बैठी थी...केवल एक बार उनके प्यासे होठों की पूजा में समर्पित हुई थी। बस भैया! मेरी कहानी दो लब्जों में पोशीदा है। एक है प्रेम—दूसरा है मृत्यु। जवानी की धूपछाँह में इन्हीं दो अंगारों को लेकर मैंने जिन्दगी की चट्टानें झेली हैं—आत्मा के बर्फीले ज्वालामुखी में आग लगाई है...और एक बार भर नज़र देखने के लिये तबसे तरसती रही हूँ। उनके मेरे नाते को न पूछो। मैं क्या स्वयं भगवान उसे जानते हुए भी शायद ठीक तरह से न बता सकेंगे। उस पुनीत क्षण—जीवन के सर्वोत्तम सौख्य के प्रतीक उस एक लमहे को छोड मैंने कभी नहीं चाहा उनके साथ मेरा सम्बन्ध हो। पर वह एक क्षण काल की तरह निरवधि.....पृथ्वी की तरह सीमाहीन है। बेधे सुमनों की जयमाल जैसा मेरा जीवन उसी क्षण की अपरिवर्त रज्जु—अनश्वर फन्दा बनकर आत्मा के एक छोर से दूसरी छोर तक टँगा है।'

'पर बाद में क्या हुआ? दो साल तक वे जीवित रहे फिर उनकी मौत हो गई.....तुम कहाँ थीं?'

'मैं जेल की कोठरी में बन्द थी। ऐसे भयानक अपराधी को छिपाकर रखने का विद्रोही अपराध! ज़ालिम सरकार ने मुझे भी दो साल के लिये ठूँस दिया! जेल में अखबार किताबें कुछ न मिलती थीं! दिन रात अकेली पड़ी छत

की धन्नियाँ और कोनों पर लगे गौरैया के घोंसले के तिनके गिना करती थी। रोज सुबह मेरी कोठरी में सूरज की लाल किरणें प्रवेश करती थीं। मैं बैरकों के भीतर बन्द सैकड़ों अपराधियों के साथ भविष्य की खूनी किरणों का आह्वान किया करती थी जो हिन्दुस्तान की कालकोठरी को आलोकित करने के लिये एक दिन क्रान्ति के ज्वालामुखी से फूटेंगी। उस युग को हम पीछे छोड़ आए हैं—उन क्रान्तिकारियों का समय बीत चुका है। लेकिन उस युग के क्रान्तिकारी जीवन के भीतर स्पन्दित तृष्णा क्या इतिहास की रौशनी में कभी पुरानी पड़ेगी? राजनैतिक आकाँक्षाओं के वे चित्र क्या कभी धुँधले पड़ सकते हैं! दो साल तक घृणित और अमानुषीय वेदना—विदारक यन्त्रणा सहकर जब मैं छोड़ी गई तो पता लगा एक महीना पहले अस्सी दिन की लम्बी भूख हड़ताल के बाद उनके प्राण निकल गये थे। देश भर में स्वतन्त्र कमीशन की नियुक्ति द्वारा उनकी मृत्यु की जाँच के लिये आन्दोलन हो रहा था। मैंने महीनों के समाचारपत्र इकट्ठे कर पढ़े .....मोमबत्ती की तरह उन्होंने घुल घुलकर प्राण दिये वह समझा—जाना! उनकी वेदनापूर्ण स्मृतियों ने मेरे फेफड़ों को छलनी कर दिया। मैं जाकर उनके माता पिता से मिली। एकलौते बेटे की याद में रोते रोते मा की आँख फूट गई थी—पिता की जोत मन्द पड़ गई थी। सरकारी नौकरी से उन्हें निकाल दिया गया था। दो तीन मकानों का किराया न आता होता तो शायद रोटियों के लाले पड़ जाते। मैं दो साल उनके साथ रही और सेवा करती रही। मेरी सारी सुप्त और संकुचित भावनायें रुद्र वेग से जाग उठी थीं। आँधी तूफान की तरह उठते बैठते मेरी स्मृति एकाएक हाहाकार करने लगती थी जैसे बाँध तोड़कर सागर की उत्ताल लहरें सैकड़ों मील तक प्लावन का झंझावात बहा देती हैं। मेरे देवता—मेरे प्रेरणा-दाता—मेरे सरताज फाँसी से बचकर आजन्म कालापानी भोगने के लिये जीवित छोड़े गये तो इस हड़कम्पी भूखहड़ताल ने उन्हें खा लिया.....'

महमूद ने भर्राये गले से कहा—'तब'

'तब क्या ! मैंने धीरे धीरे समझा, जहाँ अपना—अपने समाज का—अपने देश का कोई वश नहीं वहाँ दुख करना मोह है—रोना और व्याकुल होना—असहायता के भस्मासुर द्वारा लीले जाना एक कमजोरी है। माता पिता उनके दो साल में इस मदमें से टूट-कर एक दूसरे के बाद मर गये। मैंने निश्चय किया—मैं जीवित रहूँगी—निराशा के बोझीले पर्दे को फाड़कर भीमप्रवाहिनी कूलहीना नदी के दुर्निवार जीवन की तरह धारासार आगे बढ़ूंगी। उनकी माँ की जब मृत्यु हुई तब मैं सिरहाने बैठी उनकी एक एक हिचकी के साथ उस सरकार का—उस शासन व्यवस्था का नाश करने की शपथ ले रही थी जो देश की प्रज्ञा के केन्द्र उन जैसे तरुणों का खून पीती है—उनके जीवन का भक्षण करती है। जेल के असंख्य सीकचों, लौह द्वारों और वातायनों से कराहते हुए निकलने वाले मर्मान्तक पीड़ा का भार लिये अगणित शहीदों के उतप्त श्वास प्रश्वास उठते बैठते आँधी के बातचक्रों की तरह मुझे घेरे रहते थे। पुलिस की आँखों में मैं चढ़ी हुई थी। मैंने वह शहर छोड़ दिया और गावों-गावों घूम घूमकर अपना अध-बूढ़ा मन पर जवान शरीर लिये जीवन और जगत से संघर्ष करने लगी। मैंने पूरे सूबे का चक्कर लगाया। माँ, बाप, भाई बहन, भतीजे भतीजियों की ममता—सामाजिक सुखों और सहूलियतों का मोह मुझे विचलित न कर सका। दुख और विद्रोह के क्रुद्ध थपेड़ों में पिटती पिटती मैं चारों ओर एक सजीव स्वप्न बनकर मँड़राती रही। पंखहीन विहगी सी अन्तरिक्ष में उड़ान भरने और आकाश से शोले बरसाने के मन्सूबे बाँधती रही। यहाँ गई—वहाँ गई—कभी मर्द का जामा—कभी भिखारिन बन पुलिसवालों और राजभक्त सरमायादारों की आँखों में धूल झोंकी। मेरे रूप की चमक से चौंध कर, बुद्धिभ्रष्ट होकर कितने ही हिंसकों ने—रूपशोषकों ने मुझे भ्रष्ट करना चाहा। पर मैं अपौरुषेय थी—अपराजेय। मुझे कोई छू भी न

सका—छू लेता और बलप्रयोग से जीतकर बलात्कार कर लेता तो भी मैं अपनी दृष्टि में छोटी न होती। जेल में एक बार सुपरिन्टेंडेन्ट ने अपना जलता सिगार मेरी छाती से सटा दिया था—मैं हथकड़ियों से बँधी उसके मुँह पर थूँककर ऐंठ गयी थी। आज मुझे लगता है मैं इन भ्रष्टाचारों से ऊपर हूँ। मेरे शरीर को कोई अपवित्र कर दे पर मेरी आत्मा के निर्माल्य को—मन की शुचिता को वह कैसे दूषित करेगा? स्वर्ग में बैठे मेरे देवता, मेरे भगवान—मेरे पैगम्बर क्या मेरे मन की बात जानते नहीं? फिर किस देश की नवयुवतियों को अपनी खोई आज़ादी पाने की चेष्टा में कभी कभी अपने सतीत्व का अपहरण नहीं सहना पड़ा? लेकिन जब से तुम्हारे गाँव में आई हूँ मैं निर्भय हूँ। इस कुटिया में अकेली पड़ी वीरान अँधेरी जंगली रातों में चैन की नींद सोती हूँ।'

'यहाँ किसी ने तुम्हें अलिफ़ से बे कहा तो उसकी जुबान खींच ली जायगी—कोई तुम्हें धोखे से भी नापाक निगाह से देखे तो मुझसे या भैया से कह देना। उस मलाऊन का घर खड़े-खड़े फुँकवा दिया जायगा। जिस्म काट कर कछुओं और घड़ियालों के खाने के लिये गंगा में बहा दिया जायगा। यह राजपूतों और पठानों की बस्ती है। यहाँ किसी की बाँह पकड़ने वाले बदचलन की कलाई ककड़ी की तरह तोड़ कर फेंक दी जाती है। पर तुम यहाँ क्यों पड़ी हो—मेरे घर चलो। मेरी बेवा बहन शमीम तुम्हारी पूरी सेवा करेगी। उसकी दस साल की कोकाबेली जैसी सुफेद, उजली, हसीन बच्ची तुम्हारे मुरझाये मुँह पर ममता की शराबी चाँदनी बरसा देगी। मेरा घर का घर, नौकर चाकर, गाय, बैल सब तुम्हें सिजदा करेंगे। शम्मी जो लगभग तुम्हारी उम्र की होगी एक साथिन पा जायगी। शादी के लिये उठते बैठते मेरी जान खाये रहती है। भावज के सामने जाकर रोती रहती है। भैया से बीसियों बार लड़ चुकी है आप को महमूद की शादी की फिक्र नहीं। अकेला घर

उसे दिन रात काटता रहता है। भैया, भाभी, आरती सब तुम्हारे वहाँ चलने से खुश होंगे। मैं निहाल हो जाऊँगा। शम्मी मेरी आधी माँ के बराबर है। आधी तुम हो जाओगी। दोनों के मिल जाने से मुझे पूरी माँ मिल जायगी। तुम्हें एतराज़ क्यों है? मेरे यहाँ न खा सको तो अपना खाना अलग बनाना या भैया के यहाँ से थाली घर आ जायगी।'

सन्यासिनी हँसी जैसे टीन की छत पर कोई पत्थर लुढ़का दे। उसकी हँसी रुकी मानों वह पत्थर अचानक छत से लुढ़क नीचे आ गिरे। आँखें बन्दकर महमूद के बालों पर प्रेम का चिन्ह अंकित करती हुई बोली—'अभी नहीं मेरे लालन! अभी नहीं। अभी यह समय नहीं आया है। जब आ जायगा तब मैं बिना बुलाये आकर तुम्हारी हवेली में रहूँगी और तुम्हारे बच्चों को सँभालूँगी। अपनी नन्ही भावज को घर के काम से मुक्त कर दूँगी। अभी मुझे घूम घूमकर अलख जगाने दो—आज़ादी की आग लगाने दो—क्रान्ति की ज्वाला धधकाने दो। वरना मुझे 'उनके' पैरों के पास क्या, नर्क में भी जगह न मिलेगी।'

'क्या खुराफ़ात बकती हो। इतनी पढ़ी लिखी और तरक्कीपसन्द हो कर तुम स्वर्ग नर्क का पचड़ा मानती हो। तुम्हारे 'उन्होंने' तुम्हें यही बतलाया था! एक तरफ इन्क़लाब की शहनाई बजाती घूमती हो दूसरी तरफ बारहवीं सदी के ख्यालात चिपटाये बैठी हो। मेरे सामने ऐसी बातें न किया करो। मैं इन बातों पर यक़ीन नहीं करता और इन्सान की बेहतरी के लिये उन्हें मुज़िर मानता हूँ।'

सन्यासिनी फिर हँसी। वह हँसी जो दुनिया के बड़े से बड़े अविश्वास और सन्देह को ठुकरा देती है—जो नास्तिकता के अंबार पर आकर दियासलाई की जलती तीली की तरह छू जाती है—जिसके पीछे एक महान दुख और जीवनव्यापी वियोग की सर्वनाशी तृष्णा

—प्रचंड आग दहका करती है। जो एक बार—हफ्तों में कहीं एक बार चमक कर दूसरे ही क्षण गहरी वेदना की हजारों कैन्डिल पावर-वाली बल्ब बन जाती है। उस हँसी की भयानक नमी को झेलने में महमूद असमर्थ था। बोला—'यह हँसी न हँसा करो बहन! मेरा दिल बेहोश होने लगता है। मैं दहशत खा जाता हूँ।'

'मैं जान बूझ कर नहीं हँसती राजा बाबू! आप से आप आ जाती है निगोड़ी! तुम्हें तकलीफ देती हो तो माफ़ करना। पर जिस रास्ते पर जीवन एक युग तक चल चुका है वह क्या मेरे छोड़ देने से छूट जायगा। तुम जैसी पढ़ा लिखी और समझदार तो मैं नहीं हूँ। इस विश्वास का सूत्र पकड़े पकड़े ही मुझे जीवन का चिर विराम-स्थल मिल जाय यही मैं चाहती हूँ। इसी का बल मेरे दिल के भीतर और बाहर—जीवन में उठती हुई आँधियों को थामे रहता है। इस लेम्प की कल दबाकर किसी ने एक फूँक मारी तो दिल के कमरे में काजल जैसा अँधेरा छा जायगा। तब मैं ऐसी मिटूँगी कि मेरी याद शेष न रहेगी। इस विश्वास के स्रोत को भाभी के जमुनोत्री जैसे पवित्र हृदय में देखो--शमीम के जीवन के शीलये तूर के नीचे बहते पहाड़ी झरने की चंचल गति में उसे पाओगे। यही नारी का काबा और कर्बला है। मथुरा और काशी—द्वारका और पुरी है। अपनी दुर्भावनाओं और दुर्दमनीय प्रलोभनों से पदाक्रान्त होने पर मानव अपने चरित्र की गौरवशाली परम्परा से इस के बल पर टूटने नहीं पाता।'

'तो अब तुम्हारे 'उनके' परिवार में कोई नहीं बचा?'

'कोई नहीं भैया! उनके चाचा के दो लड़के थे। एक चढ़ती जवानी में फाँसी पर झूल गया। दूसरा २५ वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड पाकर जेल में अपनी मोतियों से भरी जवानी स्वाहा कर रहा है। चाचा की मृत्यु पहले हो गयी थी। केवल चाची हैं—अपने मायके में जीवन के अवशिष्ट दिन काट रहा हैं। आज़ादी की लगन खून माँगती है . . . .'

'बेशुमार ! बेशुमार !! मैं भी इस माला में अपनी ज़िन्दगी गूँथ देना चाहता हूँ—इसी शमारुख आज़ादी की आग में परवाने की तरह जल जाना चाहता है। मुल्क को करोड़ों कुर्बानियों की ज़रूरत है। जिन्दा रहेंगे तो आज़ाद और आबाद होकर। गुलामी की यह बेगैरत बोझीली याती अब ढोई नहीं जाती। पिछली बार मेजिस्ट्रेट ने मुझे डेढ़ साल की सज़ा का हुक्म सुनाया। बेचारा मेरी भोली भाली शक्ल देख बेचैन हो गया। बड़ी देर तक कुर्सी पर खोया खोया बैठा रहा। मैंने बहादुराना तरीके पर 'शुक्रिया' कहा तो बेचारा अलीगढ़ का पढ़ा मज़हबपरस्त मुसलमान जो केवल अपनी मेहनत और वफ़ादारी से तरक्की करते करते इस ओहदे पर पहुँचा था एक मुसलमान नौजवान को गुमराह देखकर अफ़सोस से भर गया। शायद दिल में घबड़ाकर सोचने लगा--कहीं मेरे भी लड़के ऐसे ही निकले तो''' ''तो क्या होगा..... इन सरकारी सनदों और खिताबों की रक्षा कौन करेगा ? मैं तीन बार जेल हो आया हूँ दीदी !'

'जानती हूँ भैया ! सुन चुकी हूँ। आरती ने मुझे सब बताया है। तुम्हारी बात करते करते उसकी फूलती छाती अनेक बार देख चुकी हूँ। बड़ी दूधिया लड़की है। इतनी दृढ़ है लगता है जीवन के सारे संशयों और शंकाओं को अपनी अदम्य आशा से ललकारकर भगा चुकी है। उस दिन बोली--भाभी उठते बैठते महमूद का नाम लेकर चुटकियाँ लेती रहती है। क्या सचमुच वे इतनी भोली हैं नहीं जानतीं मेरे हृदय के मर्मस्थल पर वे प्रहार करती हैं। उन्हें मज़ाक सूझता है..... मेरी जान जाती है.....उनकी अदा ठहरती है.....'

महमूद ने हँसकर कहा—'अच्छा ! यहाँ तक नौबत आगई। मेरा नाम लेकर मज़ाक किया जाता है तो दिल पर चोट लगती है ! दिल क्या रेशमी कीड़े का कोया हो गया। मुझसे भाभी ने बीसियों बार मज़ाक किया होगा। मुझे तो तकलीफ नहीं हुई !'

'तुम्हें क्यों होगी भैया ! तुम मर्द हो। फौलादी तनाव तुम्हारे दिल दिमाग और देह में कूट-कूट कर भरा है। वह नारी है जो एक बार अपना रास्ता चुन लेती है। एक बार समर्पित हो जाने पर जिसकी जीवन धारा पीछे नहीं लौट सकती। तुम मर्द हो। जीवन के सिंहपौर पर झिझकते हुये अनाहूत भिखारी की तरह नहीं आये। आये हो निर्माता बनकर। भाग्य-विधाता के पूर्ण गौरव के साथ साथ! वह औरत है। दिगन्तव्यापी मैदान की नीरवता में सन्ध्या सी डूबने उतराने वाली जो तारों भरी काली रात के आने के पहले ही दामन झाड़कर रोती हुई चल देती है। नारी तो अपने ही खून से अपने विनाश की जड़ें सींचती है। अपने छोटे से मन के प्रदीप का सहारा ले किस्मत के अन्धकार से —समाज के विधि निषेधों से ताउम्र जूझती रहती है। जब औरतों की बात चल रही हो तब अपनी मिसाल न दिया करो। जीवन के जिस मोड़ पर बैठकर तुम खुशी के चिराग जला सकते हो वहीं बैठकर दूसरा आर्तनाद भी कर सकता है। अपने काम भर की जगह को बेचारी प्रकाशित करना चाहती है। उतना भी नहीं पाती।'

'तुम उसी तरफ बोलोगी। तुम लोगों में तरफदारी की कूवत कम नहीं होती। जब मौका पड़ेगा मिलकर एक हो जाओगी। बीसियों मिसालें पेश कर सकता हूँ।'

'कोई जरूरत नहीं। अपने दिल में सजाये रखे रहो। मुझे सुनने की दरकार नहीं। मैं तुम्हारे गाँव में आकर ऐसी फँसी कि जाने की तबियत नहीं होती। बीच बीच में बाहर जाती रहूँ और लौटने में देर हो जाय तो घबड़ाना मत। मैं इधर उधर अपना काम कर तुम्हारे बीच आ जाऊँगी।'

'मुझे बतला दो कहाँ जाओगी ! मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा। यहाँ पड़ा रहता हूँ। देहातों में कुछ काम करूँगा। साथ न ले चलो तो कम से कम अपने ठौर ठिकाने बता दिया करो। यह मेरा सवाल नहीं—भैया, भाभी, आरती सभी

को तुम्हारी बड़ी फिक्र रहती है। तुम बाहर चली जाती हो तो वे तुमको पूँछा करती हैं। मैं अपना सा मुँह ले खामोश हो जाता हूँ। जानता होऊँ तब तो बताऊँ!'

धूप चढ़ रही थी। सन्यासिनी ने लोहे का चूल्हा उठाया। कोयले डालकर आग जलाई। लोहे के तसले में आटा गूँथ तवा चढ़ाकर मोटी मोटी रोटियाँ सेंकने लगी। महमूद किनारे बैठा कुछ सोच रहा था। घन्टे भर के अन्दर सन्यासिनी ने रोटियाँ सेंक कर दाल चढ़ा दी और हाथ धोकर बोली—'बस भाई! मेरा काम हो गया। शाम के लिये भी बनाकर रख दिया।'

झोपड़ी के सामने नीचे—टीले से उतर कर लगभग सौ कदम पर गंगा की धारा थी जहाँ स्नानार्थियों की भीड़ थी। जिस टीले पर झोपड़ी थी उसके नीचे से एक चौड़ी पगडंडी एक ओर गाँव और दूसरी ओर गंगा तट तक गई थी। महमूद भारी मन लिये सिर नीचा किये जाने क्या सोच रहा था। सन्यासिनी मुग्ध दृष्टि से पगडंडी होकर गाँव से आनेवाले कूदते मचलते बच्चों को देख रही थी जो गाय के अघाये बछड़े बछियों की तरह नदी-स्नान के उत्साह में तट की ओर जा रहे थे। निष्कंप दीपशिखा-सी जलती कुमारियाँ, सोहाग का अलसित भार यौवन के आवेग प्रवेगों पर ढोती नवविवाहितायें, कई बच्चों की माँ, दुनिया की दृष्टि में ढली पर मातृत्व में पकी हुई प्रौढायें और विधवायें, बहुएँ और सुवासिनें, बालक बालिकायें, सब उसी पगडंडी से होकर आ जा रहे थे। ऊपर आकाश में पक्षियों की चक्काकार पाँत उड़ी जा रही थी। पश्चिमी क्षितिज पर धूल के बढ़ते धब्बों जैसे बादल इकट्ठे हो होकर बिखर जाते थे। महमूद यह सब देख रहा था। बीच बीच में सन्यासिनी की ओर उचटती निगाह से देख लेता था पर उसकी दृष्टि दूसरी ओर थी जिधर से आरती एक नौकरानी के साथ घाट की ओर आ रही थी। उसके आगे दस दस वर्ष की दो बालिकायें थीं। एक भैया की लड़की, दूसरी महमूद की भतीजी ज़ोहरा। दोनों धूल उड़ाती राजहंसनियों को

भाँति कुर्ती के दामन हवा में उड़ाती दौड़ रही थीं। आरती ने दूर से टीले और सन्यासिनी की कुटिया की ओर देखा। महमूद के सफेद खद्दर के कुर्ते और पुष्ट गरदन से उसने उसे पहचान लिया। उसका इरादा एक बार सन्यासिनी के पास कुछ देर बैठने का था। महमूद को वहाँ देख वह सीधी नीचे नीचे चली गयी। दुबारा ऊपर की ओर देखा भी नहीं। ज़ोहरा ने नीचे से मामू को देख आवाज़ लगाई। आरती ने पुचकारकर मना कर दिया। महमूद ने कुछ भी न सुना।

सन्यासिनी मुँह हाथ धोकर फिर पास आ बैठ गई। बोली—'धूप चढ़ रही है। यहाँ कब तक बैठोगे? भीतर कोठरी में चलो या घर जाओ। इधर तुमने कोई किताब नहीं दी। मेरा समय नहीं कटता। कहाँ तक बैठी सूत काता करूँ।'

'दो चार दिन में नई किताबें लाऊँगा। भैया की आल्मारी से निकाल कर दोपहर में भेज दूँगा।'

'धूप में किसी को तकलीफ न देना। शाम को भेज देना। दिन भर सूत कातूँगी।'

महमूद ने कहा—'तुम्हें घर छोड़े कितना समय हुआ? कब से अपने कुनबे से नहीं मिली।'

'आठ साल से मुझे कोई समाचार नहीं मिला। क्या ज़रूरत है भैया! यह सारा गाँव—सारा देश मेरा कुनबा है। इसके सिर पर भादों की भयावनी रात घहरा रही है। मैं परिवार को लेकर कितना दुख और चिन्ता करूँ! समय के पहले ही इन घटाओं के कारण राजनैतिक क्षितिज पर अशान्ति का अँधेरा छाया है। भयानक झंझावात बह रहा है।..... अब दुनिया से मेरा दिल भर गया है। मैं काम की मशीन बन जाना चाहती हूँ। मेरा नारीत्व मुझ से कभी का बिदा हो गया। अब तो एक कठोर अनहोना पदार्थवादी पुरुषत्व मुझमें भर गया है—मेरी रग रग में—मेरी धमनियों में गूँज रहा है। मैं पुरुष जैसी निर्मोही—बेलौस, निर्भीक और कठोर—अपने प्रति ईमानदार

और अकृतज्ञ हो गयी हूँ। घरवालों को पता नहीं मैं कहाँ हूँ। दुनिया मेरा यौवन से गदराया मुँह देखती है। उसे पता नहीं कितने शहीदों के रक्तरंजित बलिदान का प्रकाश मेरे चेहरे पर अबीर बनकर बरस रहा है। आँधी से घिरे अभागे पक्षी की तरह जीवन के खुले पथ पर अडिग अकंपित खड़ी हूँ। उनकी याद, उनकी अस्सी दिन की भूख हड़ताल का घुलनशील जीवनदान—उनकी खून की गति को रोक देने वाली ज्वलन्त विप्लव-ज्वाला मेरी सम्बल है। कभी-कभी भाई बहनों की याद आती है, घर लौटने की इच्छा होती है तो माथे पर लगा उनके प्राणदान का रक्तिम सिन्दूर-बीज रोक देता है। अपनी कमजोरी के पार मुझे उनकी फौलादी मुद्रा वीर बना देती है। एक बार उन्होंने कहा था—'प्रतिम! मुझे लगता है नौकरशाही के दमन चक्र से अधिक समय तक न बच पाऊँगा। ये नर-पशु हमें निरीह चूज़ों की तरह ज़िबह कर देंगे। विश्व-वन्द्य गान्धीजी जैसे युग-पुरुष की बात पर भी सरकार ध्यान न देगी। जब तक कानून की बन्दिश और पुलिस के चक्कर में नहीं आता तभी तक! वर्ना ये मुझे जिन्दा दफ़ना देंगे—भूनकर अपने कुत्तों और शिकरों को खिला देंग... पर मुझे लगता है—आत्मा की तलहटी में छिपा कोई कहता है तू मेरी प्रतिहिंसा की कभी न मिटने वाली छाया बनकर जीवित रहेगी। गुलाम वासनाओं के उपनिवेश में कभी न बूझने वाली ज्योतिशिखा बनकर लहरायगी। तेरे जैसे सौ पचास प्रदीप मैं जला सका तो पूरा जीवन सफल हो जायगा। मुझे विश्वास है मेरी जलायी एक एक मशाल सैकड़ों मिट्टी के कोरे दीपकों को प्रज्ज्वलित करेगी। तू एक काम करना। घर द्वार कुटुम्ब परिवार—समस्त सुख-सौख्य-सृजन का मोह छोड़ विप्लव-यज्ञ की ज्वाला जलाना। देशी पूँजीवाद और विदेशी साम्राज्यवाद के दोहरे शोषण से भेड़ों जैसी निरीह जनता की रक्षा करनी है। तू कोमल है—मैं जानता हूँ पर तेरी कोमलता फूल की पङ्खड़ियों की कोमलता नहीं—

मक्खन की कोमलता नहीं—ज्वालामुखी के दहाने से बहनेवाले लावे की कोमलता है। मैं चाहता हूँ तेरा नारी-सुलभ धैर्य इस आग में स्वाहा हो जाय। जिन्दगी की बड़ी गली के अन्तिम छोर पर तू कंकड़ उड़ाती—विनाश के भैरव आरोह अवरोह-सी अपनी चूड़ियाँ बजाती भाग सके। एक कभी न रुकनेवाली आन्धी की तरह। आज़ादी के नये उभरते सूरज की किरणों में उलझती तेरी लज्जा की ओढ़नी नीचे तैरकर किसी सूखी झाड़ी में अटक फड़फड़ाने लगे तो चिन्ता न करना। रूस में तुझसी आज़ादी की दीवानी जीवनदायिनी साधिकाओं ने तेजाब से अपने सुन्दर चेहरों को बिगाड़ कर क्रान्ति की योजना सफलीभूत की है। गुलामों की कोई नैतिकता—कोई मर्यादा—कोई शील—कोई सतीत्व नहीं होता। उनका कोई धर्म नहीं होता—कोई जाति नहीं होती। उनके एक संस्कार होते हैं—एक विवेक होता है। स्वतन्त्रता उनका लक्ष्य होती है। लक्ष्य को ही वे प्रधानता देते हैं—लक्ष्य प्राप्ति के साधनों की रूपरेखा की ओर ध्यान देने का उन्हें अधिकार नहीं। उन्हें नव यौवन की भावनाओं को घेरकर विद्रोह की आग भड़कानी होती है। तुझे देश की सेवा में—आज़ादी की लड़ाई आगे बढ़ाने के लिए अपना तन देना पड़े तो संकोच न करना। तेरा तन अब तेरा नहीं, मेरा है यद्यपि मैं उसकी एक भी कमनीयता का उपभोग न कर पाया। मेरा आदेश है तू उसे कभी देश की आज़ादी की लड़ाई से बढ़कर न मानना।'

महमूद ने कंपित कंठ से कहा—'बिलकुल ठीक कहा उन्होंने! परिवर्तन के युग में—इन्क़लाब के दौरान में—नई फिजा की अगवानी में पुराने तौर तरीके बदल जाते हैं। इन्सान के विचार उसकी बाहरी हालतों के मुताबिक बदलते रहते हैं। आज पूरी समाजी ज़हनियत ज़िन्दगी की चौखट से लखखड़ा रही है। पुराने विचारों से काम नहीं चल सकता। हमारी सभ्यता—हमारा कल्चर—हमारा इल्म गुलामी की जञ्जीरों में जकड़ा है। हमारा कल्चर ही नहीं नीचे

गिरा। हमारी इल्मी और रूहानी तनुज़्ज़ली भी हो चुकी। गुलामी से मिलने वाले टुकड़ों पर जिन्दगी बसर करने वाले उस तहरीक—उस सल्तनतशाही और सरकार—उस जुल्मी स्टेट के खिलाफ कैसे आवाज़ उठायें जो उन्हें रोटियाँ देती हैं। उनके हक़ूक को महफूज़ रखती है। यह तो बताओ तुम्हारे जीवन के कितने साल उस जाँबाजाने वतन के साथ बीते? कितने दिनों में उन्होंने तुम्हें आज़ादी की आयतें सिखा दीं?'

सन्यासिनी ने सिहर-भरे स्वर से कहा—'मेरा बचपन और जवानी का आगोश उनके पैरों के पास बीता। कैसे दिन थे वे! कैसी कैसी ज़बरदस्त हड़तालें होती थीं जिनके द्वारा देश का क्रान्तिकारी मज़दूरवर्ग राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने प्रवेश का ऐलान करता था... जिन दिनों जिस उम्र में मेरी सहेलियाँ उठते बैठते किसी कलेक्टर प्रोफ़ेसर या पुलिस-कप्तान की पत्नी होने का स्वप्न देखा करती थ:— रोमांस रचाया करती थीं उन दिनों मैं उनके पास बैठी फ्रेंच राजक्रान्ति और रूस की महान बोलशेविक क्रान्ति का इतिहास सुना करती थी। जिस समय मेरी सहेलियाँ सिनेमा और थियेटर में बैठकर यूनिवर्सिटी के नवयुवकों पर घात लगाती थीं उस समय मैं वर्गसंघर्ष और द्वन्दात्मक भौतिकवाद के ऐतिहासिक सिद्धान्तों को समझा करती थी। किस तरह भारतीय राष्ट्रवाद धीरे धीरे वर्ग-संघर्ष का प्रतीक बनता जाता है—किस तरह ब्राह्मणों के अत्याचार से पीड़ित शोषितों ने बौद्ध धर्म का झंडा खड़ा किया—बौद्ध धर्म कैसे प्रगति और मुक्ति का—सामाजिक परिवर्तन और धार्मिक क्रान्ति का सबसे बड़ा सूचक विद्रोह था—सब वे मेरे दिमाग में ठूँसा करते थे। इस्लाम की तत्कालीन प्रगति का मूल कारण यही निहित साम्यवाद था वे मुझे बताया करते थे। दुनिया का कोई क्रान्तिकारी कवि लेखक शायद ही बचा हो। जिसकी कृतियाँ उन्होंने मुझे न सुनाई हों। वाल्तेयर की रचनायें पढ़ते-पढ़ते उनकी आँखों से आग निकलती थी। गोर्की और पुश्किन की क्रान्ति-गाथायें पढ़ते पढ़ते वे मेरा रोम-प्रतिरोम

अनुप्राणित कर देते थे। मार्क्स और लेनिन की किताबों से वे मुझे परिवर्तन और ऐतिहासिक विकासवाद की शक्तियाँ समझाते थे। गान्धीजी के लेखों को सुनाते सुनाते जब अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र की नवीनतम गवेषणाओं के आधार पर उनकी आलोचना करते तो मैं भौचक रह जाती! दरजनों युवक युवतियाँ उनकी गुप्त अध्ययनसमिति में आया करते थे। पढ़ाते पढ़ाते वे कभी मेरे कन्धों का सहारा थककर लेते थे तो मेरा सर्वाङ्ग पुलकित हो जाता था। मैं मन-ही मन फूली न समाती थी.....इतने बड़े क्रान्तिकारी जननायक -वीर प्रवर्तक की स्नेह-पात्री हूँ। मेरा उड़ने वाला पंछी मन आत्मशिविर से अट्टहास कर उठता था। मैं भीतर भीतर उनसे और सट जाती थी। .....इस भूतल पर केवल हम दो हैं—हमारा यह मिलन अनन्त है। लेकिन.....लेकिन.....भयंकर जाल—वीभत्स प्रलोभन—निर्दय वंचना। वेदनायें केन्द्रित न हो पाई था कि दिगन्त में घोषणा हुई.....दंड—प्रतिध्वनि हुई...दन्ड—वातावरण प्रकंपित हो उठा—दंड .....दड—अपराध और अपराध का समर्थन दन्ड्य है। केस चला—उन्हें फाँसी होते होते बची—आजन्म कालापानी !! मैं सिहर उठी—दुनिया सिहर उठी—धरती काँप गयी !! उनकी क्रान्तिकारी आत्मा अधिक समय तक बन्धनों में न रह सकी। कैदियों के साथ मानवोचित व्यवहार का प्रश्न आया। समस्त आतंकवादी कैदियों ने भूख हड़ताल की घोषणा की। उन्होंने और उनके अनुयायियों ने इस पावन अनुष्ठान में योग दिया। बाद में बहुतों ने हड़ताल तोड़ दी। पर वे किसी बात को उठा कर बिना उसका अन्तिम फैसला किये मानते न थे। क्षमता दया और धीरता की ऐसी त्रिधारा मैंने देखी नहीं—सुनी नहीं। देश की मूँदी पलकों में जागी यह जीवन की ज्योति सदा को सो गई—छोड़ गयी राष्ट्र के आँसुओं से गीले और नीले गालों पर जागृत प्रगति की रेखायें .....'

'मेरा ख्याल है मैंने उनका व्याख्यान सुना है। तुम्हें नाम लेने की जरूरत नहीं। मैं समझ गया हूँ। एक बार वे हमारे स्कूल में बोलने आये थे। मुझे अब तक (याद) है ऐसी हिलाने वाली और गुलामी की काली तस्वीर दिल पर खींच देनेवाली तकरीर मैंने नहीं सुनी। उस समय पता न था उनकी सबसे प्यारी महबूब का भाई बनने का फख्र एक दिन हासिल होगा। उनकी आँखें क्या थीं चंचल पारे से भरी दो कटोरियाँ जिनमें रोशनी और बेदारी के तार जोड़ दिये गये थे। मैं तब छोटे दरजे में था। शुरू से भैया के साथ रहने से आकास पाताल की बातें सोचा करता था। वे हिन्दुस्तान के बड़े एजीटेटरों में थे। क्या तुम्हें तहेदिल से प्यार करते थे?'

सन्यासिनी चुपचाप रोमाञ्चित अपनी कोठरी में चली गयी। वहाँ से लौटकर अपनी जगह पर बैठ गयी। बोली—'चाहती थी तुम मुझे हँसता देखो—सारा गाँव हँसता देखे—दुनियाँ मुझे हँसता ही देखे। पर ऐसी भी वेदना होती है—ऐसी भी पीर जो व्यक्ति के अहं से बड़ी होती है। मुझे इस विदेशी आततायी सरकार ने ऐसा ही तीखा दर्द दिया है। वे मुझे प्यार करते थे या नहीं यह सोचने का अभिशाप मुझे जीवन में नहीं हुआ। मैं उन्हें जितना चाहती थी उतना किसी लड़की ने किसी पुरुष को आज तक न चाहा होगा। वे पकड़े गये उस समय मेरे यहाँ थे! मैं तब घर से अलग हो एक राष्ट्रीय बालिका विद्यालय में अध्यापिका हो गई थी। वे यूनिवर-सिटी में रिसर्च कर रहे थे। रात को दो बजे पुलिस ने मकान पर छापा मारा। शाम से वे ढले ढले थे। स्कूल से लौट कर जब मैं घर आई तब बाहर से ताला बन्द था। खोलकर भीतर गई तो चारपाई पर उन्हें लेटा पाया। मेरी आवाज से चौंके और सतर्क हो खड़े हो गये। मुझे पहचान झपटकर पास आ गये...चमते हुए मुझे ले जाकर चारपाई पर बिठा दिया।

मैंने उनके चुम्बनों से गीले अपने गाल पोंछते हुए कहा—'आप क्यों इतने बेताब हो रहे हैं? मैं भागी नहीं जाती। पर मकान के अन्दर कैसे आये।'

बोले—'मेरे पास डुपलीकेट ताली है।'

रात को एक बजे तक बराबर बात करते रहे। मुझे खाना न बनाने दिया—चाय और बिस्कुट से हमने पेट भरा। न जाने कितनी बातें उन्होंने मुझे गोद में बिठाकर कीं। कितना आशीष उस दिन मुझे नहीं दे डाला। मुझे पुकारते थे कितने धीमे और सहमे स्वर में। उन पर और उनके दल के सदस्यों पर कैसे कैसे अभियोग लगाये जा रहे थे! इन संगीन अभियोगों की जाँच का अधिकार उन्हें न था। इसी अधिकार के लिए वे सब संघर्ष कर रहे थे .....पर जाने दो भैया! उस रात की याद आते मेरे खून से शरारे चलने लगते हैं। यही उनके चुम्बनों की प्रथम और अंतिम लड़ी थी। इसके पहले मुझे उनके प्रकंपित अधरों का सिहर कभी न मिला था। कभी जीवन का सर्वस्वसुख जान पड़ने वाली उनकी गोद में बैठने का सुयोग न मिला था। पर उनसे सदा को दूर हो मैं आज अखंड सोहागिनी बन गई हूँ। जिनकी मृत्यु देश का स्वतन्त्रता की लड़ाई के इतिहास का गौरवशाली परिच्छेद बन गयी हो उनकी प्रेम-पात्री का सोहाग अखंड, अविभाज्य, अविरल है। तुम जैसे हज़ारों भाइयों की रक्तरंजित परम्परा मेरे सोहाग की अरुणिमा को जीवन का उन्मत्त आलोक और रंग प्रदान करती है। फाँसी पर चढ़कर अपना जीवन उत्सर्ग करने में गौरव माननेवाले भाइयों की क्रान्तिकारी पार्टी मेरे सोहाग का अक्षय पुन्ज बनकर खड़ी है। मैं धन्य हूँ—मेरा सोहाग धन्य है।.....उनका प्यार! प्रस्तरीभूत पीड़ा से बहने वाला उनका प्यार। जैसे वह मेरे लिए था—मैं उसके लिए थी। मुहब्बत की लाल किरणों से धुल कर उनका चेहरा हयात के रंग से चमक उठता था तब मैं अलौकिक परिव्याप्ति के बोध से ठिठक जाती थी। लगता था

एक समुद्र है जिसकी तलहटी में स्वाती जैसी पड़ी मैं निरुपम मोतियों को जन्म दिया करती हूँ। उनकी आँखों के उदार निर्भय आलोक का अजस्र झरना प्रवाह.....उनकी बंकिम चितवन में फूटती पर तत्क्षण पिछड़ती हुई स्वीकारोक्ति.....सदा को खंडित हो जाने के पहले जीवन के समस्त संतरण का प्रतीक मेरा बंदी प्यार ..... उसी की याद जीवन को निराधार और कष्ट-संत्रस्त नहीं लगने देती। उसकी अनुभूति, उसकी स्वप्न सी याद दाहक होते भी दिव्य है। अशरीरी होते हुये भी हाड़ माँस की तरह वत्सल और ममत्वमुखी है। काँटे सी चुभने वाली होकर भी सुगन्ध को जागृत करती हैं। शरद-कालीन ओस बिन्दु की तरह। उनकी कीर्ति की तरङ्गों पर लहराने वाले प्रेम का वैफल्य और कुण्ठा—निराशा और खण्डन मेरे लिए फूलों के तौक बन गये हैं। उन्हें गले में डाले मैं कृतार्थ होती रहती हूँ। जानती हूँ कर्म एक सुविधा है—सुयोग है—अवसर है पर बलिदान तो प्रेम की रेशमी डोरी से नहीं बँधता—वह नियमबद्ध है—एक अखंड परम्परा है वह। शहादत की राख के भीतर पड़कर उसकी चिनगारी जीवन भर के लिए अमर हो जाती है।..... एक स्थिर सन्तोषदायी मानसिक समानता आत्मा में भर देती है।'

महमूद ने कहा—'तुम्हारे हाथ में मुहब्बत की जलती मशाल है। तुम्हारे सामने हकपरस्ती का मैदान है जिसके चढ़ते सूरज की तेज किरणें तुम्हें सुनहलापन अता करती है। तुमने पहले अपनी जिन्दगी की कुरान का यह सफा नहीं दिखाया.....आज भैया और भाभी की बात न चलती तो काहे को तुम सितारों जैसा राज़ खोलतीं! काश! तुम्हें पहले जानता होता।'

'क्या होता भाई! मेरी ज़िन्दगी की तनों को खोखला कर फुनगियों पर प्रेम का दीप जलाने वाला सैलाब क्या तब न आता! तुम मेरे नसीब की मुश्कें तो न कस लेते!'

'मैं कुछ न कर पाता बहन! मैं कुछ भी न कर पाता पर.....'

'अब जाओ भैया! बड़े भैया का नौकर रामदीन आ रहा है।

तुम्हें बुलाया है। एक बात और। मैंने तुम्हें सब बता दिया। तुम लिल्लाह ये बातें दूसरे से न कहना! भाई—भाभी आरती—शमीम किसी से नहीं! जानती हूँ तुम लोग देश पूजा को धर्म मानते हो—समाज की सेवा का बाना लेकर जीवन की फुलवारी में चलते हो। लेकिन मुझे भीतरी दुख होगा मैंने सुना तुमने मेरे दास्तान को शोहरत दी है। उनको सब जानते हैं। मैं नहीं चाहती उनके प्रकाश में लोग मुझे देखें। मैं कुछ नहीं हूँ।'

'तुम बेफिक्र रहो। मैं किसी से कुछ न कहूँगा! ज़रूरत आ पड़ी तो बात दीगर है। मैं अब जाता हूँ। रामदीन मुझे बुलाने आ रहा है।'

दो

बैसाख की पूर्णिमा। रात के नौ बजे गंगा के प्रशान्त हीरक तल खूबसूरत छोटी डोंगी थिरक रही थी। आकाश की चाँदनी किनारे किनारे—खेत खेत छिटकी थी। डोंगी पर दो पुरुष—दो स्त्रियाँ। नौका के एक सिरे पर महमूद पतवार खे रहा था। दूसरे सिरे पर उन्नीस बीस वर्ष की युवती जो चाँदनी की मौक्तिक में अपनी देह की गौरता के कारण एकाकार हुई जा रही थी। बीच में बत्तीस तैंतीस वर्ष का युवक और दूसरी युवती जो खद्दर की मोटी धोती और महाराष्ट्र चोली पहने थी। युवक सफेद गाव तकिये से टिका बैठा था—युवती उस के पैरों के पास नौका के किनारे बैठी सामने दूर तक फैली ककड़ी की बारियों और खरबूजे के खेतों को देख रही थी। डोंगी किनारा छोड़ काफ़ी आगे बह आई थी। आरती ने अपनी पतवार स्थिर करते हुए बीच में बैठे युवक से कहा—'भैया! अब लौट चलें। कोठी से दूर निकल आये हैं। लौटते लौटते दस बज जाँयगे। बच्चे

जाग रहे होंगे।'

बीच में बैठी युवती ने पान के डिब्बे से पान निकाल युवक को देते हुए स्वयं खाकर कहा —'हाँ बीबी ! चलो।'

महमूद ने पतवार नाव पर रख दी थी। बैठा सिगरेट पी रहा था। बोला—'जल्दी क्या है भाभी ! आगे चलो न ! तुम तो बड़ी अच्छी भाभी हो। भैया की लौटने की तबियत नहीं। तुम्हारा ख्याल कर नहीं बोलते। आरती थक गई है—तुम आओ मैदान में ! तुम मीलों खे सकती हो।'

आरती ने महमूद को उत्तर न दे भाभी से कहा—'मैं थकी नहीं भाभी ! अब लौटना चाहिये। दादा खाने के लिये भैया का इन्तज़ार करेंगे—बच्चे ऊब रहे होंगे।'

भाभी ने मुस्करा कर कहा—'मुझसे क्या कहती हो बीबी ! महमूद मियाँ से कहो। तुम लोगों के हाथ में 'ह्वील' है—जिधर मोड़ दो। मैं और ये मुसाफ़िर हैं। जहाँ और जब चाहो उतार दो। किश्ती तुम्हारी है। तुम दोनों को खेना है। अभी रात अधखुली है। चाँदनी अभी जवानी पर नहीं आई। आरती जैसी !

आरती ने मुँह बनाते हुए कहा—'भैया ! आप भाभी को मना कर लीजिये। मैं इसीलिये इनसे बोलती नहीं। मैं जवान हूँ या बच्ची—अधेड़ हूँ या बूढ़ी इनसे मतलब ? चलकर हम आप उतर पड़ें। इन लोगों को जहाँ जाना हो जाँय ! मैंने ऐसी आवारा तबियत नहीं पाई रात को घर छोड़कर जल बिहार करती घूमूँ। तुम्हारे कहने से चली आई।'

'और महमूद मियाँ ? उनका तुझे कोई ख्याल नहीं ? बेचारे जाँफसानी से पतवार लिये घन्टे भर से तेरा मुँह देख रहे हैं। तू सीधे मुँह बात नहीं करती। सचमुच दुनिया में मुहब्बत की कद्र नहीं। चाहिये था—साफ साफ भैया से कहती—तुम और भाभी अब जाओ—बच्चों को खिलाओ पिलाओ—सुलाओ। मैं महमूद के साथ चाँदनी की बहार लूटूँगी। उलटा अपने हमदम का साथ

छोड़कर घर जाना चाहती है। बाहरी लड़की! तुम बोलते क्यों नहीं जी—देखा अपनी प्राणप्यारी बहन के रँग ढँग! बाहर छोड़ घर में लोगों पर डोरे डालती है।'

'दुनिया है—' महमूद ने गम्भीरता का नाट्य करते कहा —'आगे बढ़ गयी है न! क्या करोगी तुम—क्या कर लूँगा मैं। भैया और आरती जाना चाहते हैं जाँय। चाँदनी के दोनों पहलू आबाद करने के लिये क्या मैं और तुम काफ़ी नहीं! पर तुम्हें लेकर चाँदनी में निकलते खौफ़ लगता है—कहीं चाँद शर्मा कर काले बादल के चिल्मन में छुप जाय तो .....अँधेरे में लौटना पड़े। तुम इसी चाँदनी की बहन हो न भाभी! तुम दोनों कितनी मिलती जुलती हो। है न आरती!'

आरती भाभी के हँसी मज़ाक से परेशान रहती थी। भैया कम बोलते थे। कभी बीच में कोई चुभती बात कह देते थे। महमूद कभी भाभी के साथ हो जाता था—कभी आरती के साथ। आरती को सहारा मिला। बोली —'भाभी को चाँद सूरज सितारे सभी छेड़ते हैं— इनके देस में यही रवाज़ है महमूद भाई! हम लोग जमीन के रहने वाले हैं—ये चन्द्रलोक की परी हैं। माहताब की चहेती हैं ये। तुम फिकर न करो। जब तक ये बाहर है चाँद इन्हें बराबर घूरता रहेगा।'

'जिस तरह महमूद तुम्हें घूरता है। बोल न अब! बढ़ बढ़ कर बात करती है जरासा पुचारा पाकर! बोल अब खोल दूँ सारा कच्चा चिट्ठा। बाहर सबके सामने महमूद भाई—भाई साहब और अकेले में ख़तों में महमूद मियाँ—मेरे राजा—क़ाबा क़िब्ला खुदा! शौक के आलम में बोला कुछ जाता है—लिखा कुछ और.....'

महमूद ने नाराज़ी दिखाते कहा—'भाभी! बीसियों बार तुमसे कह चुका आरती को मेरे मज़ाक में न घसीटा करो। पहले मुझसे निपट लो तब मेरी बहन को कुछ कहो। आरती सीधी है—कुछ बोलती नहीं। शमीम के आगे तुम्हारी शरारत हवा हो जाती है—बगलें झाँकती हो जब वह तुम्हारे पहले के करतब सुनाती है। मज़ाक उससे किया

करो जो उसकी लज़्ज़त जानता हो। आरती पढ़ने लिखनेवाली लड़की है—संज़ीदा और तरक़्क़ीपसन्द। मुझे भी वैसा समझो। हम दोनों तुम्हारे चंचल मन की थाह पा सकते हैं.....'

'क्या कहना है इन मासूमों का—वाह दूल्हाभाई वाह! क्या बहलाने का तरीका निकाला है। आरती मन मन घुली जा रही होगी। क्यों न हो 'किया असीर मुझे लज़्ते असीरी ने'। प्रेम हो तो ऐसा। भाई भाभी, माँ बाप, घर द्वार समाज और धर्म एक तरफ महमूद मियाँ एक तरफ! कल मुझसे कह रही थी—सुनते हो अपनी लायक और गंभीर बहन की बातें। कहती थी महमूद को छोड़ मुझे दुनिया का राज्य नहीं चाहिये। उनके साथ खुशी खुशी जेल की चक्की पीसूँगी।'

आरती ने झल्लाकर कहा—'भाभी तुम चाहती हो मैं नदी में कूद पड़ूँ। क्यों मनगढ़न्त झूठी बातें करती हो। मैंने तुमसे कब कहा था और क्या कहा था? मुझे भैया की निगाह में रुसवा करना चाहती हो। भैया मुझे जानते हैं और महमूद भाई तुम्हें पोर पोर तक!'

महमूद ने कहा—'आरती! एक दिन जानती हो भाभी कहती क्या थीं—शम्मी गवाह है—कहती थीं मुझे लेकर भाग चलो। तुम्हारे भैया का मन मिलता नहीं। क्या करूँ यहाँ रह कर। तुम जहाँ ले चलोगे चलूँगी। मैंने कहा—भैया मुझसे ज्यादा हसीन हैं! लज़ीज़ यकीनन ज्यादा हैं। बोलीं—मुझे हुस्न और लज़्ज़त की दरकार नहीं। मैं नये सिरे से रोमान्स करना चाहती हूँ। जो खुद ऐसी नियत रखती हो और शरीफ लड़कों पर डोरे डालती हो उस भाभी की बात का क्या एतबार! मैं भैया का लिहाज़ कर रह गया। वरना आज लाहौर या पेशावर—दिल्ली या आगरे के किसी होटल में पड़ा होता। भाभी के मज़बूत आँचल से मेरी गरदन बँधी होती।'

भैया ने भाभी की ठोड़ी पकड़ कोमलता से हिलाते हुए

कहा—'क्योंजी ! यह हरकत तुम्हारी। अगर महमूद मेरा ख्याल न करता तो तुम मेरे हाथ से गयी थीं। जानती हो न मैं फिलासफर किस्म का आदमी। दो चार साल मौज उड़ाकर रोती धोती आतीं और हाथ जोड़तीं तो मैं चुप हो जाता। कहता—जाने भी दो रोओ मत ! कौन बड़ा कसूर कर डाला तुमने। मुझसे कहती तो मैं तुम्हें हिन्दुस्तान घुमा लाता। महमूद ! तुम ऐसे मौके पर मेरा लिहाज़ न किया करो। दुनिया नहीं करती। तुम अपना नुकसान क्यों करो ? मेरे ऊपर जो बीतेगी झेलता रहूँगा।'

'मैं सिपाही हूँ भैया !— महमूद ने कहा—मुझ से कुछ बईद नहीं। यही सोचकर घर आती लक्ष्मी को—छप्पर फाड़ कर बरसती दौलत को लौटा दिया कि तुम भाभी के हिज्र में कैस की तरह मज़नूँ बन जाओगे। फरहाद की तरह सौदाई बन सहरा में घूमते फिरोगे।'

'क्यों ? यहाँ शमीम है न। वह तो ताक में बैठी है—कहीं जगह खाली हो आकर जम जाय। मेरे रहने न रहने से क्या होता है। आरती के दिल को ज़रूर ठेस लगती। कहती मेरे दूल्हा को झँझोड़कर भगा ले गयी। असल में महमूद की हिम्मत न पड़ी। लिहाज़ भैया का उतना नहीं जितना भैया की 'शमशीरा' का था।'

'हमशीरा कहो भाभी ! क्यों उर्दू बोलती हो जब लब्ज का सही रूप नहीं जानतीं।'

'हमशीरा मामूली बहन को कहते हैं। मैं लखनऊ की रहनेवाली हूँ जहाँ हम लोग तुम जैसे साहबज़ादों को उठते बैठते उर्दू पढ़ाया करती हैं। मैंने जान बूझ कर शमशीरा कहा। जो बहन हो और शमशीर भी उसे शमशीरा कहते हैं। समझे ! शम्मी तुम्हारी शमशीरा है। दो क़ातिल शमशीरें तुम्हारे दोनों हाथों में हैं। चाहो तो जमाने में खून खच्चर मचा दो। मगर ज़रा सँभालकर चलाना भैया ! कभी कभी अपनी तेग़ अपने ही दिल जिस्म को घायल कर देती है।'

'कोई बात नहीं। तुम्हारी जैसी लखनवी शमशीर—दोधारी बिना लगे कत्ल करनेवाली मेरे हाथों में सध गई तो बेड़ा पार है। ये बेचारी मियानें हैं भाभी।—शमशीर तो असल में तुम हो—जब चाहती हो दूल्हन की तरह छिप जाती हो—जब चाहती हो बिजली की तरह चकाचौंध मचाने लगती हो! जाने दो—आरती सुनो एक गज़ल। बहादुरशाह ज़फर ने सन सत्तावन के शहीदों पर लिखी थी—भैया इज़ाजत है? भाभी! कुछ सुनोगी! घर लौट ही रहे हैं! आरती! तुम्हारे पास रूमाल में बँधी ककड़ियाँ रक्खी हैं—एक फेंकना इधर—भाभी माँगे तो न देना। महमूद ने दर्दभरी आवाज़ में गाया—

किया किसने ज़ेरे चमन इन्हें
दिया किसने बोलो कफ़न इन्हें
किया किसने मार! दफ़न इन्हें
बेठिकाना इनका मज़ार है।

भाभी ने बीच में कहा—'कोई सिंगार का गीत सुनाओ! उठते बैठते वही गमनाक गाने! चाँदनी रात में कफ़न और दफ़न की चर्चा न करो।'

'सिंगार! मुझे अंगार लगता है भाभी! तुम्हारा सोलह सिंगार करने के लिये मेरे बड़े भैया काफ़ी हैं। मुझे वतन के शहीदों का मर्सिया गाने दो।'

'मैंने आरती का ख्याल कर कहा था। मुझे अब सिंगार की जरुरत नहीं। बेचारी मुहब्बत के नग़मों के लिये तरसा करती है। मगर गाने के लिये कहूँ तो 'वन्देमातरम्' ही सुनायेगी। क्यों बीबी?'

आरती ने अपनी सेवती दलों-सी बड़ी बड़ी—आलोक के सतरंगी पुलिन जैसी दोनों आँखें उठाकर कहा—'मैं कुछ नहीं जानती। मुझे गाने बजाने से क्या प्रयोजन! महमूद भाई गायें—तुम नाचो! पर नाव पर नहीं नीचे जमीन पर! तुम आँख से इशारा करती हो

महमूद को—मैं सब समझती हूँ।'

'क्यों न समझोगी' भाभी ने लपक कर आरती का पैर पकड़ लिया और अपनी ओर खींचा—'तुम्हारी उम्र भी यह सब समझने और प्रेक्टिस करने की आ गयी है। उसी का तक़ाज़ा है रानी! कुमारी ही आगे चलकर दाई बनती है। सुनाओ भैया महमूद गालिब की मैफ़रोश लाइनें जो आरती को ख़त में लिख भेजी थीं।'

महमूद ने भाभी का इशारा समझ लिया। आरती ने अंजली भर गंगाजल ले भाभी के मुँह पर खींच मारा। महमूद ने दो चुल्लू पानी ले भाभी के पैर भिगो दिये। भाभी ने झल्लाकर कहा—'देखते हो ये लोग मुझे नहला रहे हैं—तुम बुत बने बैठे हो!'

'भैया बुतपरस्त है—बुत नहीं। भाभी! बँटवारा हो गया। तुम्हारा चेहरा और गरदन आरती की—पैर मेरे। आरती! ठीक है—तुम्हें अपने हिस्से से सन्तोष है!'

'बिलकुल। क्या मुन्सिफ़मिज़ाज पाया है महमूद भाई ने।'

'सुनो—पीछे इल्ज़ाम न लगाना'—महमूद ने तन्मय हो गाना शुरू किया

दिल ही तो है न आय क्यों—दम ही तो है न जाय क्यों?
मुझको खुदा जो सब्र दे—तुझ सा हसीं बनाय क्यों?
माना नहीं वो चारासाज़—जाय वो बेवफ़ा सही?
जिसको अज़ीज़ जान हो—उसकी गली में जाय क्यों?

आरती ने शर्माकर सिर नीचा कर दिया। भाभी ने विजय की हँसी हँसकर कहा—'और चँहको बुलबुलेपर्वतपूर! देखो! तुम्हारा चाहनेवाला कैसे तिश्नये मिज़राब साज़ छेड़ रहा है। सुनो! प्रेम के इस स्वर्गीय निवेदन को—आत्मा के कठोर प्रणय आह्वान को। इसको न सुनना पाप है—बड़ा और कुरूप।'

आरती के भैया ने जो अब तक खामोश थे महमूद से पूँछा—'तुम्हारा थीसिस कब पूरा होगा। मैं चाहता था तुम इस साल पूरा कर लेते।। शम्मी आकर लड़ जाती है। पूँछा—मैं क्या करूँ—खुद दूल्हन बन तेरे घर आ बैठूँ! बोला—अपनी भाभी को लेजा—तुझे एक साथिन चाहिये न! बोली—मैं आरती को चाहती हूँ। मैंने कहा—यह तो वैसी बात हुई जैसे मैं कहूँ—मैं महमूद को चाहता हूँ। मगर उसे रोते देर नहीं लगती। बड़ा दुख उठाया है शम्मी ने। माँ, बाप, शौहर और बेटे की याद उसे उठते बैठते सताती है।'

भाभी ने कहा—'वह आरती को चाहती है। मुझे लेकर क्या करेगी—मैं उसके किस मसरफ़ की हूँ। आरती पर महमूद का दिल बुरी तरह आया हुआ है—वह जानती है। आरती के दिल का हाल तुमसे छिपा नहीं। शम्मी अपने भाई के दिल की राहत का ख्याल रखती है। तुम अपनी बहन के सुख दुख को देखकर भी नहीं देखना चाहते।'

महमूद ने कहा—'भाभी! मैंने तय किया है मैं शादी न करूँगा। शम्मी का मन घर में नहीं लगता ससुराल में जाकर रहे या बगल में जाकर चचा चची के साथ। मैंने मुल्क की ख़िदमत का रास्ता चुना है। मुझे विवाह की जल्दी क्या है? दस पाँच साल के बाद देखा जायगा। तब तक दुनिया जाने कितनी बदल जायगी।'

भाभी ने गंभीर होकर पूँछा—'क्या शादी कर लेने से मुल्क की ख़िदमत का रास्ता बन्द हो जाता है? अगर तुम्हारे भैया आज देश की सेवा करना चाहें तो या मुझे ज़हर दें या तलाक देकर छोड़ दें। महमूद! शादी कर लेने पर तुम सार्वजनिक सेवा के अधिकारी न रहोगे! मैं कहती हूँ तुम्हारा ख्याल गलत है। तिलक—गाँधीजी देशबन्धु दास—जवाहरलाल ये सब···और डा० अन्सारी, मौलाना आज़ाद

'उनकी बात न करो भाभी! वे सब बड़ी ऊँची हस्तियाँ हैं।

मेरे सिलसिले में उनकी मिसाल पेश कर तुम गलती करती हो। मैं अदना सा आदमी हूँ। यों ही मेरे ऊपर झञ्झटें हैं—अपनी फ़िक्रें हैं। क्यों इस नये ज़िन्दाँ में पैर डालूँ ?'

'यह ज़िन्दाँ नहीं है भैया! इन्सान की ज़िन्दगी का मरकज़ है। अम्मी और अब्बा होते तो तुम उन्हें इस फ़ुर्ती से नाहीं न कर सकते। शादी तुम्हें करनी होगी। तुम्हारी दिला तुम्हें मिलेगी। जिस खौफ से तुम अविवाहित रहने की बात करते हो उसे मैं जानती हूँ—तुम्हारे भैया जानते हैं। उसे शमीम जानती है—आरती भी जानती है। तुम्हारी बात सुनकर तुम्हारी महानता पर गुरूर होता है। पर तुम दोनों के दिल की रियासत तबाह होते देख अफ़सोस भी कम नहीं होता। इन्सान में भेदभाव पैदा करने वाले धर्म का अब खात्मा होना चाहिये। गुज़रे ज़माने में उसने फायदा पहुँचाया होगा। अब वह मुर्दा हो चुका है। हमें उसे गाड़ देना चाहिये—थोड़े से आँसू बहाकर ही सही। तभी सच, श्रेष्ठ और स्थिर प्रेमी मानव-मन को वह पावन स्पर्श मिलेगा जो मनुष्यता पर उसके खोये विश्वास को जागृत करे। वह महान राष्ट्रीय विश्वास जो सदियों से स्थान-भ्रष्ट हो चुका है। यह नहीं होगा तो राष्ट्र का यौवन कभी अमर स्वर्ण के रूप में विकसित नहीं हो सकता—ढल नहीं सकता।'

महमूद और आरती दोनों चुप थे। भैया ने कहा—'महमूद! शीला (पत्नी) ठीक कहती है। तुम विवाह नहीं करना चाहते। तुम्हारे सामने आत्मत्याग और आत्मदमन का ऊँचा आदर्श है जो अपनी जगह पर ठीक है। लेकिन मेरे और शीला के विचार तुम्हें मालूम हैं। तुम आरती को चाहते हो—उससे प्रेम करते हो। यह हम लोगों से छिपा नहीं है। क्या मेरी और अपनी भाभी की किसी बात से—किसी चेष्टा से तुमने ख्याल किया हमें यह सब गवारा नहीं। थोड़ा ख्याल बुज़ुर्गों का ज़रूर है। हम राजपूत हैं—सीसोदिये और तुम पठान हो खान्दानी। तुम्हारे खानदान के दो चार

मकान गाँव में हैं। मेरे मा बाप मौजूद हैं जो शायद यह गवारा न कर सकें। पर मेरे सामने आरती और तुम्हारी दुनिया की चाँदनी का ख्याल है। तुम्हें यही संकोच है या और कुछ ?'

शीला ने कहा—'और क्या है! ये छोटे बच्चे नहीं! क्या इन की तबीयत में शादी की ख्वाहिश नहीं। पर आरती को छोड़ किसी और से विवाह करना नहीं चाहते। इतनी बड़ी बात—अनहोनी सी—नामुमकिन सी ज़ुबान पर लावें! बेचारे सामाजिकता के ख्याल में मारे जा रहे हैं। ये मर्द हैं—झेल ले जायँगे हमारी आरती का क्या होगा ?'

'कुछ न होगा भाभी—महमूद ने विह्वल कण्ठ से कहा—वह मुझे भूल जायगी—मैं उसे भूल जाऊँगा। समझ लूँगा बचपन का इन्द्रधनुष था जो आकर अपने रास्ते लौट गया। कुछ तकलीफ होगी—दर्द होगा—दुख मिलेगा। दुख तो वह चालक शक्ति है जो इन्सान को हिलाती—खिलाती और आगे बढ़ाती है। इस दुख के खून से मैं जिन्दगी की इमारत की सीमेन्ट सानूँगा। आरती की याद मुझे कभी अपने रास्ते से विचलित न करेगी। तुम विश्वास करो भैया! नयी जिन्दगी का सन्देश देने वाला मेरा दिल प्रेम के चिराग को कभी बुझने न देगा। इसकी गरम रौशनी में मेरे घर की एक एक कोठरी रौशन रहेगी। मेरा अँधेरा दूर हो जायगा। ज्यादा मुझे न चाहिये। जानता हूँ आरती को मेरी बातें अच्छी न लगेंगी। हमारा पूरा बचपन और जवानी का नया अहद साथ बीता है। उसे मुझसे वैसी मुहब्बत है चाँद और चाँदनी, सूरज और धूप, बसन्त और बहार में होती है। पर बाबूजी और अम्मा! उन्हें यह गवारा होगा! वे कैसे मेरा आरती का निकाह होने देंगे। और ज़ाहिर है अगर हम दोनों की शादी नहीं हो सकती तो इस मुहब्बत का चाक हो जाना बेहतर है। हम दोनों को अपनी हसरतों का गला अपने हाथों घोंटना होगा। मैं समझता हूँ मुझमें यह कूवत है। मैं ऐसा कर सकता हूँ। और

आरती तो राजपूत लड़की है। उसके लिये जीवन विज्ञापन और जुआ नहीं, युद्ध और आराधना है। क्यों आरती! तुम भी कुछ कहो!'

'मैं कुछ नहीं जानती। तुम और भैया मिलकर जो फैसला करोगे मुझे मञ्जूर होगा। मैं तुम्हें न पाकर रह सकती हूँ—तुम्हें पाकर भी मिट सकती हूँ। पर तुम शादी न करोगे और मुझे शादी करनी होगी! भाभी! क्या मैं अविवाहित नहीं रह सकती?

'नहीं जी! तुम दोनों की शादी होगी। तुम दोनों साथ रहोगे। क्यों अभी से व्याकुल निराश हो रहे हो। समाज में बवंडर आ जायगा। गाँव क्या पूरे जिले और सूबे में हलचल मच जायगी। पर हमें अपने बच्चों का जीवन देखना है। समाज हमारा क्या कर लेगा। हम कोई बुरा काम नहीं कर रहे। समाज बड़े बड़े गुनाहों को भूल जाता है। बड़े बड़े पापों को निगल लेता है। हम जो करने जा रहे हैं उस पर आने वाली नस्लें एक दिन गर्व करेंगी! पीढ़ियाँ हमारा अभिनन्दन करेंगी। तुम दोनों का स्नेह जिस आदर्श जीवन-भूमि पर पनपा है उसे मैं जानती हूँ। उसका निर्माण और पोषण जिन सूक्ष्म शक्तियों द्वारा हुआ है उन्हें मामूली दुनियादार न देख सकते हैं—न समझ। तुम दोनों जलती हुई ज्वालाओं के ढेर पर खड़े हो यह मैं जानती हूँ।'

महमूद ने कहा—'मैं तुम्हारी राय से इत्तिफ़ाक नहीं रखता। मैं सोशलिष्ट हूँ—समाजी व्यवस्था और पाबन्दियों पर विश्वास रखने वाला। हमारे इस इरादे से किसी तरह की बदगुमानी फैलती है या हमारे अनमोल बुजुर्गों को तकलीफ होती है तो हमें कुछ नहीं करना। मैं इस मामले में आरती की राय सुनना चाहूँगा। मैंने अपने लिये जो रास्ता चुना है उसमें एक पैर जेल के बाहर और एक पैर जेल के अन्दर रहेगा। आरती को समाज के भीतर रहकर विरोधी ताकतों से मोर्चा लेना होगा। अगर वह अपने में हिम्मत और कूवत पाती है तो मुझे कुछ नहीं कहना। बाद में कभी मुझे इसका चेहरा उदास और गिरा दिखा तो मैं

पागल हो जाऊँगा। जो काम किया जाय बहादुरी से किया जाय या न किया जाय।'

भैया ने कहा—'आरती को मैंने मज़बूत और निर्भीक पाया है। इस सिलसिले में मुझे उसकी ओर से सन्देह नहीं। अन्देशा बाबूजी और अम्मा की तरह से है। बाबू जी रायबहादुर हैं—सरकार के पेन्शनखोर सनदयाफ़्ता कलेक्टर हैं। उनकी ज़हनियत में मुसलमान के लिए कोई भाईचारा नहीं। करेला कड़वा—फिर नीम चढ़ा। यह सरकार अपनी मशीन के पुर्जों में कैसा भयङ्कर भेदभाव पैदा कर देती है! एक मिसाल दूँ। जब कानून पढ़ता था तब होस्टल छोड़ एक हिन्दू बस्ती में रहने लगा था। एक दिन अपने मकान के सामने रहने वाले एक सेक्रेटेरियट के बाबू से शाम को खड़ा बात कर रहा था। किसी मुसलमान का शव उस रास्ते निकला। उसने जानते हो लाउड थिंकिंग करते हुये क्या कहा—बोला—एक तो कम हुआ। मन में आया—मुँह पर झापड़ मारदूँ। तबियत पर ज़ब्रकर बोला—क्या राँड़ औरतों जैसी बात आपने कही है। आपकी चेतना इतनी पतित होगई है और अँगरेजी सरकार ने आपके अन्दर इतना ज़हर घोल दिया है कि आप जानवर की सतह पर उतर आये हैं। एक इन्सान को मरते देखकर आपको उसके और उसके परिवार से इन्सानी हमदर्दी भी नहीं होती। पर वे चिकने घड़े थे—कोई असर न हुआ।'

नाव किनारे किनारे आप से आप अनुकूल वायु पा बहती आ रही थी। बीच में एक ककड़ी की बोरीमें कुछ लड़कियाँ घेरा डाले बैठी थीं। ढोलक पर गीत गा रही थीं—'देख लेव राजा नज़र भर के देख लेव'। आरम्भ अन्त के बन्धनों से मुक्त लड़कियाँ गाते गाते हँस रही थीं—हँसते हँसते गा रही थीं। बीच बीच में इस मोर की शक्ल की बनी नाव को देख झुक झुक कर एक दूसरे से कानाफूसी करने लगती थीं। लम्बे लम्बे ठहाके—लचकती हुई अँगड़ाइयाँ और मदभरी जँभाइयाँ। मिलकर चाँदनी और निस्तब्धता को पूर्ण न होने

देती थीं।

आरती ने कहा—'भाभी! सुना ये लड़कियाँ क्या गा रही हैं। समझो ज़रा!' भाभी ने कहा—'मेरी समझने की उम्र नहीं अब। तेरी उम्र है—ज़माना है। तेरी दिलबस्तगी का सामान कर रही हैं।'

मैया ने कहा—तुम्हें हर वक्त मज़ाक ही सूझता है या दुनिया में और भी कुछ। कभी आरती पर—कभी मुझ पर—कभी महमूद पर कभी शमीम पर—जब देखो फब्तियाँ कसा करती हो। ज़िन्दगी खाली तमाशा नहीं जैसा समझती हो।'

आरती ने कहा—इन्हें हर ऋतु—हर महीने में हरा सूझता है। आप को कितनी फिक्रें और उलझने हैं इससे इन्हें क्या मतलब? जब देखो शोखी भरा मज़ाक और हँसी। तुम बड़ी चंचल होती जा रही हो भाभी! इरादे बता दो न! पूरा करने की कोशिश की जाय। मैया अभी बूढ़े नहीं हो गये। क्यों तुम्हारे हौसले आधे पेट रहें।'

महमूद ने भाभी का पक्ष लेना उचित समझा। बोला—'भाभी मेरी हँसी की देवी है—खुशी की मूरत—खेलती बोलती मूरत। जहाँ बैठती है वहाँ फस्लेबहार का मंज़र छा जाता है। आरती की तरह मनहूस नहीं कि सन्नाटा खींचे तो घन्टों मुँह से बोल न सुनाई दे। अंगूर के कुञ्ज में बजती शहनाई सा भाभी का हँसी मज़ाक मुझे जेल में बराबर याद आता था। बेले की तरह घनी उनकी लहरीली आवाज़ रात को सुध आने और नींद उचट जाने पर फिर सोने न देती थी। भाभी! जब तुम लखनऊ में पारसी साड़ी पहनकर पढ़ने जाती थीं तब सड़क पर हाहाकार मच जाता रहा होगा। दो चार केसेज रोज होते रहे होंगे। मैया तुम्हें वहाँ से ले आये—लखनऊ के नौजवानों को राहत मिली। वर्ना क़सम खुदा की छूरियाँ चल जाती छूरियाँ!'

नाव किनारे आ गई। महमूद ने उतर कर उसे घाट पर गड़े लोहे के खूँटे से बाँध दिया। सब लोग गाँव की ओर

चले। सन्यासिनी प्रतिमा की कुटिया टीले पर चाँदनी में स्तब्ध खड़ी थी। नीचे से गुज़रते हुये महमूद ने हाँक लगाई—'दीदी ओ दीदी! सो गईं क्या? अभी दस भी नहीं बजा।'

'कौन! महमूद भैया?' झपट कर सन्यासिनी चारपाई से उठ बैठी। आकाश के नक्षत्रों को छोड़ नीचे उजली चाँदनी में और उजले लग रहे इन चार तारों को देखती कुटिया के किनारे खड़ी हो गई। ऊपर से नमस्ते करते हुये बोली—आओ भैया। आओ आरती! बड़े भैया! तुम आओ तो शायद भाभी आवें। वे मेरी कुटिया में क्यों आने लगीं—

'देर हो रही है बहन'—महमूद ने चलते चलते कहा—'भाभी को सेज पर जाने की जल्दी है। भैया को बच्चों की चिन्ता है। मुझे आरती की फिक्र है जो नाव खेते खेते थक कर चूर हो गयी है। बचा मैं—मुझे भी चलने दो। शम्मी बैठी भला बुरा कह रही होगी। तुम सूत कात रही थीं!

'अभी खत्म किया है। पड़ी आसमान के तारे गिन रही थी। कभी आ जाया करो भैया!'

आगे बढ़कर भाभी ने कहा—महमूद! ये भी तुम्हारी दीदी हैं। कितनी दीदियाँ हैं तुम्हारी? क्या हर हसीन और नौजवान औरत को दीदी पुकारे बिना सन्तोष नहीं होता। आरती अगर तुमसे उम्र में छोटी न होती तो उसे भी दीदी कहते!'

महमूद ने पास आकर कहा—'तुम्हें भी दीदी कहने की इच्छा होती है। पर सोचता हूँ तुम नाराज न हो जाओ। तकल्लुफ न करना—जब कहलाने की इच्छा हो तब बता देना। मैं इसी नाम से पुकारना शुरू कर दूँगा।'

आरती ने पास आ कहा—'भाभी रुक जाओ! भैया पीछे रह गये हैं उन्हें आ जाने दो। अकेले तकलीफ होगी उन्हें! तुम्हें कुछ ख्याल नहीं!'

'अपने भैया का ख्याल जितना तुम कर सकती हो उतना हम कर

ही कैसे सकती हैं। लाख हो हम पराये घर की लड़की हैं—तुम अपनी ही हो। जितना उनकी भूख प्यास—दुख दर्द और तबियत के चढ़ाव उतार को तुम समझ सकती हो उतना हम नहीं। उनके मिज़ाज की गर्मी-सर्दी, खुश्की-तरी से जितनी तुम वाकिफ़ हो गैर नहीं हो सकती।'

तीन

कमरे में एक तरफ टेबिल पर दर्पण, तेल की शीशी, कंघी तथा बाल सँवारने की कई चीज़ें रक्खी थीं। दूसरी ओर किताबों और पुराने पत्र पत्रिकाओं से भरी आल्मारियाँ थीं। बीच में एक चारपाई जिस पर दरी और सफेद खद्दर की चादर जिसके किनारे पर लाल रेशम से छोटी सी आरती बनी थी। एक कोने में सुराही और गिलास रक्खा था। पढ़ते पढ़ते आरती ने रुक कर किताब चारपाई पर उलट दी—एक पूरी खिंचावदार अँगड़ाई लेकर टेबिल के दर्पण के सामने खड़ी हो गई और अलग अलग अपने अंग प्रत्यंग का प्रतिबिम्ब देखने लगी। तब तक भाभी के साथ महमूद ने इस दुमंजिले कमरे में प्रवेश किया जिसके सामने आरती की सोने की लम्बी सी स्वतन्त्र छत थी। महमूद कमरे में चुपचाप दाखिल हो आरती के पीछे खड़ा हो गया। दोपहर ढल चुकी थी। महमूद ने उद्विग्न प्रेम से झुके आरती के यौवनपूर्ण मुख की कोमलता-मंडित आभा पीछे से एक नज़र में पूरी देख ली। उसे आज वह नवीन और आश्चर्यजनक लग रहा था। आरती की आँखों के पतले गुलाबी डोरे उसे नयी शराब की छहरें छोड़ते से लगे। महमूद ने मन ही मन कहा—'मानना पड़ता है आरती के नैन बड़े सुन्दर हैं। केवल उनकी सुन्दरता और नशीली तन्मयता—उन्मादक घनी घनी छाँह देने वाली श्यामलता ही महमूद समझ सका है। वे बड़े हैं या छोटे—उनमें विष भरा है या अमृत—वह समझ नहीं पाता। उनमें संकोच नहीं—दुविधा नहीं—केवल शक्ति की

स्थिरता है। पीछे महमूद को खड़ा पा, उसके तरुण निश्वास की स्निग्ध उष्णता से घूमकर आरती ने देखा। वर्षाकाल के प्रातःकालीन सूर्य की निर्मल धूप जैसी रक्त में प्रवाहित हो उठने वाली ज्योति लिए महमूद मुग्ध खड़ा था! आरती ने आदर से कहा—'बैठो! चारपाई पर आराम से। वही पुरानी आरती हूँ। मुझे इतने गौर से देखने की ज़रूरत नहीं।'

महमूद ने चारपाई पर लेटते हुये कहा—'भाभी—भाभी! अरी भाभी।' भाभी खिसक गई थीं। आरती ने सामने कुर्सी पर बैठकर पङ्खा झलते कहा—'जागते चलते ख्वाब देखते हो! भाभी क्या इन दीवारों में निहाँ है जो तुम्हारी आवाज़ पर निकल आयेंगी!'

'वे मेरे साथ यहाँ तक आई थीं। मैं जैसे दाखिल हुआ वे चल दीं। बड़ी समझदार हैं। सोचा होगा मैं उनके सामने वह सब न पा सकूँगा जो पाने का मुस्तहक़ हूँ। आरती! प्यास लगी है। पानी पिलाओ। अल्लाह तुम्हारा भला करेगा।'

'पानी या शर्बत! कुछ फल ले आऊँ! कहाँ से आ रहे हो!'

'खाली पानी। पर ठंडा—बेहद ठंडा। जितनी ठंडी—जितनी शीतल तुम्हारी मुस्कान कभी कभी होती है।'

'कभी कभी—हमेशा नहीं—गोया मैं एक्टिङ्ग करती हूँ।' सुराही से पानी उड़ेल उसमें सामने आले की शीशी से गुलाब छोड़ते हुए आरती ने कहा—'कभी कभी इतनी प्यारी बात कह देते हो मुझे मज़ा आ जाता है। गोया मेरी मुस्कान कभी ठंडी होती है कभी गर्म—कभी मीठी—कभी फीकी!'

पानी पीकर गिलास चारपाई के नीचे रखते हुए महमूद ने कहा—'यह तो तकदीर और मौके की बात है। कभी कभी तुम्हारा चेहरा मुझे इतना सर्द और शीतल लगता है जैसे पहाड़ की बर्फीली धूमिल चाँदनी। कभी वही इतना प्यारा पर गर्म लगता है जैसे जुलाई की पथरीली नीली साँझ। माफ़ करना। कई दिन से तुमसे मिलने की सोच रहा था पर आ न सका। उठते बैठते सोचा करता था—

आरती के घर नहीं जाता। अब सोचता हूँ दिन रात यह सोचते रहने से तुम्हारे घर चला आना हजार गुना अच्छा है। तुम्हारे घर आने पर मेरी लौट कर जाने की तबियत नहीं होती। पड़ा पड़ा तुम्हें बराबर दो चार दिन कम से कम देखता रहना चाहता हूँ।। लगता है मेरी यह तेज़ प्यास बुझेगी नहीं।'

आरती ने कहा—'मैं यह सब पूँछती नहीं। कहाँ से आ रहे हो यह जानना चाहती हूँ। तुम अपनी बात के आगे दूसरे की सुनते कब हो!'

'मैं साइकिल पर सुमेरपुर गया था। सीधा आ रहा हूँ। साइकिल तुम्हारी ड्योढ़ी पर छोड़ भाभी को लेकर यहाँ आया हूँ। दस बज गये थे खा पीकर निकलते। रास्ते में लू और गर्मी के ऐसे खूँखार थपेड़े झेलने पड़े कि माँ का दूध याद आ गया। पर जाना ज़रूरी था। जिले की पोलिटिकल कान्फ्रेन्स हो रही है। मैं रिसेप्शन कमिटी का चेयरमैन हूँ। इन्तज़ाम देखना था। मेरा सेक्रेटरी ऐसा लार्ड है कि बीस दिन से ससुराल में पड़ा ऐश कर रहा है। चेअरमैन अपना और अपने सेक्रेटरी दोनों का काम देखते हैं।'

'साइकिल पर ऐसी लू धूप में सोलह मील जाना और आना! जल्दी क्या थी। रात को लौट आते।'

'ज़ोहरा को बुखार में छोड़ गया था। जरूरी काम न होता तो मैं जाता न! लौटा उसकी फिक्र से। यहाँ तुम्हारे कमरे में पड़ा गप्पें झाड़ रहा हूं।ठीक होगी वह। तुम और भाभी कान्फ्रेन्स में चलोगी न!

'आप ले चलेंगे तो चलूँगी। आप जहाँ ले चलेंगे चलूँगी। पर आप मेरे घर आते क्यों नहीं! दिन में एक बार आ जाया कीजिये—जब तक गाँव में रहिये। अगस्त सितम्बर तक आप फिर यूनिवरसिटी के काम से चले जाँयगे। एक बार बाहर निकल जाते हैं तो लौटने की नौबत नहीं आती। आपके एक एक खत के लिये तरसा करती हूँ.....'

'और मैं वहाँ तुम्हारी एक एक झलक के लिये—शबे माहताब जैसी एक एक दूधिया चितवन के लिये—तुम्हारी एक एक कपूरी मुस्कान के लिये—तुम्हारी चूड़ियों की एक एक गीत-भरी झंकार के लिये। मेरी ओर देखो! मेरे तरसने की सीमा है! कौन जानता है मुझे जिन्दगी भर ऐसे ही प्यासा और तपिश का एक सुलगता पुतला बनकर न रह जाना पड़े! कौन सी कमबख्त घड़ी थी जब तुमसे उन्स हुआ। कहाँ जाकर ख़त्म होगी मेरी गुड़िया प्रेम कहानी। तुम्हारी मदभरी बातें—तुम्हारी रसीली और और सिंगारभरी—बिना काजल काली भौंरालीं आँखें ऐसे पाप की ओर आमंत्रित करती हैं जिससे अच्छे पुन्य का क़यास नहीं किया जा सकता। तुम चाहे अबोध हो पर मुझे तुम्हारे हुस्न पर अभिमान है। यह अभिमान मेरी जिन्दगी की बरबादी का वायस न बन जाय। चलूँगा अब।' जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाता महमूद उठ खड़ा हुआ। टेबिल के दर्पण के सामने खड़े होकर बाल ठीक किये और चप्पल पहन छत पर आया। आरती ने कहा—'ज़ोहरा को देखने मैं चलना चाहती हूँ। दो चार मिनट रुको—साथ चलूँ।'

'हाँ, मैं रुका हूँ।' कह कर महमूद छत की मुन्डेर पर झुक सामने दूर पर दिखती अपनी कोठी को देखने लगा। उसकी कमर में एक आकर्षक झुकाव पैदा हो गया था। आरती ने एक बार महमूद का सुगठित पृष्ठदेश देखा। फौरन बगल के दूसरे कमरे में जा साड़ी बदल महमूद के पीछे आ खड़ी हुई और कन्धे से कन्धा सटा कर बोली—'चलो! भाभी से मिलते चलो। मैं ड्योढ़ी से नहीं निकलूँगी। पीछे के दरवाजे से निकल बाहर सड़क पर मिल जाऊँगी। साइकिल पड़ी रहने दो। नौकर से मँगवा लेना। मेरे साथ भैया के बगीचे के छोटे फाटक से होकर निकल चलना।'

'मुझे चोरी करना सिखाती हो। मेरे साथ सदर दरवाजे से होकर निकलने में लाज लगती है—बाबू जी का खौफ़ लगता है। ये

तुम्हारे कबूतर जैसे सफेद दोनों पैर कब तक गुलाब की कलियों को रौंदकर चलेंगे ! बीसों दफे मेरे साथ फाटक से होकर निकली हो —आज हिचक कैसी !'

'योंही—खास बात नहीं। चलो भाभी से निपट लिया जाय। दो चार गर्मागरम बातें सुनने को मिलेंगी। उनसे कह दूँगी मैं घन्टे दो घन्टे में लौटूँगी। यहाँ अम्मा कहीं मुझे पूरे मकान में ढूँढ़ती न फिरे।'

'भाभी इधर आ रही हैं। कहिये सरकार ! अब आप को मेरी सुध आई। आप खबर लेने आरती के कमरे की तरफ चल पड़ीं। अब तक गोया मैं यहाँ न था।'

'भाभी के लाल लाल अधर उत्तर देने के लिये फड़कने लगे मानों किसी ने उन पर लाल मिर्च छिड़क दी। आरती का सिमटा और महमूद के चौड़े कन्धे की आड़ से हिलता चेहरा देख बोलीं—'कहाँ चली बीवी—सज धज कर—महमूद के घर की तरफ ! भैया से मुलाकात हुई महमूद मियाँ !'

'नहीं भाभी। तुम मिल गई—बहुत है। वे कमरे में पड़े फिलासफ़ी की कोई मुश्किल किताब पढ़ रहे होंगे। क्यों उन्हें डिस्टर्ब करूँ ! ज़ोहरा को सुबह बुखार था। सीधे घर जाऊँगा।'

'मैं भी ज़ोहरा को देखने जा रही हूँ। आठ बजते बजते आ जाऊँगी। कई दिन से बहन को नहीं देखा ! मिल आऊँ जाकर। तुम हुक्म देती हो ?'

'मेरे हुक्म की जरूरत क्या है रानी ! खाविन्द के घर जाने में किसी का हुक्म नहीं लिया जाता। हो सका दो घन्टे बाद मैं आऊँगी—तू मेरे साथ लौटना।'

'और भैया—उन्हें ले आना भाभी।'

'उन पर मेरा बस नहीं। कहूँगी—नहीं अकेले चली आऊँगी। तुमने कुछ खाया पिया या इसका मुँह देखकर पेट भर गया। अरी कुछ खिलाया पिलाया महमूद को या कोर्टशिप में मस्त रही।

कुछ शर्बत-पानी-फल-फूल-कन्द-मूल !'

'तुम जानती हो भाभी ! तुम्हें देख मेरी भूख प्यास हर जाती है। जरूरत क्या है !'

मगर आरती को देखकर दुगने जोर से जग पड़ती है। है न ! अच्छा जाओ अब। तुम्हारे भैया को देखूँ। सो रहे हैं या पढ़ रहे हैं।'

बाहर हवा में धूल के बगूले उड़ रहे थे। महमूद ने रूमाल निकाल सिर और कान पर बाँध दिया। अपना धूप का चश्मा आरती को देकर बोला—'इसे तुम लगा लो। दो फर्लाङ्ग चलना है।'

आरती ने चश्मा लेकर लगा दिया! दोनों तेज़ कदम बढ़ चले। रास्ते में महमूद ने कहा—'तुम भी अब मेरे घर नहीं आती हो। मुझे शिकायत है तुमसे। अब बड़ी हो गई हो तुम ! पहले की बात दूसरी थी। हल्की फुल्की चिड़िया सी घूमती थीं। अब जवान हो गयी हो। जवान लड़की कैसे किसी दोस्त के घर रोज रोज जाय। पर मेरा मकान तुम्हारा मकान है। उसे तुम भूल जाओगी तो कैसे काम चलेगा ! कभी कभी आ जाया करो—उसमें भी जान पड़ती रहे ! वर्ना ईंट पत्थर का बेजान मकान तो है ही।

आरती ने स्नेहपूर्वक महमूद की पीठ थपथपा कर कहा—'आऊँगी—क्यों न आऊँगी ! तुम चाहोगे तो हमेशा के लिये उस घर में आ जाऊँगी।'

'मैं भला कब न चाहूँगा ! जिस दिन मेरी चाह पूरी होगी उस दिन मेरी खुशी पर नदियाँ रश्क करेंगी—समुन्दर हसद करेंगे। आस्मान बसन्त की बेहन्तहा लुनाई बरसाकर मेरे घर का सिज़दा करेगा ! इतना आसान नहीं है आरती ! बड़ी लड़ाई करनी पड़ेगी। हमारा कामयाब होना जितना मुमकिन है उतना ही नामुमकिन ! मैं ला-मज़हब हूँ। कोर्ट के पूँछने पर साफ़ कह दूँगा—मैं मुसलमान नहीं—मेरा कोई धर्म नहीं। तुम हिन्दू हो—तुम क्या कहोगी !'

'जो तुम कहोगे'—आरती ने काँपते हुए कहा। उसकी कँप-कँपी खुली गरदन और कुछ खुले सीने पर मोतियों की लड़ी गूँथती पसीने की बूँदों में कंपन का तार छोड़ रही थी। 'मुझे कुछ नहीं चाहिये। मैं तुम्हें चाहती हूँ। तुम्हें पाकर मुझे कुछ भी पाना शेष नहीं रहता। तुमने कहाँ की तृष्णा—प्रेम की कैसी दुर्दम प्यास—आत्म समर्पण की कैसी मनुहारभरी आग मेरे दिल में लगादी! तुम्हें छोड़ना चाहूँ छोड़ नहीं सकती। लगता है तुम्हें पाकर दो चार जीवन समूचे और सफल हो जायँगे.....'

आरती ने आकाश की ओर अर्ध-निमीलित नेत्रों से देखा। चश्मे के गहरे नीले रङ्ग में बादल के सफेद टुकड़े छोटी छोटी हिमराशियों की भाँति इधर उधर तैर रहे थे। आस्मान में जगह जगह तिरछी ढलानें थीं। कई जगह ऊँची घाटियाँ थीं जिनके आँचल में—जिनके शिखरों में भव्य बादली प्रासाद बने थे। शाम हो आई थी। सूरज पश्चिम में जा रहा था—छिछलती दृष्टि से चारों ओर देखता हुआ। महमूद की हवेली आगई! फाटक पर खड़े पहरेदार ने अदब से सलाम किया और हट कर खड़ा हो गया। आगे महमूद—पीछे छोटी नदी सी—कोमल पतली नागिन की भांति बलखाती आरती। दोनों भीतर के बड़े आँगन में खड़े हो गये। महमूद ने पुकारा—'शम्मी देख कौन आया है—ऊपर है क्या?'

'आई भाई! ज़ोहरा एक मिनट को छोड़ती नहीं।'

'तुम न आओ। हम खुद आ रहें हैं।' ऊपर के कमरे में चारों ओर खस की टट्टियाँ लगी थीं! बीच में चारपाई पर ज्वर से विवर्ण मुख लिए नन्हीं जोहरा लेटी थी। एक तरफ नौकरानी—सिरहाने शमीम बैठी पङ्खा झल रही थी। आरती को देख कर उसकी आँखें जगमगा उठीं। ज़ोहरा मौसी मौसी की रट लगाती उठ बैठी। पास पड़ी कुर्सियों पर महमूद और आरती बैठ गये। शमीम ने पङ्खा लेकर भाई और आरती पर झलना शुरू किया। आरती ने छीनकर खुद झलते हुये कहा—मज़ाक करती हो! तुम

इतनी बड़ी होकर पङ्खा झलोगी ! दूसरा पङ्खा लेकर ज़ोहरा पर झलो। मैं अपने इनके ऊपर झलती हूँ।'

शमीम की आँखों से प्रेम की प्लावित धारा उमड़ रही थी। एक विचित्र संगीतमयी लय वहाँ से बह रही थी। आरती को जितना वह देखती थी उतना ही उसका दिल नम होने लगता था। न जाने क्यों उसकी इच्छा होती थी आरती से गले मिलकर रोये। नौकरानी को पुकार कर चाभी का गुच्छा देती बोली—'देख मेरे कमरे में ताजे खस के शरबत की शीशी रक्खी है। सफाई से तीन चार गिलास बना ला। खरबूजे और सन्तरे तश्तरी में रखना। मेरी आरती का मुखड़ा कुम्हला गया है। पीले पीले शोलों की चमक उसके पसीने से भरी पेशानी में काँप काँप जाती है। यहाँ सब आराम है पर बिजली नहीं है। भैया भाभी कई दिन से नहीं आये। तुम्हारे आने से बड़ा ढाढ़स मिला बहन! ज़ोहरा मुझे हलाकान किये थी। भाभी आज आवेंगीं ? बुखार का चौथा दिन है। डर लगता है मोतीझीरा न हो। मेरे दुर्भाग की हद नहीं आरती ! महमूद और ज़ोहरा मेरी दो आँखें हैं। इन्हीं के सहारे मुझे जिन्दगी का सिलसिला झेलना है। गुज़स्ता जीवन की बहार—इस भरे पूरे घर की रानाइयाँ जब याद आती हैं तो कलेजे पर कोल्हू चलने लगता है। खुदा करे किसी औरत को इतना दुख न झेलना पड़े। कहाँ चल दिये भैया ! शरबत पीलो तब जाओ। दोपहर भर ज़ोहरा मामू मामू लगाये रही।'

'जाकर कपड़े बदलूँगा। मुँह हाथ धोकर खाऊँ पियूँगा। तुम अपनी आरती सजाओ तब तक—मैं अभी आया। ज़ोहरा की आँखें झपक गयी हैं। जगाना मत। अभी आकर उससे खेलूँगा। शम्मी ! आरती अपने घर पहले की तरह नहीं आती। पहले रोज आती थी। अब हफ्तों इसकी सूरत नहीं देखने को मिलती। रास्ते में मैं यही कह रहा था। तुम भी अपनी शिकायत कह डालो।'

महमूद अपने कमरे चला गया। मुँह हाथ धो बालों की धूल और अस्तव्यस्तता दूर कर—कपड़े बदल जब आया तब आरती और शमीम फल खा चुकी थीं। हाथ में गिलास लिये शरबत पी रही थीं। महमूद चारपाई के पास आकर बोला—'तुम आरती के पास वाली कुर्सी पर बैठो शम्मी! मैं ज़ोहरा को सँभालता हूँ। मेरा गिलास कहाँ है?'

'खरबूजे खालो भैया! तब शरबत पीना! न न मैं यहीं बैठी हूँ। उस कुर्सी पर तुम्हीं खिलते हो यह चाँद सूरज जोड़ी! ख़ुदा जाने कब मेरी मुराद पूरी होगी। आरती! मेरे सामने शरमाया न कर बहन! तुम दोनों अलग मिलोगे—मैं न होऊँगी तब दुनिया भर की बात करोगे—रीझोगे रिझाओगे। मेरे सामने आ तुम मौलवी बन जाते हो—यह लाज की बीरबहूटी। मैं एक दिन बाबूजी से जाकर साफ कह दूँगी। अब्बा और अम्मी के मरने के बाद अगर वे हमारी परवरिश न करते तो आज हमारी क्या गत होती। उनसे छिपाना ठीक नहीं। आरती का बेगानों जैसा आना मुझे पसन्द नहीं। वह इस हवेली की रूह—इस बेचिराग़ घर की नूरानी जोत और पतझड़ की खिजां में बहार बन कर आये! मैं रुकूँगी नहीं। ज़ोहरा का बुखार उतरते ही बाबूजी से बात करूँगी। महमूद दिन भर बाहर सैर किया करता है। रात को कभी ग्यारह कभी बारह बजे से पेश्तर लौटता नहीं। मैं भूत की तरह यहाँ पड़ी माज़ी की यादगारों की राख कुरेदा करती हूँ। भैया से बीसियों बार कहा—भाभी से रोई—मिन्नतें कीं। पर जो दुखिया है—जिसकी पैदाइश ही दुख झेलने को हुई है उसकी कौन सुनता है। भैया दुनिया भर की बात करेंगे—मेरी शम्मी—मेरी बहन—मेरी गुड़िया—मेरी आँख की पुतली। जहाँ मैंने यह मसला पेश किया वहाँ चुप। मैं सब ठीक कर लूँगा—जल्दी क्या है? फिक्र न कर! पर ओस चाटने से प्यास नहीं बुझती। मुझे अब बातों से तस्कीन नहीं। अब मैं भाभी चाहती

हूँ। हसीन, शोख और अपनी मस्त अँखड़ियों से आबेहयात की धार बहाने वाली—मेरे दिल की अँधियारी को रौशन करनेवाली भावज! मैं खुद बाबूजी से बात करूँगी।'

'बाबूजी से तुम कुछ न कहना। यह मेरे तुम्हारे आरती के बूते की बात नहीं। इसे भैया और भाभी तय करेंगे। वे ढँग से बाबूजी और अम्मा से बात कर लेंगे। भैया सच कहते हैं जल्दी क्या है? न आरती कहीं चली जाती है न मैं दो चार साल में बूढ़ा हुआ जाता हूँ। मैं तुम्हारी बेचैनी और दिल के सूनेपन को क्या समझता नहीं! इतने दिन सब किया है थोड़े दिन और उतावली न हो! आरती! उठकर बाज़ी की गोद में आ बैठ। तुझे प्यार कर लेंगी तो तबियत हल्की हो जायगी।'

आरती चुपचाप चारपाई पर आ शमीम की आँखों को भेदक दृष्टि से देखती, होठों पर कुतूहल की मोदमयी बंकिम रेखा लिये, गुलाब की खालिस पंखड़ियों से बनी पुतली की तरह बैठ गई। शमीम का दिल भर आया! स्नेह से आरती का भाल चूमती बारबार उसे हृदय से लगाती, यह भरी जवानी में विधवा होकर पिता के घर आ बैठ जाने वाली शान्त, करुण और संतप्त युवती एक आँख से रोती और दूसरी से हँस रही थी। बगल में तब तक महमूद शरबत पीकर आ बैठा था। शमीम ने बगल से सटाते हुए भाई की सैकड़ों बलायें ले डालीं। सिर झुका कर चुपचाप रोने लगी।

आरती ने कहा—'बाज़ी क्यों व्याकुल होती हो? उठो! मुँह हाथ धोओ। भाभी आ रही होंगी—मुमकिन है भैया भी हों। तुम्हें रोते देखकर भैया को कष्ट होगा। भाभी को फब्तियों का मसाला मिल जायगा। मैं ज़ोहरा के पास बैठी हूँ। तुम मुँह हाथ धो आ जाओ।' महमूद ने बहन के आलिंगन पाश से अलग हो जेब से सिगरेट निकाल सुलगाते हुए कहा—'बाज़ी! आरती ठीक कहती है। कभी कभी अक्ल की बात

कर जाती है। तुम फिलहाल इसकी बात मान लो।'

हिचकियाँ भरती हुई शमीम बाथरूम की तरफ चली गयी। ज़ोहरा सो रही थी। आरती बैठी धीरे धीरे उसके मुँह पर हवा करती थी। महमूद पास खड़ा सिगरेट पी रहा था। कमरे में कोई न था। जिस मौत के साथ खेलता हुआ दिन सोने जा रहा था उसी की दिल्लगी उड़ाती, जीवन की काली चादर तानती रात जाग उठी थी। महमूद ने कमरे की खिड़कियाँ खोल दीं। दूर क्षितिज की चोटी पर डूबते सूरज की आखरी लाली—सन्ध्या की ममत्व-भरी सुर्मई नीलिमा। खिड़की से कुछ फासले पर दिखाई पड़ती गंगा की क्षीण रेतीली धारा पर बहकर आती नावें जो अपनी गति में थकी थकी सी चल रही थीं। महमूद ने आरती के ठीक पीछे खड़े हो कहा— इज़ाजत दो तुम्हारे रुखसारों पर बहते पसीने को धार पोंछ लूँ—उफ़! हैबतनाक गर्मी है। नदी किनारे होने पर भी हमारे गाँव की शामें कितनी गर्म होती हैं।'

आरती ने आँचल से मुँह पोंछ हवा करते हुए कहा— आप को तकलीफ़ करने की जरूरत नहीं।'

महमूद ने आँचल का सिरा अपनी आँखों से लगाते हुए कहा— 'मुझे इतना भी अधिकार न दोगी। न दो—न दो पर मैं..... कब तक तबियत पर ज़ब्र करूँ। सब्र की हद है आरती!'

आरती कुछ बोली नहीं। पंखे की डंडी से चारपाई का सिरा खोदने लगी। महमूद ने उसके हाथ से पंखा छीन लिया। जोर से हवा करते हुए बोला—'रहने दो। तुम्हारे कमल की नाल जैसे मुलायम हाथ थक गये होंगे।'

'जी नहीं—मैं मक्खन की पुतली नहीं जो दस मिनट पंखा झलने में थक जाऊँ। आप कुर्सी पर बैठिये। आपकी आँखों की चंचलता देखकर मुझे बड़ा वैसा लगता है। इस तरह मेरी ओर न देखिये। वर्ना मैं डर जाऊँगी।'

'तुम मुझे देखकर डर जाओगी तो मेरा खुदा हाफिज़ है।'

'पर मेरा.....मेरा क्या होगा ? मैं कहाँ जाकर लगू गी यह तो बताओ ! आरती फफक कर छलछला उठी। जिस आग को मैं उठते बैठते दबाती रहती हूँ उसे आपको इस तरह भड़काना चाहिए !'

'ठीक कहती हो आरती—बिलकुल ठीक कहती हो। मैं अपने होश में हूँ। अब मुझे.....तुम्हें घबराने की ज़रूरत नहीं मेरी लाजवन्ती !'

आरती ने आँचल से अपने झिलमिलाते आँसू जो उसके क्षोभ से नीले चेहरे पर सन्ध्या-तारों की तरह—कौमार्य के बेसर के उज्वल नगों की तरह चमक रहें थे, पोंछकर अपनी नम निगाह महमूद के चेहरे पर केन्द्रित कर दी और बोली—'नाराज हो गये क्या। जरा जरा सी बात पर अब रूठोगे ! बाज़ी कहाँ चली गई। लौटना चाहिये उन्हें।'

'नीचे मामा को खाना बनाने की हिदायत दे रहीं होंगी। तुम्हारा मुँह इतना सूखा क्यों है ! पलकें क्यों इतनी भारी है ! चितवन में कहाँ का वीरानापन बरस रहा है ! ईमान से ! मैंने तुम्हें इस तरह कुम्हलाया नहीं देखा कभी। मेरी तरफ देखो और हँसो ! न हँसोगी मैं गुदगुदाना शुरू कर दूँगा ! तुम जानती हो मैं जब कहता हूँ कर गुज़रता हूँ। फिर न कहना तुमने मेरे जिस्म को छू लिया ! हँसो ! फौरन हँसो !'आज्ञाकारिणी अनुगता सी आरती मुस्कराने लगी—जैसे बादल से रिसती बुंदियों के बीच—सावन के प्रथम मेघ की आर्द्रता के आलबाल में शर्मीली किरणें एकाएक सूरजमुखी की तरह चमक उठें।

'अभी कम—बहुत कम है। मेरे हुक्म की तामील तुमने की है। वह हँसी हँसो मेरी मल्का। जो चाँद को देखकर कुमुदिनी हँसती है। जो फस्ले बहार को पहली बार देखकर अन्दलीब हँसता है। जो शमा को देखकर परवाना हँसता है। जो बादल को देखकर रूखा प्यासा खेत हँसता है। वह हँसी जो शबाब को देखकर शबाब और हुबाब को देखकर हुबाब—लहर को देखकर लहर—गुल को देखकर

गुल हँसता है। जिस हँसी के पागल कर देनेवाले प्रवाह में मैपरस्त चमन पूनम की भरी पूरी चाँदनी में डूबने उतराने लगता है!'

आरती फिर हँसी। उसकी स्वाती जैसी बड़ी दोनों आँखें शारदी प्रभात के खंटरीटो की जोड़ी की तरह मुदित हो पूरी खुल गयीं। मदभरी मंजरी की तरह वह अपने मनोरम सान्ध्य स्वप्न में घुलती हुई गमक उठी। महमूद ने हसरतभरे कंठ से कहा—'तुमने मेरे दिल में मुहब्बत का तुख्म बोया है। मेरे अंग अंग में प्रेम की क्यारी सजाई है। मेरे जीवन के दरख्त की टहनी टहनी पर चाह की उम्मीद-भरी पुरशोर किरन जला दी है। काश! तुम्हारे हाथों अपने को सौंप कर बेफ़िक्र हो जाता। बियाबाँ की बुनियादें हिला देने की कूवत रखनेवाले फौलादी हाथों को माला की तरह तुम्हारे गले में डाल तुम्हारी छाती के घोंसले में नन्हें चिड़िया के बच्चे की तरह दुबके दिल की चंचल धड़कनें सुना करता! मुझे विश्वास है मेरी आरज़ू पूरी होगी। मैं तुम्हें पाऊँगा—दुनिया की कोई ताकत मुझे तुमसे छुड़ा नहीं सकती।'

आरती उठकर महमूद की कुर्सी के पीछे खड़े हो उसके कंधे पर अपना प्रीति सुकोमल मुखड़ा सटा हाथों से उसकी दोनों बाहों को ढँकती हुई बोली—'लो! अब खुश हो। तुम्हारे जिस्म के बसेरे में आ गई। यही तुम चाहते थे। समझते हो मैं तुमसे अपने को बचाती हूँ। अपनी क्वारी हसरतों को कतराती घूमती हूँ। तुम्हारा यह ख़ाम ख्याल है। मेरे कौमार्य का सारा निर्माल्य तुम्हारे चरणों पर आज चढ़ रहा है। इतना ख्याल रखना इसकी मर्यादा—इसकी पवित्रता तुम्हारे हाथों सुरक्षित रहे। दुनिया को कभी यह कहने का मौका न मिले आरती ने जिसे दिल की रियासत भेंटकर दी वह उसका पात्र न था। यही सुनना तकदीर में लिखा हो तब तुम उसके पहले मुझे गोली मार देना। मेरा गला घोंट देना।'

महमूद आरती की सुगन्धचर्चित वेणी को हौले हौले थपथपा कर

बोला—'बड़ी हिम्मत की जो अपनी शहनाज़ लालारुख़ देह को मेरी नापाक देह से लाकर सटा दिया। पर इतने से काम न चलेगा। मुझे दुआ दो—आशीर्वाद—बल और ताकत दो—आत्मा का वह भीतरी ठहराव दो जो बड़ी से बड़ी नाउम्मेदियों के बीच कायम रहे। मुझे वरदान दो सुबह की देवी! शाम की माहेलका। अपने को तुम्हारे काबिल बना सकूँ। देश की इबादत—आज़ादी का मुकम्मिल सौदा कभी मेरे प्राण से दूर न हो। ममता की जो बन्दिश आज तुमने मेरे इर्द गिर्द बाँधी है उसका एक सूत—एक धागा—एक भी तार कभी कहीं से ढीला न पड़े। तुम्हारी मुहब्बत का जलता अहसास—तुम्हारी राजपूती आन का दहकता शरारा मेरे खून में कुर्बानी की जोत जगा दे जो मुझे आज़ादी के नग़मे गाते गाते आग पर सो जाने का बल दे। जिसकी चमक में मैं अपना रास्ता पहचान हँसते हँसते शूली के तख्ते पर झूल सकूँ। मै जानता हूँ तुम यह कर सकती हो।

आरती कुर्सी के मोढ़े पर उसी तरह महमूद के चौड़े कंधे पर खस की लहरीली खुशबू से भीना अपना सिर रक्खे, दोनों हाथोंसे कुर्सी को चिपटाये बैठी थी। शमीम लेम्प लेकर भीतर आई दोनों उसी तरह खोये खोये से बैठे रहे। लेम्प एक छोटे टेबिल पर रख शमीम जोहरा के पास आई। आरती उठकर खड़ी हो गई। गालों पर किसी ने गुलाब की खूनी पङ्खड़ियों के गुलदस्ते गूँथ दिये। हया और हिज़ाब से त्रस्त उसकी मुद्रा देखने योग्य थी। शमीम ने कहा—जहाँ बैठी थी वहाँ से उठ क्यों पड़ी। इन निगोड़ी आँखों को बदा हो तब न। भैया! तुम और आरती ऊपर की छत पर बैठो। मैंने चारपाइयाँ कुर्सियाँ लगवा दी हैं। भैया और भाभी आयेंगे वहीं मेज दूँगी। ज़ोहरा तब से जगी न होगी। मैं यहाँ हूँ। शरबत वगैरह वहीं भेजती हूँ। माफ़ करना मेरी सरकार! नीचे देर लग गयी। आगे से ख़ता न होगी।

महमूद ने मज़ा लेते हुये कहा—'यह तो चाहती थी तुम जितना ज्यादा नीचे रहो उतना अच्छा। तुम्हारा आना आरती को क्या कम

खला है ?'

शमीम के मुँह पर बहुत दिन बाद प्रमोद की खुशियाली फूट पड़ी। बोली—'वह ऐसा नहीं चाहती थी। तुम अपनी बात कह रहे हो यह। तुम ज़रूर चाह रहे थे मैं दो चार घण्टे नीचे पड़ी रहूँ। आरती को मैं जानती हूँ। जाओ बेटी! ऊपर जाओ यहाँ इन्तहाई गर्मी है। हवा में टहलो लेटो। आप भी हज़रत ऊपर तशरीफ ले चलिये।'

महमूद सिगरेट सुलगाता ऊपर चला गया। आरती कुर्सी पर चित्र की तरह जड़ी बैठी रही। सुनहली साँझ के पैरों से लिपटा अँधेरा बढ़ता आ रहा था। बाहर का पूँजीभूत अन्धकार शमीम और आरती के दिल में फूट रहे प्रकाश के सामने कुछ न था। शमीम ने कहा —जाओ ऊपर बैठो। ज़ोहरा को लेकर आती हूँ। सो रही है तो कच्ची नींद न जगाऊँ यह चाहती हूँ। तुम चलो छत पर। हज़रत अपना सिगरेट केस यहीं पटक गये हैं। लेती जाओ। क्या सोच रही हो? एकाएक उदास क्यों हो गई?'

'कुछ नहीं दीदी! मुझे गर्मी नहीं लगती। जब चलोगी तो साथ चलूँगी। मैं ज़ोहरा के पास आई हूँ। उसके पास बैठी रहूँगी।'

बाहर से भैया और भाभी की पगध्वनि और सम्मिलित हास्यध्वनि सुनाई दी। शमीम उछलकर खड़ी हो गई और बोली—'आगये— भैया और भाभी! आओ मेरी भाभी! ज़हे किस्मत! आरती! चल सब को लेकर ऊपर। मैं ज़ोहरा को जगाकर गोद में लाती हूँ। यहाँ गर्मी में बैठना नामुमकिन है।'

आरती ने सोई ज़ोहरा को गोद में छपटा लिया और ऊपर छत की ओर चली। पीछे शमीम, भाभी और भैया थे। ऊपर इतना सींचा गया था कि सचमुच नीचे की तुलना में स्वर्ग था। आरती ने एक बिछी चारपाई पर ज़ोहरा को लिटा दिया। दूसरी पर बैठकर सिगरेट केस महमूद को देती हुई बोली—'लीजिये अपनी बोतल!'

महमूद खड़ा जंगल की तरफ देख रहा था जिधर से रात के सपने जुगनुओं के साथ उड़कर आते हैं। चौंक कर पीछे लौटता हुआ बोला —बोतल ! फिर सिगरेट केस चुपचाप जेब में रख भाभी की तरफ इशारा करता हुआ बोला—'ये बोतल नहीं शराब का पूरा खुम है। बोतल में कितनी रहती है। अब तुम्हारा मज़ाक मैं समझा। ये मेरी बोलत, साक़ी, प्याला यहाँ तक कि मुजस्सिम मैं खाना हूँ। दूसरी शराबें पीने के बाद असर करती है। इन्हें देखकर नशा हो आता है। बड़ी नशीली तासीर है इनकी। गहरा से गहरा शराबी पनाह माँगता है। मेरी आँखें इन्हें देखते सरूर से मखमूर हो जाती हैं। खूब कहा आरती तुमने! वल्लाह क्या कहा है— लीजिये अपनी बोतल! जो पीता है वह लुत्फ जानता है।'

भाभी ने शमीम की शरबती रँग की सारी का पल्ला अपनी ओर खींचते हुए कहा—'देखो बीबी ! शराब की बोतल तो तुम हो। ऐसी बोतल जिसका कार्क मुद्दत से नहीं खुला ! मैं भला शराब की बोतल ! सोडावाटर की कहो किसी क़दर मान लूँ—वही सोडा-वाटर जो तुम जैसी बेशकीमती शराबों के साथ तेज़ी को कम—तल्ख़ी को मद्धिम करने के लिये मिलाया जाता है। और आरती ! वह जो है महमूद मियाँ अभी जान नहीं पाये वरना शराब और सोडावाटर दोनों को भूल जाते।'

शमीम ने कृत्रिम रोष से कहा—'महमूद! तुम शराब भी पीने लगे अब ! अगर आरती मेरी आज न कहती तो मुझे पता न चलता !'

'तुमको पहले कहाँ पता चलता है मेरी कहकशाँ ! तुम तो बाद में जान पाती हो जब तुम्हारे महमूद मियाँ के नशे के पैर लड़खड़ाने लगते हैं। तब करो तो क्या करो। बंदिश में बँध चुकती हो—शौक के आशियाने में फँस चुकती हो। लाख छटपटाओ—निकलने की कोशिश करो। लेकिन फड़फड़ाती रहो--छूटने का आसार नहीं।'

महमूद ने कहा—'पीता हूँ बाज़ी—पीने लगा हूँ। पहले भाभी की आँखों में छलकती मये वहदत के जाम किया करता था। अब भाभी ने

अपने दिल के देस से ज़लावतन कर दिया है। पिलाना तो दूर रहा इधर उधर पीते भी नहीं देख सकतीं। मगर छूट जायगी बाज़ी !'

आरती ने कहा—'महमूद ने भाभी को बहुत प्यार किया है। बड़ी उम्मीदे बाँधी थीं उनसे ! मगर भाभी को परवाह कहाँ ! नतीजा हुआ बेचारे ग़म ग़लत करने के लिये पीने लगे ! भाभी उनकी मुराद पूरी करें तो अब भी छोड़ दें। अपना खून इन्सान बहुत मजबूर होकर जलाता है !'

'तू उन्हें क्यों जलाती रहती है। कभी तो कलेजे को ठंडक दी होती। बेचारे गीत की करुण स्वर लहरी जैसे—छूटी कड़ी की तरह सूने आकाश में दूर दूर तक भटका करते हैं। कभी तो उन्हें सुन लिया कर—इस बेदर्दी से छीछालेदर न किया कर। तुझे अपनी सुन्दरता का अभिमान है तो महमूद को भी अपनी शम्मो की सुन्दरता पर नाज़ है। जब चाहे मुक़ाबला करले। उमर में तेरी दूनी है पर नमक की खान है खान !'

भैया ने गंभीर होकर कहा—'शम्मी ! ज़ोहरा कब से बीमार है ? महमूद ने डाक्टर बुलाया ? सुना तीन चार दिन हो गये।'

'महमूद को कहाँ फिक्र है भैया ! मैंने हकीम जी को बुलवाकर दिखाया था। गाँव के हकीम वैद जैसे हैं तुम जानते हो ! तहसील में डाक्टर है—रोज आकर देखता और दवा देता। मैं ही कल मैनेजर को भेजकर बुलाऊँगी। पर आप से ज्यादा अहम बात मुझे करनी है। आपको याद भी कर रही थी। मैं घर में नौकर नौकरानियों के साथ अकेली नहीं रह सकती। आप महमूद को मजबूर कीजिये अब शादी कर ले—अगर नहीं करता तो मैं ज़ोहरा को लेकर चली जाऊँगी। इस भूतों के डेरे में मुझसे न रहा जायगा। तुमसे कह देती हूँ—जब जाने लगूँ राह न रोकना !'

'मैं तुम्हारी राह न रोकूँगा पर तुम्हारी जगमगाती भाभी 'शीला लखनवी' जब आँखों के तमञ्चों में गोलियाँ भरकर सामने खड़ी हो, जाने से रोकेगी तब कैसे जाओगी ? मेरी बात न मानोगी बहन ! तो

मुझे गिला न होगा। पर इनकी बात टालना तुम्हारे लिए असभव है। मैं फिलासफर फकीराना तबियत रखते हुये इनके सामने बन्दर की तरह नाचता हूँ—गिलहरी की तरह दुम हिलाता हूँ। तुम लोग तो बड़ा मुलायम दिल रखती हो। जहाँ इन्होंने वीणा के तार जैसी अपनी देह को कँपाकर कहा—कहाँ जाओगी मुझे छोड़कर बाज़ी! तब तुम प्रेम से गल जाओगी—जब तक ये यहाँ है तब तक तुम छोड़कर न जा सकोगी। महमूद की शादी हो या न हो। शादी हमेशा रज़ामन्दी से हुआ करती है। जब तक महमूद को शादी की उतावली नहीं होती तब तक मेरे तुम्हारे हाय तौबा मचाने से क्या होता है?'

'और आरती'—भाभी ने शरारत से आँखें नचाते कहा—'मुहब्बत में आइसक्रीम की तरह गली जा रही है। महमूद मियाँ को जल्दी नहीं। उन्हें थीसिस पूरा करना है—डाक्टरेट लेना है—मुल्क की सेवा करनी है—स्वराज्य लेना है। पर आरती! उसे जो लेना है—जो उसका पावना है क्यों नहीं पाती। तुम कुछ ख्याल ही नहीं करते। चाहते तो अब तक उसकी प्रेम प्यासी जवानी के बगीचे में कितनी नये लतरें—कितनी नयी बेलें लगा देते जिनके फूलों की सुगन्ध.....पर जाने दो। बेचारी किताबें पढ पढ़कर रातें काटती है! कुछ कहती नहीं वरना अब तक लीडर रायोनियर में शादी का नोटिस निकाल देती। उम्मीदवारों के फोटो से कमरा भर जाता।

महमूद ने कहा—भैया! आप बाज़ी को समझाते नहीं। क्या मेरी शादी का नग़मा छेड़े रहती हैं। सब बातें जानती हैं—मुश-किलात का इन्हें पता है। पर जब देखो बच्चों सी अधीरता दिखाया करती हैं। भाभी से मैं क्या कहूँ! इन्हें चुटकियाँ लेना आता है। देने के नाम दो मीठे बोल नहीं! आरती सीधी है इतनी बातें बरदाश्त कर लेती हैं। माना कुछ—नहीं कर सकती पर दाँत से काट ही ले। दो चार दफ़े ऐसा करेगी भाभी की सारी शोख़ी—छेड़खानी हवा हो जायगी।'

'तुम काटो अगर हिम्मत हो ? बड़े बनते हो। आरती क्या खाकर काटेगी मुझे। काटेगी मैं नोच न लूँगी।'

'नोच लेना—जिसको चाहे नोच लेना—भैया ने चिन्तित स्वर से कहा—'शम्मी! जानती हो आरती और महमूद की शादी होने में दिक्कत पड़ेगी। दादा और अम्मा को समझाना होगा। वे तैयार न हुए तो मुझे घर से अलग होकर करना पड़ेगी। मुँह का कौर नहीं। तुम आज कह दो और हो जाय! कितनी पुकारों का होम होगा! साल दो साल अविरत संघर्ष करना पड़ेगा। पत्थर पिघल जाते हैं—लोहे पानी हो जाते हैं बाबूजी अम्मा हम तुम जैसे इन्सान ही हैं।'

'तुम कब कहोगे दादा से'--दो साल से तुम्हारी मिन्नतें कर रही हूँ—तुम टाल रहे हो। कुछ वख्त बातचीत बहस मुबाहिसे समझाने बुझाने में लगेगा। तुम्हें संकोच होता हो तो मैं दादा से कहूँ—मैं उनसे बात कर सकती हूँ। भाभी अम्माजी से क्यों नहीं कहती ? कुछ बात शुरू तो हो! कब तक रुका जायगा ?'

'तुम समझी नहीं बाज़ी'—भाभी ने कहा—'जब तक कोई एक्सीडेन्ट न हो तब तक ये कैसे कहें। फिलासफर ठहरे।'

'फिलासफर तो अब हुआ हूँ जब तुम सर्द हो चलीं। पहले कैसा था तुम जानती हो। मैं दादा से बात करने वाला हूँ। मुझे यकीन नहीं वे मेरी बात मानेंगे। मैंने तय किया है इस मामले में झुकूँगा नहीं। वे न मानेंगे तो बीबी बच्चे लेकर कहीं चला जाऊँगा। फिर बरसों छोड़ी प्रेक्टिस शुरू करूँगा। महमूद और आरती की शादी लखनऊ सिविल कोर्ट में होगी। शीला भी वहाँ पहुँच कर बहुत से पुराने और भूले हुए इल्म ताज़ा कर लेगी—रोमान्सों की सालगिरह धूम से मनायेगी। पापा के बगीचे के कुन्जों को फिर पुराने साथियों के साथ आबाद करेगी।'

'और आप आप क्या रिटायर हो जाँयगे! अभी बकाल-शख्से आप की जवानी शुरू हुई है। भरी जवानी में यह त्याग भैया! क्यों गौतमबुद्ध और महावीर को शर्मिन्दा कर रहे हो! मेरी भाभी जानती हैं कैसा हलुआ शौहर उन्हें मिला है। उनके सारे रोमान्स आँख से देखेगा और एक कोने बैठ फिलासफी की किताबें पढ़ेगा। मैं भी उन कुर्सों में एक बार बैठना चाहता हूँ भाभी! तुम्हारे साथ नहीं - लीला के साथ। लीला की शादी क्यों नहीं होती भाभी! बला की हसीन—लन्दन की टी डिप है—अवध के एक बड़े ताल्लुकेदार की लड़की। लड़कियों के सबसे बड़े कालेज की वायस प्रिन्सिपल। सोचती होगी शादी के बाद सबको तुम्हारी तरह ब्रिलियेन्ट चान्सेज तो मिलते नहीं। सब शौहर भैया की तरह ग़मखोर नहीं होते जो आँख के नीचे बीबियों की ग़ैर के साथ कुलेल देखें। जब तक मिस है तब तक सब तरफ रोमान्स का रंगीन पानी है किस्म किस्म की मछलियाँ फँसती रहती हैं। शादी के बाद वही 'कुञ्जे क़फ़स—फिर वही सय्याद का घर।' समझदार है तुम्हारी बहन।'

'तुम्हारी बहन! बिलकुल भोली और नासमझ—बेला के फूलों जैसी—चमेली के तौक—गुलाब के झूमर सी! बरसात में आकाश से गिरे बेदाग ओले सी! है न! तुम्हारी बहन इतनी सीधी नासमझ है जैसे चम्पा की कुमारी कली—पीली पीली अपने हुस्न से बीमार। एक काम करो भैया! इन्हें कुछ शरारत सिखा दो। दुनिया इतनी आगे बढ़ गई—तुम एम० ए० पास कर जिले की पोलीटिकल कान्फ्रेन्स की स्वागत समिति के चेयरमैन हो गये। तुम्हारी शमीम—छुई मुई सी, हिज़ाबो हया की गुच्छी सी उस एक डाल पर झूल रही है। कुञ्ज बनते कितनी देर लगती है! जिसकी बाहों के झुरमुट में पहुँच जाँयगी वहीं कुञ्ज बन जायगा।'

महमूद ने कहा—बाज़ी! एक बात तुमसे बतला दूँ—मैं तय नहीं कर पाया अब तक आरती से शादी करूँ या लीला से। लीला

की याद मुझे आती है तो मैं आस्मान में उड़ने लगता हूँ। फिर मुझे हूर सूझती है आरती नहीं। शाम के माहौल को दहला देने वाली—पहाड़ी की बर्फानी चोटी पर शाम की किरन सी नाचने वाली बीन की लरज़ उन आँखों में कूट कूट कर भरी है। मुझे वह कुछ कुछ वैसी जान पड़ती है जैसी लैला मजनूँ को, किसी ज़माने में शीरी फरहाद को—चित्रा अर्जुन को—पार्वती महादेव को। बला की खूबसूरती जैसे अल्ला मियाँ का मास्टरपीस हो। सुभान अल्लाह! मालूम पड़ता है बनाने वाले ने कलेजा निकाल कर फेंक दिया है। भाभी! एक बार यहाँ बुलाओ न। बाज़ी उन्हें देख लें। वर्ना जनम अकारथ जायगा। जिसने इन्सान का जामा पहनकर दुनिया में उतरी हूर नहीं देखी वह बदकिस्मत है।'

'मुझे जलाओ न महमूद! मैं हूरों से दिलबस्तगी नहीं करती फिरती। मेरी आरती मुझे दे दो—सारी दुनिया तुम ले लो या फँकीरों को बाँट दो। भैया! अब देर न करो। बाबूजी से बात कर देख लो। क्या कहते हैं..... कहाँ तक तैयार होते हैं। वे न मानें तो जैसा तुम और महमूद ठीक समझो कर डालो। भाभी! तुम अम्मा जी से बात करो। उन्हें राजी करना तुम्हारा काम है। भैया! जब तुम इतनी कड़ी धमकी दोगे तो मान जायँगे। अम्मा को दूसरी बहू कहाँ मिलेगी। बाबूजी को दूसरा बेटा कहाँ मिलेगा और घर को ये जगमगाते तीन लासानी चिराग (भैया के बच्चे) कहाँ मिलेंगे। जरूर मान जायँगे।'

'हाँ मानेंगे क्यों नहीं। दो चार झटके देने पड़ेंगे। सहज में न मानेंगे। लेकिन इस विद्रोही संघर्ष में मेरी जीत होगी—तेरी जीत होगी। तू घबड़ा न। तूने बहुत दुख झेला है। बालापन में विधवा हो गई—घर में तेरी आँख के नीचे आधा दरजन मोते हुईं। तूने उफ़ न किया—जिन्दगी के साथ ऐसा दिली और मासूम समझौता मैंने देखा नहीं। तुझे देखकर पुराण और धार्मिक किताबों में पढ़े देवियों के किस्से साकार लगते हैं। इन

बच्चों को दुआ देती चलो। न तुम्हें कहने की आवश्यकता है न फिक्र करने की। रह गया मैं! मैं हर तरह से सुख पहुँचाने की कोशिश करूँगा। भाभी जैसा मैं नहीं जो उठते बैठते अपनी बूदम बातों से तुम्हारी तबियत परेशान करता रहूँ।'

'नहीं भैया! भाभी को आप ऐसा न कहें। आशीर्वाद वही देंगी। उन्हीं का पुन्य प्रताप है मुझे तुम जैसा भाई मिला जिसके देवता खान्दान ने अपने बच्चों की तरह हमारी परवरिश की। हमें दुख के गहरे—नसीब के किये गये अपमानों से उबारकर हमारी गरदनें ऊँची की। भाभी मेरी सब कुछ हैं। इनको देख मेरी झुकी कमर तन जाती है—नीची चितवन ऊँची हो जाती है। महमूद ज़ोहरा की तरफ से मैं बेफ़िक्र हो जाती हूँ। इनकी पाकीज़ा पेशानी पर अपने दिल की केसर—रूह का चन्दन घिसकर ताउम्र लगाऊँ तो भी इनकी पूजा में कमी रह जायगी। ये अन्नपूर्णा हैं भैया! सब को पालने वाली—सबके लिये मुहब्बत की पुरशोर रवानी लिये हुए।'

'मुझको तो प्यार किया नहीं भाभी ने। मैं तुम्हारी बात से इत्तफ़ाक नहीं करता बाज़ी! इनके सूखे बालों की एक लट कभी मेरे कन्धे पर·····'

'देखो—देखो! महमूद शायर हुआ जा रहा है—सँभालो आरती! अपने युसुफ़ को! वर्ना वाही तबाही बकने लगेगा। हमले का शिकार तुम्हीं बनोगी—मैं किसी न किसी तरह निकल भागूँगी।'

'भाग कर कहाँ जाओगी—मैं पकड़ कर फिर महमूद की गोद में रख दूँगा। अगर तुम मेरे छोटे भाई को चरका दे सकती हो तो मुझे भी।' भैया ने मुस्करा कर कहा। कभी कभी शमीम के सामने वह अपनी गम्भीरता कुछ क्षणों के लिये भूल जाते थे। अगाध ममता और अपनत्व उनके हृदय में था शमीम के लिये! फिर बोले—'शम्मी! कभी कभी सोचता हूँ यह लखनऊ की चचल चिड़िया कैसे इस बैरागी गाँव के उजड़ेपन में टिक गई। यह

मधुऋतु की मूली आँकाक्षा जैसी कोयल कैसे सैकड़ों अमराइयों का रस चखने के बाद इस सुनसान दरख्त पर फँसी बैठी रही।'

'मुझे लगने लगा तुम्हारे घर आकर शमीम के मालिक। मेरे मन को दो टुकड़े हो गये हैं। कभी कभी दो से भी ज्यादा जान पड़ते हैं पर दो तो यकीनन हैं। अगर मैं जाना चाहूँ—भागना चाहूँ तो इस खंडित मन से कैसे भागूँ! एक टुकड़ा तो तुम्हारे पहलू से सटा पड़ा रहता है। अक्सर सोचती हूँ मैं पागल तो नहीं हो गई। लखनऊ की सोसाइटी और रंगीनियाँ—सखी सहेलियाँ—यूनिवरसिटी की बादानोश गुलकारियों को ठुकरा तुम्हारी फिलासफ़ी की लाइब्रेरी की वेदी पर अपने को चढ़ा रही हूँ पर पागलपन के इस ओर रखनेवाली—सीमित कर देने वाली रेखा कैसी पतली है—जैसी तुम्हारी शमशीर शमीम की कमर! तुमने मुझ पर कौन जादू फूँक दिया—कौन मंत्र पढ़ दिया? कौन मोहनी डाल दी है! तुम्हें छोड़कर एक दिन कहीं जाने का उत्साह नहीं होता? लीला बीसों उलहने दे चुकी। तुमसे पहली बार मिलकर मैं समझ गई थी। तुम उस प्रेम के देस से आने वाले आह्वान हो जिस पर झुका जा सकता है। जिसके आधार पर स्वप्न बुने जा सकते हैं और सपनों की पारदर्शी जाली के नीचे मेरी नारी-जन्य समर्पण-लिप्सा आजन्म बसेरा ले सकती है। पर छत्ता मैं लगाती हूँ—बाहर से फूल फूल से संचय कर मधु मैं लाती हूँ। काम मैं करती हूँ। 'पाँखीरानी' बनी शमीम मेरा सारा शहद खा जाती है। तुम कुछ नहीं बोलते। न बोलो—मेरा भी खुदा है।

चार

रात को घर लौटने पर आरती बड़ी देर तक सो न सकी। अपनी छत पर पड़ा महमूद देर तक गाता रहा। उसकी करुण स्वर-लहरी शून्य आकाश में दूर दूर तक भटकती रही। जब तक वह

गाता रहा आरती सुनती रही। एक बेदर्द वेग से उसका अन्तर फूलता था। महमूद का संगीत स्वर के रुक जाने के बाद आरती को नींद न आई। अपनी छत पर वह अकेली है। एक नौकरानी रात को उसके पास सोती है जो जगाने पर भी नहीं जागती। आरती को उठ उठ कर अपने हाथ से पानी पीना पड़ता है। आज आरती के मुख पर उद्वेग और दुश्चिन्ता के चिन्ह सुस्पष्ठ थे। रात की इन सुनसान घड़ियों में उन्हें देखने वाला कोई नहीं। सामने दूर छत पर भाभी, भैया और उनके बच्चे हैं। नीचे बीच के बड़े आँगन में नौकरानियाँ तथा परिवार के अन्य लोग है। पिता जी बाहर के कम्पाउन्ड में सोते हैं। माँ उसी बड़े आँगन के एक कोने में। आरती लेटी न जाने कहाँ की बातें सोच रही है। किसी करवट उसे नींद नहीं आती। महमूद की आवाज़ में ऐसी दबी आग थी जिसकी गूँजती निस्तब्धता से उसका कलेजा दहक उठता है। चन्द्रमा आस्मान में। कितनी स्निग्ध है उसकी ज्योत्स्ना। पर आरती का मन आज विकृत है। उन विकारों की—प्रवृत्ति के कंपनों की प्रतिच्छाया उसे प्रत्येक वस्तु में दीखती है। चन्द्रमा की ज्योत्स्ना में—सितारों की झलझलाहट और रात के अन्ध विश्वास जैसे व्यग्र अन्धकार में—दिख दिखकर वह उसकी विच्छिन्न मनः शक्ति को निर्बल बना रही है। वह निश्चय करती है आँखें न खोलेगी—किसी ओर न देखेगी। कुछ भी सोचेगी नहीं। पर कैसी प्रतिक्रिया उसके भरे मन में हो रही है आज! कैसे उसे रोक सकेगी! कब तक शाम को उसके कपोलों पर बहे महमूद के तरुण निश्वासों की स्मृति उसका पीछा करेंगी जिस महमूद की मूर्ति से उसका अन्तःकरण दीप्तमान हो जाता था उसकी असह्य छाया आज कैसे प्रतिकारी आवेग का सृजन कर रही है। पुराने सितार जैसी अर्थहीन गूँज निकलती है—कुछ कुछ वैसी आज उसके दिल से निकल रही है। चिड़ियाँ दाना तिनका चुनने घोंसले से निकलती हैं

तो उनके साथ उनका प्रेमी होता है। रात की इस निस्तब्ध बेला में भी एक पछी आकाश में शायद चाँदनी को दिन समझकर उड़ा चला जाता है। उसके साथ भी उसका जोड़ा है। पर आरती का दिल.....जिसमें महमूद ने नये जीवन की चेतना भर दी है! जब तक महमूद अपनी छत पर पड़ा जागता और गाता रहा तब तक गीत की दर्द भरी लय के प्रभाव से वह ज़ोर ज़ोर से साँस लेती थी। महमूद की आवाज़ उसकी भावना की सृष्टि को घेरती आती थी। उस समय उसने बहुत से स्वप्न देखे—सुनहले किनारों वाले धुँधले धुँधले स्वप्न जो आकाश और पृथ्वी के असीम शून्य में घड़क रहे थे। महमूद की आवाज़ के स्वर्णिमतार--शरबती धागे उसकी कल्पना को अपने अन्दर लपेट कर ऊपर उठे जा रहे थे। ऊपर जाने किस देश को जहाँ से रात को चाँदनी की प्रपाती धार में बहकर कितनी हैरान आँखों वाली जल परियाँ नीचे उतर आती है। अब तो उसकी मिटती सी गूँज बाकी थी। आरती के दिल की रागिनी अब थक गई है—एक हल्की सी झंकार शेष है। खामोश और सुनसान घाटी—वायु स्थिर और रोती हुई सी चादर में अपना मुँह छिपा लेने का उपक्रम करने वाली। महमूद की दर्दभरी आवाज़ फिर सुनाई दी। आरती ने कलाई में बँधी घड़ी देखी। डेढ़ बज रहा था पर.....आग जो लगी है। महमूद गा रहा था। उसकी आवाज प्रतिक्षण आरती को नजदीक आती मालूम पड़ती थी जिसमें असंख्य करुण कहानियाँ करवटें लेती नीले आकाश की ओर नाचती जा रही थीं। आरती को लगा उसके दिल का कोई घाव छिल गया हो और उसने रिसना शुरू कर दिया हो। आरती सोच रही थी—न जाने कितने दुखी प्राणियों के दिल इस स्वर को सुन दहल उठे होंगे। आस-पास दरख्तों के तनों और डालियों पर सोई कितनी गिलहरियों की नींद टूट गई होगी। वे अपनी लम्बी पूँछों के बाल खड़े किये नन्हीं नन्हीं व्याकुल आँखों से उसके सर्वस्व के लहराते स्वर को देखने

की कोशिश कर रही होंगी। उसे लगा चाँद की पीली उदास किरणें महमूद के दिल के आँसुओं की माला उसके पास लेती आ रही हैं। महमूद के स्वर में घुमड़ते असंख्य बादल अपना रुख उसकी ओर किये जैसे बरसने आ रहे थे। आरती उठकर छत की मुन्डेर के पास खड़ी हो गई। महमूद अपनी छत की मुन्डेर के पास खड़ा एकटक दृष्टि से आरती की हवेली को देखता गा रहा था

इश्क पर जोर नहीं ये है वो आतिश ग़ालिब
जो लगाये न लगे और बुझाये न बने

आरती को सामने खड़ा देख महमूद बूढे किसान की तरह उँगलियों से भौंहें उठाकर देखने लगा। चारों ओर हरियाली हरियाली —हर तरफ फूल ही फूल। हवायें एकाएक खुशबू में बस गई। सुनसान चरागाहों में फिरते फिरते कौन सी सरमस्त फिंजा साकार हो उठी। पेड़ों की शाखाओं पर दम साध कर बैठे पक्षी एकाएक जागकर अपने पर फड़फड़ाने लगे।

आरती चुपचाप खड़ी सुन रही थी। महमूद की आवाज़ सुनते ही उसकी आँखें उस हिरन जैसी चचल हो उठीं जो गहरी घाटियों में अपने बच्चों के साथ कुलेलें कर रहा हो। उसका चेहरा उस शर्मीले चाँद की तरह हो गया था जो सावन की रात में गहरे बादलों के पीछे से नन्हें नन्हें पौधों को झाँकता हो। महमूद गाये चला जा रहा था। आरती ने देखा अपनी झोपड़ियों के दरवाजे मैदान में सोये बहुत से चरवाहे और किसान आँखें मलते हुए जाग पड़े। आरती की आँखों में खुशी के आँसू भर आये। कितने पुराने दृश्य उसकी आँखों में जीवित हो गये। उसने अपने आँसुओं को रोकने के लिये अपने होंठ भीच लिये। आँसू—उमड़ते और दहकते आँसू न पोंछने में भी सुख होता है जो एक खास किस्म के रोने वाले जानते हैं। चाँदनी रात में मस्त हवा पर सवार होकर अपने देस को जाने वाली महमूद की स्वर-

लहरी की रुलाई ! आरती को लगा जैसे उसका युग युग का साथी काँटेदार झाड़ी में पड़ा दम तोड़ रहा है—उसका शरीर खून से लथ पथ है। चीटियाँ उस पर चिपट रही हैं। हवा का एक एक झोंका—सितारों की एक एक सदा—झरने का एक एक मधुर राग—महमूद की स्वर-लहरी की सिर धुन धुन कर रोती ध्वनि जो चाँदनी की चादर में मुँह छिपाने के लिये बेचैन है—सब पुकार पुकार उससे कह रहे हैं—आरती अपने सुख के काफ़िले को छोड़ इधर आ जा। तू ही इस नौजवान की यन्त्रणा दूर कर सकती है—उसके घावों को भर सकती है—उसकी आँखों में दबे—बड़े यत्न से रोके सहमे आँसुओं को पोंछ सकती है। आरती खड़ी खड़ी मुडेर से और लिपट गयी। आकुलता से उसका शरीर थरथरा रहा था। .....क्या महमूद से प्रेम कर आरती ने अपने को कलंकित किया है ?'

क्या उसका प्रेम कलुषित कलंकित कुत्सित वासना है। चन्द्रमा की चाँदनी से प्रकाशित गंगा का दृश्य उसे देख पड़ा। फेन से सुशोभित लहरें शायद महमूद की करुण अंजलियों को ग्रहण न कर सकने की अक्षमता में तटभूमि पर पछाड़ें खा रही थीं। सीमाहीन नदी की आधीरात की गंभीरता से मन मुग्ध और अभिभूत हो उठता है। आरती के मन पर ये सब कोई प्रभाव न डाल रहे थे ! वह सामने तिरछे—आगे—पीछे—पूरब—पश्चिम—दक्खिन उत्तर—सब तरफ देख रही थी पर उसकी दृष्टि लक्ष्यहीन थी। उसका मन—उसका हृदय जो चाहता है कब पावेगा ! नेत्र खोले हुए भी वह अपनी दृष्टिशक्ति को अपने हृदय के गोपनतम परदे तक पहुँचा रही थी। जिस अपरिमेय प्रेम के प्रवाह में उसने अपना अस्तित्व विलीन कर दिया है—जवानी ने जब से उसके शरीर में झलकना शुरू किया तभी से उठते बैठते—चलते फिरते जागते सोते जिस रूप का छायापात उसके किशोर हृदय पर हुआ करता है वह उसे कब मिलेगा ! जिसके स्पर्श की बिजली उसे एक क्षण नहीं

भूलती उसे सामने देख वह कब तक अपनी कुँआरी उमंगों को वंचित रहने दे! हृदय के जिस महान आन्दोलन—आत्मा के नवजागरण के गर्भ से यह लहर उठी है वह आरती के जीवन का निर्माता और विधाता है। जिन किरणों के झोकों से उसका द्वार द्वार खुल गया है—कंठ के सातों स्वर-मंडलों में इन्द्रधनुष के सातों रंग घुल गये हैं—उसकी जीवन-सत्ता का एक एक तार काँप रहा है—वे क्या सामाजिक अन्धकार के जाल को तोड़ न सकेंगी! बाबूजी और अम्मा ने न माना तो वह महमूद के साथ भाग जायगी! क्या इतना साहस उसमें है? पिता उसकी शादी एक बड़े सरकारी अधिकारी से करना चाहते हैं। ठाकुरों में सुयोग्य लड़कों की कमी नहीं। पर उसका मन क्यों नहीं भरता! महमूद ने गाना बन्द कर दिया था। छत पर टहलता टहलता चारपाई पर लेट गया था! गाँव में दूर छोर पर नवयुवक टोली कजली गा रही थी। आरती के सोचा—गाँव ने दुख और अपमान से भरे जीवन में ये गीत और जननृत्य किसानों चरवाहों और खेतिहर मजदूरों के मनोरंजन के परम्परागत साधन रहे हैं। हँसी विद्रूप और उल्लास से भरे जन-कला के ये रूप आरती को सदैव भाते रहे हैं। आज उसे यह कुछ नहीं अच्छा लगता!

आरती ने सुराही से एक गिलास पानी उड़ेल कर पिया। जमीन पर उसकी दासी सुखिया सो रही थी। आरती ने उसे जगाया नहीं। पानी पीकर पानी के कुछ छींटे अपने मुँह पर मारते हुए आरती ने चाँदी के बादल जैसी एक तरंगभरी अँगड़ाई ली। मुन्डेर के पास खड़ी हो गंगा और पहाड़ी के दोहरे दामन में बच्चे की तरह चिपटे अपने गाँव को देखने लगी। गाँव का एक एक घर वह पहचानती है—गाँव की एक एक गली—एक एक पगडंडी—एक एक चरागाह—एक एक खेत—बलिहान उसका चीन्हा है। माँ की गोद की तरह यह गाँव उसे प्रिय रहा है। लगता है इसे अब सदैव के लिये छोड़ना होगा! यदि वह महमूद से जबरन शादी करता

है तो क्या इसी अपनत्व और आदर-संभ्रमपूर्ण मातृत्व और पितृत्व की माँग वह गाँव के असख्य भैया, चाचा, ताऊ दादा काका से कर सकेगी ? कौन तब उसे शैलजा की तरह स्नेह और आदर देगा ? आरती समाप्त हो जाने पर देवता के मन्दिर में शख-घंटा-मंगल ध्वनि थम जाती है। वैसे ही उसके जीवन का सारा उल्लास और मायके के स्निग्ध जीवन का आल्हाद समाप्त हो जायगा ! पर जिस साधक ने आराधना करके—भावावेश से गद्‌गद् अपनी आँखों से अपूर्व दीप्ति — अद्‌भुत ज्योति विकीर्ण कर उसकी जीवन-प्रतिमा में प्राण प्रतिष्ठा की है उसे त्याग क्या वह घंटा घड़ियाली और नीराजन के कपूरी स्वरों में ही भटकती फिरेगी ? एक विराट अतृप्ति उससे हृदय में हर घड़ी लम्बी साँसें छोड़ती है। आरती के मुख मंडल पर गहरी निराशा की मलीनता छा गई। रात का तीसरा प्रहर वेग से बीत रहा था। गंगा से उस पार खेत थे जो चाँदनी रात में शाम को गाँव की ओर गाती हुई लौटी किसानों की बहूबेटियों के पगचिन्ह हृदय पर धारण किये एक नैसर्गिक शीतलता लहरा उठे हैं। आरती के भरे और पुष्ट शरीर में सौन्दर्य की ज्योत्स्ना उसी तरह लहरा रही है। उसका शरीर भी तो एक चचल देवकुमार के ममत्व भरे प्रणय पगचिन्हों को छिपाये रूपकी चाँदनी में खिलखिला रहा है। उन्माद के इस घेरे को छोड़कर—तृष्णा के बसेरे से निकल वह कहाँ भाग जाय ? चारों ओर उस मादकता का साम्राज्य है। नहीं इस परिधि के बाहर जाना जीवन के सब से बड़े सत्य और सौन्दर्य का निरादर है ! आत्मा और परमात्मा का तिरस्कार है यह !

आरती का अब तक का जीवन सपनों की एक सुन्दर और सुखद शृङ्खला रहा है। बड़े ताल्लुकदार और सिलेक्शन ग्रेड के डिप्टी कलेक्टर की इकलौती लड़की आरती इकलौते फिलासफ़र भाई की बहन—घर भर की आँखों की तारिका—दुलारिका। आरती ने जन्मदिन से ही देखा है—कहीं दुख—पीड़ा—दैन्य—अभाव कुछ नहीं। उसके पिछले सारे जीवन को मुख और प्रमोद ने ऐसा ढक रक्खा था कि कभी

उसे कुछ सोचने का मौका न मिला। जहाँ जहाँ पिता गये वह गई और पढ़ी—लिखी। इसके बाद भैया की शादी हुई! नवल नवेली प्यारी भाभी मिली तो जैसे दीप की बाती से बाती जुड़ गई—गंगा-धारा में एक मेघ-शून्य नीले आकाश-सी जमुना की धारा आकर मिल गई—सुखस्वप्न सी मधुर सन्ध्या में आकर मन को मुग्ध करने वाली चाँदनी घुल गई। महमूद के परिवार से उसके परिवार का हार्दिक सम्बन्ध था। शुरू से दोनों घर के लोगों का एक दूसरे के यहाँ आना जाना था। महमूद का बचपना उसके भाई के पास बीता था। आरती ने भी जो ज्ञान उपलब्ध किया था उसका श्रेय उसके भाई को था। शुरू से महमूद की कल्पना के स्वर्ग में पली आरती परदेश में शहर शहर पिता के साथ घूमकर-रहकर भी गाँव की चट्टानों और घाटियों से नीचे उतरती सुनहली रेत में लहराती अपनी उमंगों की फुलवारी न भूलती। गरमी में पिता कहीं रहते पर आरती इन्तहान का आखरी परचा होते ही गाँव की ओर भागती। एक बार सूना घर फिर आनन्द और क्रीड़ा की तरंगों से लहरा उठता भैया यूनिवर्सिटी से आते—महमूद कालेज होस्टल से और भाभी अपने पीहर से। आरती और महमूद यौवन की अरुण ऊषा में एक दूसरे को चाहने लगे पर भैया और भाभी की ओर से कभी कोई बाधा न पड़ी। भैया महमूद को सगे छोटे भाई को तरह चाहते थे। उनके कोई सहोदर न था। महमूद को शुरू से वे पढ़ाते लिखाते रहे थे। जब एक एक कर उसके माँ बाप मर गये तो आरती के भाई और पिता पर इस अनाथ जमींदार बालक को पालने और उसकी लम्बी जमींदारी और सम्पत्ति की रक्षा उसके लालची चाचा काका से करने का भार आ गया। आरती की माँ को यह सब बहुत भला न लगता था पर इकलौते बेटे और बेटी—बहू के सुख और सन्तोष में उन्हें सब कुछ था। बाद में महमूद की बहन शमीम बेवा हो गई और अपनी अकेली बच्ची को लेकर

महमूद के घर आ रहने लगी। आरती के माता पिता, भाई और भाभी महमूद की ओर से निश्चिन्त हो गये। महमूद के दिल के भीतर बूँद बूँद कर जो एक नया सुख इकट्ठा हो रहा था उसे प्रकट होते देर न लगी। वह खुश था—लापरवाह था—कोई चिन्ता उसे घेर न पाती थी। लेकिन आरती! आरती के जीवन में सुख और निश्चिन्तता ही सब कुछ नहीं। पिछली घटनायें और भविष्य की आशंकाएँ अवसर पाते हृदय में फूट निकलती हैं। और महमूद की बहन शमीम! घनी बरसात की रातों में जब महमूद कालेज खुलने पर शहर चला आता है तब! तब भारी घबड़ाहट उसके दिल में होती है। उसके दिल के कमरे को कभी कभी कैसा घना कोहरा घेर लेता है। जब चारों ओर बाहर गाँव के पुरई पाल खेत गड्ढे सब तरफ पानी ही पानी भर जाता है—आस पास दूर दूर तक पानी के अतिरिक्त कुछ भी नज़र नहीं आता तब शमीम के दिल में जो सीलन भर जाती है उसे आरती जानती—पहचानती है। चारों ओर घने फैले कुहरे को भेदकर जब वह शमीम के दिल के निकट पहुँच जाती है तब सार्थक हो जाता है उसका प्रेम और प्रेम की यह लजवन्ती यादगार। आरती अपने दुलार में फूली नहीं समाती। सोचती है—जाने कितनी बरसातें शम्मी दीदी को ऐसे ही अकेले पार करनी होंगी। शमीम के जीवन में छाया हुआ सफेद सफेद कुहरा—यह पहाड़ी बरसाती धुन्ध अज़ीब दौड़ लगाया करता है। कभी कभी आरती की आँखें भी उसे भेद नहीं पातीं। कमरों के भीतर कपड़े, दीवारों और आलमारियों पर वह जम ही जाता है—अंग अंग—पोर पोर—अणु परमाणु पर भी उसे बैठते और दुःख से गोला करते शमीम देखती है—अनुभव करती है। उसका पति लखनऊ के मेडिकल कालेज में 'फिफ्थइयर' में पढ़ता था। एक दिन गोमती की भूखी लहरें उसे खा गईं जहाँ वह तैरने गया था। पूरे परिवार में कोहराम मच गया—शमीम के दिल की दुनिया उजड़ गई। आज जीवन में फैले अंधकार को उसकी बेवा आँखें छेद नहीं

पातीं। जब बरसात के मारे नाक में दम हो जाता है—तब शमीम का दिल उचाट हो जाता है.....और उसका भाई महमूद! दो बार डेढ़ डेढ़ साल के लिये उससे बिछुड़ जेल में जब बन्द कर दिया गया है तब शमीम की आँखें रोते रोते एक बार फिर फूटने की हद पर पहुँच गई हैं। अपने जीवन की घटनाओं—परिस्थितियों और मजबूरियों को छाती से लगाये उसने कितनी राते काटी हैं—आरती को मालूम है। उसकी बाज़ी अपने जीवन के सहज ज्ञान की भीतरी तृष्णा से बार बार बाहर निकलने की कोशिश करने पर भी नहीं निकल पातीं। अपनी नारी-कोमलता के ऊपर से अब उनका विश्वास जाता रहा है। कोई मान—आदर—घमंड जैसे उसमें बाकी नहीं रह गया। सब्र ही उसके जीवन का सुदृढ़ स्तम्भ बन गया है। जीवन से भाग भाग कर पनाह माँगने वाले उम्र के तकाज़े—यौवन के विद्रोह—बिस्तर में करवट बदल बदल कर दुबक जाने वाले अरमान—आँखें मलती—तारे गिनती—रगों में सनसनाती हुई चिनगारियाँ सब उसकी सूजी आँखों और फूले हुए पपोटों में मन का मैल जमा करने और फिर एक अविरत प्रवाह में बहा देने वाले क्रन्दन के साथी बन गये हैं। जमींदारी का भार उस पर है। महमूद को कान्ग्रस के काम से फुरसत नहीं।

आरती ने बेचैन हो फिर सुराही से उड़ेल कर पानी पिया। सुखिया के मुँह पर गिलास का बचा पानी छोड़कर चुपचाप चारपाई पर दुबक गई। सुखिया हड़बड़ा कर उठ बैठी और चौंकती हुई बोली—'बीबी—बीबी—उठो! पानी बरस रहा है।'

आरती ने जागने का नाट्य करते हुए कहा—'ख्वाब देख रही है क्या सुखिया! कैसी बेदर्द गर्मी है। तू पानी की रट लगा रही है। शाम से तुझे साँप सूँघ जाता है।'

'क्या करूँ—रात भर जागती रहूँ! दिन भर में तान कर सोती हो—तुम्हें नींद क्यों आने लगी! दिन भर बैल की तरह

काम करूँ। रात को तुम्हारे साथ घर का पहरा दूं? न बाबा न! मुझसे नहीं होने का! रात को भर नींद सोने को भी न मिलेगा तो कैसे जिऊँगी?'

'मैं रात भर पहरा देती हूँ! जो मुँह में आता है बक डालती है। देख कल भाभी से तेरी शिकायत करती हूँ। रात भर मैं अपने हाथ से लेकर पानी पिऊँ। यह पड़ी बादलों का—बरसात का सपना देखती रहे। वाह रे जमाना!'

सुखिया फिर नींद में खर्राटे मारने लगी। आरती ने अभिमान से दूसरी ओर मुँह फेर लिया। उसे नींद लगने लगी है।

लेकिन अपनी कोठी की छत पर पड़ा महमूद करवट बदल रहा है। दूसरी छत पर ज़ोहरा को लिए शमीम पड़ी है! बीच में ज़ोहरा ज्वर से कराह उठती है तो शमीम के चुपकारने की ध्वनि आकर उसके कानों से टकराती है। महमूद पड़ा सन्यासिनी प्रतिमा की बात सोच रहा है। कई दिन से वह झोपड़ी से गायब है। कान्फ्रेन्स खत्म होते ही महमूद को इलाहाबाद लौटकर अपने काम में लग जाना था। उसे जल्दी अपना थीसिस खत्म करना है। ज़मींदारी के कई झगड़े निपटाने हैं। मुकदमों के लिए कुछ अच्छे वकील करने हैं। जेल में लिखी अधूरी किताबें पूरी करनी हैं। यह सच है वह गाँव में रहकर कुछ काम नहीं कर पाता। आरती का नैकट्य उसे आलसी और स्वप्नशील बना देता है। अधिकाँश समय यों ही बीत जाता है। इस वर्ष उसे डाक्टरेट लेनी है। तब सब बातों से मुक्त हो देश का काम करना है! उसने रास्ता चुन लिया है। यूनिवर्सिटी में दो बार जब स्थान खाली हुआ तब उसके प्रोफेसरों ने उसे चाहा है। वह चाहता नियुक्त हो गया होता। उसके सामने भैया का आदर्श है जो अपने विश्वविद्यालय में अब तक फिलासफी के सर्वश्रेष्ट छात्र होते हुए भी नौकरी की झञ्झट में नहीं

पड़े। पिता के कहने सुनने पर वकालत की परीक्षा पास कर लेने पर भी जो दो महीने से अधिक प्रेक्टिस न कर सके। अल्लाह का दिया उसके पास खाने को बहुत है। वह चाकरी से दूर रहना चाहता है। डाक्टरेट का भी उसे मोह नहीं। लेकिन इतना अधिक काम उसने उस सिलसिले में कर डाला है कि उसे पूरा करना अभीष्ट है। इसके बाद यूनिवर्सिटी से सदा के लिये उसका सम्बन्ध छूट जायगा। वह डटकर जीवन के प्रशस्त राजपथ पर चलेगा। मुल्क की आज़ादी का दीवाना विद्यार्थी जीवन में राष्ट्रीय अन्दोलनों में कूद पड़ने वाला महमूद अपना रास्ता पहचान चुका है। उसके सामने देश की आज़ादी का सवाल उठते बैठते घूमता है। इसके लिये अपना सर्वस्व समर्पित कर देने की उसकी इच्छा दिन पर दिन दृढ़ और अजेय होती गई है। कई बार भैया से उसकी गर्मागरम बहस हुई है। अब तक दार्शनिकों ने केवल संसार की व्याख्या की है। उसे बदलने का प्रश्न है। महमूद ने इसे अपने जीवन का मूल मंत्र बना लिया है। पर भैया केवल किताबों और भाभी की दुनिया में रहते हैं। यह सब क्यों नहीं समझ पाते? दुनिया—विशेषकर हमारा मुल्क दोज़ख बन गया है—उसे बदलना ज़रूरी है। जिसने दुनिया को सही सही समझा है वह उसे बदलने का बीड़ा उठाये बगैर न मानेगा। शोषण, दोहन, जुल्म, गुलामी जात पाँत छुतछात ये जोंकें हैं जो समाज का खून चूस रही हैं। जोंकों के इस खूनी दलदल को हरे भरे खेत में बदलना होगा। विदेशी जोंकों के साथ जमींदार, राजे महाराजे, पंडे पुरोहित, व्यापारी, कारखानेदार—महाजन, पूँजीपति आदि कितनी ही जोंकें—देशी और राष्ट्रीय जोंकें भारत को नर्क बनाये हैं! करोड़ों व्यक्ति उनके चलते एक जून खाना पाते हैं और केवल लज्जा-निवारण के लिये लँगोटी नुमा कपड़ा। इन्हीं जोंकों के कारिन्दे करोड़ों किसानों के लहलहाते खेतों पर मँडराया करते हैं। करोड़ों की जवानी इन जोंकों से उधार लिया ऋण चुकाते चुकाते खत्म हो जाती है।

समाज से इन दुश्मनों का अन्त तब तक नहीं हो सकता जब तक यह शासन-सत्ता—यह शूली का निज़ाम खत्म नहीं होता। पहले विलायती जोंकों से लड़ना और उन्हें खत्म करना है। इस नर्क में सड़ना गवारा नहीं—इससे घृणा कर भागना स्वीकार नहीं। इसे तो बदलना है—हर प्रकार के मानवीय और अमानवीय तरीके से। महमूद ने सब भैया के दिमाग में ठूँसने की चेष्टा की। निष्क्रिय फिलासफी के जाल से निकल कर सामाजिक न्याय के संघर्ष में पड़ने का आह्वान उसने किया। पर समाज के लाभ हानि से जैसे उन्हें मतलब नहीं। देश में इतनी भयानक अस्थिरता है—स्वतंत्रता के आन्दोलन की जड़ें दिन प्रतिदिन गहरी होती जाती हैं। लेकिन उन्हें सरोकार नहीं। आरती बराबर उसकी तरह सोचने और समझने की कोशिश करती है। वह सारी फिलासफी—सारा धर्मशास्त्र—सारा ज्ञान झूठा और बेमानी है जो समाज को कष्ट देने वाले—हानि पहुँचानेवाले दुश्मनों के नाश की प्रेरणा नहीं देता। उसे खुशी है आरती के रूप में उसने साथी पा लिया है। जो समाज और देश के शरीर को दाँव में लगाकर नोच खाने के लिये उठते बैठते योजनायें बनाया करते हैं वे अपनी सन्तति के लिये भी शोषण की यह हृदयहीन परम्परा निरापद और निरंकुश छोड़ जाना चाहते हैं· · · ·

पाँच

महमूद की विशाल हवेली के सामने सुकरू का बड़ा सा बिलकुल कच्चा मकान है। शहर की अँधेरी घुपगलियों में जब गर्मी की हवा लपटों की तरह ऊँचे सीले मकानों से टकराकर एकरस हिंसक आवाज़ करती भर भर जाती है तब सुकरू का साफ सुथरा, पड़ोसियों की गायों के गोबर से लिया पुता मकान आँगन में खड़ी छायादार बड़ी नीम की शीतल हवा के झकोरों में छलका करता है। बरसात में गाँव की धूल भरी गलियों और सड़कों पर कीचड़ मच जाता है। गाँव के मोटे भद्दे दुबले और अधरोगी लड़के हाथ में हाथ डाले

फिसलौने खड़चड़ पार कर सुकरू के चबूतरे पर खेलने के लिये पाँत की पाँत बनाकर जाते हैं कीचड़ से बचने के लिये बारबार मेढक की तरह फुदक फुदक कर। अँधेरा, कीचड़, पानी आँधी और बारिश जब चारों ओर मुर्दों की सी बस्ती का अहसास पैदा करती है तब इसी बड़े कच्चे चबूतरे पर चारपाई डाले सुकरू जीवन के एक हल्के इशारे की तरह आल्हा की बंदिशें गाया करते हैं।

गरमी भर सुकरू पौंसले पर पानी मिलाते हैं। लोटा किसी के हाथ में नहीं देते हैं। बालकों से तंग भी आ जाते हैं। जब कभी बिगड़ पड़ते तब मानों खुद अपने ही ऊपर गुस्सा उतारते। सुकरू पढ़े लिखे नहीं। गाँव में सब तरह के लुच्चे लुँगाड़े—भलेमानुस तथा कुमानुस हैं लेकिन सुकरू के मुँह से कभी किसी ने गाली नहीं सुनी। मुँह से कोई अपशब्द न निकालना उनका स्वभाव बन गया है। पौंसले का काम सुकरू को इतना प्रिय है कि कहा बारहों महीने गरमी पड़ती होती तो भी सुकरू को इसकी शिकायत न होती। इससे बँधी चार रुपये महीने की जीविका थी। दूसरे गल्ले के व्यापारी सुकरू की विशेष कृपा के बदले अपनी ओर से सेर आधा सेर अनाज भी दूसरी तीसरी बाज़ार दे दिया करते हैं। इस तरह जिस चिन्ता में सुकरू सुबह से तीसरे पहर तक दूकानदारों और व्यापारियों के यहाँ चक्कर काटा करते थे उससे उन्हें निश्चिन्तता मिल जाती थी। लेकिन परोपकार का ध्यान सुकरू को इससे किसी भी दशा में कम न था ऐसा भी लोग कहते थे।

सुकरू बड़े नेमी ब्राह्मण हैं। तीसरे पहर के बाद ही बहुधा उनके स्नान होते; लेकिन अगर किसी की—वह चाहे जो कोई हो—छाया भी नहाने के बाद उनके ऊपर पड़ जाय तो वह बिना दुबारा नहाये न मानते हैं। इसी से प्रायः शाम को सूर्यास्त से बाद ही वह निठल्ले में स्नान कर लौटते मिलते। सदा गीली धोती पहने लौटते और साथ में एक छोटा सा ताँबे का घड़ा गंगा जल से भरे लाते। गंगा जल वह पीते भी थे। उसके बाद पूजन

करते। कुछ मन्त्र टूटे फूटे याद हैं उन्हीं का दस पाँच मिनट पाठ कर एक लोटा जल पास के मंदिरवाले शंकर जी पर चढ़ा आया करते हैं।

गाँव भर में सुकरू अपने नाम के एक ही आदमी हैं। बिलकुल निराले। उनके माता पिता और भाइयों को छोड़कर घर घराने के निजी लोगों तथा पड़ोसियों को भी शायद उनका असली नाम न मालूम होगा। जिन्हें मालूम रहा होगा उन्हें भी वह नाम याद रखने की चिन्ता और उत्सुकता मानों मिट गई थी। सुकरू बाबा कहने भर से छोटे बड़े सभी उन्हें पहचान जाते थे! कम से कम महमूद तथा उसके हमजोलियों में प्रायः सबने उन्हें इसी अभ्यस्त नाम से चलते-फिरते उठते बैठते आते जाते सुना है। छोटा सा चार फुट का कद, छरहरी देह, पेट में त्रिवलियों का जमघट और आधा बीता ऊँचा ललाट।

सुकरू की उमर लगभग पैतालीस की होगी पर लोग उन्हें २५ वर्ष से ठीक ऐसा ही देख रहे हैं। औरों की तरह उनकी उमर बढ़ती ही नहीं अथवा सुकरू दिनों का कलेवा करते जा रहे हैं कुछ नहीं कहा जा सकता। सुकरू के मोंछ के जितने बाल दस वर्ष पहले सफेद रहे होंगे उनमें एक आध झड़ गया होगा—बढ़ा न होगा। गाँव वालों ने माघ पूस के जाड़ों में उन्हें आधी धोती ओढ़े हुए ही देखा है। जब कभी बाजार में अड़ोस पड़ोस के गाँवों से माल लाकर बेंचने वालों में अलाव के चारों ओर बैठकर मौज भी छिड़ती तो वे सुकरू का प्रमाण पेश करते थे। सुकरू जात के ब्राह्मण थे। इतर जाति वाले ही नहीं अन्य स्वजातीय भी उन्हें सुकरू बाबा कहते। सुकरू को अपने काम से काम—न किसी का लेना—न देना। स्त्री पुरुष कुल दो प्राणी घर में। सुबह से स्त्री को अपने धंधे में लग जाना और सुकरू को गांव में निकल पड़ना।

सुबह से निकलकर प्रायः तीसरे पहर सुकरू घर वापस लौटते हैं। जिस दिन बाज़ार लगती उस दिन शाम ही हो

जाती। हफ्ते के दो दिन बुधवार और रविवार सुकरू के जीवन के महत्त्वपूर्ण परिच्छेद है। बाज़ार से शाम को घर लौटकर रोटी खाकर लेटते लेटते बहुधा बारह बज जाते। नहाना धोना, पूजा पाट चूल्हे चक्की का प्रबन्ध करना और तब रोटी बनाना और खाना। गरमी में सुकरू पौंसले लोकोपयोगी काम में बहुत सन्तुष्ट रहते प्यासे लोगों को पानी पिलाने में उन्हें बड़ा आनन्द आता। ब्राह्मण से हाथ का पानी सब पी सकते हैं और किसी जात का छुआ पानी नहीं पी सकता इस महत्व को सुकरू अच्छी तरह जानते हैं।

सुकरू का जीवन ही अपना था। उनकी स्त्री कम से कम उनके अनुकूल ज़रूर थी। वह वास्तव में स्वभाव से उनके अनुकूल थी अथवा सुकरू ने उसे वैसा बना दिया था यह कहना इसका विवेचन करना सहज नहीं! हाँ! प्रकृति दोनों की प्रायः मिल जुल गयी थी। कभी कभी सुकरू और उसकी पत्नी में लड़ाई हो जाती—यहाँ तक हफ्ते दो हफ्ते दोनों में बोल चाल भी बन्द रहता। लेकिन दोनों में से एक भी न मानता था। सुकरू को अपने काम से काम—उनकी स्त्री को अपने काम से काम। पास पड़ोस की औरतों को इस लड़ाई की ख़बर फौरन लग जाती—बड़ी बेटियाँ इस महत्वपूर्ण संवाद से अवगत हो जातीं। लेकिन इन दोनों प्राणियों के रोज़ के काम काज में कोई बाधा न आती। मुहल्ले वाली जब कभी सुकरू की धर्मपत्नी से कुछ पूँछती तो वह साफ साफ बतला देती। जब कभी रेख भीगते हुए नई उमरवाले सुकरू से पूँछते तो वह भी सच सच कह देते। सुकरू और उनकी पत्नी दोनों बड़े निष्कपट जीव थे। सुकरू दिन भर बाहर रहते इस कारण उन्हें खुद अपने लिये पानी लाने में कभी कभी रात हो जाया करती। ऐसे छोटे मोटे काम वह कभी कभी कर दिया करती। कभी जब लड़ाई शुरू होने को होती तो पानी का ही प्रसग लेकर सुकरू उस से उलझ पड़ते! इस पर धीरे धीरे बात बढ़ जाती और घंटे

आध घण्टे विवाद चलता रहता ! कुल इतनी सी लड़ाई। कभी पानी पर—कभी बर्तनों पर और कभी ऐसी ही साधारण किसी बात पर। फिर दस पन्द्रह दिन के लिए बात चीत बन्द। सुकरू के घर आने में देर हो गई तो उसने साँकल भीतर से लगा ली। सुकरू ने कुन्डी खटखटाई तो उठकर धीरे से खोल दी। सुकरू अपनी दालान की तरफ चले गये—वह अपनी दालान की तरफ चल पड़ी। फिर कुछ नहीं। सुकरू और उनकी पत्नी रुखाई कभी तीन हफ्ते से आगे नहीं चली। किसी न किसी में इतना प्रेम उमड़ता कि दूसरा उसमें डुबकियाँ लगाने लगता। फिर मेल का भी वह रूप देखने में आता जो लड़ाई का। अड़ोसी पड़ोसी लड़ाई की तरह उस प्रेम का उदाहरण भी दिया करते। गाँव की चुगुल चवाइनें आपस में सुकरू के वैर और प्रेम की चर्चा चाव से किया करतीं।

लड़ाई हो या मेल रोटी दोनों की जब बनती एक साथ बनती। एक दालान में सुकरू का चूल्हा धधकता ठीक उस के बगल की दूसरी दालान में उनकी धर्मपत्नी का। लकड़ी आटा, दाल बर्तन अपने अपने थे। भंडारा अपना अपना चूल्हा चौका अपना अपना और भोजन तो दोनों का अलग अलग बनता ही। लेकिन खाना धर्मपत्नी को सुकरू के भोजन कर लेने के बाद ही—लड़ाई हो तब भी—मेल हो तब भी। जब मेल होता तो विनिमय भी हो जाता ! लड़ाई में यह बात न थी। तब अगर सुकरू की रोटियाँ संयोग से कम पड़ गई तो न यह माँगते थे और यदि पत्नी के चौके में कोई चीज कम पड़ गई तो न वह माँगती थी। मेल रहने पर दोनों को जरूरत पड़ने पर रोटियाँ उधार दे देते। यह दोनों जानते थे कभी लड़ाई हुई तो यह अहसान अपने ऊपर न रक्खेंगे ! और मय ब्याज के वे रोटियाँ चुका भी देते थे।

सुकरू की धर्मपत्नी थी साध्वी और सती। खुद

अपने लिये चर्खा कात कर सूत बेचती और उससे अपना गुजर बसर करती। सुकरू की कमाई उसने कभी न खाई। सुकरू खुद अपने लिये कमाते थे। सुकरू कह चुके थे—भाई! तुम अपना सूत कातो—हम अपना कमायें। अभाग्यवश जब सुकरू को कोई क्लेश होता तो मानो उनकी पीड़ा उनकी पत्नी को व्यापती। कभी सुकरू को बुखार आया—वह बेचारी मर गई। उपवास करती—देवी पूजती—जलढ़ारती और न जाने किसका किसका परसाद मानती—मनौती करती। अच्छे हो जाने पर सुकरू जब यह जान पाते तो उन्हें बड़ा कष्ट होता! इस पर कभी लड़ाई छिड़ जाती। पर वह अपनी कमाई से सब करके छोड़ती। सुकरू की की धर्मपत्नी के साध्वीपन की चर्चा कोई खास मौका आने पर गाँव की स्त्रियों के लिये अभिमान का विषय बन जाती। गाँव में किसी के यहाँ सोहागिने न्यौती जाँय—उनमें पहला नाम सुकरू की धर्मपत्नी का होता। कहीं किसी के घर में मूड़न छेदन हुआ सुकरू की धर्मपत्नी का बुलौआ जरूर हुआ। ऐसे मौके पर मिठाई जो मिलती उसमें आधा सुकरू के लिए वह अवश्य बचा लाती। ऐसे ही अपने न्योते में सुकरू करते! इन चीज़ों के लेनदेन में किसी को कभी कोई संकोच नहीं हुआ। लड़ाई रहने पर भी किसी जानो मानो जगह पर दोनों एक दूसरे के लिये उस चीज़ को ढाँककर रख छोड़ते।

सुकरू के कुटुम्ब में और भी कोई है अथवा कितने आदमी हैं इसका ठीक पता किसी को कभी न लगा। घर का यह भेद न कभी सुकरू ने किसी को बतलाया न उनकी पत्नी ने। मायक सासुरे से एक आध आदमी छठे छमाहे जब आ जाते तो कानों कान किसी को ख़बर न होती। बहुधा बड़े आदमियों के जान पहचान वालों की चर्चा इधर उधर फैल जाती है वैसी बात सुकरू के यहाँ आने जाने वाले पाहुनों की न थी। यों सुकरू ही गाँव में ऐसे आदमी थे जिन्हें सब जानते थे। लेकिन कोई

पाहुन सुकरू के यहाँ आया भी तो अधिक दिन नहीं ठहरा। यह बात नहीं कि उसकी आवभगत में कसर रहती ? बेचारा पाहुन आप ही उकता जाता। किससे कौन सी बात करे ? कदाचित् उसके सामने ही सुकरू और उनकी स्त्री में विनोद छिड़ गया तब बेचारे को जान बचाना दूभर हो जाता। बात यह है सुकरू बाबा बड़े साफ आदमी हैं। मान अपमान लोगों के भला बुरा कहने का न तो उन्हें ख़्याल है—न चिन्ता ही। हाथियों की सी मस्ती उनकी ज़िन्दगी में है। अपनी राह जाना अपनी राह आना—कुत्ते भौंकते रहें। सुकरू की जीवन प्रगति में कभी कोई अन्तर न आया। संसार के ढोंगी आदमियों की तरह कभी उन्होंने यह न सोचा घर में लड़ाई हो रही है तो लोग ओछा या कहेंगे। उनकी अपनी धुन थी। संसार में बुरा क्या है—अच्छा क्या है इससे उन्हें सरोकार न था। गाँव घर में कौन मरा जिया इसे सुकरू जानते हुये भी न जानते थे। तेरही वर्षी, छठी पसनी अथवा ब्रह्मभोज में न्यौता आया। कभी चले गये—कभी नहीं भी गये। कोई बुरा मान जायगा अथवा फिर न्यौता न देगा इस पर सुकरू ने कभी न सोचा। उनकी पत्नी को ज़रूर इसका ख़्याल रहता था। उन्होंने सुकरू की जानकारी में कभी कोई ऐसा काम न किया होगा जिससे सुकरू अपरिचित रहे हों।

सुकरू कभी किसी की बारात में गये हैं या नहीं इसका गाँव में किसी को स्मरण नहीं। गाँव के लोगों ने सुकरू को कभी किसी बारात में नहीं देखा। सुकरू कहीं आना जाना पसन्द न करते थे। गाँव के लोगों का कहना है सुकरू ने अपनी जिन्दगी में कुल दो बार बारातें की हैं। एक जब उनकी पहली शादी सुमेरपुर में हुई थी। दूसरी जब उन्हों की अपनी शादी फतेहपूर में हुई। दूसरी बार बारात में सुकरू जबर्दस्ती खींच लाये गये थे। पहला विवाह ग्यारह वर्ष की उमर में हुआ तब सुकरू

कुछ जानते न थे। लेकिन पाँच वर्ष बाद जब दूसरा विवाह हुआ तब तो सुकरू ने साफ साफ कह दिया था हम अपनी बारात नहीं जायँगे। लाचारी थी। उसके बाद उन्होंने किसी की भी बारात में जाना छोड़ दिया। बारात में उन्हें कोई चाव न था। उनकी पत्नी कहती भी कि जाओ—दो चार दिन के लिये मन बदल जायगा। सुकरू उसकी भी न मानते। ठाकुर और बनिये बहुत घेरते घारते तब सुकरू साफ जबाब देते हुए कहते—भाई! हमारा घर कौन देखेगा—कहीं पानी बरसा तो हमारे कंडे लकड़ी भीग जायँगे--हमारी बकरी की फिक्र कौन करेगा। इस तरह की बातें—और ये सब सच सच हैं—कह कर वह टाल देते। गाँव के व्यौहारी सुकरू को ऐसे मौके पर भूलते नहीं—चाहे जिस ख्याल से हो—केवल विनोद के लिये हो या सचमुच निमंत्रण देने के विचार से—सब उन्हें पूँछते जरूर है पर सुकरू कभी किसी की बारात में न गये!

सुकरू को घर की बहुत फिकर रहा करती है। लीपना पोतना, सफाई करना, छापछूप करना—क्या उन्हें एक काम है! सुबह रोज गोबर के लिये एक छोटा चक्कर लगा आते। किसी की मस्त भैंस देखते तो उसके गोबर की टोह में ज़रूर रहते। यह बात न थी सुकरू के यहाँ मतलब भर के लिये दूध न हो जाता हो—कभी न भी होता था। लेकिन दूध मठे की उतनी चिन्ता उन्हें कभी न व्यापी जितनी गोबर की। जब वह दूसरे तीसरे घर को लीप कर आँगन को साफ कर, ढिगें निकाल हाथ धोकर एकबार देखते तो मानों कृतकृत्य हो जाते। जिस किसी की गाय भैंस सुकरू के मन में बैठ जाती उसके गोबर के लिये कोई खास त्यौहार पर सुकरू पहले से कह आते। कभी कोई कहता भी कि मट्ठा दही चाहना तो ले जाना तो सुकरू कुछ अन्यमनस्क होकर उस बात को ही टाल जाते।

सुकरू के यहाँ घर पर ही मतलब भर को दूध हो जाता था।

उनके एक बकरी थी जो लगातार चार पाँच वर्ष उनके पास रही। एक उसका बच्चा था। जैसा छोटा पस्ता उनका कद वैसी उनकी बकरी। सुकरू से कोई गाय भैंस रखने की बात कहता तो बहुत नाराज़ होते। अपनी बकरी के पक्ष में वह दलीलें देते कि सुनने वाले चुप हो जाते। कहते—गाय भैंस कौन बाँधे? बकरी को जब चाहा बगल में दबा लिया और चलते बने। चूनी भूसी जो हुआ वह खाने को बहुत है। गाय भैंस के लिये कहाँ खली भूसा ढूँढ़ते फिरेंगे। अपनी बकरी को वह दुनिया कहा करते थे। जब कभी दुनिया का मिमियाना सुनते झट उन्हें ख्याल आता दुनिया सत्संग के लिये बुला रही है। सुकरू को दुनिया से बड़ा प्रेम था! दुनिया को अपने हाथ से छोरते बाँधते, अपने हाथ से चूनी भूसी देते। कभी कभी दुनिया को लेकर गाँव बाहर चले जाते और बँबुराई में उसे निर्भय होकर छोड़ देते। वह बबूल की सिंगरियाँ तोड़कर मौज से खाती। सुकरू अपने लिये सूखी लकड़ियाँ और डालियाँ बटोरते। बीच बीच में दुनिया को ओर सिर उठाकर देख भी लेते। फिर विजयी सैनिक की भाँति अपनी अजा दुनिया के साथ घर लौट आते—मानों जीवन-युद्ध का एक परिच्छेद समाप्त हुआ हो। दुनिया वास्तव में सुकरू की एक जीवन संगिनी थी। उसकी सेवा सुश्रूषा में—उसके सत्संग में सुकरू को साधु महात्मा के सत्संग से कम आनन्द न आता! और दुनिया का दूध तो उन्हें इतना प्रिय था कि उस पर सुकरू गोरस आदि पहले ही निछावर कर चुके थे!

रास्ते में मुश्की और अबलक घोड़ों पर सवार—सुन्दर जीनें कसे रईसज़ादों को जाते देखकर सुकरू अपनी बकरी की देह पर हाथ फेरते फेरते अकड़ जाते थे। घोड़ों की भारी टापों की खटाखट जब तनिक मन्द पड़ जाती तब सुकरू भी अपनी बकरी की दुम ऐंठकर उसे तेज दौड़ा देते और पीछे पीछे खुद दौड़ते आते। गीली छतों और काले दरख्तों के ऊपर बादल धूल के बगूलों की तरह उठा

करते —ऊपर —ऊपर —और सुकरू कीचड़ में फिसल फिसल कर अपनी बकरी के पीछे भागते।

गरमी में सुबह तड़के जब अपने अपने घर के सामने कागज की कन्दीलों की तरह बुझे हुए लोग जमीन पर और खटियों पर पड़े रहते—जब सुबह की रमक एक बेशक्ल बादल चारो ओर बिथरा देती —जब कुछ दूर पर सामने 'टाउन एरिया' की लाल घुँयेदार लालटेन जला करती —आँख की तरह—चिपकी सूजी आँख की तरह जिसमें सामने की रोशनी से खून का एक बूँद डबडबा उठा हो और जिस समय महमूद ऊपर छत पर पड़ा नई दुनिया की रौशनी का ख़्वाब देखा करता—उस दुनिया का जिसके लिये इन्सान जीवित रहेगा—जब बेहद ऊबे हुए बच्चों की तरह सितारे आसमान में सब-की भरते उस समय सुकरू उठकर गोबर की तलाश में निकल जाते। गोबर के लिये यह पौ फटने का समय सब से उपयुक्त होता। सुकरू कभी कभी इसकी प्रतीक्षा में जागते रह जाते—रात रात भर। महमूद के मवेशियों पर उनकी खास निगाह रहती। महमूद की कोठी के विशाल हाते के भीतर सुकरू के लिये कोई रोक टोक न थी। जब चाहते घुस जाते और टोकरी गोबर से भरकर निकल पड़ते। दिन रात सुबह शाम अँधेरे उजाले का कोई प्रश्न न था। महमूद सुकरू का बड़ा ख़्याल करता था। अक्सर बिना प्यास के भी उनके पौंसले पर पानी पीकर इकन्नी, दुअन्नी उन्हें दे देता। सुकरू खाँसे निकाल लम्बा सलाम करते हुये निकिल के सिक्के को टेंट के हवाले करते। सुकरू की अध-बूढ़ी पत्नी जो गाँव में छोटे बड़े सब के सामने लम्बा घूँघट काढ़ लेती थी महमूद से पर्दा न करती और अक्सर भीतर जाकर घन्टों शमीम के पास बैठी रहती। वहाँ से लौटते समय उसके हाथ में दो चार फसली फल ज़रूर होते थे। महमूद सुकरू को पण्डित जी कहता था पर सुकरू की पत्नी को चाची कहकर पुकारता था। आरती को भी सुकरू से बात करने में मज़ा आता था।

उनकी बीवी को वह भी महमूद की देखा देखी चाची कहने लगी थी पर सुकरू को चाचा ही कहती। हाँ ! आरती के पिता के दबदबे और रोब— शुष्क स्वभाव और साहबियत के कारण सुकरू और सकरू की पत्नी की कभी उनकी हवेली के भीतर पैर रखने की हिम्मत न पड़ती। आरती ने कई बार कहा भी पर सुकरू की स्त्री हँसकर टाल गई !

सुबह आठ बजे सुकरू अपने चबूतरे पर बैठे सन बट रहे थे। सामने से ठाकुर साहब का सिपाही चला आ रहा था। सुकरू अपने काम में लगे रहे। वह आकर चबूतरे पर चढ़ता हुआ बोला— 'सुकरू पंडित ! बड़े साहब ने कहा है ज़रूर उनसे मिल लेना।' सुकरू ने चौंक कर सिर उठाया। सिपाही को फर्शी सलाम करते हुए बोले— 'मुझे ! नहीं मुझे न बुलाया होगा। अपको समझने में धोखा हुआ होगा मालिक ! मुझे बड़े सरकार क्यों बुलाने लगे। मैं तो खौफ़ के मारे उन्हें ठीक तरह से सलाम नहीं कर पाता।'

सिपाही ने भलमनसाहत से कहा—'तुम्हीं को बुलाया है— पंडितजी ! क्या मैं बेवकूफ हूँ। तीस साल से नौकरी कर रहा हूँ— इतना न समझूँगा ! गाँव में सुकरू पंडित तुम्हारे अलावा और कोई है ?'

सुकरू ने फौरन सन उठाकर एक ओर भीतर की दालान में जाकर रख दिया। अँगौछा कंधे पर रख बोले—'बड़े सरकार का हुक्म है तो चलो। यह कहो सब खैरियत है न ? मुझसे कौन सा कसूर पड़ा.....'कहते कहते सुकरू का मुँह ओले की तरह घुलते घुलते छोटा हो गया।

'अभी नहीं। उनका हुक्म है तुम दोपहर के बाद मिलो। घबड़ाने की जरूरत नहीं। कोई काम होगा—वर्ना क्यों तुम्हें बुलाते।'

'नहीं ! अभी चलो ! मैं सुन लूँ क्या काम है। दिन भर मेरा जी घबराता रहेगा। मैं दरिद्र ब्राह्मण हूँ—इतने बड़े आदमी हैं वे।

समझ में नहीं आता क्यों बुलाया है मुझे ! अभी चलो !'

लाचार सिपाही सुकरू को साथ लेकर चला। मिनटों में ठाकुर साहब की हवेली के फाटक पर पहुँच सुकरू ने सहमते सहमते भीतर घुस कर चारों ओर देखते हुए कहा—'कहाँ है सरकार ? बैठक तो खाली है।'

सिपाही ने कहा—'बैठ जाओ एक तरफ ! अभी आ जायँगे—भीतर होंगे।'

मन मार कर सुकरू एक किनारे जमीन पर पड़े टाट के टुकड़े पर बैठ गये। एक एक मिनट उन्हें पहाड़ हो रहा था। घर में बीसों काम बाकी थे जो उन्हें एक एक कर याद आ रहे थे। पानी भरना, चौका बरतन करना, दुनिया के लिये हरे पत्ते लाना, सन बटना, एक दो बवाल सुकरू की जान को थे ! ऊपर के बड़े कमरे में ठाकुर साहब जोर जोर से बोल रहे थे। बीच में छोटे सरकार का स्वर भी सुकरू के कान में पड़ जाता था। लगता था पिता पुत्र में गर्मा-गरम बहस हो रही थी। छोटे सरकार का स्वर बड़े सरकार के स्वर से धीमा और शान्त होते हुए दृढ़ता और कठोरता में कम नहीं है यह सुकरू की मोटिया बुद्धि में भी आ गया। सहसा बड़े सरकार ने ऊपर छत से नीचे थूँकते हुए एक कोने में दुबके बैठे सुकरू को देख लिया। बोले—'बैठे रहो पंडित ! अभी तुमसे बात करता हूँ। देर तो नहीं हो रही ? तुम्हें बड़े काम रहते हैं। देर होती हो तीसरे पहर आना।' सुकरू ने दोनों हाथ जोड़ गरदन उठा गिरगिट की तरह सिहर कर कहा—'जो हुक्म सरकार का। जब तक सुन न लूँगा न जाऊँगा। तीसरे पहर सरकार ! पौंसले से फुरसत न रहेगी।'

दो घंटे के बाद बड़े सरकार नीचे उतरकर आये। सुकरू बैठे बैठे जकड़ गये थे। गोल कमरे में पड़ी आराम कुर्सी पर बैठकर बड़े सरकार ने हाथ के इशारे से सुकरू को बुलाया। सुकरू आकर अदब से नीचे जमीन पर बैठ गये। अँगौछे से माथे पर उमड़ते पसीने की बूँदें पोंछने लगे। ठाकुर साहब ने कहा—'कुर्सी पर बैठो

पंडित ! क्या ग़ज़ब कर रहे हो !'

'नहीं सरकार। यहीं ठीक हूँ। आपकी परजा हूँ—परजा कभी राजा के बराबर बैठ सकता है ! कहिए क्या हुक्म है ? मेरे लायक सरकार का कौन काम होगा—यही मैं तब से बिसूर रहा हूँ। बड़ा डर लगता है सरकार ! मुझसे कौन सी ख़ता हो गई जो आपने याद किया।'

'मैंने फौरन तो बुलवाया न था। रामसिंह से कहा था कह देना शाम तक फ़ुरसत के वक़्त मुझसे मिल लें। तुम मेरी लड़की आरती को पहचानते हो ? उसे देखा है तुमने कभी ?'

'क्यों नहीं ! बचपन से देखता आ रहा हूँ मालिक ! उन्हें गाँव में कौन नहीं जानता ! अपने गाँव की लड़की को भला कौन न चीन्हेगा ! वे अकसर महमूद भैया के घर आती रहती हैं।'

'देखो सुकरू ! तुम्हें मैं एक नाज़ुक काम सौंपता हूँ। आरती की शादी मैं जल्द से जल्द कर देना चाहता हूँ। लड़का तय कर लिया है मैंने। सब तरह से अच्छा और पुलिस कप्तान। पर मेरे घर में आग लगी है। आरती महमूद से शादी करना चाहती है। मेरे लायक बेटे इस की सिफ़ारिश अपने मुँह से मुझसे करते हैं।'

महमूद भैया से आरती की शादी ! सुकरू का आश्चर्य से अध-खुला मुँह पूरा खुल गया और खुला रह गया। 'यह भी भला हो सकता है सरकार !' सुकरू की दृष्टि ठाकुर साहब की खड़ी मूछों पर टँग कर रह गई !

'लेकिन मैं जल्लाद आदमी हूँ। मैंने कह दिया है मेरे जीते जी यह नहीं हो सकता। आरती का आज से घर से निकलना बन्द है। महमूद मेरी कोठी के भीतर पैर नहीं रख सकता। तुम अपने दरवाजे पर पौंसला खोल दो। लाला के यहाँ तुम्हें जो तनख़ाय मिलती है उसकी दूनी तुम्हें दूँगा। तुम्हें महमूद के घर पर कड़ी निगाह रखनी होगी। जिस दिन आरती वहाँ जाय मुझे बतलाना। मैं उससे और उसकी माँ से कह चुका हूँ। पर मैं या

वे चौबीस घण्टे निगरानी नहीं कर सकतीं। तुम हर वख्त वहाँ रहोगे। जिस दिन आरती को वहाँ घूमते देखोगे—मुझे ख़बर दोगे। यह मेरी और तुम्हारी बातचीत है। अगर तुम्हारी जबान से एक लब्ज निकला तो खाल खिचवा लूँगा। किसी से—अपनी बीबी तक से इस बात की चर्चा न करना। मेरे हुक्म की तामील में तिल भर फर्क न पड़ना चाहिए। तुम मेरे मिज़ाज़ से बखूबी वाक़िफ़ हो। समझे! जाओ आज से लाला की नौकरी छोड़ दो। दरवाजे पर पानी का इन्तजाम करो। जो खर्च होगा तुम्हें मिलता रहेगा। पानी खुद न भर सको आदमी रख लेना—उसकी तनख़ाय मिलेगी।'

सुकरू ने सहमकर कहा—'बहुत अच्छा मालिक! मुझे आपकी मर्ज़ी चाहिये। मैं आज से लाला की नौकरी छोड़ दूँगा। मगर बीस साल से उनका पौंसला चला रहा हूँ।'

'बको मत!' बड़े सरकार ने कहा—'तुम्हें उम्र भर मेरे यहाँ से तनख़ाय मिलेगी। बराबर अपने दरवाजे पर पौंसला चलाओगे। तुमने शरारत की तो मैं गोली मार दूँगा। इतना समझ लेना। मैंने गलती की जो आरती को इतनी आज़ादी दी। जो कमी थी वह बलराज और बहू ने पूरी कर दी। लेकिन जो इन्तहाई आज़ादी अपनी औलाद को दे सकता है वह वख्त आने पर हद से बाहर जाने वाले को जञ्जीरों से कस भी सकता है। शादी जुलाई बीतते बीतते कर ही दूँगा। महमूद से तुमने इस बात का इशारा भी किया तो तुम्हारी लाश सड़क पर धूल खाती दिखाई देगी। जाओ अब। रुपये की ज़रूरत हो खजाञ्ची से ले लेना। मैंने उससे कह दिया है। तुम्हें जब जो ज़रूरत हो वह दे देगा।

सुकरू ने बैठे बैठे जमीन पर सिर टेक कर ज़ोहार किया और काँपता हुआ उठ खड़ा हुआ। उसके पैर की सूखी पिंडलियाँ थरथरा रही थी। भय के कारण गला सूखा जा रहा था और चेहरे पर विचित्र कालिमा थी। ठाकुर साहब अब भी गुस्से मे ओंठ चबा रहे थे पर

डर के कारण सुकरू की पीछे देखने की हिम्मत न पड़ी। घबड़ाता हुआ कोठी से बाहर निकल आया और घर की ओर चला। बीस साल से लाला के यहाँ उसका सिलसिला था। कैसी कैसी मुसीबतों में उन्होंने उसकी सहायता की। महीने में दो सीधे उनके यहाँ से बँधे थे। शादी जनेऊ में कुर्ता, धोती, टोपी, अँगौछा सभी कुछ मिलता था। लेकिन बड़े सरकार के नाम से लाला भी काँपते हैं। उनके हुक्म को टालने की ज़ुर्रत दारोगा और मुन्शी—दीवान जी और पटवारी—तहसीलदार और डिप्टी भी नहीं करते—बेचारा सुकरू...

छः

आरती ने दृढ़ किन्तु विनीत कंठ से कहा—'नहीं बाबूजी! मैं विवाह नहीं करूँगी। आप मजबूर न करें।'

ठाकुर साहब ने उत्तेजित स्वर में पूँछा—'क्यों! वज़ह क्या है? तुम लोग अगर मेरी जिन्दगी में ही अपने मन के हो जाओगे तो कैसे काम चलेगा! बलराज को मैं क्या कहूँ—उसी कमबख्त ने तेरा दिमाग खराब किया है। जैसा खुद नालायक वैसी बहू मिली है.....'

'आप भैया को कुछ न कहें। उन्होंने क्या किया है? पढ़ाया लिखाया मुझे आपने है। आप की तबियत न होती वे कैसे मुझे कालेज में जाकर पढ़ने देते। मेरे पीछे आप भैया भाभी पर क्यों नाराज़ होते हैं?'

'मैं किसी पर नाराज़ नहीं होता—अपने कर्म और भाग्य को रोता हूँ। सोचा था बलराज आई० सी० एस० होकर खान्दान को रौशन करेगा सो साल भर वकालत भी न कर सका! फिलासफ़ी की किताबों में खोया रह गया। तेरे लिये बड़ी मुश्किल और कोशिश के बाद एक आई० पी० लड़का मिला है और शादी करने को तैयार हो गया है तब तू इन्कार कर रही है। मगर यह शादी भगवान के रोके न रुकेगी। मैं जानता हूँ—सुन चुका हूँ—तू मह-

मूद से शादी करना चाहती है। यह नामुमकिन है।'

'मैं शादी ही न करूँगी। कोई जरूरी नहीं शादी मेरी हो और एक आई० पी० के गुलाम से हो।'

'आई० पी० गुलाम होता है! तेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गये हैं! पुलिस कप्तान पूरे ज़िले का हाकिम होता है। मुझे अफ़सोस है इतना पढ़ लिख जाने पर भी तुझे तमीज़ न आई। दुनिया भर का आवारा महमूद तीन मरतबे जेल काट आया है। उसके साथ शादी करेगी तू मेरे जीते जी। अगर मर गया होता तो आस्मान से सैलाब की तरह उतर कर·····अभी तो जिन्दा हूँ। अभी मेरी बाहों में कूवत है।'

आरती ने फड़क कर कहा—बाबूजी! आप महमूद को क्यों भला बुरा कहते हैं। उन्होंने आप का क्या बिगाड़ा है? एक जमाने में आपने उनके साथ ऐसे सलूक किये जिनकी याद से ग़रीब पानी पानी हो जाता है। आप अब तक उनके स्वभाव से परिचित नहीं हो पाये। मैं उन्हें जानती हूँ। आप बुलाकर सीने पर गोली मारिये उसके। मज़ाल नहीं उफ़ करे। अगर महमूद आवारा है तो अपने मुल्क की ख़िदमत करने वाले वे सब आवारे हैं जिनके नीचे आपने अभी कल तक कलक्टरी की है—खुशामद भरा आदाब बजाया है।'

'मैं यह सब सुनना नहीं चाहता। मैंने क्या किया है क्या नहीं यह तुम्हारी आलोचना का विषय नहीं। मैंने सब से बड़ा गुनाह यह किया जो तुम्हें पैदा किया। वर्ना आज तू इस तरह सामने खड़ी होकर मुझे जलील करती!'

आरती ने दोनों हाथ से अपने कान पकड़कर कहा—'आप ऐसी बात न करें। आप मेरे पिता हैं—मेरे दिली जज़बातोंपर रहम करें। मैं किसी सरकारी नौकर से शादी न करूँगी। अगर शादी करूँगी तो महमूद के साथ। वर्ना मुझे अपने रास्ते जाने दें। आप के क्या संसार के अब रोके न रुकूँगी। मेरा नारित्व ही स्वीकार

न करेगा।'

'महमूद मुसलमान है। हम खानदानी राजपूत हैं। हमको खून की पवित्रता और वंश की उज्वलता पर अथाह अभिमान है। कैसे इतना बड़ा पातक निगल सकता हूँ। अपनी माँ से पूछा है तुमने। हम लोग तुम्हारी निगाह में कोई जगह नहीं रखते?'

'शादी मेरी होगी। मैं सबसे पूँछता फिरूँगी ऐसा मैंने न सोचा था। आप को क्यों एतराज़ है? भैया और भाभी को तो नहीं है। वे भी इसी पवित्र और उज्ज्वल वंश के हैं।'

'उनकी अक्ल को दीमक चाट गये हैं—और क्या कहूँ। बेहयाई की हद है—खून की जगह पानी ने ले ली है। शर्म नहीं आती मुझसे आकर बहन की शादी एक मुसलमान के साथ करने का प्रस्ताव करते! महमूद भी आस्तीन का साँप निकला। मैंने मदद न की होती तो चचा लोग सारी ज़मीन जायदाद हज़म कर लेते। आज एक मामूली काश्तकार बना पड़ा होता। जिसे बहन का दर्जा अता करना चाहिए था उस पर मलाऊन नापाक निगाह डालता है! नर्क में भी जगह न मिलेगी।'

'मेरी पोज़ीशन बिलकुल साफ है। मैंने आजतक कभी आपकी आज्ञा नहीं टाली। आपने उस दिन भैया से कहलाया आरती से कह दो ख्वाब में भी महमूद से मिलने का नाम न ले। मैं छाती पर हिमालय रखकर उनसे मिलना जुलना आना जाना खत लिखना लिखाना बन्द कर दिया। वे भी फौलाद के बने हैं। मिलने जुलने की कौन कहे कभी अपनी छत से मेरी छत की ओर देखते तक नहीं। मेरे पीछे भैया और भाभी से भी नहीं मिल पाते। मैंने सब बरदाश्त किया। लेकिन शादी मैं आई० पी० क्या गवर्नर से न करूँगी। शादी के मामले में किसी को दख़ल देने का अधिकार नहीं है। आपको मुझे मकान पर रखना स्वीकार नहीं तो कह दीजिये। मैं जुलाई में चली जाऊँगी। आपके आशीर्वाद से इतना पढ़ लिख गई हूँ कि सौ पचास रुपये की नौकरी

मिल जायगी। किसी तरह अपने को आप पर लादना नहा चाहती। शादी की बात आप मुझ से न करें।'

'सामने से चली जाओ ! सोचकर जवाब देना। बहू को भेज दो जाकर। अपना भला बुरा समझती हो तुम। कुल पर कलंक लगाना चाहती हो तो और भी तरीके हैं। यकीन रक्खो उसके पेश्तर या मैं तुम्हें खत्म कर दूँगा या खुद दुनिया छोड़ मौत के अँधेरे में चला जाऊँगा। जिस बात की मैं स्वप्न में कल्पना न कर सकता था वह सामने आ रही है। औरतों को ज्यादा आज़ादी देने का यह नतीज़ा है।'

'नतीज़ा अभी तक कुछ बुरा नहीं अगर आप बुरा न बनायेंगे। आप चाहेंगे मेरे अरमान इसी तरह हँसते खेलते उमर भर चले चलेंगे। आपने ज़िद की—मुझे मजबूर करने की कोशिश की तो आपको कुछ न मिलेगा—मेरा सब कुछ खो जायगा ! आप मेरे दुखदर्द को समझें और महसूस करें।

× × ×

शीला ने आकर चिक के बाहर से पूँछा—'बाबूजी ! आपने बुलाया है। मैं भीतर आ सकती हूँ।'

सिगार टेबिल पर रखते हुए ठाकुर साहब ने कहा—'कौन ! बहू !'

'जी ! बीबी ने कहा—आप मुझे बुला रहे हैं। आऊँ।'

'आओ ! आरती मेरी जान लेने पर तुली है। तुम जानती हो बरषों से उसके लिये लड़का ढूँढ़ रहा हूँ। चाहता हूँ किसी सुयोग्य लड़के से शादी करूँ। जो मुराद लड़के से पूरी नहीं हुई उसे दामाद से पूरा करना चाहता हूँ ! बड़ी मुश्किल से विक्रमसिंह के पिता तैयार हुए हैं। लड़का इतना नेक है कि एस० पी० होते हुए भी पिता की आज्ञा अक्षरशः मानने को तैयार है। मैं इसी जुलाई में शादी कर देना चाहता हूँ। आरती महमूद से शादी करना चाहती है ! तुम्हा सोचो यह मुमकिन है ?'

'आप चाहेंगे क्यों न मुमकिन होगा। बीबी महमूद को दिलो

जान से प्यार करती हैं। महमूद उन्हें उतनी ही सचाई से चाहता है। शादी व्याह का उद्देश्य भी यही है। शादी हो गई और दिल न मिला तो जीवन भार हो जायगा। आप से ऐसी बातें मुझे करनी न चाहिये पर यह हमारी आरती की जिन्दगी और मौत का सवाल है।'

'तुम लोग सब एक स्वर से बोलते हो—बड़ा ताज्जुब होता है। तुम्हें क्या हो गया है बहूरानी! कोई नान-ठाकुर हिन्दू लड़का होता तो बात समझ में आती भी। एक विधर्मी के साथ अपनी इकलौती लड़की व्याह दूँ यह तुम्हें उचित जान पड़ता है! तुम भी माँ हो बहू! भगवान ने तुम्हें सन्तानें दी हैं। अपने को मेरी जगह रखकर सोचो। तुम जो कहती हो उसे महसूस करती हो—उसके implications समझती हो? प्रेम के मायने यह नहीं होते इन्सान अपनी सीमाओं को तोड़ दे यह तो मुहब्बत करना नहीं लाश की तरह धीरे धीरे गलना और बिथरना है—एक असह्य बदबू फैलाते हुए। उच्छृंखलता की सीली दीवार है यह!'

'नहीं बाबू जी! मैं आपसे सहमत नहीं। मैं महमूद और आरती दोनों को जानती हूँ। दोनों की शादी न होगी तो दो बेश-क़ीमती जानें धर्म और समाज की वेदी पर बलि होंगी। दोनों की मुहब्बत तब से है जब से मैं व्याह कर आपकी सेवा में आई हूँ। दोनों जानते हैं एक दूसरे को कितना प्यार करता है। दुनिया की दूकानदारी में उनका साझा नहीं! भली बुरी सामाजिक मान्यता और अमान्यता का उन्हें कोई ख्याल नहीं। दोनों जीवन की उस मंज़िल पर पहुँच गये हैं जहाँ प्रेम की—पवित्र और सतियोंवाले प्रेम की मचलती उमंगें संकोच और झिझक पर झपटकर उनका गला घोंट देती है। हाथ जोड़ती हूँ बाबू जी! दोनों बच्चों की ज़िन्दगी आपके हाथ में है। आपको मालूम है मेरे भाई नहीं है। महमूद को पाकर मैंने जीवन में भाई पाया है। घुल घुल कर मर जायगा—जवानी की रँगी सुन्दर गागर फोड़कर फेंक देगा पर आपके सामने—

अम्मा के सामने बीबी का नाम तक ज़बान पर न लायगा। आपने आपके बेटे ने और आपकी दासी बहू ने उसकी माँ की जो सेवा की है—उसके पिता की मृत्यु के बाद जो अपनत्व भरा सलूक किया है वह क्या उसे कभी आपके सामने सिर ऊँचा करने देगा? आप तलवार लेकर खड़े हो जायँ—उसका सिर काट डालें—वह इन्कार न करेगा। इतना कृतज्ञ और कुर्बान है वह। लेकिन आरती! आरती उसके बिना नहीं रह सकती। मैं हैरत करती हूँ आपके हुक्म की तामील कैसे हँसते हँसते कर लेती है जब उसके दिल पर छूरियाँ चलती है—संगीने भुँकती है—उसका खून एक क्रूर षड़यन्त्र से पानी होता रहता है। आपकी भक्ति ने उसे औरत से मशीन बना दिया है—वह मशीन जो जिन्दगी की गीली छत पर खड़ी काले दरख्तों के अँधियारे से घिरी झुकते बादलों से बरसती जल बूँदों को दर्द को तरह इकट्ठा करती चलती है। आप का हुक्म क्या हम लोगों के लिये ऐसा वैसा होता है? मुझे आपने न मना किया था पर मैं तब से महमूद के घर नहीं गई। तबियत नहीं होती।'

'सब ठीक है लेकिन शादी कैसे हो सकती है। हम 'कमयूनिटी' में कौन मुँह दिखायेंगे। तुम्हारे पापा सुनेंगे क्या कहेंगे? तुम्हारे मामा चाचा मौसिया फूफा सब हमें छोड़ देंगे। हम कहीं के न रहेंगे। मैं तो उस दिन की कल्पना से झुलस जाता हूँ'—कहते कहते भय से ठाकुर साहब ने आँखें मूँद लीं। 'उसके पहले मरघट पहुँच जाना चाहता हूँ। ससार छोड़ देना चाहता हूँ। एक झूठे देवता के सामने पूरी दुनिया की कुर्बानी कर देना चाहता हूँ। मेरी बरदाश्त के बाहर है यह सब! तुम लोग मुझे सँभालना तो दूर रहा ज़ख्म पर नमक छिड़कते हो! बलराज हमेशा का बौड़म है—लेकिन तुम से मुझे ऐसी आशा न थी। सोचता था तुम इस बूढ़े बाप के दिल की हालत सोचोगी—समझोगी और कुछ हल निकालोगी। यहाँ कुँए में भाँग पड़ी है। तुम सब एक जैसे हो!'

'मुझे दुःख है बाबूजी ! आपकी आशा के माफ़िक अपने को ढाल न सकी। पर क्या करूँ ! भीतरी बात जानती न होती तो आपकी बात मान लेती। प्रेम की निराशा बड़ी भयंकर होती है बाबूजी ! आदमी क़यामत का पुतला बन जाता है। उसके हाथ में आँधी और तूफ़ान की क़ूवत आ जाती है। महमूद तो मर्द है—इन्क़लाबी ज़हनियत का जीता जागता शोला है—सँभाल लेगा लेकिन अबाबील जैसे उड़नशील और कोमल दिल वाली आरती चूर चूर हो जायगी। इस सदमे के पहाड़ के नीचे हसरतों उसकी पूरी बस्ती गायब हो जायगी—नाम निशान तक मिट जायगा। केवल खाने पीने सोने के लिये ही इन्सान जिन्दा नहीं रहता। माताये प्रसव की मुसीबत इस लिये नहीं झेलती कि उनकी औलादों का जीवन मुर्दों की बस्ती बनकर रह जाय। नहीं हरगिज़ नहीं बाबूजी ! आप आशीर्वाद के साथ दोनों का जीवन एक हो जाने दीजिये। उनकी महकती चाँदनीभरी उमंगो की फुलवारी पर बिजलियाँ न गिराइये। ज़माने को पहचानिये—उसकी रफ्तार का अन्दाज़ कीजिये।"

'तुम्हारी आखरी राय है ? तुम भी अपने शौहर की तरह मुझे बुढ़ापे में शान्ति और सुख पहुँचाने के बजाय दुख और मानसिक यन्त्रणा देना चाहती हो। एक बात याद रक्खो बहू ! आरती ने मेरी तय की हुई शादी न की तो उसे मेरे मकान में खड़े होने की जगह न मिलेगी। उसके हमदर्दों को भी दूसरा ठिकाना ढूँढ़ना होगा। बलराज से मैं सब कह चुका हूँ। तुम से कहने में जो तकलीफ़ होती है मेरा दिल जानता है—मेरी आत्मा जानती है। तुम्हारा एक एक बच्चा मेरी एक एक आँख का तारा है। लेकिन यहाँ आकर मैं ज़ालिम। जल्लाद बन जाता हूँ। मैंने बरसों एक एक कंकड़ पत्थर चुन चुन कर हौसलों का बादली महल बनाया है। जाओ आरती और बलराज से कह दो इसे बरबाद न करें ! वर्ना इस घर से एक साथ कई लाशें निकलेंगी। तुम

भी सोचो। पूरे मामले पर ठण्डे दिल से गौर करो। तुम देखोगी मेरा सुख और आरती का सुख दो अलग चीजें नहीं। मगर इन बेदर्दों को कौन समझाये—कौन उनके दिल में दिल मिलाये।'

'मैंने तय कर लिया है बाबू जी! आपको छोड़कर कहीं न जाऊँगी। पापा ने मुझे आपके हाथ सौंप कर आज्ञा दी थी मैं मरने के पहले आपको न छोड़ूँ। आप मुझे घर से निकाल देंगे —माना—पर मैं निकलूँगी नहीं। मेरा तन मन जीवन सब आपका है। आपकी सेवा से मुझे दुनिया की कोई ताकत हटा नहीं सकती। आरती की जहाँ जाना हो जाय—उसके भाई साहब जहाँ जाना चाहें शौक से चले जाँय। मैं और मेरे बच्चे आपकी ख़िदमत में रहेंगे। मैं जो कहती हूँ करती हूँ। आप मुझे घर से निकाल देंगे और मैं निकल जाऊँगी! खूब!

'तुम और बलराज आरती को क्यों नहीं समझाते? क्यों नहीं उस नालायक को मजबूर करते मेरी बात माने—एक भारी अफसर की बीवी बन कर ज़िन्दगी का सुख लूटे। क्यों मुझे परेशान करती है? मेरे भी दिल है—मुझे अपने बच्चों से यह सब कहते क्या अच्छा लगता है? तुम नहीं जानतीं कैसे एकान्त में मेरा दिल बिलख बिलख कर रोया करता है। फोड़े की पीप की तरह बेचैनी मेरी छाती के अन्दर कुलबुलाया करती है! यह हालत रही तो जल्द मर जाऊँगा। कोई ताकत मुझे इस धक्के को बरदाश्त करने का बल नहीं दे सकती! मेरा बना बनाया संसार उजड़ जायगा।'

'कुछ न होगा बाबूजी! आरती की शादी महमूद के साथ करके आप देश के सामने राष्ट्रीयता का पवित्र आदर्श रक्खेंगे। जो सुनेगा आपकी अखण्ड मानवता के सामने सम्मान और सम्भ्रम से नत हो जायगा। आप क्यों निराश होते हैं—निराश होना गुनाह है। निराश होने वाले को भगवान कुछ नहीं देता। जीवन में असंख्य आशायें हैं। आप क्यों उन्हें ठुकरा अनर्गल बातें सोचते हैं! आरती

की उम्मीद के इस बनपने के तने धनुवे को देखिये ! टूट न जाय वह —भविष्य के सुनहले बान तिनकों की तरह बिखर न जाँय ! आरती के जीवन में लगता है तूफान आने वाला है बाबूजी ! यह निस्तब्धता— आपकी आज्ञापालन का आत्महिंसक निश्चय मुझे बरसात की तूफानी रात की रहस्यमयता का बोध कराता है जब टिड्डों की चीखें तक भयावनी हो जाती हैं। आप डरावें धमकावें न ! चट्टानों और घाटियों के नीचे जीवन की सुनहली रेत में फँसी उसकी भाग्य नौका को खींचकर उमंगों के जल प्रवाह में बहने दें। कल आरती कह रही थी—भाभी ! घर की ये परिचित दीवारें मुझे सिसकती जान पड़ती हैं—कहती कहती घबराकर वह दांत से नाखून कुतरने लगी। कभी बैठे बैठे हँसने लगती है। इतना हँसती है हँसते हँसते उसे और मुझे रोना आ जाता है। फिर इतना रोती है कि रोते रोते हँस पड़ती है। यह रफ्तार रही तो पागल हो जायगी। इतने बड़े सपने के एकाएक झटके से टूट जाने के बाद दिमाग खराब होते देर नहीं लगती बाबूजी !'

'दिमाग उसके पास नहीं है —खराब क्या होगा ! वर्ना मेरी बात मान न लेती। एक छुँटे हुए लोफ़र शोहदे की मीठी मीठी बातों में पड़कर अपना धर्म, शील, मर्यादा और नारीत्व खोने को तैयार बैठी है ! हद हो गई बहू ! पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट को गुलाम कहती है। नहीं सोचती फूल का असली स्थान बाग है—धूर नहीं। अगर सोचती है कैसे एक अनदेखे अनजाने युवक से शादी करले जो न जाने संसार के किस कोने में बसता है—स्वभाव में कैसा है तो मुझसे कहे। मैं उसे यहाँ बुला लूँ ! तुम लोग सब देख लो और अपना दिल भर लो। आखिर मेरी बात का कुछ मूल्य है या नहीं !'

'आपकी बात का अपरिमित मूल्य है। लेकिन बाबूजी ! जब आत्मा से आत्मा जुड़ जाती है—प्राण से प्राण बँध जाते हैं तब सारे संस्कार

और आवेग बदल जाते हैं। महमूद आरती के लिये और आरती महमूद के लिये अब अविभाज्य हैं। दोनों एक दुपट्टे के हाँशिये पर टँके किनारे हैं। दोनों एक स्वर हैं—एक कम्पन हैं—एक ही मधुरता हैं। मैं यहाँ आप से बात करने आई हूँ। आरती का दिल सब सुनने के लिये उसके कान के पास धड़क रहा होगा।'

'यह हाल रहा तो मेरे दिल की बूढ़ी धड़कन किसी क्षण बन्द हो जा सकती है। मैं एक बार कह चुका उसे तुम समझ लो—बलराज और आरती दोनों को समझा दो। अगर ये लोग मेरे इरादों को पामाल करेंगे तो मैं इन्हें अपने जीवन के प्याले से दूध की मक्खी की तरह निकाल कर फेंक दूँगा। समझूँगा बिना औलाद का हूँ। मुझे अभी से लगने लगा है किसी ने तेज़ दरांती से मेरी खोपड़ी चीर डाली है।'

'आप सोचलें बाबू जी! इतनी जल्दी और उत्तेजना में बड़ी बातें तय नहीं होतीं। रह गयी मैं—मैं कैसे आरती को वह सलाह दूँ जिसे खुद मेरी आत्मा गवारा नहीं करती। मेरी अपनी सूरत आँख के सामने घूम जाती है। नारी हृदय का सबसे ज़हरीला सत्य सामने आकर आरती की पीठ पर सान्त्वना देने के लिये घूमते मेरे हाथ पर बर्फ जमा देता है। गले में काँटों का गोला रख जाता है। मैं भी उसकी जात की हूँ—उसी जीवन-भूमि पर मेरी कलियाँ खिली और मुरझाई हैं। मैंने स्वप्न में महमूद आरती के प्रेम को मलिन और अनुचित नहीं समझा। दोनों पर मेरी अटूट ममता रही है। लेकिन.....'

'जाओ! आरती को समझाओ बुझाओ। उसे ऐसी नाक़िस बात ज़बान पर न लानी चाहिये। मुझे यकीन है तुम ने दिल और ईमान से समझाया तो तुम्हारी बात मान लेगी। उस जैसी कुललना को यह शोभा नहीं देता। प्रेम करना था किसी

हिन्दू से करती। ब्राह्मण, वैश्य, कोई होता मैं मान लेता! महमूद से कह देना मुझे अपना मुँह न दिखाये वरना मैं क्या कर गुज़रूँगा—खुद नहीं जानता।'

'हमारी मृत्यु का दिन साल के तीन सौ पैंसठ दिनों में छिपा रहता है बाबूजी! हम लोग हर साल उस दिन से होकर गुज़र जाते हैं लेकिन जान कहाँ पाते हैं। प्रेम में भी इन्सान अपने ही अन्दर बल खाया करता है। अपने घोंसले के बाहर आस्मान पर फिरनेवाले तूफानों का उसे अहसास नहीं होता। जब दुनिया कलेजे में नेज़े भोंकने लगती है तब होश आता है पर किस काम का!'

'जाओ बलराज को भेज दो। मुझे फ़ुरसत नहीं जो बैठा तुम्हारे शायराना ख्यालात पर मुग्ध हुआ करूँ। मेरी बात सोते जागते उठते बैठते खाते पीते याद रखना। आरती को रास्ते पर लाना वर्ना.....'

❀ ❀ ❀

आरती के बड़े भाई बलराज ने कमरे में प्रवेश कर कहा—'जी बाबूजी!'

'तुमने क्या तय किया। आरती क्या कहती है? तुम उसे रास्ते पर ला सके या नहीं? मुझे आगे का प्रोग्राम जल्द बनाना है। तुम्हें क्या—जाकर फिलासफ़ी की किताब में डूब गये होगे। बहू से मैंने साफ़ साफ़ कह दिया है। तुमसे दुबारा कहने की ज़रूरत है क्या?'

बलराज ने तन कर कहा—'मैं आरती से इस सम्बन्धमें एक शब्द कहना अनुचित और अनधिकारपूर्ण समझता हूँ। वह अपनी तबियत की रानी है—जैसे मैं अपनी तबियत का बादशाह हूँ। मैं समाजी और मानवीय किसी दृष्टि से आरती और महमूद के प्रेम को अनुचित नहीं समझता। दोनों एक दूसरे के योग्य हैं। दिल के साम्राज्य में हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई का भेदभाव नहीं हुआ करता। आप तो बड़े एडवान्स विचार के थे—इस मामले

में इतने 'कनसरवेटिव' हो गये हैं ? शीला ने आपको हक़ीकत बताई होगी । किया क्या जा सकता है ! जबर्दस्ती किसी व्यक्ति के साथ आरती का.....क्या जाने जीवन का ऊँट असन्तोष और असौख्य के दलदल में किस करवट बैठ जाय ?'

'और महमूद ! महमूद से तुमने बात की ?'

'आप क्यों नहीं करते ? आप भी कर सकते हैं—उसके लिये पिता जैसे हैं आप ! आपको संकोच क्यों होता है ?'

'जब था तब था ! अब उसके ख़ून की प्यास मुझे हो रही है । मैं उसकी सूरत से घृणा करने लगा हूँ । तुम उसे समझा बुझाकर आरती की ज़िन्दगी के रास्ते से अलग कर सको कर दो । तुम कर सकते हो—शीला बहू कर सकती है.....तुम लोग चाहो तो ।'

'आपका ख्याल गलत है । हम लोग प्रवाह की दिशा नहीं मोड़ सकते—तूफ़ान की गति नहीं रोक सकते ! आँधियों की अंजुमन में सामाजिकता का चिराग लेकर नहीं घुस सकते ! आरती को आप जानते हैं । कालेज और यूनिवरसिटी में सैकड़ों नवयुवकों के सपर्क में आई है । क्या बात है और किसी से प्रेम न हो महमूद से ही हृदय लग गया है । प्रेम एक क्रिया होती है—आप से आप घटित हो जाने वाली घटना वह नहीं है । दोनों बचपन से साथ रहे हैं । आपने, अम्मा ने, मैंने और बाद में शीला ने कभी इस प्रेम में बाधा नहीं डाली । मैंने और शीला ने हमेशा अपने प्यार दुलार का सम्बल दिया । आज केवल इसलिये कि आप उसके और महमूद के प्रेम को पसन्द नहीं करते मैं उसे अपने जीवन-साथी की ओर से विमुख कर दूँ ! कैसे हो सकता है यह ! महमूद को मैंने छोटे भाई की तरह प्यार किया है । मुझमें शीला में लड़ाई होती रही है वह किसका भाई है ! आज जाकर उससे कहूँ तुम आरती को प्यार करना छोड़ दो ! कितना अनुचित होगा । आपको समाज का भय मारे डालता है.....'

'तुम्हें ! तुम्हें समाज का भय नहीं है ! तुम समाज के

नियमों, अनुशासनों, बन्धनों से ऊपर हो ? क्यों ?'

'जी नहीं ! मैं समाज की हुकूमत बराबर मानता हूँ। लेकिन धर्म और जाति के मतभेदों को ही सामाजिकता का प्राण नहीं मानता। समाज मेरे लिये मानवीय संस्था है। मानव का स्वातंत्र्य छीन कर उन्हें परतंत्रता में जकड़ने के लिये जब वह शृंखलाओं का काम करने लगता है तो एक विज्ञापन—एक जुआ हो जाता है। उसे जीतना मानव का अनिवार्य कर्तव्य हो जाता है। यह तो समाज से ऊपर—विधि निषेधों से परे जीवन की सर्वोच्च आराधना की पुकार है। इसमें सामाजिकता पर आघात कहाँ ? अनुशासन की अवमानना कैसी ?'

'तुम मेरी बात न मानोगे ? आरती भी न मानेगी। कोई न मानेगा।'

'आपकी बात महमूद मान लेगा। आपके ऋणों को गाथा उठते बैठते गाया करता है। पर इस मामले में उसने पैर पीछे हटाया तो मेरी निगाह में गिर जायगा। आरती भी उसे तब इस आत्मसमर्पण के साथ प्यार न कर सकेगी।'

सात

ब्रिटिश पार्लीमेन्ट के प्रतिनिधि सर स्टेफर्ड क्रिप्स जो योजना लेकर भारत आये वह देश के कर्णधारों को असन्तोषप्रद और सारहीन जान पड़ी। देश की जाग्रत राष्ट्रीयता की गौरवमयी आकाँक्षाओं की पूर्ति उससे किसी भी अंश में न हो पाती थी। राजनैतिक आकाश में एक तारे को देखकर ही जिनके हृदय में आशा की लहर पैदा हो जाती है उनकी बात हम यहाँ नहीं कहते। लेकिन पार्लीमेन्ट का उद्देश्य फैशिज्म के विरुद्ध जनता का पूर्ण और गहरा सहयोग प्राप्त करना था। इसी के लिये उसने बारबार एलान किये थे—घोषणायें की थीं। एक दर्दभरी रागिनी की तरह क्रिप्स-योजना मन्थर गति से आशा की वेदना फैलाती आई और एक नये संघर्ष—आन्दोलन आरम्भ होने की

सनसनी छोड़कर चली गई। अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय राजनैतिक परिस्थितियों में भयानक परिवर्तन होने की संभावनायें दीखने लगीं। छोटे से छोटे कार्यकर्ता से लेकर बड़े से बड़े नेता तक—सबके ऊपर विभिन्न प्रतिक्रियायें हो रही थीं। अधिकतर लोग दुविधा में थे। वर्धा में कान्ग्रेस की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति नये आन्दोलन की तजवीज़ों पर विचार कर रही थी। व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन का समय बीत चुका था और आन्दोलन के नये नये ढंग—नये नये स्वरूप लोगों की कल्पना में आ रहे थे। कान्ग्रेस अपने आत्मिक बल के सहारे ही इतनी शक्तिशाली सरकार के असीम पशुबल से कैसे टक्कर ले सकती है? चारों ओर अनिश्चय, संशय और आशंका का साम्राज्य था। लेकिन कान्ग्रेस के जनतावर्ग में उत्साह काफ़ी था। नवयुवक और अनुभवी कार्यकर्ता सब एक बार फिर कान्ग्रेस के आने वाले आन्दोलन में प्राण की बाजी लगाने के लिये तैयार हो गये। इस, मौत का दृश्य पग पग पर उपस्थित करनेवाला शान्ति और निष्क्रियता से लोग ऊब उठे थे। हाथ पर हाथ रक्खे बैठे रहने की भी सीमा होती है! क्षुब्ध राष्ट्र की क्रान्तिकारी भावनायें आखिर कब तक सोया करेंगी? स्वाधीनता संग्राम की ज्वलन्त परम्परायें—शीषदान के इन्किलाबी स्वप्न कब तक गतिरोध के गह्वर-गर्त में डूबे पड़े रहेंगे? जिले जिले के, प्रान्त प्रान्त के कान्ग्रेसी नेता जा जाकर वर्धा और अन्य स्थानों में कान्ग्रेस के उत्तरदायी नेताओं से मिलते थे और नये आन्दोलन के सम्बन्ध में बात करते थे—भविष्य की नीति निर्धारित करते थे। लगता था अब आन्दोलन होगा और खुलकर होगा। उस बड़ी योजना की तफ़सीलें अभी से बननी आरम्भ हो गयी थीं।

महमूद ने आरती की कोठी आना जाना छोड़ दिया था। आजकल घर पर भी बहुत कम रहता था। जिले की पोलीटिकल कान्फ्रेंस खत्म हो चुकी थी। सर्वसम्मति से उसने कांग्रेस के निर्णय-पालन का निश्चय घोषित करते हुए उग्र प्रस्ताव पास किया था। कान्फ्रेंस समाप्त होने के बाद महमूद प्रान्त के बड़े बड़े नेताओं से मिलने

चला गया और लगभग दस बारह दिन के बाद लौटा था। इधर कुछ समय तक वह आरती— भैया-भाभी के स्नेह क्रोड़ में पड़कर देश की राजनैतिक गतिविधि से पिछड़ गया था। बराबर हर साल छुट्टियों में उसका यह हाल होता था। लेकिन उसने समझ लिया था कि अब सरकार से असहयोग करने—वर्तमान शासन-व्यवस्था को तहस नहस करने और खुली बग़ावत के लिये जनता को ललकारने का समय आ पहुँचा है। किसी भी क्षण बम के पलीते में आग लग सकती है! ख़ुदा जाने विस्फोट की भीषणता में आगे क्या क्या होगा! लेकिन एक चीज़ महमूद को परेशान करती थी। जो लोग अपने बल से नहीं वरन जापानियों की मदद से स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने का स्वप्न देखते थे वे उसकी निगाह में भयंकर जुआड़ी थे। ऐसे लोगों से उसकी बातचीत होती— गरम गरम बहसें होतीं और आक्रमणकारी जापानियों का आवाहन करने और स्वागत करने के विरोध में वह उन्हें जली कटी सुनाता। देश की आज़ादी की लड़ाई उसके लिये जीवन का सबसे पवित्र अनुष्ठान थी। उसने होश सँभालते ही उससे मुँह नहीं मोड़ा। सदैव अपने तारुण्य के फूलों को हथेली पर ले वह आगे आगे चला। सन् १९३० के राष्ट्रीय आन्दोलन से ही वह अपने को देश के लिये समर्पित कर चुका है। लेकिन ऐसी निराशा—ऐसी परमुखापेक्षिता और ऐसा अवसाद उसे राष्ट्रीय जीवन में कभी नहीं दिखाई पड़ा। कभी राष्ट्रकर्मियों और उनके प्रभाव में पलनेवाली प्रबुद्ध जनता ने इसके पहले खुल्लमखुल्ला जापान से मदद पाने की आशा नहीं लगाई। और जब अभी से यह हाल है तब शासकों की दमन नीति की प्रतिक्रिया स्वरूप जनता में जापानियों के पक्ष में जो भावना बढ़ेगी उससे क्या होगा? हिंसा अहिंसा का सवाल महमूद के सामने न रहा है न रहेगा। वह कान्ग्रेस का एक सिपाही है। उसके आदेश को मानेगा—आदेशों में निहित 'स्प्रिट' को पहचानेगा। लेकिन यह जापान परस्ती—दमन की गैर जिम्मेदारी में पड़े नेतृत्व को और उच्छृंखल बना देने वाली जापान-परस्ती देश को कहाँ ले जायगी?

वह जानता है अहिंसा ही काँग्रेस की नीति रही है और रहेगी। उसे छोड़ने का सवाल न उठता है—न उठ सकता है। जब तक गाँधीजी काँग्रेस के नेता हैं और काँग्रेस देश का नेतृत्व कर रही है तब तक हम हिन्सा का मार्ग नहीं अपना सकते। शान्तिपूर्ण प्रदर्शन, अहिंसात्मक सत्याग्रह और सिविल नाफ़रमानी सदा हमारे हथियार रहे हैं और रहेंगे। हम इस मार्ग से विचलित नहीं हो सकते। लेकिन क्रिप्स-प्रस्ताव के बाद से जनता के क्रोध का पारा बराबर चढ़ता गया है। क्रोध से सारा देश मतवाला हो रहा है। घृणा और क्रोध का नशा शराब से कम तेज़ और सब कुछ भुला देने वाला नहीं होता। तब क्या होगा? महमूद कभी कभी सोचते सोचते घन्टों खोया खोया सा बैठा रहता। जब कोई हल न सूझता—किसी ओर प्रकाश की किरण न दिखती तो दोनों हाथ से सिर थामकर बैठ जाता। ज्यों ज्यों काँग्रेस कार्यकारिणी के बम्बई अधिवेशन की तारीख निकट आती त्यों त्यों राजनैतिक सनसनी बढ़ती जाती। लोगों को विश्वास था अन्तिम निर्णय हो जाने पर भी आन्दोलन तुरन्त न आरम्भ होगा। बाद में संभव है कोई न कोई रूप आन्दोलन के टलने का निकल आवे। लेकिन काँग्रेस के स्वराज्य की माँग के प्रस्ताव का समर्थन सब कर रहे थे। जनता के भारी उत्साह को देखकर लगता था इस बार कोई शक्ति संघर्ष की लहर को दबाने में सफल न हो सकेगी इस बार देश बिना आग की ज्वाला में जले और रक्त को नदी में डूबे न बचेगा। काँग्रेस के नये नारे 'भारत छोड़ो' और उसे चरितार्थ करने वाले आन्दोलन का स्वरूप भविष्य के निर्णय पर निर्भर करता था। फिर भी काँग्रेस आन्दोलन में किसी भी क्षण कूद पड़ने के लिए किनारे पर खड़ी पैतरा बदल रही थी। राष्ट्र के तेवरों में तूफ़ान झूल रहे थे। यदि सरकार ने काँग्रेस की शक्ति और प्रभाव पर विचार न किया—उसकी संगत माँग को ठुकरा दिया तो एक बार भयंकर विप्लव की ज्वालायें जल उठेंगी। जिले के सब काँग्रेस कार्यकर्ता रोज दौड़ते धूपते—एक दूसरे से मिलते और चोटी

पर के नेताओं से आने वाले सन्देशों और आदेशों का मार्ग देखते। महमूद और उसके साथी जनमत और जनबल को संगठित करने में लगे थे। किसी को न मालूम था क्या करना है पर जब काँग्रेस जो भी कहे तत्क्षण वह करना है—यही सब लोगों की निश्चित धारणा थी।

सन्यासिनी प्रतिमा के जीवन में एक बार फिर उल्लास, आल्हाद और उत्साह की चमक दौड़ रही थी। गाँव में समाचार पत्र आते रहते थे। इधर और साथियों से जो रिपोर्टें उसे मिली थीं वे सब संघर्ष के आसार ज़ाहिर कर रही थीं। आज ही वह दो सप्ताह के बाद गाँव लौटी थी और एक बार महमूद और जिले के प्रमुख कार्यकर्ताओं से बात करने के लिये उतावली थी। इस बीच में महमूद और आरती के परिवार में जो बातें हो चुकी थीं उनका उसे पता न था। वह वर्धा और अन्य राजनैतिक क्षेत्रों में जाकर सभी प्रमुख जननायकों से मिलकर लौटी थी। वहाँ से लाये आदेशों और संवादों को अपने दल के लोगों तक पहुँचाने के लिए व्यग्र थी। जैसी योजना थी और ख़बरें जिस द्रुतगति से उड़ती थीं उसे देखते हुए बिना पर्याप्त संगठन और सुचारु व्यवस्था के काम न चलेगा। यदि प्रत्येक जिला अपना अपना काम न सँभालेगा तो प्रान्त क्या करेगा! यदि प्रान्त प्रान्त विशृङ्खलित रह गया और एक सूत्र में बँध न पाया तो क्रान्ति की यह योजना भी विफल हो जायगी। प्रतिमा की चिन्ता और आकुलता की सीमा न थी। वर्किङ्ग कमेटी के एक एक सदस्य से वह मिल चुकी थी। उनसे बात करके उसने जो जाना समझा था वह उसके सामने भविष्य का पूरा नक्शा खींच देता था।

× × ×

जिले के कई प्रमुख कार्यकर्ता वहाँ मौजूद थे। महमूद ने कहा—'भाइयो! मुझे अब अधिक नहीं कहना। जो कहना था मैं कह चुका। मैं समझता हूँ आप लोगों के आगे मैंने अपने को सही सही ज़ाहिर कर दिया। अगस्त के पहले हफ्ते में ही हमें जो

करना है हमारे सामने आ जायगा। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति से लाभ उठाकर हम अपनी गुलामी का बन्धन काटने का यत्न क्यों न करें ! अपने शत्रु पर चोट क्यों न करें ! आगे जो होगा उसे हम झेल लेंगे—हमारी औलादें झेल लेंगी।'

गजराजसिंह जिले के प्रमुख नेता थे। काँग्रेसी जनता को उनके नेतृत्व पर पूरा विश्वास था। उन्होंने बिच्छू के डंक की तरह तनी अपनी मूँछों पर ताव देते हुए कहा—'भाइयो और बहनजी ! (प्रतिमा) आन्दोलन आरम्भ हो जाने से पहले नीति और 'स्ट्रेटजी' की बहुत सी बातों को सर्वसाधारण के सामने प्रकट कर देना उचित नहीं। यही कारण है हमें अभी साफ साफ यह पता नहीं क्या क्या करना है। लेकिन वातावरण हमें तैयार कर लेना है। लोगों को यह मालूम हो जाना चाहिये हम एक भारी क़दम उठाने जा रहे हैं। उन्हें कान्ग्रेस के प्रत्येक आदेश को समय आते ही जाँफ़िशानी और वीरता से पूरा करना है। काँग्रेस आन्दोलन से बचने के लिये जो जो सम्भव था सब कर चुकी। अब आन्दोलन नहीं रुकेगा—नहीं रुकेगा।'

प्रतिमा ने कहा—'वर्धा में मेरी प्रान्त के सभी प्रमुख नेताओं से बातचीत हुई है। सब वहाँ मौजूद थे। जनता को सदियों से अपने दिल में पलते हुए क्रान्ति के अरमान को पूरा करना है। देश में सरकार की मैशीनरी को बिलकुल लँगड़ा, लूला और अपाहिज बना देना है। उसे बिलकुल ठप्प कर देना है। जिन साधनों से सरकार हम पर शासन करती है—हमारा दमन करती है उन सब को उखाड़ फेंकना है। सरकारी अफ़सरों को गिरफ्तार कर शासन का सूत्र अपने हाथ ले लेना है। आज़ादी के लिये मर मिटने को जब तक हम में से प्रत्येक तैयार न होगा तब तक न तो हम जनता के जोश को सगठित रूप दे पाँयगे न उसे सही ढंग से इस्तेमाल कर सकेंगे। हमें पहले से प्रोग्राम बना लेना चाहिये। वर्ना ऐनवख्त पर हाथ पर हाथ धरे इधर उधर बगलें झाँकते घूमने से कुछ न होगा। ऐसे अवसर इतिहास

में बार बार नहीं आया करते। आपसे मैं बताये देती हूँ—प्रस्ताव के पास होते ही गाँधीजी और वर्किंग कमेटी के सब नेता गिरफ़्तार हो जायँगे। आन्दोलन हमीं आपको चलाना है। सरकार की शक्ति जब जगह जगह बिखर जायगी तब जनता की शक्ति उससे कहीं अधिक होगी। कान्ग्रेस के प्रति लोगों की श्रद्धा बड़ी भारी शक्ति है। उसी शक्ति को इस्तेमाल करने का अवसर हमारे हाथ में आ रहा है।'

बेचन मिश्र ने कहा—'अब तो हम लोगों ने यह भली प्रकार समझ लिया है कि मौजूदा व्यवस्था से अराजकता अच्छी है। अपना उद्देश्य प्राप्त करने के लिये जनता को सब संभव उपायों का उपयोग करना चाहिये। पीछे हटने की गुन्जायश नहीं। आन्दोलन आरम्भ होते ही कान्ग्रेस गैरकानूनी संस्था करार दी जाकर समाप्त हो जायगी। उस समय कान्ग्रेस के प्रतिनिधि हमीं लोग रहेंगे। हमारे कंधों पर इस आन्दोलन को लपटों की गति से आगे बढ़ाने का भार होगा। जो लोग पुरानी व्यवस्था को बनाये रखना चाहते हैं वे हमारे आन्दोलन को रोकने का यत्न करेंगे। हमें उन्हें अपने रास्ते से हटा देना है—साफ़ कर देना है।'

जिले के दूसरे कान्ग्रेसी नेता ठाकुर देशपालसिंह ने कहा—'मुझे ऐसा लगता है हमारे नेताओं ने यह अनुभव कर लिया है कि वैधानिकता के बन्धन लगाकर आन्दोलन की रीति पूरी करने से जनता उसमें उत्साह से भाग नहीं ले सकती। इसबार का आन्दोलन सब कुछ ध्वंस कर नयी व्यवस्था की रचना के लिये अवसर बनायेगा। हम लोगों को कान्ग्रेस नेताशाही से सदैव शिकायत रही है कि वे आन्दोलनों पर वैधानिकता के बहुत अधिक बन्धन लगा देते हैं। यही कारण है हम जनता को क्रान्ति के लिये प्रेरित नहीं कर पाते। लेकिन इस बार की क्रान्ति क्रान्ति होगी—वैसी ही जैसी फ्रांस में हुई थी—जैसी रूस—इटली और अमेरिका में हुई थी।'

महमूद ने कहा—'हमको अपनी ताकत संगठित करनी चाहिये।

अगर हम ठीक तरह से अपना 'मोबीलाइज़ेशन कर पाये तो जिस रफ्तार से हम मौजूदा निज़ाम को बरबाद करेंगे उसी रफ्तार से हम नयी व्यवस्था भी फ़ौरन क़ायम कर सकते हैं। इस बीच कई कम्यूनिस्टों से भी मेरी मुलाकात हुई है। आप लोगों को शायद पता हो उनके अख़बार कई ज़ुबानों में निकलने शुरू हो गये हैं। इस लड़ाई के नाज़ुक मौके पर सरकार पर आई मुश्किल का कोई फायदा वे नहीं उठाना चाहते। लेकिन रूस लड़ाई में पड़ गया है तो हम क्या अपनी आज़ादी के सवाल को उठाकर ताक पर रख दें? मुझे खुशी है मेरी पार्टी इस सिलसिले में कम्यूनिस्टों से नाइत्तिफ़ाक रखती है। इधर उसके बड़े बड़े नेताओं से मिलने का मौका मुझे मिला है। सब ने कम्यूनिस्टों के इस ज़ाविये को गलत कहा है। सब का यह फौलादी इरादा है इन्टरनेशनल परिस्थिति से फायदा उठाकर हम भी अपनी गुलामी के बन्धन काटने की कोशिश करें।'

अबरार जिले का पुराना कान्ग्रेसी वालन्टियर था। बोला—'हम लोगों को जब तक यह न मालूम हो और पुख्ता तौर पर न मालूम हो क्या करना है तब तक तैयारियाँ कैसे की जा सकती हैं? रेल की पटरियाँ उखाड़ने के लिये—तार काटने के लिये हमें औज़ार चाहिये। डाक, खजाना और सरकारी सामान—इमारत फूँकने और तोड़ फोड़ के लिये हमें हथियार चाहिये। कौन हमें यह सब देगा? कौन हमें पैसा देगा? कैसे यह आन्दोलन चलेगा? रेलवे और दूसरे कारोबार के मज़दूरों में हड़तालें होंगी। जब तक सब जगह काम एक साथ बन्द न होगा तब तक सेना और पुलिस का एक जगह से दूसरी जगह जाना बन्द न हो सकेगा। आप लोग दो चार आदमियों की छोटी कमेटी बना दीजिये जो 'डिटेल्स' में जाकर स्कीम बनाये। बाक़ी लोग जिले में घूम घूमकर कॉंग्रेस का सन्देश सुनावें। पूरा माहौल तैयार कर लेना है। जुलाई आधी बीत चुकी है। मुश्किल से तीन हफ्ते आपके पास हैं। ख़ाली जोश की बातें करने से काम न चलेगा।'

प्रतिमा ने कहा—'मैं अबरार भाई की बात का समर्थन करती हूँ। आप लोग पाँच आदमियों की एक कमेटी बनालें जो कार्य-क्रम निश्चित करे। कार्यक्रम हमारा वही होगा जो काँग्रेस का निर्णय होगा। लेकिन हमें तय कर लेना है हम किन लाइनों पर अपने कार्यक्रम को व्यावहारिक रूप देंगे। मुझे आप लोगों से यही कहना है कि आप इस मौके पर चूके तो कहीं के न रहेंगे। दिखा दीजिये एक बार इन साम्राज्यलोलुप मित्रराष्ट्रों को कि आपके कंधों में गरमी की फड़क है—आपके दिल और दिमाग—खून की एक एक बूँद में स्वाधीनता की ज्वाला है। आप चाहेंगे तो कोई शक्ति नहीं जो आपकी विजय के मार्ग में बाधक हो सके। जनता ने इधर जो तकलीफें झेली हैं उनसे वह ऊब गई है। बिना हमारी और हमारे नुमाइन्दों की राय लिए हमें युद्धराष्ट्र घोषित कर दिया गया। हमारे लाखों नौजवानों को फुसला बहला कर और आर्थिक प्रलोभन दे देकर लड़ाई के मैदान में भेजा गया और दुनिया भर में प्रचारित किया गया हिन्दुस्तान की जनता युद्ध में दिली सहयोग कर रही है। यह सब धोखे-बाज़ी और राजनैतिक बदमाशी नहीं तो क्या है? हम भी अब तैयार हैं। भगवान चाहेगा यह हमारी आखरी लड़ाई होगी और हम इस विदेशी हुकूमत की रीढ़ तोड़ देंगे। मैं कमेटी के लिये ठाकुर गजराजसिंह, ठाकुर देशपालसिंह, बेचन पान्डेय रामसहाय सक्सेना और महमूद का नाम प्रस्तावित करती हूँ। हममें प्रत्येक को समझना चाहिये कि वह इस कमेटी में है। यह हमारी सब की छिनी आज़ादी फिर से पाने का प्रश्न है। बाकी लोगों को बाहर गाँव गाँव घर में घूम घर घूमकर बग़ावत की आग लगानी है।'

सर्वसम्मति से उन पाँचों आदमी 'युद्धसमिति' के सदस्य चुने गये। महमूद ने खड़े होकर प्रस्ताव किया—ठाकुर गजराजसिंह समिति के संयोजक बनाये जाँय। प्रतिमा ने समर्थन किया। महमूद ने कहा—'यह समिति पच्चीस जुलाई को अपनी योजना पेश करेगी। उस दिन

की मीटिंग में मैं चाहता हूँ ज़िले का हर काँग्रेसवर्कर शरीक हो और खुले दिल से हमारी स्कीम की जाँच करे। मैं चाहता हूँ हमारे कम्यूनिस्ट साथी भी उस दिन की बड़ी सभा में मौजूद रहें। हमारे प्लान के बनाने में मदद कर सकें तो करें। हम फ़ैसिस्टों के उतने ही बड़े दुश्मन हैं जितना कोई भी तरक्की-पसन्द इन्सान हो सकता है। लेकिन हमारा शासन अब हमारे देश के लोगों के हाथ में होना चाहिये। उसी हालत में हिन्दुस्तानी जनता इस फ़ैसिस्ट विरोधी युद्ध को अपना युद्ध समझ सकती है। लोगों का कहना है इस वक्त आन्दोलन छेड़ने से कुछ मिलेगा नहीं—अलबत्ता शत्रु के आक्रमण से—जापानी सैनिकों के बूटों के नीचे हमारा देश और जनता लाखों की संख्या में बरबाद हो जायगी। फ़िज़ूल की बात है यह! जो लोग हमें गुलाम बना कर रखते हैं उन पर आ रही मुसीबत को हम अपने सिर पर क्यों लें? हमें अपने पुराने दुश्मन से अपनी लड़ाई जारी रखनी चाहिये। लड़ते जाना चाहिये और हर मौके से फ़ायदा उठाना चाहिये। जापानियों से मुझे पूरी नफ़रत है। मेरा ख्याल है कोई सच्चा कान्ग्रेसी ऐसा नहीं जिसे जापानी मन्सूबों और इम्पीरियलिस्ट इरादों से नफ़रत न हो।'

गजराजसिंह ने कहा—'हम आन्दोलन छेड़कर और भारत छोड़ो का नारा लगाकर जापान या फ़ैसिस्ट शक्तियों के साथ सहयोग नहीं कर रहे। फ़ैसिस्टों की हार के लिये हम अपनी किस्मत पर गुलामी की मोहर अनिश्चित भविष्य के लिये नहीं लगा सकते। वे लोग कौन सा मुँह लेकर फ़ैसिस्ट-विरोधी होने का दावा करते हैं और फ़ैशिज्म का विरोध करने वाली अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों का नेतृत्व करने का दम भरते हैं जो अपने ही साम्राज्य में 'कालोनियल, शोषण क़ायम रक्खे हैं और अपने अधीन देशों की जनता की एक भी राष्ट्रीय उठान सहन नहीं कर सकते? हम स्वय गुलाम बने रह कर अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति की चिन्ता करें यह एक विचित्र बात है। हम सब समझते हैं। हमारे मार्ग से अब कोई शक्ति हमें विचलित नहीं कर

सकती। इस बार हम सरकार की ईंट से ईंट बजा देंगे। हमारी गर्दनें कटेंगी यही न होगा—लेकिन हमारी सदियों की प्रतिहिंसा की भूख तो पूरी हो जायगी.....'

प्रतिमा ने कहा—'इधर मैं हफ्तों से बाहर रही हूँ। मेरा एक एक मिनट स्थिति का अध्ययन करने और झोपड़ी झोपड़ी से लेकर प्रासाद प्रासाद में सुलगती हुई ज्वाला के स्थायित्व को समझने में बीता है। हमारे घर में ही हमारा व्यक्तित्व कुछ नहीं! हमारी इच्छा का कोई मूल्य नहीं! हमारी राजनैतिक और मानवीय अभिलाषा की कोई अभिव्यक्ति नहीं! हमारा देश—हमारा राष्ट्र—हमारी संस्कृति—पर लगता है हमें कहीं किसी ओर कोई अधिकार नहीं। प्रतिक्षण हमें गुलामी के अन्धकार-युग की ओर घसीटा जाता है। यह स्थिति एक क्षण के लिये हम बरदाश्त नहीं कर सकते। मैंने प्रान्त के लगभग हर नेता से बात की है। सबने संघर्ष का एलान किया है। लेकिन कान्ग्रेस की 'बैकबोन' हमीं लोग हैं। हम लोग अपना कर्तव्य पालन न कर सके तो आने वाली भारतीय मानवता हमारे नाम पर थूकेगी। स्वतंत्रता की आत्मा सदैव के लिये हमारी ओर से मुँह मोड़ लेगी। खोने के लिये हमारे पास गुलामी के अतिरिक्त है क्या?'

बेचन पान्डेय ने कहा—'आप लोग जो तय करें उसे पूरा करके दिखा दें यह मैं चाहता हूँ। मैंने मौत के सामने बड़े बड़े कान्ग्रेसियों और क्रान्तिकारियों को पानी हो जाते देखा है। यह ग़लत है। या तो क़दम न उठें—उठें तो उठते चलें। हर जिले में ऐसा ही युद्ध समितियाँ बन जायँ और अपना अपना क्षेत्र सँभाल लें तो एक हफ्ते के अन्दर इस ज़ुल्मी सरकार की अर्थी सज सकती है। ज़रूरत है मज़बूती और एकता की। दो में एक की भी कमी रह गई तो भविष्य की भीषणता को सोचकर मैं काँप उठता हूँ। आप जानते हैं—क़यास कर सकते हैं किस बेरहमी और बेदर्दी के साथ सरकार आपका दमन करेगी। बस्तियाँ वीरान होंगी—हवाई-

जहाजों से बम बरसाये जायँगे ! मकानों—झोपड़ियों—खेत खलिहानों—हवेलियों—महलों में आग लगाई जायगी। दौलत और अस्मत लूटी जायगी। बच्चे, जवान, बूढ़े गोलियों से भून कर फेंक दिये जायँगे। जब सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा का आन्दोलन चलाया गया तब तो ऐसे ऐसे अत्याचार हम पर किये गये कि याद कर खून खौल उठता है। जब आप पटरियाँ उखाड़ेंगे—तार काटेंगे—खज़ाने लूटेंगे—सरकार की मशीन को नष्ट भ्रष्ट करने की कोशिश करेंगे तो आप जीवित रहने पायेंगे ? लड़ाई का जमाना। डी० आई० आर० ने सरकार के हाथ में कैसी ताकतें दे रक्खी हैं आप जानते हैं ? अब जान जाँयगे।'

महमूद ने कहा—'शुक्र है पंडितजी ! हम लोगों में यह ज़हनियत पैदा हुई हम बग़ावत की लाइन पर सोच सकें। नहीं तो चर्खा और तकली—चुनाव और वज़ारत के गर्मागरम प्रोग्राम रह गये थे। मैं समझता हूँ तवारीख़ की ताकतों ने आज तक हमारी मदद नहीं की इसीलिये कि हमने आज़ादी की लड़ाई को कभी लड़ाई की तरह नहीं लड़ा। हमने हमेशा उसे 'कॉस्टीट्यूशन-लिज़्म' के सँकरे दायरे में कैद रक्खा। सदियों की खोई आज़ादी किसी मुल्क को आज तक इस तरह मिली है ? आप खातिर जमा रक्खें पंडितजी ! आपके आशीर्वाद से हमारा जिला अंगारों का हुजूम बन जायगा। दूसरी जगह की बात हम नहीं कह सकते। अपने जिले को हम जानते हैं—जिला हमें जानता है। कम से कम यहाँ हम सरकार की जड़ खोदकर उसे नेस्तनाबूद कर देंगे। रह गई मौत की बात ! पंडित जी ! इन्सान एक बार मरता है बार बार नहीं। देश की आज़ादी की लड़ाई में होनेवाली मौत से बढ़कर गौरवशाली और आबदार मौत और भी कोई होती है—मैं नहीं जानता।'

मीटिंग समाप्त हो गई। सब लोग उठ उठ कर चले गये। हर एक के चेहरे पर बलिदान की जगमगाहट थी—आँखों में शीषदान का

विजयी स्वप्न था। कन्धों पर जिम्मेदारी का भार था—माथे पर चिन्तन और भविष्य की अनिश्चितता की बंकिम रेखायें थीं! सब मिल कर पन्द्रह बीस आदमी थे। सन्यासिनी ने महमूद की तरफ मुड़कर कहा—'तुम कहाँ जा रहे हो भाई? तुम से और बातें करनी हैं! तुम वर्धा गये थे। मैं भी गई थी। दुर्भाग्यवश हम दोनों साथ साथ न पहुँच सके। आन्दोलन अब होगा। मुझे लगता है मेरी खोई जवानी लौट रही है—बुझी आग फिर जल उठी है। इस बार का संघर्ष जीवन और मरण का संघर्ष होगा। हिन्दुस्तान से ब्रिटिश साम्राज्य अब हमेशा को लद जायगा। लेकिन बड़ी होशियारी और सावधानी की ज़रूरत है भैया! तैयारियों का पता—उसकी हवा पेड़ के पत्ते को न लगनी चाहिये। तुम अगली मीटिंग में ज्यादा लोग बुलाना चाहते हो। मैं यह ग़लत समझती हूँ। आज जो लोग थे उनके अलावा हमें किसी को अपने विश्वास में न लेना चाहिये। आरती का क्या हाल चाल है? भैया और भाभी सबको हमारे साथ मैदान में आना होगा। ऐसे मौके पर असली नकली की पहचान हो जाती है। शम्मी अच्छी है?'

'सब ठीक है बहन! आरती की बात अब मुझसे न करो। उसकी शादी एक आई० पी० से होने जा रही है। उसे मेरे मकान पर आने की मनाही है। इस बीच भैया ने बाबूजी से उसकी मेरी मुहब्बत का ज़िक्र किया और शादी का सुझाव रक्खा। उस दिन से बाबूजी का दिमाग बेठिकाने हो गया है। मुझ से कुछ नहीं कहा पर आरती को मेरे घर आने की मुमानियत हो गई। उसे मजबूर किया जा रहा है विक्रमसिंह आई० पी० से शादी करे। अब तक यह सुना है आरती इन्कार कर रही है। भैया और भाभी पर बाबूजी की बड़ी बेरहम फटकारें पड़ी हैं। उन्होंने कह दिया है अगर आरती ने उनकी बात न रक्खी तो उसे और उसके हमदर्दों को कोठी छोड़नी पड़ेगी।'

'यहाँ तक नौबत आ गई ! मैं आज भैया और आरती से बात करूँगी। भैया क्यों नहीं अड़ जाते। भाभी से भी बात होगी।'

'क्या करोगी बहन ! इस वक्त जो सवाल हमारे और मुल्क के सामने है उसे देखो। आरती का ख्याल छोड़ो। तुम उन लोगों से मिलना मत। मिलना तो इस सिलसिले में कोई बात न करना। मुझे आरती का ख्याल नहीं आता। मैंने आरती के कमरे के सामने वाली अपनी छत पर खड़ा होना छोड़ दिया। आरती को मैं प्यार कर सकता हूँ लेकिन उसके वालदैन को अपने साथ उसकी शादी करने के लिये मजबूर नहीं कर सकता।'

'और आरती—उसका अब क्या होगा ? तुम समझते हो वह तुम्हें छोड़ और किसी के साथ शादी कर लेगी ?'

'दुनिया बड़ी वैसी है दीदी ! इन्सान के दिल को फिसलते देर लगती है ! सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस की बीबी बनकर पूरे शहर पर हुकूमत करना—कहाँ मेरे साथ रेल की पटरियाँ उखाड़ते फिरना। कुछ कह नहीं सकता। उसने खत लिखना बन्द कर रक्खा है। मैं भी उस दिन से नहीं गया। भाभी तो नहीं आई—भैया कभी कभी चले आते हैं। मुझसे मुलाकात नहीं हुई लेकिन शम्मी से पास बैठते हैं। उस गरीब को तसल्लियाँ दिया करते हैं। अब हम लोगों के सामने दूसरी फ़िक्रें और सवालात हैं। मुहब्बत के नग्मे गाने के दिन बीत गये। मैं इस साल घर आते आते ऐसा फँसा कि ज़िन्दगी का मकसद भूल बैठा। मुल्क के भीतर भीतर इतनी इन्क़लाबी ज़हनियत फैल गई। मुझे पता न चला।'

'मेरी बात सुन लो महमूद ! आरती हरगिज़ किसी और के साथ शादी न करेगी। तुम मना करते हो—मैं तुम्हारी बात न करूँगी। इस स्कीम के मुत्तलिक़ भैया से बात करनी पड़ेगी।'

'क्या जरूरत है बहन ! वक्त आने पर वे खुद बात जाँयगे। उस वक्त ठीक समझेंगे हमारी इमदाद करेंगे वर्ना

सरकार के तरफदार तो बने बनाये हैं। तुम उनके यहाँ न जाना बहन! मुझे खौफ़ लगता है बुड्ढा तुम्हारी 'इनसल्ट' न कर बैठे तुम्हें वह खूब जानता होगा। मै कल इलाहाबाद जा रहा हूँ। नेताओं से एक बार फिर मिलकर बात करनी है। हक़ीक़त ठीक ठीक समझनी है। तुम अब कहीं न जाओगी? मैं जल्द वापस आऊँगा। जिले के गाँव गाँव का दौरा कर लेना है हमें। बहुत काम करने हैं। देखना है यह सबकमेटी क्या रिपोर्ट देती है—कौन सी स्कीम तैयार करती है। यूनिवरसिटी को भी आखरी सलाम कर लेना है। इस आन्दोलन के बाद कोई नहीं कह सकता वह जीवित बचेगा या नही!'

'कल मैं बरकतपूर तहसील जा रही हूँ। गजपालसिंह एक सभा बुला रहे हैं। सोचती थी साथ चलोगे। तुम इलाहाबाद के लिये तैयार बैठे हो। खैर! यह भी जरूरी काम है। यूनिवरसिटी को सलाम करने के लिये लखनऊ जाना पड़ेगा।'

'वहाँ भी जाना जरूरी है। नेताओं से वहाँ भी बात करनी हैं। मैं अभी ठीक ठीक समझ नहीं पा रहा क्या करना है। अगर कान्ग्रेस अहिंसा के मार्ग पर दृढ़ है तो इस संघर्ष को रक्तपात से कैसे बचाया जा सकेगा?'

'तुम औरतों की तरह बात करते हो भैया! हमारे सामने देश की आज़ादी का सवाल है। हिंसा और अहिंसा का प्रश्न बिलकुल गौण है। बीस वर्ष से देश अहिंसा की नीति का पालन करता आ रहा है। बूट की ठोकरों के अलावा उसे क्या मिला? तुम जो कहो मैं इन प्रान्तीय शासन के विधानों और कांग्रस मंत्रिमडलों को स्वतन्त्रता के युद्ध में कोई उपलब्धि नहीं मानती। मेरे और अँगरेज सरकार के बीच तो खून है—हजारों निहत्थे क्रान्तिकारियों की लाशें हैं जो इस सारे 'फार्श' को और नंगा कर देती हैं। हिंसा से हमारा देश स्वतन्त्र होगा। मुझे प्रसन्नता है इतिहास अपने को दोहरा रहा है। विप्लव-यज्ञ की असंख्य आहुतियाँ निष्फल नहीं गई।'

आठ

आरती की माँ ने फूट फूट कर रोते हुए कहा—'हम को छोड़ तू कहाँ चली जायगी ? तेरे साथ बलराज बहू चले जाँयगे ! लाल गुलाल कुसुम सब चले जाँयगे ! मैं कोठी में अकेली कब तक कैसे रहूँगी ! तू महमूद से विवाह न करने पायगी तो घर छोड़ कर चल देगी ! मैंने इस दिन के लिये तुम लोगों को पाला पोसा था ? इतना अच्छा लड़का और कुलीन घर हम लोगों के सौभाग्य से मिल रहा है। तू एक म्लेच्छ के पीछे सब ठुकरा रही है ! अच्छी मनमानी घर जानी है ! जो तुम लोगों के मन आवे करो। मैं कुछ नहीं जानती। मुझसे ये बातें क्यों करने आई है ?'

'मैं शिकायत करने नहीं आई। तुमसे आखरी मुलाक़ात करने आई हूँ। बाबूजी ने साफ साफ कह दिया है—मेरे मन के माफ़िक चलो। जो कहूँ करो या कोठी छोड़कर चली जाओ। भैया भाभी को मैं अपने साथ नहीं ले जा रही। वे खुद जाना चाहें तो मैं रोक भी कैसे सकती हूँ ? मैं लड़की हूँ। मेरा कोठी पर अधिकार नहीं। भैया मेरे पीछे यह वैभव और स्टेट छोड़ दें मैं नहीं चाहती। मुझे एक दिन यहाँ से जाना है। कब तक मैं तुम्हारे आँचल में मुँह छिपाये बैठी रहूँगी ? आज बाबूजी ने फिर मुझ से साफ कह दिया। मैं इतना अपमान सहने की आदी नहीं। जिन माता पिता ने मुझे आँख की पुतली बनाकर रक्खा वे घर से निकालने पर तुले हैं। मैं यहाँ बैठी रहूँ ! न माँ ! मैं कल सुबह चली जाऊँगी। मुझे अपनी इच्छा के प्रतिकूल ले जाने का अधिकार किसी को नहीं। बाबूजी अपनी बात पर अड़े हैं। मेरे लिये घर छोड़कर चले जाने के अलावा दूसरा रास्ता नहीं।

रोटियों की फिक्र नहीं है माँ ! जिसके बच्चों को पढ़ा दूँगी वह रहने के लिये कोठरी और खाने पहनने भर को मज़दूरी दे देगा। भैया भाभी को तुम शौक से रोक लो। क्यों मुझ अभागिन के पीछे तकलीफ झेलें ?'

'वे मेरी बात मानते हैं ? तू मान जायगी वे भी मान जाँयगे। तेरे पीछे मारा विग्रह हो रहा है। तेरे कारण मेरा हरा भरा—धानपान पूरा घर चौपट हो रहा है। तू ऐसी कुलंछनी पैदा हुई जिसने खानदान का सिर नीचा किया। पैदा होते मर जाती तो क्यों यह काला दिन देखना पड़ता।'

'कोई उपाय नहीं माँ! मैं जो ठीक समझूँगी करूँगी। विवाह मुझे करना है। जीवन उस व्यक्ति के साथ मुझे पार करना है। तुम्हें या बाबूजी को नहीं। क्यों मेरे ऊपर अपनी इच्छा के विरुद्ध विवाह करने के लिये दबाव डाले जा रहे हैं ? मेरे अपराध क्षमा कर सको तो कर देना। समझना मैं तुम्हारी कोख से पैदा नहीं हुई। तुम लोगों को अपने वंश की इज़्ज़त और कुलमर्यादा प्यारी है। मुझे अपनी जान और ईमान प्यारा है। बाबूजी ने इस प्रसंग में जो कहा—जिस तरह मेरी बेइज़्ज़ती की उस तरह कोई पिता अपनी लड़की की नहीं कर सकता। अब सब ख़त्म है। मैं लौट कर इस मकान में पैर न रक्खूँगी। सिर पर जो पड़ेगा झेलूँगी। तुम्हारे सामने कभी सहायता के लिये हाथ न फैलाऊँगी। बाबूजी से कह देना वे समझें आरती संसार में नहीं। उनके लिये मेरा अस्तित्व आज से समाप्त हो गया। भैया और भाभी लौट कर इस घर में आवेंगे। उनके लिये इस कोठी का फाटक—तुम्हारे दिल का दरवाजा फिर खुल जायगा मेरे लिये आज से..... ..'

'तुम्हारा कसूर नहीं है बेटी ! यह हमारे कर्मों का फल है।

बुढ़ापे में हमें मिल रहा है। माँ का दिल गाय होता है—औलाद का दिल कसाई। पहले लोगों के मुँह से सुनती थी। यकीन न आता था। आज जब अपने ऊपर यह गाज गिर रही है तो समझ में जाता है। बता तू जायगी कहाँ? लोग सुनेंगे क्या कहेंगे! सारे गाँव में हल्ला मच गया है। तूने कहीं मुँह दिखाने लायक हमें न रक्खा। किस पूर्व जन्म का बदला तू ले रही है?'

आरती चुपचाप अपने कमरे में चली आई। पिता ने उसे अन्तिम बार अपना फ़रमान सुना दिया है। घर से निकल जाने का नादिरशाही हुक्म उसे मिल गया है। उसने तय किया है अब यहाँ न रहेगी। कल सुबह पहली गाड़ी से रवाना हो जायगी। जिस घर में वह इतने आदर ममत्व और दुलार से रही वहाँ अब अपमान और अवसाद की कुहेलिका के बीच न रहेगी। वह जायगी—लौटकर न आयगी। जाने के पहले एक बार शमीम से मिल लेना चाहती है। महमूद आजकल गाँव से बाहर रहता है। उससे जीवन के विशाल राजपथ पर कहीं न कहीं भेंट हो जायगी। देश की राजनैतिक गति का पता आरती को है। उसे मालूम है इस अभिमानी क्षुब्ध राष्ट्र के दिल के भीतर भीतर कितना आक्रोश—विस्फोट इकट्ठा है वह फूट पड़ा तो·····तो क्या होगा! कितने महमूद इस सैलाब के तूफानी वेग में तिनकों की तरह उड़कर नष्ट भ्रष्ट न हो जायँगे? उसने अपना रास्ता चुन लिया है। अपने हमदम के साथ चलेगी—साथ रहेगी—साथ साथ जियेगी—मरेगी। प्राण का मोह नहीं—विलास सुख उसके लिये बेमानी है। उसके सामने अग्निपथ है—ज्वालामुखियों की गली है जिनमें किसी क्षण वह जलकर क्षार हो जायगी। यही प्रेम पंथ है—यही वह सूली की सेज है जिस पर युग युग से उस जैसी प्रेम की पुजारिनों ने अपने को—अपने सोहाग मंडित शीषों को झुला

दिया है। उसे साथी के कधों की मजबूती पर भरोसा है। उसके दिल की फौलादी दृढ़ता उसका सहारा है। वह काँटों के बिस्तर पर लेट सकती है अगर उसके प्रेमी साथी का सिर जाँघ पर हो। वह थकेगी नहीं—झुकेगी नहीं—रुकेगी नहीं। बदन पर दिल पर घावों के अम्बार लिये आगे बढ़ेगी। उसमें कोरी भावुकता नहीं—घुल घुल कर मरने और अपने को उत्सर्ग कर देने का शहीदाना संकल्प है।

आरती ने सामान छोटे से चमड़े के बेग में रख लिया। थोड़ी सी धोतियाँ, ब्लाउज, महमूद के पत्र उसका एक फोटोग्राफ और भैया, भाभी, बच्चों का एक ग्रूप था। दो चार टायलेट की साधारण चीजें थीं। यह सामान लेकर वह पिता की चौमंजिली कोठी से विदा लेगी। कलेजे पर पत्थर रख कर उसने दिन भर ले चलने का सामान चुना है। ढेर की ढेर किताबों में से ले जाने वाली किताबें चुनी है। शम्मी से मिलना बाकी है। पिताजी का हुक्म है वह महमूद की कोठी तरफ जाने की कोशिश न करे। बिना शम्मी से मिले आरती से जाया न जायगा। बड़े असमंजस में पड़ गई। भैया भाभी की उसे चिन्ता नहीं। वे घर छोड़कर जा सकते हैं—नहीं भी जा सकते हैं। पर तय है बाबूजी उन्हें ठहरने न देंगे। वह दिल से नहीं चाहती उसके पीछे भैया भाभी—उनके मक्खन जैसे तीन बच्चे गुरबत की मुसीबत झेलें। वे यहीं रहें और सुख से रहें। जीवन की लड़ाई लड़ने के लिये वह अकेली काफ़ी है।

देर तक आरती उलझन पड़ी रही। जब तक पिता के मकान में वह है तब तक उनकी आज्ञा के विरुद्ध महमूद के घर जाने की इच्छा नहीं होती। आज अन्तिम बिदा है। कौन जाने शमीम बहन से फिर उसकी मुलाकात हो। एकबार जब पार्वती जलधार की की तरह वह गाँव छोड़कर निकल जायगी

तो कब लौटेगी यह उसके सोचने समझने के बाहर की बात है। भाभी से बोली—'एक बार शम्मी से मिलने जाना चाहती हूँ। जीवन में भेंट हो न हो।'

'कैसी बात करती हो रानी! मिलने के लिये मैं मना नहीं करती। जाकर मिल आओ ऐसे गिरे मन से बात न करो। तुम्हें उसी घर जाना है। भेंट न होने की क्या बात है? मुहब्बत की लड़ाई इतनी आसान नहीं होती जो बात बात पर दिल को झुका दिया जाय! जाओ बेफ़िक्र होकर! साथ चलती लेकिन बाबूजी ने कुछ पूँछताँछ की—कहा सुना तो मैं यहाँ सँभालूँगी।'

'भैया लायब्रेरी में हैं?'

'किसी सभा में गये हैं। तुम्हारे महमूद मियाँ की प्रतिमा दीदी उन्हें अपने स्वर्ण पंखों पर बैठा कर ले गईं। कान्फ्रेंस वर्कर्स की कोई मीटिंग है। रास्ते में कहीं मिल गई थीं—उधर से वे साथ चले गये। ज़ोहरा आकर कह गयी है। उनके साथ जाना चाहती हो?'

'आज मुझे किसी के साथ की दरकार नहीं। जो करूँगी अकेली करूँगी। मेरे कामों की जिम्मेदारी मुझ पर होगी। तुम लोगों को मेरे पीछे जो अपमान झेलने पड़े वे मुझे उठते बैठते कोचते रहते हैं। कुसुम कहाँ है? मेरे साथ चले!'

आरती महमूद के मकान पहुँची। शाम होने में देर थी। सामने अपने चबूतरे पर बैठे सुकरू सन बट रहे थे। पास ही पानी से भरे घड़े रक्खे थे। आरती को देखते उनकी जान सूख गयी। आरती को मालूम था नहीं। बोली—'चाचा! दरवाजे पर ही पौंसला बैठा दिया। पहले तो बाज़ार में पानी पिलाते थे। यहाँ कौने में कौन पानी पीने आता होगा?'

पौसले के गौरवपूर्ण अतीत की सुधि में सुकरू की आँखें भर आईं।

आरती के सामने कुछ प्रकट न होने देना था। सँभलकर बोले—'बिटिया ! अब दरवाजे पर बैठा जाय । जिन्दगी दूसरों के दरवाजे डोलते डोलते बीत गई । महमूद भैया आज कल हैं नहीं ।'

'जानती हूँ चाचा ! बहनजी से मिलने आई हूँ । कल बाहर जा रही हूँ—सोचा सबसे मिल जुल लूँ ।'

सुकरू का माथा ठनका । बाहर क्यों जा रही है ! घर से लड़ झगड़ कर तो नहीं जा रही । भीतर भीतर सहमते हुए सन बटने लगे । आरती फाटक के भीतर दाखिल हो गई । दरबान ने अदब से सलाम कर रास्ता छोड़ दिया । आरती सीधी ऊपर चली गई । सुकरू पत्नी को दरवाजे पर रक्खे पानी के घड़े आदि देखने को कह कर सीधे ठाकुर साहब की कोठी पहुँचे । ठाकुर साहब नीचे की बैठक में अकेले गीता पढ़ रहे थे । सुकरू कुर्सी के सामने नीचे जमीन पर धड़कते दिल से बैठ गये । ठाकुर साहब ने लगभग दस मिनट के बाद किताब से आँखें हटाईं कठोर दृष्टि से सुकरू की ओर देखा । उनके मुँह पर मानसिक अशान्ति के संघर्ष की रेखायें स्पष्ट थीं । बोले—'कहो पंडित ! क्या खबर है ?'

'सरकार ! अभी अभी आरती बिटिया महमूद भैया के घर गई हैं । साथ में बड़े भैया की बिटिया है । आपका हुक्म था न ! मैंने फौरन इत्तिला कर दी ।'

'ठीक किया तुमने'—ठाकुर साहब ने धीमे स्वर से गरजते हुए कहा—'जाओ—अपना काम देखो !'

सुकरू जमीन पर सिर टेक कर चुपचाप बाहर निकल आये । ठाकुर साहब क्रोध से होंठ चबाते हुए कमरे में घूमने लगे । गीता का कर्मयोग वाला अध्याय खुला का खुला रह गया । चिल्लाकर बोले—'कोई है ।'

सामने से उनका बड़ा पोता लाल जा रहा था । दादा की आवाज़ सुनकर कमरे के भीतर आया । अदब से एक ओर खड़ा

हो बोला—'जी दादा ! कहिये !'

'कुछ नहीं बेटा ! कहाँ धूप में घूम रहे हो। नौकर साले कहाँ चले गये। आओ मेरे पास।'

लाल सिर झुकाये जाकर पास खड़ा हो गया। ठाकुर साहब स्नेह से सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—'बलराज कहाँ है बेटा !'

'सभा में गये हैं। दोपहर को ज़ोहरा आई थी—बतला रही थी।'

'बहू—तुम्हारी माँ कहाँ है ? उसे भेज दो !'

लाल चला गया। पाँच मिनट के भीतर शीला ने बाहर से कहा—'बाबूजी ! आ सकती हूँ।'

'चली आओ। मैं खुद बुलाता हूँ तब पूँछने की क्या ज़रूरत है ? आरती कहाँ है ?'

शीला चुपचाप फर्श पर सिर नीचा कर बैठ गई। आँचल का घेर मस्तक पर थोड़ा आगे खिसक आया ! कुछ बोली नहीं। चुपचाप श्वसुर का मुँह देखती रही।

'मैं पूँछता हूँ आरती कहाँ है ?' ठाकुर साहब कुर्सी से उठकर खड़े हो बोले। तुमने सुना नहीं ? मेरी बात का जवाब क्यों नहीं देतीं ?'

'क्या जानूँ बाबूजी। मैं अपने कमरे में थी। लाल ने जाकर आपका हुक्म सुनाया। चली आयी। कहिये पता लगाऊँ।'

'नहीं ! मुझ से सुन लो। वह महमूद के यहाँ गई है। मेरे मना करने पर भी न मानी।'

'महमूद आजकल गाँव में नहीं। मुमकिन है शमीम से मिलने गयी हो। क्या हर्ज है बाबूजी। लाल को भेजकर बुलवा लूँ। कल सुबह हम लोगों को छोड़कर जा रही है। आज आपका हुक्म उसे मिल गया है। ऐसी सूरत में शमीम से भी मिलना स्वाभाविक है।'

'मगर मेरी हुक्मउदूली। बाहर जाकर चाहे जो करे।

यहाँ जब तक है मेरी बात माननी होगी। तुम जाओ। मैं महमूद के मकान जाता हूँ। उसे मेरी इज़्ज़त और मर्यादा का ख्याल नहीं तो मुझे क्यों हो।'

शीला भीतर भीतर आशंका से काँप उठी। कौन सा अनर्थ होने वाला है। न जाने किसने आकर इनसे कह दिया। सहमती हुई बोली—'मैं चलूँ बाबूजी साथ में। हाथ जोड़ती हूँ मुझे साथ ले चलिये। आप अकेले न जायँ—भगवान के लिये।'

'बको मत! जाओ—चली जाओ। मुझे तुम्हारी रहनुमाई की ज़रूरत नहीं। मैं अपना रास्ता जानता हूँ'—कहते कहते ठाकुर साहब ने आलमारी खोलकर रिवाल्वर निकाला बन्डी के जेब में डालते हुए कठोर दृष्टि से शीला को देखकर बोले—'जाओ! खामोश—मुँह सिल कर अपने कमरे में बैठो। भीतर जबान से तुमने कुछ निकाला तो तुम्हारे होश ठीक कर दूँगा! निकलो यहाँ से।'

शीला मन ही मन भगवान का स्मरण करती बाहर निकल आई। लड़खड़ाती हुई आकर अपने कमरे में पड़े सोफ़े पर लेट गई। पति की अनुपस्थिति उसे बहुत खल रही थी। खुद महमूद के घर जाने का साहस न होता था। पति होते उन्हें वह वहाँ भेज देती। अपने मन की पीड़ा और दुश्चिन्ता किससे कहे! ठाकुर साहब उसे मना कर चुके थे। बार बार उठ कर छत पर आती थी। सान्ध्यकालीन उदासी में डूबी सामने खड़ी महमूद की कोठी की ओर व्याकुल दृष्टि से देखती थी। उसे घबड़ाहट हो रही थी। रह रहकर उत्कंठा से जो मिचलाने लगता था। रिवाल्वर की आवाज़ छूटी—अब छूटी। दिल डूब उतरा रहा था। चलते चलते उसकी दृष्टि ठिठक जाती थी। सहसा पति ने कमरे में आकर कहा—'शीला! ऐं! तुम्हारा चेहरा उतरा क्यों है? सब खैरियत न?'

शीला झपट कर कुर्सी से खड़ी हो गई। कुर्ता उतारते पति के

हाथ रोकती बोली—'तुम एक क्षण न रुको। सीधे महमूद की कोठी जाओ।' हाँफते हाँफते उसने पूरा वृत्तान्त कह सुनाया। 'मुझे बाबूजी ने रोक दिया है। वर्ना तुम्हारे साथ चलती। अब चलूँगी तो उनका गुस्सा भड़केगा। तुम तुरन्त जाओ। बाबूजी भरा रिवाल्वर ले गये हैं—अनर्थ न कर बैठें।'

'अच्छा! मैं फौरन चला। देखो! नीचे प्रतिमा खड़ी है! शायद अम्माजी से बात कर रही है। उसे बिठाना और मेरे वापस आने तक रोकना। फ़िक्र न करो। बाबूजी क़ानून जानते हैं। भरे रिवाल्वर का घोड़ा दबाने के जो अंजाम होते हैं उनसे बखूबी वाकिफ़ हैं। धमकाने के लिये उन्होंने यह किया है...'कह कर बलराज उल्टे पावों लौट गये। फाटक से निकल कर तेज़ी से महमूद की कोठी की तरफ बढ़े। शीला उतर कर नीचे आँगन में आई और प्रतिमा से बोली—कहाँ का भाग्य उदय हुआ जो आप पधारीं। चलिये! ऊपर—गर्मी है। अम्माजी आप भी चलिये।'

'नहीं बहू! तुम लोग जाओ। मुझे और काम देखने हैं। लाल गुलाल कहाँ हैं? कुसुम नहीं दिखाई पड़ती। शाम का नाश्ता इन लोगों ने नहीं किया। तुम ने भी नहीं किया। तुम लोग ऊपर चलो। मैं भेजवाती हूँ। बलराज कहाँ है? मैं तुम लोगों से थक गई हूँ। न समय पर खाना न पीना। सब इतने बड़े हो गये हैं। मैं नाश्ता न भेजूँ तो अपनी फिक्र नहीं कर सकते।

शीला और प्रतिमा ऊपर चली आईं। कमरे में बैठकर शीला ने कहा—'कहिये हमारे मालिक को कहाँ पकड़ ले गई थीं। बड़ी मीटिंग थी क्या?'

'हाँ भाभी! संघर्ष बिलकुल सिर पर आ गया। इस बार का संघर्ष मामूली न होगा। इसबार हम ज़ुल्मी सरकार का अन्त कर के दम लेंगे। हमें गाँव गाँव में छोटी छोटी युद्ध-

समितियाँ बनाकर उनके मुखिया तैयार करने हैं। मुख्य काम संगठन का है। शहर के मुहल्ले मुहल्ले में वालन्टियर दल तैयार कर फौजी शिक्षा देनी है। जिले में बिना आप लोगों की सहायता के हम कर क्या सकते हैं! ममता और भावुकता को पीस कर उसकी राख पर खड़े हो हम जीवन का सबसे महान व्रत धारण करेंगे। हम में दृढ़ता—धैर्य और शान्ति है—कष्ट सहन की क्षमता है तो हम विजयी होंगे। भारत माँ के चरण की धूल पर हम अपना—अपने प्रियजनों का जीवन उत्सर्ग कर देंगे।'

प्रतिमा के बाल खुले थे। चौड़े लाल किनारे की धोती गोधूलि की व्याप्त लालिमा में रँग और लाल हो आई थी। आवाज़ में दबी आग थी। शीला का कलेजा दहक उठा। बोली—'लगता मुझे भी ऐसा है। अखबारों में जो पढ़ने को मिलता है—जिस द्रुत गति से राष्ट्र की 'साइकलाजी' में परिवर्तन हो रहा है उसे देखते जो न हो जाय थोड़ा है। चारों ओर स्फूर्ति नज़र आती है। आप लोग एक बार जीवन मरण के झूले पर झूलेंगे।'

'हमीं लोग नहीं भाभी! आप सब लोग। समूचे राष्ट्र का प्रश्न है। हमारा तुम्हारा भेद यहाँ कहाँ। आरती सो रही है—दिखाई नहीं पड़ी।'

'शमीम से मिलने गई'—शीला ने अनमनेपन से उत्तर दिया। हृदय में सोई आशंका फिर जाग पड़ी। पति के वहाँ पहुँच जाने से उसे ढारस था। विश्वास था उनके वहाँ रहते कोई दुर्घटना न होने पावेगी। प्रतिमा ने कहा—'तुम चिन्तित हो भाभी! हमेशा चाँदनी की तरह खिली रहती हो। आज तुम्हारे चाँद जैसे मुँह पर चिन्ता की बदली कैसी। बता सको बता दो!'

शीला ने दबे कंठ से सारी बात बताई। प्रतिमा को इन बातों का आभास मात्र था। महमूद ने अधिक न बताया था।

आज उसे मालूम हो गया स्थिति कहाँ पहुँच चुकी है। आरती कल सुबह अनिश्चित स्थान काल और जीवन के लिये जा रही है। प्रतिमा का मन भारी हो उठा। चुपचाप शीला का मुँह देखती रही। महमूद का वीरानापन रह रहकर याद आ रहा था। 'अब क्या होगा भाभी'—उसने चिन्तित कंठ से कहा।

'भविष्य भगवान के हाथ है बहन! मैं क्या कहूँ! हम लोगों की कोशिश है आरती का दिल न टूटने पावे। मेरा ख्याल है यहाँ से लखनऊ जायगी। मैंने उससे कह दिया है लखनऊ में लीला के पास ठहरे। लीला पहाड़ से लौट कर आ गई है। पापा बाबूजी से डरते हैं। उन्हें सब हाल मालूम हो गया —मालूम हो जायगा क्योंकि आरती कोई बात छिपाती नहीं तो आरती को अपने यहाँ रखने में हिचकिचायेंगे। मैंने आरती को लीला के साथ ठहरने के लिये कहा है। लीला आज़ाद ख्याल की है। आरती को बहुत मानती है वह!'

'शादी अब जल्दी होती नहीं। महमूद जो कर्तव्य का हिमालय खड़ा है उसे देखेगा या शादी की सोचेगा। दस पाँच दिन में क़यामत आने वाली है। सन् सत्तावन का दृश्य आँख के सामने आ जायगा भाभी! बताये देती हूँ।'

'मुमकिन है हम लोगों को गाँव छोड़ना पड़े। बाबूजी साफ़ साफ़ कह चुके हैं। तुम्हारे भैया की सूरत से नफ़रत है उन्हें। मुझे उठते बैठते जली कटी सुनाया करते हैं। मैं नारी हूँ। सब बरदाश्त कर लेती हूँ। वे नहीं मानते—तुर्की बतुर्की जबाब देते हैं। हमारा आबदाना कब तक यहाँ है कह नहीं सकते। मैंने तय किया है जब तक बाबूजी हमारा सामान निकलवाकर फेंक न देंगे—धक्का देकर हमें निकाल न देंगे तब तक हम घर न जायँगे। आरती का इस समय चला जाना ठीक है। उसके यहाँ रहने का मतलब है बाबूजी की बात मान कर अपनी इच्छा के विरुद्ध शादी करना। आरती

महमूद को छोड़ कर किसी के साथ सुखी नहीं रह सकती।'

'ठीक कहती हो भाभी! प्रेम जीवन में एक बार होता है। हृदय का सौदा बार बार नहीं हुआ करता। आरती महमूद को दिलोजान से प्यार करती है। उसे और किसी के साथ शादी करने के लिये मजबूर करना नादानी है। प्रेम की पूर्ति विवाह से न हुई तो विवाह व्यर्थ है। प्रेम विवाह से बढ़ कर है। जीवन की समस्त योजना से बढ़कर है।'

'बाबूजी को कौन समझाये। हम लोग कहते कहते रोते धोते हार गये। उन्होंने इतना समझाया। मैंने घन्टों उनके पैर पकड़ कर ऊँच नीच सुझाया। उन्हें राजपूती आन का घमंड है। कैसे यवन के साथ लड़की का ब्याह कर दें। अपनी जगह पर वे भी ठीक हैं।'

'ख़ाक ठीक है! हमारा आदर्श है जीवित राष्ट्रीयता का निर्माण। हमारा कर्तव्य है उस निर्माण में योग देना। यह आदर्श कल्पना का चाँद है जिसे पाने का यत्न सन्तोष साहस, सुख देता है। इस विराट आदर्श के बिना हम जीवन की आकाँक्षा और चेष्टा खो बैठेंगे! यह आदर्श हमारे जीवन का लक्ष्य है। मैं जानती हूँ हमारे वर्तमान जीवन के यथार्थ वीभत्स कुरूप हैं। लेकिन राष्ट्रीय असन्तोष असौख्य को मिथ्या विश्वास प्रवंचना से ढाँक देना मुक्ति का उपाय नहीं। मुझे ऐसे सम्बन्ध में बुराई नहीं दिखती।'

'ठीक कहती हो बहन! मैं और वे यह सोचते हैं। माता पिता के मनोभावों और संस्कारों को हम लोग क्या करें? उनसे संघर्ष करते हुए भी हम बेरहम नहीं बन सकते। उन्हें समझा बुझा कर ही राह पर लाना पड़ेगा। इसके लिये कठोर धीरज और आत्म विश्वास की आवश्यकता है। युगों के संस्कार एक दो पीढ़ी में दूर नहीं हो सकते। तुम्हारे भैया समझाते समझाते हार गये। बाबू जी समझने के बजाय हम पर नाराज़ होते हैं।

गोया हम लोगों ने आरती महमूद के दिलों को मिलाया है। आरती को हम कैसे गलत तरीके पर सोचने समझने के लिये मजबूर करें! हम जानते हैं वह जो कर रही है सामाजिक, नैतिक, और राष्ट्रीय किसी दृष्टि से गुनाह नहीं। हम लोग यह कहते हैं तो वे बिगड़ते हैं। मेरी मिसाल पेश करते हैं। मैं तुम्हारे भैया से न प्रेम करने लगती तो कौन ताकत दुनिया में मुझे उनसे प्रेम करवा सकती थी?'

'मैं सोचती हूँ भाभी! हमारे देश में मानव मानव में भेदभाव क्यों। महमूद में भैया में क्या फ़र्क है? आरती शमीम ज़ोहरा कुसुम में क्या अन्तर है मैं आज तक समझ न पायी! ये भेद भाव इस कलंकी समाज ने पैदा किये हैं। सर्वस्व छिन जाने पर भी इन टूटे खिलौनों से अपना दिल बहलाया करता है। रस्सी जल गयी ऐंठन नहीं गई। एक जमाना था बाबूजी जैसे खानदानी रईस और ठाकुर मुगल राजघराने के लड़कों को अपनी लड़की देने में गौरव का अनुभव करते थे। तब मुसलमान शासक थे—उनकी हुकूमत थी! आज वे महमूद जैसे आला लड़के के साथ आरती की शादी करने में हिचकिचाते हैं। इन बातों ने हमें सदियों से गुलाम बना रक्खा है। हिन्दुस्तान भर घूम कर मैंने सब तरफ यह ज़िहालत और अँधियारी देखी है। भगवान जाने कब दूर होगी यह! समानता का सूरज कब चमकेगा?' आरती कल जा रही है! भैया के साथ न चली आती तो काहे को जानने को मिलता। आरती से मिलना जरूरी है। कब तक लौटेंगे सब लोग! इतनी देर क्यों हो रही है।'

'आते होंगे। बैठो तुम्हें जल्दी काहे की। खाना खाकर जाना। रात भर यहाँ रहो और अच्छा। आरती कल जा रही है। जी भर कर बात कर लो.....सुबह चली जाना। मुझे बतलाया नहीं आज मीटिंग में क्या तय किया गया। बोले थे क्या।'

'लोगों ने बहुत कहा पर नहीं बोले। तय क्या करना है। हम लोग तैयार हैं। हिन्दुस्तान के खेतिहरों और श्रमजीवियों के जीवन-संग्राम का प्रश्न है। कान्ग्रेस की माँग नहीं स्वीकार की जाती तो मित्रराष्ट्रों के सारे दावे झूठे हैं। तब यह विश्वयुद्ध देवासुर संग्राम नहीं—पाप और पुन्य का युद्ध नहीं—दो डाकुओं की लड़ाई है। वे अपने लोभ और साम्राज्यवादी पेट के दायरे को अधिकाधिक फैलाते जाना चाहते हैं। हमारी प्रतिहिंसा की भावनायें जाग उठी हैं। हम अपनी कुर्बानियों से जनता में प्राण फूँकेंगे। मेरी बात न करो भाभी! मैं सोलह वर्ष से सब देख रही हूँ—कर रही हूँ! बीच में कितने परिवर्तन हुए! कितनी लड़ाइयाँ लड़ी गईं! कान्ग्रेसी नेतृत्व में कितने कैसे कैसे परिवर्तन हुए। आठ आठ सूबों में कान्ग्रेसी वज़ारतें बनी। लोग समझे स्वराज्य मिल गया। स्वतंत्रता की मंजिल निकट आ गई। कान्ग्रेस के अदने वालन्टियरों को सीधे सादे देहातियों पर रोब जमाने का अवसर मिला। क्या क्या न हुआ! लड़ाई छिड़ते सत्य का नंगा रूप सामने आ गया। लोगों को अपनी हीनता का बोध हुआ। वैधानिकता के दलदल में फँसती कान्ग्रेस में विद्रोह और क्रान्ति की बिजली चमकी। हमारे सामने वही पुराना प्रश्न है। एक बात याद रखना भाभी! मृत्यु के भीतर जीवन निवास करता है। प्रलय में सृष्टि का प्रकाश है। विध्वंस के भीतर विधान है। विनाश में विकास है। निवृत्ति में प्रवृत्ति है। विनश्वरता में अविनाशी के दर्शन होते हैं। जब तक हम प्रलय का रंक्तरंजित दृश्य सहन नहीं कर सकते तब तक सृजन का अनुष्ठान कैसे होगा। जब तक वर्तमान अंगरेजी सरकार का क्षय नहीं होता—जब तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद का नाश नहीं हो जाता तब तक स्वतंत्र भारत की रचना कैसे होगी? भारतीय जन जीवन में भूख, प्यास, पीड़ा, हीनता, दरिद्रता, निराश्रयता मूर्तिमान हो दौड़ती है। मौत और दासत्व प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं।

राष्ट्र के हृदय के भीतर करुण अन्तर्निनाद उठता है। देश को कंपित कर उसमें मिल जाता है। हमें अवसर मिल रहा है। हम इस वीभत्सता, भयंकरता के भीतर आशा और प्रकाश की विद्युत रेखायें खींचें। ऐसा करने में हम प्राण की बाज़ी लगानी पड़ेगी। बढ़कर मृत्यु से लोहा लेना होगा। संगीनों की नोकों पर छाती के टुकड़े काट कर टाँगने होंगे! हम सब करेंगे। हम सब कर सकते हैं। युद्ध में हम अपनी जान हथेली पर लेकर जा रहे हैं। उसमें हम साधारण जनता से सहायता की आशा करते हैं। उन्हें बतला चुके हैं अँगरेजों को निकाल कर हम किस तरह का राज्य चलाना चाहते हैं। इस लड़ाई को सिर्फ जनता के बल पर जीता जा सकेगा। इसके कारण जनता अपने बल को समझेगी। पृथ्वी पर मानव की परिवर्तनकारिणी शक्ति का प्रतीक जनता है। जनता ने हमारा साथ न को दिया तो हम चन्द तारों की तरह टूट कर आस्मान के गहवारे में सदा को विलीन हो जाँयगे।'

'महमूद कहाँ गया है बता सकती हो! उसने यहाँ आना छोड़ दिया। बाबूजी का जितना अदब करता है उतना उनसे डरता भी है।

'इसी सिलसिले में घूम रहे हैं। बीच में वर्धा गये थे। करीब करीब सब बड़े कान्ग्रेस नेताओं से मिल चुके हैं। अभी हम लोग ठोस तैयारियाँ नहीं कर पाये हैं। यह चिन्ता उन्हें परीशान किये है। मुश्किल यह है कम्यूनिष्ट हमारा साथ नहीं दे रहे। हम चाहते हैं सारी मिलें बन्द हो जायँ। सारे कारखाने बन्द हो जायँ। सम्पूर्ण यातायात रुक जाय। लेकिन ये लोग रूस के लड़ाई में आ जाने के कारण इस लड़ाई को लोकयुद्ध कह रहे हैं। इस समय जन-आन्दोलन के विरुद्ध हैं। हमारा ख्याल बिलकुल उल्टा है। हम इसे साम्राज्यवादियों की लड़ाई मानते हैं। जब तक हमारी माँगें पूरी नहीं हो जातीं तब तक हमारी राय में परिवर्तन

नहीं हो सकता। आज मैंने भैया से कहा—'क्या आप उस समय फिलासफ़ी के अध्ययन में लगे रहेंगे जब दमन का निरंकुश चक्र—पुलिस की गोलियाँ—गुरखे सैनिकों की संगीनें हमारी लाशों को जमीन पर बिछाती होंगी। भैया ने मुझे जो जवाब दिया वह लासानी है। जो एक राजपूत को शोभा देता है। बोले—'गुलामों का एक दर्शन—एक फलसफ़ा होता है। आज़ादी की लड़ाई में आगे बढ़ कर हिस्सा लेना। इस समय भारतीय जनता की स्थिति अमानुषिक है। उसके सामने सिर पर नाचने वाली मौत का रूप खड़ा है। ऐसे समय तुम सोचती हो मैं कान्ट और हेगल—शंकर और रामानुज को लेकर बैठा रहूँगा! नहीं प्रतिमा! मैं तुम लोगों का साथ दूँगा। मृत दर्शन छोड़ कर उस जीते जागते दर्शन में कूद पड़ूँगा जिसके भीतर धन का लोभ, भर्त्सनाओं और प्राण-दंड का भय नहीं। भाभी! तुम ख़ातूने ख़ाना बनी बैठी रहोगी? अत्याचारी के अत्याचार से तंग आ गई जनता के साथ आकर विद्रोह का झंडा न उठाओगी! इन श्रम-शोषक साम्राज्यशाहों का नाश करना है।

'जो तुम्हारे भैया करेंगे वह मुझे करना होगा। मैंने अपने को उनकी इच्छा पर समर्पित कर रक्खा है। लखनऊ से व्याह कर चली। सोचती थी कैसे गाँव में रहूँगी। शहर के रागरंग, हास विलास, आमोद प्रमोद की छाया वहाँ देखने को न मिलेगी। यहाँ आकर इन्हें जाकर ऐसी रमी कि अब लखनऊ जाने की इच्छा नहीं होती। तुम्हारे भैया के के साथ मेरा जीवन जुड़ा है। जैसे लहर के साथ लहर जुड़ी होती है। वे जो करेंगे, जहाँ जायँगे वहीं तुम मुझे पावोगी। इस निर्दय राजसत्ता और साम्राज्य-लोलुपता का अन्त एक दिन अवश्य होगा। यह भयानक शोषण और रक्तपान अधिक न चल सकेगा। तुम्हारे भैया जैसे शान्त, सौम्य दार्शनिक व्यक्ति के भीतर विद्रोह के उष्ण रक्त का प्रवाह फूट पड़ा है। समाज की दुर्दशा

दरिद्रों की दयनीय दशा—अँगरेजों की भीषण स्वार्थान्धता का अन्त होने में देर नहीं !'

'जरूर होगा भाभी ! देश के असंख्य बलिदानों की ज्वाला व्यर्थ न जायगी। उन माताओं की अभिशाप-शिखा खाली न जायगी जिनके अबोध बालक जलती अग्निशिखा में जीवित होम दिये गये। जिनकी आँख के सामने उनके दुधमुँहे बच्चे शमशीर के घाट उतार दिये गये। मनुष्य मात्र समान है। समाज के द्वार पर दरिद्रता का महान पाप नित्य क्यों हुआ करता है ? इस सामाजिक संगठन को मिटाना है। जब तक इसका संरक्षक विदेशी पूँजीवाद और शासनवाद नष्ट न होगा तब तक दरिद्रता का देशव्यापी आतंक दूर न होगा।'

× × ×

शमीम के गले लग कर आरती देर तक रोती रही। रोते रोते शमीम की हिचकियाँ बँधगई। आकाश जैसी शान्त, पहाड़ीझील की तरह स्वच्छ शमीम बरसाती नदी सी अपने ही आँसुओं मे गँदली हो उठी। आरती ने पूरा हाल बता दिया था। कब से महमूद का उसके यहाँ और उसका महमूद के यहाँ आना जाना बन्द है यह शमीम की समझ में आ गया। रह रह कर गर्व और दुख के शमीम की छाती फूल रही थी। बोली—'भैया कहाँ हैं—उन्होंने कुछ नहीं कहा ? रोज आकर मुझे तरह तरह से बहलाया करते थे वहाँ ये गुलखिल रहे थे ?'

'भैया क्या करें ! जो कह सकते थे कर सकते थे उन्होंने किया और कहा। मेरे पीछे बीबी बच्चों समेत घर छोड़कर चले जाने को तैयार बैठे हैं। बाबूजी किसी भी बात मानें तब तो। ये बातें छोड़ो बाज़ी ! मैं कल सुबह जा रही हूँ। कहाँ जाऊँगी—क्या करूँगी—कैसे रहूँगी कुछ नहीं कह सकती। सोचा नहीं। तय है अब जल्द गाँव लौट कर न आऊँगी। तुम से कब मुलाक़ात होगी नहीं जानती

अपने सारे क़सूरों की माफ़ी चाहती हूँ। मुझे दुआ दो जितनी तकलीफ आज मिल रही है उससे अधिक कभी न मिले। यह आशीष दो। महमूद यहाँ नहीं है उनसे मिलने की मुझे जरूरत नहीं। इतनी बड़ी जिन्दगी है। उससे बड़ी दुनिया है। कहीं न कहीं मिल जाँयगे। मुमकिन है लखनऊ में मुकाकात हो। पर तुम! तुम! अब कहाँ कब मिलोगी बाज़ी! कहते कहते आरती की आँखें छलछला आईं।

'क्या कहूँ बहन! तू जा रही है। महमूद पता नहीं कहाँ है। कह गया है इलाहाबाद लखनऊ देहली जायगा। कब लौटेगा कह नहीं सकती। तू जा रही है। मैं सोचती थी तू इस मकान की रानी बनकर चौबीस घन्टे मेरी आँख के नीचे रहेगी। अब तेरी सूरत देखने को तरस जाऊँगी। किस्मत की गर्दिश! खुदा जो न दिखाये कम है। महमूद का कुछ ठीक नहीं। एक पैर जेल में—एक पैर बाहर। सोचती थी तुझे पाकर मुमकिन है ठीक हो जाय। घर गृहस्थी की देख भाल करे। लेकिन कुछ नहीं। मेरी रेगिस्तानी जिन्दगी! कहीं दो बूँद का सहारा नहीं। चाचा इतने संगदिल हैं मुझे पता न था। ऐसे लोग औलाद को खुदकुशी करने पर मजबूर करते हैं।'

आरती ने कहा— 'बाज़ी! मेरी तरफ से बेफ़िक्र रहो। मेरी शादी महमूद के साथ होगी—अगर होगी। वर्ना बिना शादी के लड़कियों की उम्र कट जाती है। मैंने यही बात बाबूजी और अम्माजी से कही है। यही तुमसे कहती हूँ। कभी एक लब्ज मेरी इज़्ज़त और गैरत के ख़िलाफ न सुनोगी। सुनोगी तो उससे पहले तुम्हारी आरती दुनिया से कूच कर चुकी होगी। महमूद से कह देना मेरी चिन्ता न करें। उन्हें जो करना है—आज उनके सामने जो बड़े सवालात हैं—जिन्दगी और मौत की जो हलचल है उसे देखें समझें। मैं कहीं रहूँगी उनकी रहूँगी। मेरा तन मन आत्मा सब उनके लिये महफ़ूज रहेगा!'—कहते कहते आरती का शरीर तन गया। उसने मुट्ठियाँ जोर से बन्द कर लीं। कुछ

क्षण तक न बोली—न हिली। पत्थर की तरह बैठी रही। उसकी नसें उत्तेजना से इतनी तन गई थीं कि बोलना चाहती तो भी आवाज़ न निकलती। शमीम ने दोनों हाथ बढ़ाकर उसे छाती से जकड़ते हुए कहा—'बोलो, मेरी गुड़िया!—चुप क्यों हो गईं? आज जितनी बात करनी हो करलो। कहाँ सुनने को मिलेंगी तुम्हारी प्यारी प्यारी बातें! लगता है आज मेरा दिल टूट जायगा। तुम्हें कितना प्यार करूँ? कितना चूमूँ चिपटाऊँ? कितना छाती से लगाऊँ? समझ में नहीं आता! मुहब्बत की किस आँच में मेरा खुदा मुझे पका रहा है? मुझे कभी निज़ात न मिलेगी। हमेशा दूसरों को पीड़ा देकर अपना बोझ चुकता करती रहूँगी। कभी कर न पाऊँगी। बूढ़ी कमजोर होती जाऊँगी पर मरूँगी नहीं। रात की घोंट देने वाली खामोशी मेरी साथिन है। जीती रह कर कैदखाने की कोठरी की तरह मौत की तकलीफ झेलूँगी। मैंने क्या क्या न झेला! मैं चुप रही—शान्त रही—पत्थर रही। जिन्दगी के सारे तजरबे मुझे किस बेरहम बेलौस नफ़रत से दुनिया में ढ़केलते हैं। या अल्लाह क्या करूँ—कहाँ चली जाऊँ!

'तुम कहीं न जाओ बाज़ी! यहां रहो। महमूद की देख भाल करो। मैं खुशी से नहीं जा रही। बहुत मजबूर होकर जा रही हूँ। मुझे क्या माँ की गोद जैसा हरा भरा फैला गाँव छोड़ते अच्छा लगता है! यह मेरा गाँव है। मेरे भैया का गाँव है। मेरे प्रेमी और सपनों के सखा—मेरी जिन्दगी के सब से बड़े महबूब का गाँव है! साँस साँस में इसका रस भरा है। इसे छोड़कर मेरे लिये.....' बड़ी तकलीफ है बाज़ी! लगता है पागल हो जाऊँगी जैसे दिमाग की किसी नस पर अधिक न रह गया हो!'

कुछ मिनट रुक कर आरती ने शमीम के पैर पर अपना सिर रख दिया। दोनों हाथ उसकी कमर से लपेट कर बोली—'मुहब्बत के पीछे बाबुल का पूरा देस छूट रहा है। मेरे

भैया, भाभी, गुलाब के फूल जैसे लाल गुलाल, कुसुम, ज़ोहरा सबसे बिछुड़ रही हूँ। तुम महमूद से कह देना। मैं कहती हूँ कह देना—आरती चली गई। छोड़ गई एक सन्देश। अमर आँसुओं में गुँथा अपने जीवन का सब से गूढ़ सत्य। अपनी जीवनी का सार। अपनी कहानी का हासिल। आज मैं रो रही हूँ। मेरे रोने में नवजीवन की अनुभूति का रस है। मेरा रोना वैसा है जैसा नवजात शिशु का रोना। जब अपने नये संसार की असह्य सजीव ज्योति को देख कर एकाएक रो उठता है। वह मेरी याद में बेचैन न हों। और तुम। तुमने अपने पत्थर के जीवन में जो सीखा है—पत्थर के आँसुओं से जो खींचा है—पत्थर की कठोरता में जो समझा है उसे ज्यों का त्यों मेरे महमूद की ज़िन्दगी में उतार देना..... ...'

शमीम के गाल पर आँसुओं की लकीरें जम गई थीं। आरती ने अपने आँचल से पोंछते हुए कहा—'कह देना दीदी! आरती उनकी आग में जिन्दगी की धूनी धधकाने के लिये जोगनी बन कर निकल गई। मेरी छाती पर उन्होंने एक दिन अपनी छोटी सी छाप छोड़ी है। वह मुझे बड़े से बड़े विरोध का मुकाबला करने का बल देती है। शक्ति अपने को बाँधने में नहीं अपने को सीमाओं से मुक्त करने में—हदों से बाहर निकालने में है। जिसके लिये मैं बनी हूँ—जिसके उपयोग और उपभोग के लिये मेरा निर्माण हुआ है उसके इन्तज़ार में मैं इसी तरह प्रणत—वाँछित मुग्ध खड़ी रहूँगी। यौवन की प्रतीक्षमान चुनौती—प्रेम की विवश अस्वीकृति का असन्तुष्ट अलगाव मुझे उनके प्रेम से विरत न कर सकेगा। एक स्वप्न लेकर मैं यौवन के शीशमहल में आई। एक स्वप्न में बारह वर्ष तक झुकी रही। आज एक स्वप्न में घर द्वार पर लात मार कर अलग जा खड़ी हूँ। मेरे सिर पर तूफान बहा जा रहा है। निःशब्द भैरव तूफान! कह देना मेरा सिर झुका नहीं मेरी आँखें झपकीं नहीं! मेरी बाहों से लटकते सपने मरे नहीं! उनसे

कह देना बाज़ी ! जीवन में जब सब भूलने लगें तब भी मेरी याद का अभिशाप उन्हें क्रान्ति की गति—विद्रोह की प्रलय लहरी—पराजित देश की वेदना और बिखरी प्रतिज्ञायें भूलने न दे। कह देना—वे जिस क्षण जहाँ चाहेंगे मैं अपना अभिशप्त रूप और अनियंत्रणीय यौवन—गर्म रक्त से रंजित आल्हाद और पीड़ा लिये पहुँच जाऊँगी। कोई ताकत मुझे उनकी पुकार पर मिट जाने से रोक नहीं सकती। कह देना मेरी बाज़ी ! भूल मत जाना ! तुम्हें मेरी कसम लगेगी। कह देना—आरती को धन, धान्य, पद, गौरव, कोठी, बँगला, मोटर, विलास किसी की चाह नहीं। वह केवल प्रेम की भूखी है। उसे खुशी है उसने जिसे चाहा उसने उसे प्यार किया ! मुझे अपनी दृष्टि पर विश्वास है ! मैं सफल हो चुकी। सम्पूर्ण हो गयी। मैं सन्तुष्ट हूँ। प्रसन्न हूँ। जिसे मैंने प्यार किया वह देश की आज़ादी की दीवाना है। ऊषा के जलते आकाश की लाली—पिघली आग का फेन उसकी ज़िन्दगी में कूट कूट कर भरा है ! मुझे उस पर अभिमान है जैसा स्वाती को मोती पर होता है। जिसकी नस नस में जीवन की तीक्ष्णता नाचा करती है। जो अपने अन्तर्दाह से हिला करती है। कह देना बाज़ी ! देश का प्रेम उन्हें मेरी मुहब्बत चाक कर देने पर मजबूर करे तो दुख न करें ! विडम्बना में अपने आपको भुलाकर आज मैं एक हृदयहीन मारक अस्त्र हो गई हूँ। उसे चीरकर वह उस खाँड़े की तरह हो जायँ जो गिर ही सकता है। जिसके गिरने को कोई धर्म—कोई नीति—कोई श्रद्धा नियंत्रित नहीं कर सकती।'

शमीम ने आरती का मुँह और माथा बार बार चूमते हुए भरे कंठ से कहा—'मैं सब दूँगी। जो तू कहे जाती है वह। जो तू नहीं कह पा रही वह भी। तेरे दिल का कोई जज़्बा—तेरी पूजा का कोई गीत—तेरी मुराद का कोई रँग उससे छिपा है ! मैं सब कह दूँगी—तू जा ! अल्लाह तेरा भला करेगा। देवता तेरी

निगहबानी करेंगे। खुशी की परियाँ तेरी सपनों से भरी जवानी का सिज़दा करेंगी। मुझे यकीन है। जल्द तू इस घर में दुल्हन बन कर लौटेगी। मैं तेरी पाक ज़बी पर सेंदुर का रंगी टीका लगाऊँगी। जाफ़रान से तेरी माँग भरूँगी। फूलों के गहनों से तेरा सिंगार करूँगी। दुनिया की कोई हस्ती तुझे मेरी गोद में —मेरे घर में भावज बनकर आने से नहीं रोक सकती।'

'यही दुआ दो बाज़ी! तुम्हारी बादेसबा जैसी हर साँस से मेरे लिये यह आशीर्वाद निकले। यही पाने के लिये आज बाबूजी की हुक्मउदूली कर तुम्हारे पैर पर माथा टेकने आई हूँ। दुनिया कह न पावे—आरती ने जिसे दिल दिया—जिसे प्यार किया वह उसका पात्र न था।'

'वह तेरी मुहब्बत का पात्र न होता तो तू उसके लिये अपनी जात के आई० पी० लड़के को ठुकरा कर घर से निकल न पड़ती। दोनों को भगवान ने एक दूसरे के लिये बनाया है। इसकी तू फिक्र न मान—ख्वाब में भी। महमूद मुझे चाहे जितना दुःख दे ले तेरे मोती की आब क़ायम रक्खेगा।'

ठाकुर साहब कोठी के बाहर निकलकर कुछ दूर चले। क्रोध का लहरा पूरे वेग पर था। महमूद के फाटक पर उनके पहुँचते ही आदर और संभ्रम से सारी कोठी गूँज गयी। बरसों बाद वे महमूद के मकान पर गये थे। स्टेट के कर्मचारी अपने अपने कमरों से काम छोड़ बड़े आँगन में आ गये। आरामकुर्सी लाई गयी मैनेजर ने हाथ जोड़ कर ठाकुर साहब से कुर्सी पर बैठने को कहा। ठाकुर साहब के चेहरे पर क्रोध और उसको दबाने की—छिपाने की चेष्टायें साफ़ थीं लोग भीतर भीतर आशंका से उद्विग्न हो उठे। ठाकुर साहब ने मैनेजर से पूछा—'महमूद कब लौटेगा?'

'जी—हमें कुछ पता नहीं। उन्हें गये कई दिन हो गये। शायद बहना को पता हो। पुछवाऊँ?'

'मैं खुद शमीम से बात करूँगा। मेरी लड़की भीतर होगी। आप खबर कर दीजिये।'

फौरन शमीम के पास इत्तला भेजी गई। आरती चौंक पड़ी। शमीम के गले से हाथ छूट कर नीचे गिर पड़े। बोली—'यह बुरा हुआ। यहाँ भी आ पहुँचे!'

'क्या हर्ज है। मैं खुद उनसे मिलने को सोचती थी। बुजुर्ग हैं—ज़हे क़िस्मत! वे हमारे घर आये।'

'आप उनकी ख़ातिर कीजिये! मैं चली! जितनी बात उनसे हो चुकी है उससे अधिक करना नहीं चाहती। अच्छा बाज़ी! खुदा हाफ़िज।' आरती दोनों हाथ जोड़ कर कुसुम को साथ ले बाग़ होकर बाहर जाने वाले जीने की तरफ बढ़ी। शमीम ने स्थिति की भीषणता को समझ लिया। आरती का इस तरह चला जाना उसे बेमुनासिब न लगा। पीछे पीछे नीचे उतर आई। नौकरानी को आज्ञा दे आरती को फाटक तक पहुँचाकर हसरतभरे दिल से लौटी। नौकरानी अभी खड़ी थी। बोली—'जा! उन्हें अदब से ले आ!' और पीछे पीछे जीने तक आई। ठाकुर साहब के पास आते ही शमीम ने ज़मीन पर घुटनों के बल बैठ कर प्रणाम किया बोली—'आइये चाचा साहब! आप! हम यतीमों को ऐसा भूल गये! सालों हो जाते हैं—दीदार नसीब नहीं होता। क्या क़सूर आपके इन नादान बच्चों ने किया है? चलिये मेरे कमरे में बैठिये।

दोनों आकर कमरे में बैठे। ठाकुर साहब ने तीक्ष्ण दृष्टि से चारों ओर देखकर पूँछा—'आरती—आरती गई! अभी आई थी?'

'जी हाँ! अभी अभी गयी है। आपके आने के चन्द मिनट पहले।'

'मगर.....मुझे नहीं मिली। कोई सुरंग का रास्ता निकाला है तुम लोगों ने!'

'जी नहीं! बाग़ होकर गयी है। सुबह जा रही है लखनऊ। बोली—बाग़ देखती जाऊँ! इस में बचपन से खेली

कूदी हूँ। बड़ी मायूस थी बेचारी! फूट फूट कर रो रही थी·····'

'तुम! तुम हँस रही थीं? मेरे घर में आग लगा कर! मेरी लड़की को मुझको बरबाद कर! तुम लोगों को शर्म से गड़ जाना चाहिये! मेरे और मेरे लड़के के सलूक का यह बदला तुमने, तुम्हारे लायक भाई ने दिया है! जिस बात का ख्वाब में खौफ़ न था वही सामने आ गई। मैं तुम लोगों को आसानी से माफ़ न करूँगा। महमूद से बात कर लेने पर—रास्ता तय करूँगा! आरती की जिन्दगी से महमूद को निकालकर फेंक दूँगा। मुझे अपनी जिन्दगी की चाह नहीं! बहुत जी चुका देख चुका। यह जिन्दगी का आखरी सीन होगा। भाई की खैरियत चाहती हो तो उसे समझाओ। मेरे रास्ते से अलग कर दो। वर्ना...यह लोडेड रिवाल्वर देखती हो! एक साथ उसका अपना काम तमाम करूँगा।'

शमीम विस्फारित आँखों से ठाकुर साहब की खूँखार मुद्रा देख रही थी। सहमकर उसने चारो ओर देखा। नौकरानी जा चुकी थी। उसने आराम की साँस ली। अनुनयभरे स्वर में बोली—'नहीं नहीं चाचा साहब! आप ऐसा न करें! ठंडे दिल से सोचें और रास्ता निकालें। हम लोग आप के बनाये हुए हैं। अब्बा के मरने के बाद आप की शरन के ज़ेरसाये पले हैं। आप रक्षक होकर भक्षक बन जाँयगे? आप महमूद को गोली मारेंगे! वह ज़ुबान से उफ़ न करेगा।·····लेकिन लेकिन मेरा क्या होगा? उससे पेश्तर मुझे गोली मार दीजिये। मैं बड़ी बदकिस्मत हूँ चाचा जी! आपने वालिद का दिल पाया है। आपको मेरे ऊपर तरस नहीं आता···ताज्जुब है!'

'रहम का सोता सूख गया है। मेरे सामने बदले का सवाल है। जब तक मैं महमूद की फड़कती लाश न देखूँगा मेरी रूह की बेचैनी कम न होगी। नापाक महमूद ने मेरे साथ विश्वासघात किया। जिस बात के लिये उसे पता था

नामुमकिन है उस का स्वाँग रचा। जिसको बहन की तरह मानना चाहिये उसकी तरफ ऐसे नापाक इरादे! उसे मैं दूसरा बेटा मानता था! उसने मेरे गले पर छूरियाँ चलाईं! मैं अपने वश में नहीं हूँ। किसी क्षण कुछ कर सकता हूँ। मैं ऐसे मामले में मर्द को कसूरवार मानता हूँ। औरत फिर भी औरत है! गिर सकती है। आसानी से पाप की तरफ बढ़ सकती है। मर्द का काम है अपनी तबियत पर ज़ब्रकर ठीक रास्ता बताना। गुमराह न होने देना। जो इस मामले में कच्ची खाता है वह मर्द नहीं नामर्द है। मेरा लड़का होता मैं माफ़ न करता। तुमसे जो कहना था कह चुका। तुम लोग मेरे रास्ते से न हटे तो मैं हटाकर दुनिया से उठ जाऊँगा। तुम मेरी बेटी हो। तुम से ऐसी बात कहते सुख नहीं होता। दिल में धधकती आग को क्या करूँ? कहाँ ले जाऊँ इस जुनून को—इस वहशत को!'

'मुझे आप न कहें कुछ। महमूद मेरे समझाने का नहीं। आप से मेरी बदनसीबी छिपी नहीं। कौन सादुख है जो मैंने नहीं झेला! महमूद का बाल भी बाँका हो। मेरे लिये गवारा नहीं। आपसे बस एक दरख्वास्त कर सकती हूँ? सबसे पहले मुझे इस दुनिया से उठा दीजिये। मैं तहेदिल से ऐसा कह रही हूँ। आपके हाथों मरने में मुझे सच्ची खुशी हासिल होगी। इस बेग़ैरत ज़िन्दगी का खात्मा आपके देवता हाथ से हो। इससे बढ़कर क्या होगा! लेकिन आरती! उसके लिये आपने कुछ सोचा है। उसका क्या होगा?

'देवता जब था तब था। आज मैं राक्षस हो गया हूँ—पूरा ब्रह्मराक्षस। आरती जाना चाहती है—चली जाय। मगर उसने महमूद से शादी की तो मैं उसकी दुनिया नष्टभ्रष्ट कर दूँगा। तुमसे यही कहना है। महमूद को मेरी सारी बातें बता देना और होशियार कर देना। वह चाहे तो आरती को रास्ते पर ला सकता है। वह शादी करने से इन्कार कर दे। आरती उसका ख्याल छोड़ देगी। महमूद को चाहिये—यही उसका फ़र्ज़ है। प्रेमी होने के नात

आरती को रुसवा न करे। मैं तुम्हारा उसका अहसान ताउम्र न भूलूँगा। मेरा एक एक रोयाँ दुआ देगा।'

बलराज ने कमरे में प्रवेश किया। घर के नौकर चाकरों की चिन्ता और आकस्मिकता के आघात की सीमा न थी। बलराज बिना इत्तला कराये ऊपर चले गये। दूर से आने के कारण—दिन भर की गर्दगुबार फाँकने के फलस्वरूप उनकी वेशभूषा और दिन से भिन्न थी। शमीम ने खड़े होकर कहा—'आओ भैया! कहाँ से आ रहे हो—भाभी को लेते आते!'

ठाकुर साहब होंठ चबाते हुए उठकर खड़े हो गये। कमरे में टहलते हुए बोले—'तुम्हें किसने बुलाया था? तुम क्यों आ गये? तुमसे किसने यह कहा? बहू ने! उसी की हरकत है!'

'मुझे इस घर में आने के लिये किसी से बुलवाये जाने का इन्तज़ार नहीं करना पड़ता। मीटिंग से लौटकर घर जा रहा था। सोचा महमूद का हालचाल ले लूँ।'

'अब आप कान्ग्रेस की मीटिंगों में जाने लगे! यह कसर रह गयी थी। आपको तो फ़लसफ़े से फ़ुर्सत न मिलती थी। अब यह ख़ुराफ़ात सूझा। सिर पर पड़ेगी समझ जाओगे। जेल में पीठ पर बेंत पड़े तहाँ सब कान्ग्रेसीपन निकल जायगा। मेरा काम समझाने का है—समझाये देता हूँ।'

'मेरी चिन्ता छोड़ दीजिये। जिस काम के लिये तैयार हो जाऊँगा उसी में हाथ डालूँगा। कान्ग्रेस में शामिल होने और इस वक्त शामिल होने का हश्र मैं जानता हूँ.....' कहते कहते बलराज को याद आ गया। उन्होंने चारो ओर दृष्टि डाली। शमीम उनका अभिप्राय समझ गई। ठाकुर साहब की दृष्टि बचाकर आँख से इशारा कर दिया कि आरती चली गई। बलराज को इतमीनान हुआ। नीचे जमीन पर बैठता हुआ बोला—'शम्मी! महमूद कब लौटेगा?

'क्या ज़रूरत है भैया! चाचा साहब उसके खून के प्यासे हो रहे

हैं। यहाँ आकर अपनी जान खतरे में डाले? न भैया! उसे बाहर रहने दो। जब तक चाचा साहब का गुस्सा शान्त न हो उसका बाहर रहना बेहतर है।'

'मेरा गुस्सा उस मलाऊन के खून से शान्त होगा। बलराज! आरती सुबह जा रही है। चाहूँ उसे रोक सकता हूँ। रोकूँगा नहीं। तुम लोग कब मेरा मकान खाली करोगे? मैं नहीं चाहता मेरे पैसे पर ऐश करो—मुझे ज़लील करो।'

'जब आप निकाल देंगे हम लोग चले जाँयगे। आपकी सम्पत्ति का हमें मुतलक ख्याल नहीं। मैं मेहनत कर सकता हूँ। बीवी बच्चों का पेट भर सकता हूँ। आपके ख़ौफ से जो आपसे भी बड़े हैं उनकी मर्ज़ी के खिलाफ नहीं जा सकता। अपने ईमान का—अपनी सामाजिक आत्मा का गला नहीं घोंट सकता। आप कहें कल सुबह आरती के साथ चला जाऊँ। आप समझते हैं आपकी स्टेट का लालच मुझे है?'

शमीम से न रहा गया। बलराज के लिये उसके हृदय में अपार स्नेह और अपनत्व था। बलराज शमीम के केवल भैया न थे। दोनों के बीच एक निर्बाध सखाभाव था जो उसके अन्तर की सारी छायाओं को भुला देता था। भैया उसके लिये केवल मूर्ति और आराध्य के चित्र की तरह न थे। जीवन के साथ साहसपूर्ण समझौते का प्रबोध लेकर आने वाले—सारे दुख, दर्द, रोग, शोक, ताप, दुख, वियोग और असहायता को भुलाकर उत्सर्ग का आलोकित कर देने वाला प्रकाश लेकर आनेवाले पवित्रतम रहस्यपूर्ण आवेग थे। उन्हें देखकर—उनसे बातें कर न जाने कैसा अज्ञातभाव उसके हृदय में जाग उठता था। जैसे दिल के कमरे में दबी नीरवतायें आपस में कानाफूसी करने लगी हों। भैया को देखते ही उसके हृदय में कला और कविता की ऊँची अपार्थिव उमंगों, भावनाओं और तंत्रियों का कलकल श्रोत अबाध गति से प्रवाहित होने लगता है। बोली—'नहीं भैया! तुम क्यों जाओगे? चाचा साहब! आप भैया को

निकाल देंगे। भाभी और बच्चे चले जाँयगे। भैया का क्या कुसूर है! आपके दिल में औलाद के लिये जगह नहीं रह गई? हाथ जोड़ती हूँ। महमूद को समझाऊँगी—बुझाऊँगी। हर तरह से आपका हुक्म मानूँगी। अल्लाह ने चाहा महमूद को मजबूर कर ले जाऊँगी आपकी मर्जी के खिलाफ़ कोई काम न करे। आप भैया को घर से न निकालें। अभी आप गुस्से में हैं। ऐसा कह रहे हैं। बाद में आपको अपने किये पर अफ़सोस होगा।'

'मुझे काम कर डालने के बाद अफ़सोस नहीं होता। मैं लोहे का बना हूँ। इनको मेरे साथ रहना है तो दूसरा चारा नहीं। मेरे घर पर काली छाया मँडरा रही है। तुम लोग दूर कर सकते हो। महमूद और आरती को समझाओ। रास्ते पर लाओ। वर्ना तुम कोई सुखी न रह सकोगे। मैं मरकर भी तुम्हें न छोड़ूँगा। मेरी प्रतिहिंसा की आग जलती रहेगी जब तक तुम उसमें भस्म होकर क्षार न हो जाओगे!'

'क्या कहा शम्मी! महमूद को समझाओगी? कोई किसी के समझाने से समझा है? यही इन्सान अपने से मजबूर हो जाता है। तुम बाबूजी की धमकियों में आ गईं। मेरे रहने न रहने से क्या होता है? मैं खुद इतने अपमान के बाद यहाँ न रहूँगा। अच्छी घौंस है? गोया यह खाना और कपड़ा आप अपनी फर्माबरदारी की रिश्वत देते हैं। मैं बाज़ आया।'

'मैं हाथ जोड़ती हूँ। मेरी बात न टालो। तुम कहीं न जाओ। क्यों हम अभागों के लिये मुसीबत झेलते हो। तुम यहाँ से चले जाओगे तो किस भरोसे रहूँगी? महमूद का सहारा क्या? तुम मेरे घर हफ्तों नहीं आते—महीनों नहीं आते। तुम्हारे पास रहने का अहसास मेरे लिये बहुत है। अम्मा, भाभी, बच्चों का ख्याल करो। चाचा की तरफ देखो। गुस्से में वे ऐसी वैसी बात कह देते हैं। क्या यह माथने हैं तुम सचमुच चले जाओ। यह सरासर जुल्म है भैया! आरती तो

जा रही है। तुम भी हम लोगों को रुला कर चल दोगे !'

ठाकुर साहब ने जूते पहनते हुए कहा—'मैं जाता हूँ शमीम ! तुमने जो वायदा किया है उसे पूरा करना। अपने भाई की खैरियत चाहना तो। इनके दिमाग आसमान पर हैं। ठोकरें खाँयगे रास्ते पर आ जाँयगे। लेकिन महमूद मुझसे दुश्मनी न ले—यह जरूर चाहता हूँ। मैंने परवरिश की है। मेरे साथ कम से कम उसे इन्सानियत का बर्ताव करना चाहिये। उसे अपना इरादा छोड़ना होगा। आरती को मेरी पसन्द के लड़के के साथ शादी करने पर मजबूर करना होगा। सच्ची मुहब्बत की पहचान ऐसे मौके पर मिसाल से होती है। उसे आरती से मुहब्बत है। उसके भले बुरे का पहले ख्याल होना चाहिये। जिस मुहब्बत में कुरबानी नहीं वह मुहब्बत नहीं।'

'सचमुच मुहब्बत की पहचान मौके पर होती है कमजोर होती है टूट जाती है। आरती और महमूद की मोहब्बत ! मुझे कतई उम्मीद नहीं इन बातो का असर उस पर पड़ेगा।'

ठाकुर साहब नफ़रत की निगाह जमीन पर बैठे बलराज की ओर फेंकते चले गये। शमीम जीने तक पहुँचाने गई। ठाकुर साहब ने मुड़ कर देखा भी नहीं। तने हुए चले गये। भय और दुश्चिन्ता से पथराई शमीम लौट कर कमरे में आई। बलराज जमीन पर आँखें बन्द किये लेटा था। शमीम ने कहा—'क्या ग़जब करते हो भैया ! चारपाई बिछी है ! आराम से लेट जाओ। यह भाभी का नहीं मेरा कमरा है। बहन के कमरे में तकल्लुफ़ कैसा ? उठो ! मुझे शरमिन्दा न करो। देखो ! मैं खड़ी हूँ। कौन है यहाँ ? भैया के मुँह हाथ धुलाने का सामान कर। बहुत थक गये हो। सिर में दर्द हो रहा है ? कहती कहती शमीम संकोचपूर्वक सिर के पास हाथ ले गई—फिर वापस ले आई।

'नहीं बहन ! सिर में दर्द नहीं। समझ में नहीं आता बाबूजी

क्या करने पर तुले हैं। पूछो आरती के पीछे पीछे यहाँ आने की क्या जरूरत थी ? तुम्हें भरा तमंचा दिखाया होगा ठकुरई की बातें की होंगी ! पुरुष होकर स्त्री के सामने ऐसी बातें करना मुझे सामाजिक कर्तव्य और सहानुभूति के ख्याल से छोटा लगता है। सब देखते देखते सुनते सुनते ऊब गया हूँ। जल्द से जल्द घर छोड़कर भाग जाना चाहता हूँ। शीला अपनी हठ पर है। जब इन लोगों ने सामान निकाल कर फेंक दिया तब जाने से क्या लाभ होगा ! इज्ज़त आबरू लिये चुपचाप घर से निकल चलें।'

शमीम को लच्छन खराब नज़र आते थे। महमूद के हित में भैया का गाँव में रहना ज़रूरी है। ऐसी आग चारो ओर लगी है ये जाने को कह रहे हैं ! शमीम का दिल जुबान पर आने को अकुला रहा है। वह समझ नहीं पाती क्या होने जा रहा है। अपनी क्षति का अनुमान नहीं लगा पाती। अनुभव करने का सामर्थ्य अपने में नहीं पाती। उसके चलने की—जीवन में आगे बढ़ने की एक पटरी निश्चित हो गई है। आज उसे लगा मेघाच्छन्न आकाश के प्रकाशहीन साँयकाल में वह उड़ती जाती है। उड़ती जाती है अकेली और विवश···अपनी उड़ान अपना स्थान पा लेने के लिये विह्वल। उड़ते उड़ते चलते चलते सहसा उसके पंख टूट गये···वह छटपटा रही है·····छटपटाते छटपटाते गिर रही है ··गिरते गिरते छटपटा रही है। उस पटरी से इधर उधर हो जाने का संकोच कैसा घना और दृढ़ है। माना···वह अपने घर की परिधि में घिरी है। उसके पति की आदरपूर्ण स्मृति उसकी सत्ता पर प्रातःकालीन शारदीय धूप की तरह छाई रहती है जिसके सामने अन्धकार.....लेकिन भैया केवल याद आने की चीज़ है। देखने समझ पाने की सीमा से परे। केवल बैठे बैठे सपना देखने पूजा ही पूजा कर पाने के भैया हैं। शमीम के लिये अपने को बहन समझते हुए भी भैया की सुधि में एक क्षीण लज्जा से और हसीन हो जाना

क्यों इतना प्रिय लगता है ? क्यों वह जब तब भैया के लिये ऐसे आग्रह से भर जाती है जो उसके लिये असह्य हो उठता है। भैया एक बार गये तो उनका आना मुश्किल है। यह मुश्किल उसे कितना वीरान न कर देगी ! बोली—'तुम चले गये तो मैं चली जाऊँगी। महमूद गया सा है। तुम्हारे जाने पर मेरा वह हाल होगा जो मन के दो टुकड़े हो जाने····· फिर अलग अलग कूटे जाने पर होता है। उठो ! चारपाई पर लेट जाओ···तब बात करो। तुम नहीं उठते। ज़ोहरा को भेजकर भाभी को बुलवाती हूँ। तुम जमीन पर पड़े हो·····मुझसे नहीं देखा जाता·····'

'क्या कर लेगी शीला आकर ? हँसी मज़ाक की कुमकुमेबाज़ी शुरू हो जायगी। फब्तियाँ कस कस कर हाल बेहाल कर देगी। लो ! चारपाई पर लेट गया। अब खुश हो ! लाओ पानी तौलिया—धो लूँ मुँह हाथ नाक कान। धूल के घरौंदे बन गये हैं पूरे जिस्म पर। आज न शरबत है—न पान। क्या हो गया है तुम्हें ! प्यास से दम सूख रहा है।'

शमीम ने लपक कर, आती हुई नौकरानी से पानी का लोटा, तौलिया साबुन लेकर कहा—'खफ़ा न हो फ़र्माने की देर है। सब आ गया। शरबत पान ले आ। दे न करना ! अच्छा तू बैठ। मैं जाती हूँ। भैया को इतमीनान न होगा।'

'तुम कहीं न जाओ। यहीं बैठो·····आगे की बात सोचो। इस मुश्किल का हल मुझे तुम्हें निकालना है। आज तुम्हें मालूम हो गयी मामले की ठीक कैफ़ियत। उठते बैठते मुझे दोष देती थीं·····भला-बुरा कहती थीं।'

'तुम कभी नाराज़ तो नहीं हुए।' तुम लोगों ने शुरू से इतनी छूट दे रक्खी है—जीभ निगोड़ी मानती नहीं। आज अपना सारा कहा वापस लेती हूँ। तुमने हम लोगों के लिये

कितनी लड़ाई लड़ी होगी ! मेरी समझ में आ रहा है ।'

'तुम्हारी बात पर नाराज़ हो जाने की अवस्था गुज़र गई । अब तुम्हारी बात पर गुस्सा न आकर तुम्हारे गुस्से पर प्यार आता है । प्रतिमा कह रही थी·····अच्छा शम्मी ! मैं चलता हूँ । प्रतिमा घर पर बैठी होगी ! शीला से कह आया था जब तक न आऊँ प्रतिमा को जाने न देना ! आज की रात हम सो न सकेंगे । आरती कल सुबह जा रही है ।·····मुझे जाने दो ।'

'शरबत पीलो । रुक जाओ चन्द मिनट । मैं तुम्हें रोकती नहीं । रोकने की कूवत अपने में नहीं पाती । जो खुद तुमने माँगा है उसे पीते जाओ । प्रतिमादेवी कहीं चली न जायँगी ; घर पर बैठी रहेंगी । रोज रोज आते हो भैया ! आया करो तो जल्दी जाने की न कहा करो । महमूद नहीं वर्ना तुम इतने जल्द जा सकते थे ? मेरे पास बात करने में क्या लुत्फ़ मिलेगा ? घर का पचड़ा तुम्हारे सामने जब देखो तब छेड़ देती हूँ ।'

'मैं बैठता शम्मी·····मगर जरूरी काम करने हैं । आरती ने ठीक किया बाबूजी के सामने न पड़ कर फौरन लौट गई । गुस्से में इन्सान—फिर बूढ़ा इन्सान क्या नहीं कर डालता ? तेरी सहनशीलता, शीतलता पर मुझे विश्वास था । तू बाबूजी के उकसाने पर भी क्रोधित न होगी । तेरा गुस्सा मुझ पर आता है । पर आरती ! वह तुझ सी ग़मख़ोर नहीं । वह पानी भरे कटोरे जैसी है जो उँगली मारने से ही पूरा का पूरा हिल उठता है । शर्बत आ गया । ला पीलूँ·····पान खाकर चल दूँ । एँ ! तुम रो रही हो—नज़दीक आओ । हाँ··· रो रही हो । शम्मी ! यह क्या ! पागलपन न करो । मैं तुम से बिना मिले न जाऊँगा । क्या शीला चली जायगी ! कोई न जायगा । इधर आ ! अब तू न रोयेगी । बैठ चुपचाप !

रोने धोने से कहीं ज़िन्दगी की मंज़िलें हासिल होती हैं !

× × ×

बलराज लौट आये। आरती और प्रतिमा आन्दोलन के 'प्लान' पर बहस कर रही थी। प्रतिमा ने आरती को सब कुछ बता दिया। वर्षों से गिरा, क्रान्ति का माथा एक बार फिर उठाने की पूरी योजना थी। आरती को यह सब ज्ञात न था। महमूद से जब मिलना जुलना होता था तब जानती रहती थी। सुनकर उल्लास और उत्साह की एक पूरी लहर शरीर के एक तार से दूसरे तार तक घूम गई। बोली—'मैं यहाँ रहूँगी नहीं। भैया भाभी तब तक यहाँ रह सकेंगे या नहीं ? आप लोगों ने इतनी बड़ी स्कीम बना डाली। मुझे पता नहीं ! दासता की जन्जीर तो टूटे। कुछ हो तो। वर्षों से आज़ादी की लड़ाई रुकी पड़ी है। चूकने से काम न चलेगा। मैं तो लखनऊ में रहूँगी।'

'क्या हुआ ? वहाँ भी तुम लोग सब करोगे। देश के यौवन का संग्राम है यह ! नौजवानों की लड़ाई है। आन्दोलन सच्चे अर्थ में स्वतंत्रता का आन्दोलन होगा ! यह कृषकों का युद्ध और जुलाहों का विप्लव होगा। इस बार घर घर से मर्द मर्द औरत औरत बच्चा बच्चा निकलेगा। भैया भाभी कोई पीछे न रहेगा। तुम लखनऊ में काम करना। मैं तुमसे वहाँ मिलूँगी। मुमकिन है महमूद वहाँ रहे। तुम लोगों को जो करना है बताये। बहरहाल तुम्हें कुछ न कुछ करते रहना है। ऐसे औरत मर्दों का गिरोह तैयार कर लेना है जो कान्ग्रेस का हुक्म मिलते ही सरकारी सत्ता का नाश करने के लिये जी जान होम कर आन्दोलन में कूद पड़ें। इस बार खाली जेल नहीं जाना। कुछ करके जेल जाना है। यह करना भयंकर हो सकता है।'

'मैं तैयार हूँ दीदी !' आरती ने सबल कंठ से कहा। महमूद की चुम्बन लेती हुई भीमकाय बरसाती बादल सी मूर्ति उसके सामने घूमी ! 'मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ। महमूद का रास्ता मेरा रास्ता है। देश के नवयुवकों नवयुवतियों का रास्ता है। उस पर चल

कर दमन के फूल चुनने होंगे। महमूद लखनऊ में होंगे तो मैं पता लगाकर मिलूँगी—सब मालूम कर लूँगी। वहाँ की कान्ग्रेस कमिटी ने भी 'प्लान' बनाया होगा! तुमसे आज मुलाकात न होती तो काहे को सब जान पाती। भाभी को तो बता दिया होगा। भैया अब वहाँ रहेंगे! खूब मज़ा रहेगा।'

सन्यासिनी ने उत्साहप्रद स्वर में कहा—'जैसा मैंने समझा सुना है हमारा काम शासन व्यवस्था को बिलकुल ठप्प कर देना है। हिंसा अहिंसा का सवाल गान्धीजी ने सामने रक्खा तो लोग न मानेंगे। हाँ! हिंसा हमारा लक्ष्य नहीं साधन मात्र होना चाहिये। हिंसा के लिये हम हिंसा न करेंगे। हम खुल्लमखुल्ला सरकार के साथ असहयोग का ऐलान करेंगे। विद्यार्थी हमारी आवाज पर पढ़ना छोड़ देंगे। वकील हमारे आह्वान पर अदालतें छोड़ देंगे। सरकारी कर्मचारी दफ्तर छोड़कर बाहर चले आयेंगे। मिलें बन्द होंगी। कारखाने बन्द हो जाँयगे। रेलवे फैक्टरियाँ—लड़ाई के लिये टनों सामान तैयार करने वाली 'वर्क्सशाप्स' बन्द हो जाँयगी। हम सरकार के डाक विभाग को नाकाम कर अपना अलग विभाग खोलेंगे। कम्यूनिस्टों के बहकाने से क्या होता है? मज़दूरों किसानों को हमारी बात माननी होगी। एक महीने भी हम आन्दोलन चला ले गये तो सरकार दहल जायगी। उसे विवश होकर हमारी माँगें माननी होंगी।'

शीला ने कहा—'मैं तुम्हारे साथ दौड़ न सकूँगी। तुम हवा की तरह उड़ती रहती हो। तुम्हारे भैया जोश में आकर कह जाँय—काम उनसे न होगा। और मुहब्बत की सताई आरती! इससे भी ज्यादा उम्मीद न करो।'

'बिलकुल गलत कहती हो।' आरती ने उत्साह से कहा—'ऐश करते करते तुम्हारा दिल कमजोर पड़ गया है। मेरे लिये कोई और काम अब नहीं रह गया। महमूद की मुहब्बत मुझे देशभक्ति का उपहार और आदेश बनकर मिली है। अपने को जानती

हूँ इसलिये भैया को भी जानती हूँ। जब हमारी जनता पर गोलियाँ चलेंगी—लाठी चार्ज होंगे तब वे दर्शन की किताबें लिये न बैठे रहेंगे। न तुम्हारी मुसाहिबी में मशगूल दिखाई देंगे। वे तब हम लोगों के साथ होंगे। कोई फिलासफी नहीं जो अपने पराधीन देश की स्वतन्त्रता की लड़ाई में कर्तव्य पालन करने की आग न पैदा करे। महमूद एक दफ़े मौलाना आज़ाद का कोई पुराना अग्रलेख सुना रहे थे। उन्होंने उन मुसलमानों को गुनहगार बताया है—पाक रसूल और इस्लाम धर्म की निगाह में—जो हिन्दुस्तान की आज़ादी की लड़ाई में आगे बढ़कर हिस्सा नहीं लेते। कष्ट सहन और आत्मबलिदान नहीं करते.....'

'फिर महमूद का नाम! गोया फिलासफर वह तुमसे बड़ा है! महमूद की हर बात इसके लिये वेदवाक्य है। रानी! मैं अपनी बात वापस लेती हूँ। तुम आगे बढ़कर—झंडा लेकर चलोगी मैं मान लेती हूँ। तुम्हारे भैया ने जवाब नहीं दिया। हमलोग बूढ़े हुए। तुम्हारा जैसा जोशख़रोश कहाँ से लायें?'

'जहाँ से यह आन्धी जैसी जवानी लायी हो भाभी! वहीं मिलता है। भैया इस बार पीछे नहीं हट सकते। तुम तब शर्मा-शर्मी कुछ करोगी। प्रतिमा दीदी का प्रवचन खाली न जायगा। न होगा हड़ताल के समय मज़दूरों के परिवार के लिये रसद और चन्दा इकट्ठा करोगी। यहाँ से निकलो तो! यहाँ क्या रक्खा है! आत्मा और ईमान की गुलामी। रोटियों और कोठी, नौकर, आराम के लिये जीवन के सबसे बड़े विवेक की हत्या!'

'हिन्दू दर्शन का मैं गहरा विद्यार्थी रहा हूँ। ज्यों ज्यों मेरी शंकायें बढ़ती गईं त्यों त्यों मेरा विश्वास बढ़ता गया। परलोक की चाहे तुम यहाँ जितनी बात कर लो। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को बदलने—समाजगत शोषण का अन्त करने की तुमने कोई योजना बनाई और धर्म, धार्मिकों ने तुम्हारा साथ छोड़ा! मैं बहुत से मन्दिर के पुजारियों को जानता हूँ। पूजा करते करते ईश्वर-

मय हो जाते हैं। पर ऊँची से ऊँची ब्याज की दर पर अपना रुपया दे गरीब मजदूरों किसानों का खून चूसते हैं! कर्ज लेने वाले की उम्र बीत जाती है केवल ब्याज पर गुलामी और शारीरिक सेवा करते करते! यह सब क्या है? धर्म ने अब तक बराबर पूँजीवाद और सामाजिक अगति की शक्तियों का साथ दिया है। हिन्दू धर्म वैज्ञानिक होने का दम भरता है तो क्यों उसके भीतर अछूतता जैसी अमानवीय संस्था पनपी? क्यों न उसने मानव मानव की समानता पर जोर दिया? आज हम गुलाम हैं। जब हमारा देश और संस्कृति उन्नति के शिखर पर थी तब क्यों हमारे समाज में अछूत थे? धर्म हमेशा उस लोक को सुधारने की बात करता है। इस लोक को—इस समय के शोषण-चक्र को बदलने की चेष्टा तुमने की और धर्म ने उड़ जाने के लिए पंख फड़फड़ाये। मैं दार्शनिक हूँ तो क्या मुझे राजनैतिक स्वतन्त्रता और अधिकार की चाह नहीं? मुझे यह कैसे भूले—मेरा देश विदेशी शासन-सत्ता के निर्मम शिकंजे में कसा कराह रहा है। उस सत्ता को समाप्त करने की कोई देशव्यापी योजना बनती है तो क्या मैं उससे विमुख रहूँगा। मैं गीता का विद्यार्थी हूँ।'

आरती ने ताली बजाते हुए कहा—'हियर हियर! भैया ने मुँहतोड़ जवाब दिया। कहो भाभीजी! तुम्हारा अब क्या हिसाब किताब रहेगा?'

'यह मुझसे हटकर कहाँ जा सकती है? बँधी हैं ये मेरी ज़िन्दगी से। जहाँ मैं वहाँ ये। आरती! तुम अपनी भाभी को पहचान नहीं पाईं। इनकी जवानी अभी गई नहीं है—केवल सो गई है। उसे जागते देर न लगेगी। तुम देखोगी ये मेरे पीछे आ रही हैं। भले ही मैंने काँटों का रास्ता चुना हो। ये भी दिल रखती हैं। शौहर और बच्चों की दुनिया के बाहर उस दिल की हदें हैं। मैंने अभी कहा न, पीड़ित संसार को सब तरह सुखी और तृप्त करने का सुख स्वप्न कौन देखता है? आनन्द भोग में दिन

रात मग्न रहने वाले अमीर, धर्माचार्य, सरकार या अधिकारी लोग इस प्रश्न की ओर कभी ध्यान देते हैं? क्या उन्हें अपने स्वार्थों से इतनी फुर्सत मिलती है वे पीड़ितों और दलितों—शोषितों और गुलामों की दशा सुधारने के लिये कुछ कर सकें या सोच सकें? इसके लिये सुख ऐश्वर्य पर लात मारना पड़ता है। महलों का मोह छोड़ कर जेलखाना और ज़िलावतनी झेलनी पड़ती हैं। हम लोग अब तक अपने सुख को लेकर मस्त थे। अब मुझे शीला दोनों को अपने पिछले जीवन को फ़ना कर उसकी यादगार मिटानी है। तुम यहाँ रहोगी या मेरे साथ चलोगी? मैं यहाँ रहना नहीं चाहता। आरती जा रही है। हम लोग भी रास्ता पकड़ें। जाना पड़ेगा। बाबूजी से कितना कहलाओगी?'

'मैं तैयार हूँ'—शीला ने हँसते हुए कहा—'जो तुम सब करोगे वह मैं करूँगी। आज दिल दहलता है। तबियत हिचकती है। पैर डगमगाते हैं। आँखें भविष्य की ओर देखने में काँपती है। रोज यह कैफ़ियत न रहेगी।'

'कोई बात नहीं। दिल एक बार उनका भी काँप जाता है—काँपा है—जो अपनी देह में आग लगा कर दुश्मन के बमों पर जा गिरे हैं। जिन्होंने चलती—गोले उगलती तोपों के सामने जाकर कील ठोंक दी हैं। हँसते हँसते फाँसी के तख्ते पर झूल गये हैं। यह स्वाभाविक है शीला! आदमी अपने मनोबल को अधिकाधिक पैना बनाये। उसे टूटने न दे। आज से यह हमारी कोशिश होगी। हमें तकलीफें होगीं। हमारी गति में शिथिलता भी आयगी। पर हम अपनी धुन से न डिगेंगे। तू मेरी ओर देखना—मैं तेरी ओर देखूँगा। हम अपने पथ से दूर न होंगे।'

प्रतिमा ने कहा—'आज भैया ने माथे का मुकुट उतार कर फेंक दिया है। बैरागी बनकर राम वन की ओर चल पड़े हैं। उनकी जानकी अब कहाँ जाँय। साथ में वे स्नेह-शिखा बनकर जलेंगी।

नौ

महमूद पाँच अगस्त को गाँव लौट आया। सारी बात मालूम हुई। बलराज शीला गाँव में थे। शमीम के कहने के माफ़िक बिना महमूद से मिले बलराज जाना न चाहते थे। आरती जा चुकी थी। प्रतिमा गाँव में न थी। शमीम ने रोते रोते पूरा किस्सा बताया। महमूद ने सुनकर भरी भरी नज़र से चारो ओर देखा। पूछा—'फिर !'

फिर क्या ! भरी पिस्तौल लिये तेरी तलाश में घूमते हैं। उधर मत जाना। भैया से मिलना हो यह बुलवा लेना !'

'पागल हो गई हो बाज़ो ! मुझे शूट करेंगे खुद बच जाँयगे ? घामड़ नहीं है। सब जानते हैं। गुस्से में आदमी जो कह डालता है वह सब करने लगे तो हो चुका।'

'मेरी जान सूख रही है उस दिन से। आरती के जाने के बाद और जल रहे होंगे। भैया भाभी जाने पर तुले हैं। परसों आये थे तो बतला रहे थे। भाभी बिलकुल देवी हैं। अभी चाचा साहब को मनाने और समझा लेने की आशा करती हैं। मैं नाउम्मीद हूँ। शादी...तेरी शादी का क्या होगा ?'

'शादी की बात न करो ! अभी मुझे शादी करने की फ़ुर्सत नहीं—न उसका वक्त आया। आरती इसे जानती है। भैया भी जान गये होंगे। मेरे सिर पर दूसरा काम है। उसमें शादी नहीं बरबादी की तैयारी है।'

'क्या बकते हो ! बरबादी तुम्हारे दुश्मन की हो।'

इसीलिये पहले अपनी बर्बादी करनी होगी। रात हो गई। भैया को बुलवाना नामुनासिब है। मैं थका हूँ। कल देखा जायगा। तुम बेफ़िक्र रहो। मेरी जिन्दगी लम्बी है। बाल बाँका न होगा। अपनी हिफ़ाजत और

बचत करने की ताकत मेरी बाजुओं में है। मैं देख लूँगा।'

रात को महमूद के सामने पिछला जीवन उमड़ उमड़ कर घूमने लगा! सवाल यह नहीं वह आरती को छोड़ सकता है या नहीं। लेकिन आरती ने शादी की ज़िद की तब क्या होगा? चाचा साहब की बात भी ठीक है! इश्क की पहचान—प्रेम के जज़बात की परख ऐसे मौके पर होती है। मुझे क्या अधिकार है मैं आरती के वालदेन की इच्छा के खिलाफ़ उससे शादी करूँ। उसकी ज़िन्दगी मुसीबत में डालूँ। मुहब्बत कुर्बानी की लपट है। उसके भीतर पाने की हविस कैसी? वह देना जानती है। उसके सामने विवाह मिलन की क्षणिकता और अमर्यादा का स्थान कहाँ? वह एक तप है। एक इबादत है—पूजा है। आरती यह सब कहाँ समझती है? उसे समझाना नामुमकिन है। महमूद उससे बहस में पनाह माँगता है। जब वह कहेगी—कायरता दिखानी थी—ऐन वख्त पर हार माननी थी तो पहले क्यों धोखा दिया। मेरे पास उस वख्त क्या जबाब होगा? आरती के सामने मुँह ऊपर उठा सकूँगा! भैया भाभी—प्रतिमा शमीम सब क्या समझेंगे? क्या यह मेरी कायरता न होगी? मुहब्बत के साथ गद्दारी—प्रेम के साथ विश्वासघात न होगा? आरती को मैं कैसे मजबूर करूँ वह विक्रमसिंह के साथ शादी करे। मेरे इरादों की पाकीजगी कौन देखेगा? मेरी हसरत की मौत के तरन्नुम को कौन सुनेगा? दुनिया मुझे गलत समझेगी। आरती मुझे गलत समझेगी। मेरा खुदा मुझे गलत समझेगा! आरती का मोह भी वह कैसे छोड़े। उसने कोई गुनाह नहीं किया! फरिश्तों के सामने वह अपनी मोहब्बत की गहराइयों और ऊँचाइयों का इज़हार कर सकता है। उन्होंने मेरी परवरिश की है। मेरे साथ सलूकात किये हैं। पर आरती की मेरी मुहब्बत से इन बातों की निस्बत? यहाँ मेरी आज़ादी कौन छीन सकता है?

सारी रात यह बातें महमूद के दिमाग में उबाल भरती रहीं।

उसी छत के सामने दूरी पर वह छत है जहाँ खड़ी खड़ी आरती उसकी रागनी घंटों सुना करती है। महमूद विकल होकर मुन्डेर के पास खड़ा हो गया। आरती की सूनी छत चाँदनी में सफेद साड़ी पहने विधवा सी खड़ी सिर धुन रही थी। ऊषा के समय दूर पहाड़ पर बजती बीन की खिंची वेदना जैसे चाँदनी में नहाई सूनी सफेद छत पर बरसात की इस उजेली रात में पवन को अचंचल किये दे रही है। महमूद ने देखा—छत के चारो ओर घूमती नीरवता न जाने कितने वर्षों तक सुनी प्रेम की वंशी का मर्मभेदी आग्रह छलका रही है। भैया, भाभी इस घर से चले जायँगे तो क्या होगा? कितना बेजान, कुरूप हो जायगा तब! सामने दूसरी ओर प्रतिमा की कुटिया सुनसान खड़ी थी। जैसे उदासी का एक लम्बा तार वहाँ से यहाँ तक फैला हो। महमूद कोशिश करने पर भी गा नहीं पाता। छत पर बेचैनी से लगातार घूम रहा है। इस निराशा और नाउम्मीदी का कहीं किनारा नहीं मिलता। आरती लखनऊ गई होगी। और कहाँ जायगी? भाई भाभी भी वहाँ जायँगे। एक बार वह वहाँ जायगा? नौ अगस्त के बाद क्या होगा? सरकार का दमन का कार्यक्रम तैयार है। वह केवल कान्ग्रेस के निर्णय की प्रतीक्षा कर रही है। आन्दोलन के टलने का कोई रूप नहीं नज़र आता। वह अपना जिला छोड़कर ऐसे नाज़ुक अवसर पर कहीं नहीं जा सकता। आगे बढ़कर नेतृत्व करना है। अपनी लगाई आग में भस्म होना है। महमूद की आँख के सामने तस्वीर का दूसरा पहलू आगया। ज्यों ज्यों काँग्रेस कार्यकारिणी के बम्बई अधिवेशन की तारीख निकट आती जाती थी त्यों त्यों राजनैतिक सनसनी बढ़ती जाती है। केवल शहरों में नहीं देहातों में भी विद्रोही जनता संघर्ष के लिये तैयार बैठी है। लोगों के सामने कुछ साफ नहीं। कुछ करना है इतना वे जानते हैं। नेताओं का कथन है यह कुछ भयानक से भयानक काम हो सकता है। चारो ओर बँधी बँधी रुँधी रुँधी तैयारी नज़र आती

है। देश भर के कान बम्बई से आने वाले समाचार की ओर लगे हैं। काँग्रेस की माँग सरकार द्वारा पूरी न की जायगी यह तय है। लेकिन काँग्रेस ने असहयोग और विद्रोह का प्रस्ताव पास किया तो आग लग जायगी। उसे अपने पर शर्म आई। जब देश उत्तेजना के बारूदखाना जैसा विध्वंस-गृह बन रहा है तब वह आज़ादी के युद्ध की बात न सोचकर यह सब क्या सोच रहा है? उसके सामने पूरे युद्ध का प्लान है। जिले की युद्धसमिति द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट है। उसे अमली रूप देने का पवित्र भार भी। उसे जो सोचना चाहिए वह क्यों नहीं सोच रहा—सोच पा रहा? क्यों वह आरती की याद में उलझा जा रहा है? इन तीन चार दिनों में उसे क्या करना है? लेकिन शमीम ने आज कौन सोई आग जगा दी है? चाचा चाची के अहसान फिर सिर पर नाचने लगे हैं। उन लोगों ने स्वप्न में महमूद से ऐसी आशा न की होगी। महमूद ने उनकी शराफ़त और भाईचारे का कैसा बदला दिया। कहते होंगे—आख़िर मुसलमान है। जिस पत्तल में खाता है उस में छेद करता है। महमूद के दिल में कितना बड़ा छेद हो गया है इसे वे लोग नहीं देखते। महमूद आरती को नहीं छोड़ सकता। आरती के बिना वह अधूरा है—उसकी राष्ट्रपूजा अधूरी है—उसकी जिन्दगी की वहशत अधूरी है। महमूद का होना आरती के होने को लेकर है। आरती उसके जीवन में सबसे पहले आकर भी सबसे ताज़ी स्मृति है। जो जीव की सिद्धि रही है वही मौत की सिद्धि बनेगी.....हृदय में सहसा विजय का अंकुर निकल आया। मेरे जो कुछ बनने में आरती टूट रही है वह मुझे न चाहिए। मुझे अपनी क्षति का अनुमान है। अनुभव भी होना शुरू हो गया है। वह अभी मरा नहीं—जीता है। बुझा नहीं—जल रहा है। 'नहीं हैं' न होकर 'है'। वह आरती को लेकर है। उसे याद आ रहा था। एक बार उसने आरती को कई ग़ज़लें गाकर सुनाई थीं। तब आरती से भी उसने गाने का

अनुरोध किया था। आरती के कमरे की बात है यह। आरती ने मेघाच्छन्न आकाश—प्रकाशहीन साँयकाल की तरफ देखकर कहा था—मैं गाती नहीं। मैं सुनने की शौकीन हूँ। मगर मैं सुनना चाहता हूँ। गाओ न आरती। आओ! दोनों मिलकर गायें। आरती ने हँसकर कहा था—'नहीं महमूद! मैं गा ही नहीं सकती। गाता वह है जो विघ्नों के सहारे बहता है। पीड़ा की नींव पर अपना घर खड़ा करता है। तुममें ये कूवत हैं। तुम गाओ! मैं कमज़ोर हूँ—मैं घुनूँगी। मुझे आज्ञा दो। मैं तुम्हें याद करूँ। तुम्हारे स्वरों की छायाओं के साथ खेल सकूँ। बड़ी निकम्मी हूँ महमूद! किसी तरह तुम्हें नहीं रिझा सकती। .....वह उस दिन गाता चला गया था। आज गीत की अधूरी कड़ी सी कोमल वह आरती उसके लिए घर द्वार छोड़कर जोगनी बन बाहर निकल गई है वह। अपने घर की परिधि में घिरा खड़ा है। कौन अर्थ—कौन ज्वाला आरती ने उसके गीतों में पा ली? आत्मविसर्जन की कौन ऊर्ध्वमुखी कहानी आरती की आन्तरिक प्रेरणा ने उसके गीतों में पकड़ ली? महमूद आज आरती के आगे—उसकी याद के आगे—उसकी लवलीन कर देने वाली, रहस्यमय भावनाभरी यौवन की गहरी—हट हट कर और सुदृढ़ सूत्र में जुड़ने वाली ललकार के सामने नत है। आरती के व्यक्तित्व की पुकार—उसके लिए विलास की मधुमादकता में शराबोर जीवन ठुकराकर त्याग की जलती शिखा सी आगे बढ़ जाने वाली, बेला के स्वर के घनत्व की मूर्ति सी आरती के विद्रोह की ललकार उसके सिर माथे पर! अपने को इस विश्वास के योग्य बनावेगा। अपने जीवन के बगीचे में वह पवित्रतम यौवन की यज्ञशिखा सुलगावेगा। आरती के लिए सब कुछ करेगा। आज वे अलग हैं—खोये हुये हैं। पूजा के भाव हृदय में जागृत कर देने वाली आरती की मुस्कान-भरी गुनगुनाहट आज उसे अन्तःकरण का मूक आशीर्वाद नहीं देती।

कहीं निश्चिन्त बैठी धीरगति से सपनों का पीछा कर रही होगी। उसकी स्वप्निल पुरख्वाब मुस्कान देखे अरसा हो गया। जब मिलूँगा तो फूलों से लाद दूँगा। तब वह एक क्षीण—अत्यन्त कोमल लज्जा के स्पर्श से अधिक सुन्दर हो उठेगी। मैं आइने में अपना मुँह देखने लगूँगा। उसकी मुस्कानों की बेतरतीब लड़ी को अपनी आँखों के डोरे में गूँथ लूँगा। वह कहेगी न। मैं कहूँगा हाँ हाँ चलो—मुस्कातीं चलो! अपने सारे सौंदर्य को घेरे हुए।

महमूद ने आरती को कितनी बार नहीं समझाया है। किस प्रकार उसे अपने से दूर रखने की कोशिश की है! लेकिन आरती अज्ञात आकर्षण से बदल रही थी। महमूद ने यह सब किया अपनी तबियत से—विभिन्न भावनाओं के समकालीन विकास की आन्तरिक प्रेरणा से प्रेरित होकर। अपनी संपूर्णता के वरदान से अनुप्राणित होकर। वही बात उससे कहलाई जा रही है। उस व्यक्ति द्वारा वह यह सब कहने के लिये बाध्य किया जा रहा है जो इसके व्यंजनीय समर्पण को समझते हुए भी उसे अपने रास्ते से हटा देना चाहता है। बरसों से अंकुरित उसके किस अज्ञात और ज्ञात भाव पर चोट की जा रही है!

महमूद ने तय कर लिया है। वह आरती से कुछ न कहेगा। आरती उसके लिये इतना कर सकती है तो क्या वह दबेगा! जिस पिता का लिहाज़ आरती ने न किया उसकी सलाह पर चलकर वह अपने सबसे प्यारे सपने का खून करेगा! आरती को वह कैसे विक्रमसिंह आई० पी० के साथ विवाह करने को कहे। चाचा साहब हर तरह से यह कोशिश कर रहे हैं कि आरती उनके पसन्द किये लड़के से शादी करले। क्या खूब! सोचा होगा—भावुक ऊँचे आदर्शवाद का आदमी है। यह चाल चलो—मुमकिन है आदर्श के फिटमें पवित्र त्यागनिष्ठ प्रेम की उन्मादकता में पड़ कर मेरे मन की कह दे। प्रेम की ओर से 'डिस्इलूमन्ड' हो जाने पर लाचा

हो जायगी। उसे अपने क़ौल का ख्याल है। आरती अगर इतनी लड़ाई लड़ सकती हैं—अपने माता पिता सगे सम्बन्धियों को छोड़ कर उसके लिये रास्ते की फ़कीर बन सकती है तो वह पुराने सलूकों की यादगार में उलझा रहेगा? सब उसे अपने रास्ते से गुमराह करने की चाल है। आरती को छोड़ना उसके लिये असंभव है। आरती को पाकर उसने अपने जीवन का खोया अर्थ पाया है। बिछुड़ी संगति उसे उसमें मिली है। आरती का स्मरण आने से वह फिर सिहर उठा। मानसिक सपने की मूर्तिमान निधि! उसकी आँखों में चमकता भक्ति-भाव जो उसके पीले चेहरे को और सुन्दर बना देता है। उसकी हृदय की थाली के सारे के सारे पूजा के फूल अनजाने पृथ्वी पर गिर बिखर जाते हैं! आरती को सामने बिठाकर वह गाता है। उसका सारा संगीत—सारा तरन्नुम आरती के भीतर समाकर—उसका होकर—उसके रस का एक उल्लसित आवेग बन कर—उसके चेहरे से फूट निकलता है। उसका चेहरा ऐसा पूर्ण संगीतमय हो जाता है—मानों युग युग से पावस पवन में संचित क्षुब्ध पपीहों का आर्द्र स्वर एक अतृप्ति के लालस आवेग में जाग पड़ता हो। यह क्यों होता है? किस अलौकिक प्रकाश की नहरें उसके शरीर से एक साथ उछलती बह पड़ती हैं? यह साधारण उपलब्धि है?

रात भीगती जा रही है। सामने छत पर शमीम ज़ोहरा पड़ी सो रही हैं। महमूद को नींद नहीं आ रही। उसे लगता है उसका सम्पूर्ण शरीर हथकड़ियों से बँधा है। आत्मा पर बिजलियाँ काँप रही हैं। मन में बिरहनियों की आँसूधार की तरह पहाड़ी झरने फूट रहे हैं। कैसा मन्तोषमय भराव है! आत्मा को एक सिरे से दूसरे सिरे तक जगा देता है। किस के वीर और करुण आशीर्वाद की छाँह उस पर पारलौकिक भाव की तरह फैल जाती है? एक मूढ़ वेदना के प्रतिवाद सी ..अभियोग सी...प्रकटीकरण और स्थिरीकरण सी! जीवन के विह्वलतम अनुनय सी! आरती...आरती...

महमूद के सारे संघर्ष का अन्त हो गया। वह संसार में किसी की परवाह नहीं करता। उसकी भावुकता—चाचा साहब के प्रति जीवनव्यापी कृतज्ञता उसे रोक नहीं सकती। भरी पिस्तौल लेकर आज घूमने वाला वृद्ध राजपूत एक दिन महमूद और शमीम के लिये प्रेम की लहर का शिखर बन गया था। साकार स्नेह और अपनत्व जो देखने सुनने से परे अति विशाल था! मानवता की महान आत्मा को घेरने वाला! महमूद सदा को भूल जायगा। अकृतज्ञता भी कभी जीवन के लिये वरदान बन जाती है। परिपूर्ति का कृतित्व बन कर उसकी परिधि विस्तृत और विशाल हो जाती है। फिर भैया भाभी का सहयोग उसे है। क्यों किसी की चिन्ता हो? उसकी बहन ने कभी एक शब्द उससे इस सम्बन्ध में न कहा। मुसलमान परिवारों में सुन्दरी सुशिक्षिता, सुसंस्कृत और सुचीता लड़कियों की कमी नहीं। महमूद का विवाह कहीं भी आसानी से हो सकता है। लेकिन शमीम ने कभी उसे आरती की ओर से विमुख करने वाला एक शब्द न कहा। सदैव उसने महमूद और आरती को समझाया बुझाया है—सहलाया और दुलराया है। जीवन में आकाश के अवाधविस्तार और शरत्कालीन मेघपुन्जों की रहस्यमयी गति को लेकर छाये रहने वाले विषाद के बीच उसने दोनों की प्रेम क्रीड़ा में योग दिया है। स्वयं आत्मविस्मृत होकर प्रतिकूल अवस्थाओं से घिरे अपने एकाकी जीवन को उठा कर ताक पर रख दिया है। भैया भाभी सूनी पहाड़ी—एकाकी आकाश की भाँति निष्कलुष उदार हैं। जीवन की स्वीकृति-मय थकान को उग्र उत्कंठित प्रतीक्षा में बदल देने वाली—पराजय के आच्छादन को काट कर फेंक देने वाली भाभी की अगोचर मूर्ति मानो ललकार रही है—महमूद तुम! तुम आरती को छोड़ दोगे!... महमूद के विचारों तारतम्य एक गहरा झटका खाकर टूट गया!

.....प्रतिमा की झोपड़ी की ओर दृष्टि जाते ही महमूद को याद आ गया—वह किस तूफ़ानी बहिया—क्रान्ति की उत्ताल तरंग के किनारे

खड़ा है! कैसा आन्दोलनकारी समय है! प्राचीन परम्पराओं और दासता की जकड़ने वाली रूढ़ियों के विरुद्ध भयानक विप्लव मचने जा रहा है! उसकी आँख के आगे भीमव्रती वीरों और हुतात्माओं की स्वर्णमयी स्मृतियाँ घूमने लगीं। उनके जीवन का उत्सर्ग न केवल भारतीयों का वरन समस्त मानव जाति का स्वाभाविक अभिमान है। धन और सुख विलास का लोभ, भर्त्सनाओं का भय, प्राणों का दन्ड जिन्हें पथ-भ्रष्ट न कर सका! कैसा होता है उनका हृदय जो खरीदा नहीं जा सकता! इस बार के आन्दोलन में सबको आगे आना होगा और गुलामी की जन्जीरें तोड़ने के लिये अपने बलवान हाथ उठाने होंगे! देश के लाड़लो को फिर प्राण हथेली पर लेकर चलना होगा? मुल्क की आज़ादीपसन्द चेतना के खिलाफ़ शाषन की प्रचन्ड शक्ति अपने सम्पूर्ण सैनिक बल से खड़ी गुरेर रही है। इस पतित गुलामी ने हिन्दुस्तानियों को दुनिया के आगे कैसा कलंकित कर रक्खा है! अन्धकार में भटकते थके हारे मुसाफ़िरों को—आज़ादी के क्लान्त पथिकों को फिर बिजली की चमक मिलने वाली है! बिना आत्मबलिदान के स्वतंत्रता मिलती कब है? आज फिर बलिदान का समय आया है। बलिदान के लिए कालान्तर से जलती हुई जलन चाहिये—असीम संताप चाहिये। एक अमर आशा चाहिये—एक अटूट आदर्श—अनुकरणीय त्याग—रोम रोम में व्याप्त होना चाहिये। देशभक्ति का उन्माद—कट मरने की तीव्र पिपासा—ग़रीब भाइयों को शोषण की—सितम की चक्की में पिसने से बचाने की आग्नेय प्रतिहिंसा! महमूद को याद आ गये किसी नेता के शब्द। सुधार और विप्लव के मध्य कोई माध्यमिक सीढ़ी नहीं। तुम अपने आपको सुधार के झंडे के नीचे खड़ा करो या क्रान्ति की विद्रोहिनी ध्वजा के नीचे। ये कौन है मुट्ठी भर अँगरेज जो भारत के शाषक हैं? ये कैसे शाषक बने? हमारी गरदनों में पराधीनता का फन्दा डाल—हमारी शान-राशि को नष्ट भ्रष्ट कर। हमें पाप पथ का पथिक बनाकर—हमें

हथियारों से वंचित कर ! देश के कितने होनहार युवकों ने अपनी बलि दी है ! स्वतन्त्रता के आह्वान पर कितनों ने अपने जीवन की डोरी काटकर फेंक दी ! स्वतंत्रता को गले लगाने तक—भारतीय राष्ट्र के निश्चयात्मक निर्माण तक न मालूम कितने बलिदान अत्याचार दमन-नीति की हृदयहीन नौकरशाही वेदी पर सत्य, न्याय प्रतिष्ठा और भारत के जन्मसिद्ध अधिकार के लिये होंगे ? रूसी शहीदों की हुँकार का उत्तर ज़ार की स्वेच्छाचारिता के अन्त से मिला। आइरिश शहीदों ने पार्लामेंट की माता कही जानेवाली अँगरेज धारा-सभा को हिला दिया। हिन्दुस्तानके अपने शहीद हैं—स्वेच्छाचारी भी। अब तक उनका कोई उत्तर न मिला। अब उत्तर मिलने में देर नहीं। पार्लामेंट अब तक नहीं दे सकी। आज़ाद हिन्दुस्तान में जागृत देश की अब तक सोई शक्तियाँ इसका उत्तर देंगी। देश की आत्मा—सोये भारत की दिशाओं में प्रकाशित अग्नि शेर की तरह चौंककर सजीव हो गई है। अब बलिदान की प्रशान्ति होगी। महमूद सोचने लगा—आन्दोलन छिड़ते ही देश का बच्चा बच्चा बालिका बालिका युवक और युवती में परिवर्तित हो जाँयगे। चारो ओर आग फट पड़ेगी। आज़ादी का कुन्दन बरसेगा। राष्ट्र की आत्मा सजग और सचेष्ट होकर रहेगी। एक दफ़े की लगी आग जलना शुरू होते ही जलती चलेगी—बुझेगी नहीं। महमूद को सब कुछ भूल कर अब इस में लग जाना है। इस बार आगे बढ़ कर मौत के मुँह का नक़ाब उलटना है। आरती उसकी है—उसी की होकर वह रहेगी। कहाँ जायगी ? लेकिन कप्तान का बिगुल बजने वाला है ! मुहब्बत की रानाइयों में भटकने से काम न चलेगा। आगे बढ़कर बलिवेदी पर रक्त चढ़ाना होगा। आह्वान आने वाला है.. ...आने ही वाला है.....

महमूद लड़ाका है—सैनिक है। नींव में अपने सारे अस्तित्व को खपाकर बलिदान का गढ़ खड़ा करने वाला साधारण पूजा का फूल है। जिसे भूलने में इतिहासकार की कलम—कवि की स्याही—

सेनापतियों के खरीते देर नहीं करते। ज़ाहिर है ऐसे सिपाही को अपने सुख दुख, हर्ष विषाद, से ऊपर देश के अखन्ड अजेय हित को रखना है। वह इस लड़ाई में फ़ना हो गया तो आरती उसके असमय अवसान को पूर्णता प्रदान करेगी। उसके आतंक-मय जीवन विस्फोट की चरम परिणति बनकर। जो महमूद सुन समझ पाया है, उससे पता लग गया है, इस बार का आन्दोलन हिन्सा अहिन्सा के प्रश्न से ऊपर उठकर क्रान्ति का दावानल धधका देगा। खून का बदला खून से लिया जायगा। लाश के बदले लाश फड़केगी—सर के बदले सर का लेन देन होगा। गान्धीजी ने इस योजना को खुले विद्रोह का नाम दिया है। महमूद उत्तेजना में पड़ा सारी रात जागता रहता अगर सुबह की ठंडी हवा उसे झूला झुलाती झुलाती सुला न देती.....

दस

देश भर के कान बम्बई से आने वाले समाचार की ओर लगे थे। सुबह महमूद कान्ग्रेस के निर्णय की खबर सुनने के लिये शहर चला आया था! समाचार मिला—कान्ग्रेस ने सरकार द्वारा अपनी माँगें पूरी न होने पर असहयोग का—विद्रोह का प्रस्ताव स्वीकार किया है। कान्ग्रेस के प्रमुख नेता गिरफ्तार कर लिये गये हैं। चौबीस घन्टे के भीतर देश भर में सब जगह गिफ्तारियाँ हो गई हैं और बराबर हो रही हैं। सरकार का कार्यक्रम तैयार था—उसकी दमन की तैयारियाँ पूरे जोर पर थीं। वह केवल कान्ग्रेस के निर्णय की प्रतीक्षा कर रही थी। अगले दिन से ही समाचारपत्रों में नेताओं की गिरफ्तारी पर विरोध प्रदर्शन के और सरकार द्वारा इस प्रकार के प्रदर्शनों को ग़ैरकानूनी करार देकर उनका दमन करने के समाचार आने लगे। इसके बाद स्थान स्थान पर रेल की पटरी उखाड़े जाने, सरकारी इमारतों को जलाने और पुलिस तथा विद्रोही जनता के संघर्ष के समाचार आने लगे। सबेरे से ही पुलिस की लारियाँ शहर

की छाती पर दौड़ने लगीं। हर मोड़ पर हथियारबन्द पुलिस और फौजवालों का पहरा था। गली गली में लाल पगड़ी—जगह जगह उनका जमघटा। जनता में सनसनी। विद्यार्थियों में उत्तेजना। लोग जगह जगह गुट्ट बनाये अखबार के कालम या दीवारों पर लगाये गये बुलिटनों को देख रहे थे! प्रस्ताव पास हो गया। नेता पकड़े जा चुके। अब क्या होगा? पुलिस की सरगर्मी से लोगों का आवेश बढ़ रहा था। तरह तरह की अफ़वाहें उड़ रही थीं। सुना गया—नेता न मालूम कहाँ भेज दिये गये। पता चला—गान्धीजी शहर बाहर कहीं ले जाये गये। लोगों के मन में तरह तरह के विचार उठने लगे। क्षुब्ध और सशंकित जनता तरह तरह की बातें सोचने लगी। जबानों पर ताला पड़ चुका था पर दिल और दिमाग स्वतंत्र थे। दिल को पीड़ा होती थी—उसमें खून की धारें बहती थीं। दिमाग में शासन व्यवस्था को नष्ट कर देने की स्कीमें चल रही थीं। लोगों ने उड़ा दिया—नेता अफ्रीका भेजे जाँयगे। कुछ लोगों ने कहा—उन्हें लड़ाई का कैदी बनाकर किसी हैबतनाक एकान्त स्थान पर डाल दिया जायगा। लेकिन उनकी जान सलामत है और हिफ़ाजत से रहेगी—इसमें लोगों को सन्देह हो रहा था। सारे कान्ग्रेसी नेता और कार्यकर्ता पकड़ पकड़ कर कोतवाली के 'लाक अप' में पहुँचाये जा रहे थे! कान्ग्रेस दफ्तरों पर पुलिस का पहरा हो गया था। कागज पत्र सरकार पहले ही उठवा ले गई थी। अब पुलिस का ताला पड़ा था। लोग धड़ाधड़ गिरफ्तार हो रहे थे। लोगों में सन्देह था गान्धीजी ने आन्दोलन छेड़ा या नहीं।

बड़ा भयंकर समय था! जिन लोगों ने उसे देखा है वे ही उसकी खून का प्रवाह रोक देने वाली भयंकरता को समझ सकते हैं। समय की शक्तियाँ—इतिहास की बिखरी ताकतें जैसे मुक्त होकर खुल पड़ी थीं। सड़क सड़क पर अपार जन समूह दीख पड़ता था। दरवाजे दरवाजे पर उत्तेजित स्त्री, पुरुष, बालक, बालिकाओं की भीड़ें लगी थीं। नवीन युग का सूत्रपात-मुहूर्त था वह! नवयुग का महान विद्रोह-दिवस था! प्रज्वलित विद्रोह का भयंकर दौर था! सुबह से लेकर शाम

तक उत्तेजित करने वाली—खून खौला देनेवाली पर्चेबाजी चलती थी। उत्तेजित और क्रोधित विद्रोहियों के झुन्ड खुल्लम खुल्ला सड़कों पर तार काटते और खम्भे गिराते घूम रहे थे। सरे आम उन पर घन और कुल्हाड़े चल रहे थे। पुलिस की हिम्मत न पड़ती थी इस सर्वभुक ज्वाला को रोकने की। शासन की नींवे हिलाने वाली विद्रोह की आग सुलग उठी थी। ऊँचे ऊंचे प्रासादों और महलों से लेकर झोपड़ियों और देहात के कच्चे मकानों तक यह आग सुलग उठी थी। चारो ओर स्थानीय या प्रान्तीय महत्व के नेता या तो पकड़े जा चुके थे या फ़रार हो गये थे। समाचारपत्रों में कान्ग्रेस के प्रस्ताव या परिस्थिति के विषय में नेताओं के सन्देश छप न सकते थे। गुप्त रूप से छापे हुए पर्चे जगह जगह दिखाई देने लगे। इन पर्चों और लीफलेटों में जनता को विद्रोह और बग़ावत के लिये उकसाया जाता! 'करो या मरो' का नारा हवा में लहराता रहता! दूसरे स्थानों पर बग़ावत हो जाने के अधिकतर यथार्थ—कभी कभी अतिरंजित बयान रहते! किस प्रकार पुलिस भोली भाली जनता को अत्याचार की भट्टी में भून रही है इसके विस्तृत विवरण छाप छाप कर जनता में वितरित किये जाते। आन्दोलन का संघर्ष दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था! देश भर में अराजकता फैली थी। जनता अपनी सम्पूर्ण शक्ति को बरबाद करके भी क्रान्ति की योजना सफल करना चाहती थी। इन विध्वंसक कार्यों के समाचारों को सुन सुन कर दूसरे स्थानों के लोगों की छाती गर्व से फूल उठती थी। आज़ादी की लड़ाई घमासान रूप धारण करती जा रही थी। आने जाने के साधनों का नाश हो रहा था। युद्ध सम्बन्धी तैयारी के कामों में भयंकर रुकावटें डाली जा रही थीं। डाकखाने और तारघर—पुलिस चौकियाँ और खजाने फूँके और लूटे जा रहे थे। चारो ओर हड़ताल और पुलिस का जबर्दस्ती हड़ताल तोड़कर दूकानें खुलवाने का आतंकदायी प्रयत्न! त्राहि त्राहि मची थी। प्रजा एक बार बदले की भावना से हिंसक और विवेकशून्य हो गयी। जनता को तरह तरह से उकसाने और उसके मनोबल को

दृढ़ रखने के यत्न जारी थे।

देश में जैसे एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक गहरी कानाफूसी फैली हुई थी। प्रान्त प्रान्त के राष्ट्रीय सैनिक और सेनानी हर स्थिति के लिये तैयार थे। एक ओर गाँव गाँव में साम्राज्य की रक्षा के लिये फौजी भरती चल रही थी। दूसरी ओर विधवाओं के विलाप और पुत्रशोक-कातरा वृद्धाओं के क्रन्दन से आस्मान की छाती फटती थी। शहर, जिला, तहसील, मण्डल काँग्रेस कमेटियों पर छापे मारे जा रहे थे—तलाशियाँ हो रही थीं। तिरंगे झंडे उतार कर फेंक दिये जाते थे और बाद में उनके दफ्तरों पर पुलिस का कब्जा हो जाता था। पुलिस की लारियाँ दिन में जेल के बीसियों फेरे करती थीं। मुकम्मिल हड़ताल—सनसनी—घबड़ाहट! फरार कार्यकर्ता और विद्यार्थी गलियों में घूमते फिरते थे। उन्हें पता न था कहाँ छिपेंगे—कहाँ जाँयगे—क्या करेंगे। पुराने नेता एक एक कर बन्द कर दिये गये थे। नयों की तलाश थी। उभड़ते जनसमूह से कतराकर पुलिस के सिपाही सड़क के किनारे खड़े हो जाते थे। हाथ में राइफलें हैं—राइफलों में संगीनें लगी हैं। पर आँखों का भय और चेहरे की घबड़ाहट छिपाये नहीं छिपती। मीलों लम्बे जुलूस निकलते थे—लाखों उन्मत्त स्वर जयघोष करते थे। जनसमूह की भयंकर बाढ़ सड़कों पर बहती चली जाती थी। थानों को छूती हुई—कोतवालियों से सटती हुई—हाकिमों के बङ्गलों को दहलाती—दफ्तरों को कँपाती और जेलों को अपने हुँकार से चीरती हुई। ब्रिटिश सरकार के भारतीय शासनयंत्र को निरीह निहत्थी जनता की प्रबल शक्ति चकनाचूर किये दे रही थी। उनके हृदय-सम्राट्—उनके जीवन देवता गाँधी की आज्ञा थी—करो या मरो। आँखों में आज़ादी का नशा—दिमाग में स्वतन्त्रता का ज्वर। जनता के लिये यह आन्दोलन नहीं वरन क्रान्ति थी। यह क्रान्ति एक दल या जाति की नहीं सारे देश की थी। जैसे अंगरेज़ी साम्राज्य के जल कर खाक हो जाने तक वह सन्तुष्ट होकर बैठ न सकेगी। एक बार उठ जो खड़ी हुई है! सचमुच देश का नया पुराना

रक्त एक साथ खौला था।

गाँवों में जैसे कुरबानी का समुन्दर खुल गया था। नित नये नये संकल्प लेकर बाग़ियों के दल के दल आगे बढ़ रहे थे। नवयुवक कार्यकर्ताओं के जत्थे—विद्यार्थियों की टोलियाँ गाँवों में पहुँच रही थीं और विदेशी शासन के प्रति घृणा और आग उगल रही थीं। उधर देहात की जनता के भीतर भी पीढ़ियों से दबी, चुसी, अपमानित निर्बल की घृणा और प्रतिहिंसा ज्वालामुखी के लावे की तरह उछल रही थी। पुश्त दर पुश्त से जिनकी आवश्यकताएँ पूरी न हुई थीं—जिन्हें भरपेट खाना, भर तन कपड़ा न मिलता था—जिनका आत्मविश्वास और गौरव मर चुके थे वे मनुष्यत्व से हीन त्रस्त, दलित मानव आज विदेशी शासन-सत्ता पर चढ़े बैठते थे उस साम्राज्य की निशानी वे आज न रहने देना चाहते थे। उसका अंग भंग कर भून भून कर खा जाना चाहते थे। जो उन पर हुकुम चला कर फैसला देते थे और अपनी तोंदों पर शासक का अहं लिये पतलून में हाथ डाले सामने से अकड़ कर निकलते थे वे आज उनकी दया पर आश्रित थे। देश में देसी लोगों का राज्य हो—यह उनका नारा था जिसके वज्रघोष से वे अपना सीना फुलाये घूमते फिरते थे...रेल की पटरी उखाड़ते थे—स्टेशन के प्लेटफार्म पर रहने वाले खलासियों और बाबुओं को आतंकित करते थे। रेल की पटरी और सड़क के बीच बरसों से अडिग खड़े लोहे के मोटे मोटे खंभे उखाड़ते थे। आगे आगे झंडा फहराते ग्रामीण नेता—पीछे पीछे उत्साह और बलिदानी आक्रोश से अन्धी प्रजा। गाँव गाँव मे थाने थाने ऐसी ही भीड़ जाती थी। दारोगा और हेडकान्सटेबल गोली चलाने की धमकी देते थे। विजयोन्माद में बावली जनता अपने कुरतों और बाराबन्दियों के बटन खोल गोली खाने के लिये छातियाँ फैला देती थी। उनके पीछे संख्या का बल और 'भारत छोड़ो' की पुकार का शौर्य था। बंदूक की धमकी मिलते ही बावले लोग ईंट और पत्थर उठा सामना करने के लिये तैयार हो जाते थे। दूरदर्शी दारोगा और सिपाही बाद में नीतिज्ञता-

पूर्वक हँस कर बन्देमातरम् के नारे और हिन्दू मुसलमान की जय की आवाजें लगाने लगते थे। जनता उन्हें गान्धी-टोपी पहना देती थी और थाने की इमारत पर लगे डन्डे पर कौमी झंडा बाँध देती थी। विजित पुलिसवालों से देश की आज़ादी के लिये प्राण दे देने की प्रतिज्ञा ली जाती थी। जिन्हें परम शक्तिशालिनी अँगरेज सरकार का प्रतिनिधि मान कर लाखों की संख्या में प्रजा शीश झुकाती चली आ रही थी उन्हीं को फूल माला पहना जुलूस के बीच में ले चल कर वह अपनी उमंग और उल्लाह का परिचय दे रही थी। जैसे वे रैयत के अपने हो गये हों और अब आतंकवादी शासन के प्रतीक न रह गये हों। चारो ओर रामराज्य की स्थापना की स्फूर्ति और उल्लास छाया था। किसान लगान और कचहरी के झगड़े भूल गये। विरोधी प्रतिद्वन्दी पार्टियाँ आपस की फौजदारी भूल गईं। प्रपंची प्रपंच भूल गये। दूसरों का अन्वाद करने वाले परछिद्रान्वेषण भूल गये। किसी को जैसे कोई शिकायत नहीं। स्वतंत्रता का कैसा ज्वलन्त अहसास था? लेकिन अभी विध्वंस की पिपासा शान्त न हुई थी। उससे प्रेरित किसान कुल्हाड़े और कुदाल लेकर निकल पड़ते। पुलों पर रात भर आक्रमण जारी रहता। सड़कें तोड़ी फोड़ी जा रही थां ताकि अवसर आने पर शत्रु की सेना आसानी से लारियों और मोटरों पर निकट न आ सके। यातायात, खबर और शासन श्रँखला में अब तक जकड़ा पड़ा जनगण-मन भूचाल की अँगड़ाई लेता था। जैसे अचानक उसके बन्धन टूट गये हो वह अंग अंग में दहकते हुए खून का अजस्र झरना प्रवाह पा रहा हो। शिकार का जानवर निकलता है तो सीधे सुरक्षित स्थान की ओर भागता है। चिड़िया बहेलिये के जाल से छुटकारा पाती है तो सीधे आस्मान में उड़ती है। पर करोड़ों का यह जन समूह बन्धन कट जाने पर भी कहां भागना नहीं चाहता। वहीं अड़ा रहकर दुश्मन का मुक़ाबला करना चाहता है। उसे अपने दुश्मन का ठीक ठीक पता नहीं। कैसे लड़ेगा—इसका भी ज्ञान नहीं। पर उसके भीतर अदम्य शक्ति की पैनी पैनी धार पैदा हो गई है! सिविल पुलिस इस अजेय ज्वाला

का सामना करने में अपने को असमर्थ पाती थी। फौज के आने की इन्तज़ारी थी। छावनी में खबरें भेजी जाती थीं। अमुक जिले में अमुक गाँव में—अमुक तहसील में फौज चाहिए। पुलिस थानों में बन्द पड़ी थी। धीरे धीरे बागियों को आत्मसमर्पण करती जाती थी। मगर फ़ौज इतनी कहाँ थी जो एक साथ सब जगह पहुँचकर थानों के सीखचों में बन्द पुलिस वालों का त्राण करती!

पर्वतपुर के आस पास का वातावरण भी महाक्रान्ति के चरणों पर श्रद्धा से शीश झुकाये था। नौ अगस्त को महमूद बाहर चला गया था। आरती लखनऊ अपनी भाभी की छोटी बहन लीला के यहाँ पहुँच गयी थी। महमूद जिले में इधर उधर घूमता फिरता स्थानीय कार्यकर्ताओं की बैठक द्वारा नियुक्त उपसमिति की रिपोर्ट के अनुसार गाँव गाँव का संगठन कर रहा था। प्रतिमा घूम रही थी। उस समय उन सबको एक दूसरे की ओर देखने का भी अवकाश न था। ज्वार के समय सागर की एक लहर को दूसरी की ओर देखने का धैर्य नहीं रहता। बम्बई की ख़बर आने के दो तीन दिन बाद लखनऊ का क्षुब्ध वातावरण देख—वहाँ की जनता का खुला विद्रोह समझकर महमूद एक दिन भी आरती के कहने पर लीला के यहाँ न रहा। उसका मन रह रह कर जिले की ओर चला जाता था। वह आरती को समझा बुझाकर गाँव की ओर चला। स्टेशन से उतरकर बाहर आते ही उसे पता लगा उसके नाम वारंट है पर्वतपुर में कुछ न हुआ था जब कि आस पास के कितने ही जिलों में अपनी सरकार क़ायम हो रही है। उस कार्यकर्ता ने महमूद को बताया कि आरती के पिता के दबदबे के कारण गाँव में किसी की कुछ करने की हिम्मत नहीं पड़ती। जिले में भी अभी कहीं कुछ नहीं हुआ। महमूद ने दिन में गाँव आना ठीक न समझा। स्टेशन से उसका गाँव पाँच मील था। असिस्टेन्ट स्टेशनमास्टर रफ़ीक महमूद का दोस्त था। चुपचाप महमूद उसके क्वार्टर में पहुँच गया। अँधेरी रात में सायकिल

पर लुकता छिपता बारह बजे के बाद कोठी पहुँचा। पीछे के बगीचे वाले ज़ीने पर जाकर शमीम के कमरे का दरवाजा थपथपाया। कमरे के सामने छत पर शमीम लेटी थी। रात इतनी अधिक हो गई थी पर नींद न आरही थी। दो बार ध्यान से सुनने पर उसने महमूद की आवाज़ पहचान ली। दरवाजा खोल दिया। महमूद को इस प्रकार आते देखकर भौचक रह गई। महमूद ने कहा—'बाजी! घबराओ मत। मेरे नाम वारंट है। स्टेशन पर मुझे पता चल गया। दिन भर रफ़ीक के मकान पर पड़ा रहा। रात को अँधेरे में सबकी नज़रें बचाता आया हूँ। ज़ोहरा सो गई? बाहर है?'

शमीम ने चुपचाप दरवाजा बन्द कर लिया। छत पर आकर दोनों बात करने लगे। ज़ोहरा जाग पड़ी। मामू की गोद में आ बैठी। महमूद ने मुँह पर उँगली रखकर चुप रहने का इशारा कर शमीम से दबी आवाज़ में पूछा—यहाँ क्या हाल है। भैया भाभी कहाँ हैं? प्रतिमा दीदी का कुछ पता है?'

शमीम ने कहा—'भैया भाभी एक हफ्ता हुआ यहाँ से चले गये। चाचा साहब ने भाभी के रोने धोने पर भी कोई ख्याल न किया। जबर्दस्ती बच्चों समेत उन्हें घर से निकाल दिया। लखनऊ जाने को कह रहे थे। तुम कहाँ से आ रहे हो? घर में पुलिस कई बार आ चुकी है। रोज चक्कर लगाती है। तुम्हारी तलाश है। अभी तक सुना है किसी को पकड़ नहीं पाई। सब फ़रार हैं? कल पुलिस इन्सपेक्टर आया था। मैनेजर को डरा धमका रहा था। मुझे भी बात करने के लिए बुलाया था। शायद मुझे तुम्हारा पता मालूम हो। मैंने कहा—मुसलमान औरत घर के लोगों को छोड़ गैर से बात नहीं करती। मैनेजर को डरा धमकाकर चला गया। सुना है बात चाचा साहब तक पहुँची। वहाँ भी गया था। गाँव की जिम्मेदारी उनके ऊपर है।'

'चाचा साहब ने पुलिस से इस मामले में कुछ कहा?'

'सुना है उन्होंने इन्सपेक्टर को डाटा। तुम्हें जनानखाने के

लोगों को बुलवाकर बात करने की ज़रूरत ! जानते नहीं हो वह मेरी लड़की है। तुम्हें जो पूछना हो मेरे पास आओ। बाहर नौकरों से पूछो। बहू बेटियों से बात करने की जरूरत ! लाख हो चाचा साहब अपना पराया समझते हैं।'

'शुक्र है ! मुझे उनसे ऐसे व्यवहार की उम्मीद न थी। फिर कोई आकर परेशान करे तो फौरन उन्हें इत्तला कर देना। पुलिस की नादिरशाही अब चलेगी !'

'तुम कहाँ जाओगे ? तुम तो यहीं रहोगे। इतनी बड़ी कोठी है ! कौन पता पा सकेगा ! रोज खबरें आती हैं। कहीं स्टेशन जला दिया गया ! थाना लुट गया ! पुलिस दारोगा और कान्सटेबिल क़त्ल कर दिये गये ! क्या सच है सब ?'

'सब सच है बाजी ! यहाँ रहूँगा तो पकड़ा जाऊँगा। इस बार हम लोगों को जल्दी पकड़ नहीं जाना है। कुछ करके जेल जाना है। बच्चों की तरह नहीं। मैं कल सुबह चला जाऊँगा। पर आता रहूँगा। बेफ़िक्र रहना। पकड़ गया तो खबर लग जायगी। तुम चिन्ता न करना। जेल में मैं खुश रहूँगा ! पूरा मुल्क हमारे लिये जेलखाना है। कुछ खाने को लाओ। भूख लगी है। किसी को जगाना मत। कानों कान खबर न होने पाये—मैं यहाँ आया हूँ।'

शमीम डरती सहमती खाना ले आई। महमूद खाने लगा। शमीम बैठ कर पंखा झलने लगी। धीरे से बोली—'आरती कहाँ है ? तुमसे भेंट हुई या नहीं ?'

'लखनऊ में है। लीला के यहाँ। पर वहाँ रह न सकेगी। लीला कम्यूनिस्ट है। मुझे पता न था। इस बार मालूम हुआ। भैया, भाभी अब तक वहाँ गये नहीं। तुम कहती हो लखनऊ गये हैं। कहाँ रह गये ? एक बार उन लोगों से मिलना है। प्रतिमा दीदी आप खबर पाने पर मिलेंगी। पर वे लोग·····'

शमीम ने कहा—'इतनी बड़ी हुकूमत है। तुम अपने को कब तक छिपा सकोगे ! यह खानाबदोशी तुम्हें ज़ेब नहीं देती। वारन्ट हट

नहीं सकता ?'

'नहीं हट सकता। हटने की ज़रूरत क्या है ! इतना बड़ा मुल्क है। कौन पकड़ पायेगा। हमारी पार्टी का यह हुक्म है। हम लोगों को जेल के बाहर रहकर लड़ाई लड़नी है। एक बात और बाजी ! मैं जब तुम्हारे पास खबर भेजूँ तुम रुपये भेजवा देना ! मेरा पुर्जा तुम्हें मिलेगा। यों कोई आये तो तुम बात न करना। जब बाहर से तुम्हारे पास मेरा ख़त भेज दे तब उसे अन्दर बुला लेना। पर होशियारी से। मेरे किसी साथी से तुम्हें पर्दा करने की ज़रूरत नहीं। मैं खास आदमी भेजूँगा ! मेरे हाल चाल उस से मालूम होंगे।'

शमीम बैठी महमूद के चेहरे पर उछलती सनसनी देख रही थी। खाना खाकर महमूद लेट गया। पर नींद कहाँ ! तड़के उसे ठाकुर देशपालसिंह से मिलना है। वहाँ आगे की बात तय होगी। बिखरे हुए साथियों का पता लगेगा। लेकिन दिन की रौशनी में निकलना ठीक नहीं। मुमकिन है चन्द दिन के बाद पुलिस आकर कोठी घेर ले। अब भी यहाँ दिन रात खास निगहबानी होती होगी। बहुत होशियारी की ज़रूरत है। जरा सी गलती से काम बिगड़ सकता है। सी० आई० डी० बराबर उसका पीछा करेंगे ! उसे कहीं बाहर नहीं जाना है। पहले जिले का काम सँभाल लेना है। बाहर जाने की जरूरत इसके बाद पड़ेगी।

तीन बजे महमूद ने शमीम को जगाकर कहा—'बाजी ! उठो ! दरवाज़ा बन्द कर लो !'

शमीम ने आँखें मलते कहा—'अभी रात है भाई ! अभी कहाँ ? सुबह हो जाने दो। यह चाँदनी है—दिन की रौशनी नहीं। कहाँ जाओगे ?'

'कुछ पूछो मत। जो कहूँ करती चलो। मैं जल्द आऊँगा ! उठो फौरन !'

शमीम ने शंकित कंपित मन से दरवाज़ा बन्द किया। सायकिल बगीचे की एक अँधेरी कोठरी के भीतर भरी लकड़ी और कन्डों के

ढेर पर पटक महमूद पैदल बाहर निकला। एक बार सावधानी से चारो ओर देखा। कहीं कोई न था। सुकरू पंडित बाहर के चबूतरे पर पड़े करवटें बदल रहे थे। शायद नींद खुल गयी थी। महमूद ने चुपचाप चारपाई के पास जाकर कहा—'चाचा! आपसे कुछ बात करनी है। मकान के अन्दर चलिये।'

सुकरू झपट कर उठ बैठे। महमूद को देखकर उनके मुख पर हवाइयाँ उड़ने लगीं जो पिछली रात की धुँधली चाँदनी में भी साफ नज़र आती थीं। काँपते हुए बोले—'दरवाजा भीतर से बन्द है। खुलवाना पड़ेगा।'

'कोई हर्ज नहीं। वहाँ चलिये'—कह कर महमूद ने सामने के ओसारे की ओर इशारा किया जहाँ पड़ोसी की भैंस बँधती थी और सुकरू दो रुपये महीने किराये के पाते थे। चुपचाप महमूद के पीछे पीछे आये। भय से उनका बुरा हाल था। महमूद ने टार्च जला कर एक बार चारो ओर देखा। कहीं कोई न था। रोशनी बुझा कर बोला—'बैठो!'

दोनों जमीन पर बैठ गये। महमूद ने धीरे से पूछा—'तुमसे पुलिस वाले मेरे बारे में पूँछते तो नहीं। पूछेंगे तो क्या कहोगे?'

सुकरू ने अँधेरे में फटी हुई विह्वल दृष्टि से महमूद की ओर देखा। भय से उनका गला जम गया था। चेष्टा करने पर भी बोल निकलेगा—उन्हें विश्वास न था। महमूद ने कुछ मिनट तक उनके उत्तर का इन्तज़ार करने के बाद कहा—'देखो! मुझसे कोई बात छिपाना मत। मेरे रहते तुम्हारा बाल बाँका न होगा। मुझसे यहाँ का सब हाल बताते रहना। जो जो मेरे सम्बन्ध में जिससे बात हुई हो बता दो। जानते हो मेरे नाम वारन्ट है।'

'जानता हूँ भैया! सुकरू ने चेष्टा करने पर कहा—'दीवानजी और पुलिस के सिपाही बराबर आते रहते हैं। कल दारोगा ने मुझे थाने पर बुलाया था। बहुत डरा धमका रहे थे। तुझे महमूद का पता है। जरूर वह घर आता होगा। तू कोठी के सामने रहता है।

तुम्हें सब पता है। कह रहे थे अगर उसे देखा और न बताया तो मारते मारते सिर्का कर देंगे। एक सिपाही ने संगीन तानी थी। तीन घंटे मुझे बिठाये रक्खा। बाद में मुश्किल से हाथ जोड़ने पर छोड़ा।'

महमूद ने कहा—अच्छा! अभी से यह हाल है! अभी कुछ हुआ भी नहीं। खैर! तुम्हें अगर सतायेंगे तो उनको सबक दे दिया जायगा। ठाकुर साहब ने तो कुछ नहीं कहा? सुना गाँव में अमन क़ायम रखने का भार उन पर है।'

'उन्होंने नहीं कहा कुछ!' सुकरू ने असमंजसपूर्वक कहा। कोई बीती बात याद आ रही थी। कहें या न कहें इसी द्वन्द्व में सुकरू पड़ गये। महमूद ने कहा—'यह धरम की लड़ाई है चाचा! एक तरफ हुकूमत की पूरी ताकत है—दूसरी तरफ बेहथियार जनता। कौन जीतेगा कहा नहीं जा सकता। हम लोग मौका पड़ने पर अपनी हड्डियों की तलवार बना कर लड़ेंगे। मैं जा रहा हूँ। तुम जाग रहे थे इसलिये सोचा, बात कर लूँ। पर आता रहूँगा और तुमसे मिलता रहूँगा! थाने में सिपाही बढ़े तो नहीं। सब बातों की टोह लिये रहना! पुलिसवाले किसी के साथ कोई ज्यादती करें बतलाना। कुछ कहना मत किसी से।'

सुकरू की समझ में स्थिति आ गई। इतने बड़े बड़े रईस लोग जब इस तरह लड़ाई कर रहे हैं तब मामूली आदमियों की बिसात? फिर यह धरम की लड़ाई है। धरम की लड़ाई लड़नेवालों का साथ जो नहीं देता वह पापी है। सुकरू ने कभी कोई पाप नहीं किया। आखरी समय यह पाप उनसे कैसे होगा? बोले—'जाओ भैया! होशियार रहना। आस पास के गाँव या जंगल में दिन में दिखाई न पड़ना। फौरन खबर पहुँच जायगी। एक बार बड़े सरकार से मिल लो न! कोई हर्ज है क्या!'

महमूद ने मन ही मन चौंककर पूँछा—'क्यों! क्या बात है! उनसे मिलने की जरूरत मुझे क्या है! वे तो मुक़ाबिल खीमे में हैं।

उनसे कोई मदद की जरूरत नहीं। जानते हो पता पाते ही फौरन मुझे पुलिस के हवाले कर देंगे।'

सुकरू को मन ही मन लगा महमूद ठीक कह रहा है। न जाने किस अज्ञात भावना के वशीभूत हो सुकरू ने ऐसा कह दिया था। महमूद उठ खड़ा हुआ। बाहर आकर सुकरू ने देखा—चुपचाप पश्चिम की ओर जा रहा है। अपनी चारपाई पर आकर लेट गये। पर अधिक लेटने का अवकाश न था। पौ फटने वाली थी। महमूद आँख से ओझल हो गया था। सुकरू की समझ में जितना आ चुका था वह उन्हें अधीर कर देने के लिये काफ़ी था। महमूद ने कितना बड़ा विश्वास उन पर किया है! आया था—चुपचाप चला गया होता। ऐसे नेक नवयुवक के साथ जो मुसलमान होकर हिन्दुओं की धरम की लड़ाई लड़ रहा है क्या सुकरू विश्वासघात करेंगे! सुकरू ने मन ही मन अपने को तौला। अगर उन्हें पकड़ कर कैदखाने में डाल दिया जाय और उन पर मार पड़े तो। नहीं! जान जाने पर भी महमूद के बारे में उनके मुँह से एक शब्द न निकलेगा।

खेतों और जंगलों के भीतर भीतर छिपता हुआ महमूद जब सुमेरपुर पहुँचा तब सूरज निकलने में कुछ देर थी। पर गाँव में जागरण हो चुका था। इक्के दुक्के लोग इधर उधर आ जा रहे थे। महमूद देशपालसिंह के दरवाजे पहुँचा। लम्बा चौड़ा अधपक्का अधकच्चा मकान था। दरवाजे पर बैठा उनका छोटा भाई दातौन कर रहा था। महमूद को पहचानता था। बोला—'आपकी तलाश है। आप कहाँ चले गये थे? हम लोग न जाने क्या क्या करने की सोच चुके हैं।'

'सब हैं कहाँ? ठाकुर साहब के नाम वारन्ट होगा। घर में हैं?'

'सुबह आठ बजे सब लोग देवी की मढ़िया (वहाँ से दो मील दूर जंगल में एक स्थान) में इकट्ठे हो रहे हैं। सन्यासनीजी वहीं है। उन्हीं के नाम वारन्ट नहीं। और सबके नाम है। आप सीधे वहाँ जाइये। जानते हैं न? क्या करेंगे आप?'

'यह तो पता नहीं। पर जो करना है जल्द करना है। मैं जाता हूँ। किसी और को पता न लगने पावे—हम लोग वहाँ हैं। वर्ना सब एक साथ पकड़ जाँयगे।'

'कैसी बात करते हैं! यहाँ किसकी हिम्मत है। यहाँ थाना भी नहीं। आपके गाँव में है उसमें मुश्किल से दस सिपाही होंगे। हम लोग लाठियों से चूर कर देंगे। आप बेधड़क जाइये। शहर के लोग डरते हैं—देहात के नहीं। कल एक पुलिसवाला आपके गाँव से आकर टर्राने लगा। मैंने वह फटकार बताई कि बचा को छठी का दूध याद आ गया होगा। यहाँ कभी किसी से दबे नहीं।'

'शाबाश! होशियार रहने में क्या हर्ज़? यह भी देखना है जिनसे हम लड़ रहे हैं उनकी ताकत कितनी है। शहर से पुलिस और फौज के आने में क्या देर लगती है! तब तो हिफ़ाज़त से रहना होगा। अभी से सावधानी शुरू कर दी जाय तो हर्ज़ क्या है! खास-खास लोगों को छोड़कर क्यों किसी को मालूम हो!'

'सो तो ठीक है। मैं क्या सब से कहता फिरता हूँ! आपके लिये खास तौर पर हुक्म है। आप आगये वर्ना मैं अभी आपके यहाँ आता। मेरी बच्ची आपका पता लेने और आप को यहाँ की इत्तला पहुचाने के लिये लगाई गई है। जाइये! क्यों देर कर रहे हैं! सब लोग पहुँच रहे होंगे।'

महमूद देवी की मढ़िया पर पहुँचा तो सात बजा था। बड़ी सी टूटी फूटी पक्की इमारत थी जो दिन में भी भीतर घनघोर अँधेरे में आबद्ध रहती थी। तरह तरह के प्रवाद उसको लेकर भोली भाली ग्रामीण जनता में प्रचलित थे। प्रतिमा ने आजकल यहीं अपना डेरा जमाया था। पर्वतपुर छोड़कर वह चली आई थी। यहाँ जल्द पता लगना कठिन था। भीतर इतनी जगह थी कि हजारों आदमियों को एकत्रकर सभा की जा सकती थी। महमूद मन ही मन सोच रहा था—इस भयावनी मढ़िया में दीदी (प्रतिमा) कैसे अकेली रहती होगी ····।

× × ×

प्रतिमा ने कहा—'आप लोग कुछ कर नहीं रहे। हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। क्यों न यहाँ के सारे थानों पर कब्जा कर लिया जाय ? मैं इमारत फूँकने और सामान नष्ट भ्रष्ट करने को महत्त्व नहीं देती। पर हम लोग शासन अपने हाथ में ले लें तो अच्छा।'

देशपालसिंह ने कहा—'आसानी से हो सकता है। पुलिसवालों को हम कैद कर लेंगे। उन लोगों ने गोलियाँ चलाईं तो आप भोगेंगे। क्रोध से उन्मत्त जनता उनका काम तमाम कर देगी। कितने राउन्ड फायर कर सकेंगे ! सब लोग घेर लेंगे।'

महमूद ने कहा—'बाहर से फ़ौज और पुलिस यहाँ हमें कुचलने को न आ सके इसका प्रबन्ध कर लेना होगा। नहीं तो हमारी सरकार चल न सकेगी। जैसे भी हो उनकी आमद को रोकना होगा। आप समझते हैं खबर उन तक न जायगी।'

'जरूर जायगी'—बेचन मिश्र ने कहा—'क्यों न स्टेशन पर धावा किया जाय। पटरियों को उखाड़ डाला जाय। बसों के लिये रास्ते के सारे पुल खोद डाले जायँ। सड़क पर मोर्चेबन्दी की जाय ! तार फौरन कटने चाहिये। ये ही खबर ले जाँयगे।'

प्रतिमा ने कहा—'कब होगा यह ! आप सब के नाम वारन्ट है। किसी भी क्षण पकड़कर ठूँस दिये जाँयगे ! उसके पहले कुछ तो हो जाय ! एक सभा तक हुई नहा। लोगों तक कान्ग्रेस का सन्देश पहुँचा है मगर 'माब अपील' कुछ और होती है। मोर्चा ललकारे बिना क़दम आगे न बढ़ेंगे। यही करिये।'

'अबरार ने कहा—आप गलत कहती हैं बहनजी ! कल फरीदपूर में सभा हुई है—मैं खुद बोला हूँ। जनता क्रोध से उन्मत्त है। पर उसे रोक रक्खा है मैंने। बिना आप लोगों की स्कीम जाने मैं कहाँ ले जाता उसे। मेरे नाम वारन्ट है यह सुन कर लोग लाठियाँ सँभालने लगे ! हम लोगों को इसकी फ़िक्र करने की जरूरत नहीं। मज़ाल है पुलिस पकड़ कर ले जा सके। यह गाँव है—शहर नहीं। यहाँ के लोग पुलिस-

वालों को मार मारकर हमें छीन लेंगे। थाने पर हमला कर हमें छुड़ा लेंगे। और भी सभायें हुई हैं। हम लोग जनता के क्रोध को साधे हैं। उसे कौन सी शक्ल दी जाय हमें मालूम तो हो! बल्लमपुर में डाकखाना लूटा गया है। सारा रेकार्ड जला दिया गया है। जनता अपने क्रोध को इसी तरह ज़ाहिर करेगी। आप लोग ठीक रास्ते पर ले चलेंगे तब चलेगी। अपने मन से तो जो सूझेगा वह करेगी। उसे अपने मन का नहीं होने देना है। वर्ना उसका जोश बिखर कर रह जायगा। जो कुछ करिये संगठन करके करिये! थानों पर कब्जा करना है तो एक साथ ज़िले के सब थानों पर होना चाहिये। दो तीन जगह मैंने सुना है हो भी चुका है। जो बचे हैं उन पर फौरन होना चाहिये। गोली वेक्या खाकर चलायेंगे। चलायेंगे तो एक एक लाश का बदला देंगे।'

प्रतिमा ने कहा—'अच्छा मज़ाक है! जनता क्रोध से मतवाली होकर सब कुछ करने को तैयार है। आप लोग उसे उत्तेजित करने के बजाय शान्त कर रहे हैं। कहाँ की देशभक्ति है यह? चाहिये था उसी वख्त बम बोल देते। क्रान्तियों नहीं होती।'

'ऐसे ही होती है'—बेचन मिश्र ने कहा—'सोच समझ कर काम करना ठीक है। मरना है तो क्या हुआ? अधिक से अधिक को मार कर और छीन कर मरना है। मैं घर से आखरी विदा ले आया हूँ। अब वहाँ लौट कर न जाऊँगा। पुलिस वाले जरूर घर के लोगों को हैरान करेंगे। पर क्या होगा? मेरी हवा उन्हें न मिलेगी।'

बड़ी देर तक बहस होती रही। अन्त में तय हुआ कि पहले पुलिस स्टेशनों पर कब्जा करना चाहिये। जिन जिन गावों में थाने थे वहाँ एक एक दो दो लोगों को जाना चाहिये और जनता को उत्तेजित कर हमले करवाना चाहिये। रेलवे स्टेशनों की बात बाद के लिये छोड़ दी गई। महमूद ने कहा—'पर्वतपुर के थाने पर मैं खुद जाऊँगा। मुश्किल तो वहाँ है। ठाकुर साहब के पास दर्जनों सिपाही हैं। मेरी कोठी में भी हैं पर मैं 'सिविलवार' नहीं छेड़ सकता। ठाकुर साहब का दबदबा ऐसा है कि गाँव के लोग मेरी आवाज़ पर इकट्ठ होंगे या नहीं यह

अनिश्चित है। मेरे साथ गजपालसिंह रहेंगे तो अच्छा होगा। यों भी हिन्दू होने के नाते उनका असर मुझसे ज्यादा पड़ेगा। यह ठीक रहा। क्यों ठाकुर साहब! आप मेरे गाँव चलेंगे या कहीं और जाँयगे। सब तय कर लीजिये। आज हमारा हमला होगा।'

प्रतिमा ने कहा—'मैं चलूँगी। पर्वतपुर में लोग मुझे भी जानते हैं।' देशपाल सिंह ने कहा—'आपका आगे चलना ठीक नहीं। अभी आप पर गहरा शक पुलिस को नहीं। हम लोगों का आपके द्वारा बहुत काम हो सकता है। आपके आगे आते ही वारन्ट निकल जायगा। हम लोगों को एक करने वाला—छिन्न भिन्न सूत्रों को जोड़ते रहने वाला भी कोई चाहिये।'

महमूद ने कहा—ठीक है दीदी मैं और गजपालसिंह सँभाल लेंगे। हम लोग पकड़ जाँय या फ़ना हो जाँय तब तुम आगे आना। चलिये ठाकुर साहब! हम लोग चलें। छिपने की जरूरत क्या है? शाम को आज एक साथ सब थानों पर धावा बोलना है। आप लोग अपने अपने हल्के तय कर लें। कोशिश यह हो कोई जान न जाने पाय। पुलिस के लोग चींचपड़ करें तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया जाय। थाने पर कब्जा हो जाने के बाद हमें तहसीली की ओर बढ़ना है। वहाँपर कब्जा करते ही एक पन्चायत बना दी जाय जो शासन करे। वह पन्चायत व्यक्ति विशेष या एक से अधिक व्यक्ति को अधिकार देकर उसे वहाँ का 'एक्ज़ीक्यूटिव चीफ' बना दे। यह ठीक होगा।

प्रतिमा ने कहा—'मैं कब तक इस तरह फूँक फूँक कर पैर रखूँगी? आप लोग यह काम मुझे न सौंपें। मैं अपने को इस तरह बचाती न फिरूँगी। मेरे नाम वारन्ट नहीं है इसका लाभ मैं जरूर उठाऊँगी। लेकिन इसे अपने लिये वरदान न मानूँगी। जिले के दूसरे हिस्सों में भी मुझे जाना है। उधर क्या हो रहा है यह देखना है। मैं जानती हूँ—पर्वतपुर के लिये महमूद काफ़ी है। जब गजपालसिंह भी जा रहे हैं तब क्या कहना! वहाँ के लोग—उससे मिले हुए

एक दो गाँव के लोग ठाकुर साहब के प्रभाव से भयभीत न होकर हमारा साथ दें, यह हम चाहते हैं। भय की पशुता कभी कभी मानव को इतना नीचे गिरा देती है कि वह अपने कर्तव्य का पालन नहीं कर पाता। पर उसका ऊपर उठाने वाला देवत्व उसे फिर कर्तव्य के स्तर तक खींच लाता है। गाँवों की जनता का यही हाल है। उनके भीतर अजेय राष्ट्रीयता की बलिदानी ज्वाला जागृत कर देनी है।'

सब लोग वहाँ से उठकर चले। सब की अलग अलग दिशायें थीं। लक्ष्य एक था पर अपने अपने कार्यक्षेत्र थे। महमूद ने प्रतिमा से अलग कोई बात न की। आज यह सब करने की उसकी प्रवृत्ति न थी। खुशी की बात थी कि एक दो व्यक्तियों को छोड़कर जिला काँग्रेस कमेटी के लगभग सब लोग अब तक फरार थे। उनके नाम वारन्ट थे पर वे शासन की शक्ति को धोखा देते हुए अब तक बाहर घूमते फिरते थे। उनकी गतिविधि पर किसी प्रकार का नियन्त्रण न था। जिले में फैले प्रभाव के कारण वे अपनी ओर से निश्चिन्त थे। केवल जिन गाँवों में थाने थे वहाँ के निवासी कार्यकर्ताओं को सतर्क रहना पड़ता था। महमूद की सतर्कता का यही कारण था। वहाँ से लौटते समय गजपालसिंह के साथ वह गाँव के बाहर बाहर अपनी कोठी में आया। तीसरे पहर थाने पर धावा बोलना है। गजपालसिंह पास ही असहट गाँव में रहते हैं। गाँव छोटा है—वहाँ थाना नहीं। कोठी में दो घन्टे पड़े दोनों बात करते रहे। यह तय हुआ कि असहट में सभा बुलाई जाय। वहाँ से जुलूस के रूप में सब लोग पर्वतपुर आयें। यहाँ की जनता शामिल हो जायगी। अभी यहाँ गाँव में ख़बर फैलायी जायगी तो सिर पर थाने में पड़ी पुलिस को पता लग जायगा! बाहर की जनता का जुलूस जब थाने पर हमला करेगा तब कोई भी शक्ति और भय यहाँ के लोगों को उसमें शामिल होने से न रोक सकेगा। महमूद ने खाना खाया। ठाकुर गजपालसिंह ने केवल फल। एक बजे फिर दोनों गाँव के बाहर बाहर चक्कर काटते हुए

असहट की ओर चले।..... आज शाम को...आज उन्हें थाने पर कब्जा कर लेना है। इसके बाद ठाकुर साहब से संघर्ष चलेगा। ठाकुर साहब आसानी से इन लोगों को थाने पर अधिकार न किये रहने देंगे। महमूद को इसकी कोई चिन्ता नहीं। उसे इन अंगारों को बुझने नहीं देना। नये नये कोयले डालते रहना है ....'

ग्यारह

शीला की छोटी बहन लीला लखनऊ के महिला कालेज की वायस-प्रिंसिपल थी। कम्यूनिज़्म की ओर शुरू से उसका झुकाव था। पार्टी के गहरे समर्थकों में उसकी गणना थी। इधर जब से काँग्रेस की नीति का विरोध कम्यूनिस्ट पार्टी ने करना शुरू किया तब से लीला को कभी कभी एक स्वाभाविक हिचक अपने और पार्टी के राजनैतिक दृष्टिकोण के प्रति होती थी। पर धीरे धीरे पार्टी की नीति ही उसे सही मालूम पड़ने लगी। अन्तर्राष्ट्रीय नीति और सच्ची राष्ट्रीय नीति में कहीं कभी विरोध नहीं हो सकता। दोनों में विरोध है तो राष्ट्रीय नीति में ही कहीं न कहीं कोई दोष है। राजनीति लीला का विषय रहा है। सम्पूर्ण मानवता के हितों का भारतीय मानवता के हितों से कभी कोई गहरा और वास्तविक विरोध नहीं हो सकता।

आरती ने कहा—'आपकी बात मेरी समझ में नहीं आती। विश्व-मानवता और भारतीय मानवता की स्थिति में अन्तर है। हमारा देश गुलाम है। हमें जिस प्रकार हो दुश्मन की मुसीबत और असहायता का फायदा उठाना है। क्या मित्रराष्ट्र वास्तविक प्रजातन्त्र की ओर जा रहे हैं? कम से कम जो प्रमुख है—जिनका प्रभाव और सबलता सर्वाधिक है वे तो ऐसा नहीं सोचते। आप क्यों इस युद्ध को जनता का युद्ध मानती हैं? आपकी बातचीत से लगता है—लड़ाई भर हमें मित्रराष्ट्रों के मार्ग में किसी प्रकार की बाधा न पड़ने देनी चाहिए। लड़ाई के बाद, फैशिज्म की पराजय होते ही सब देशों की जनता एक साथ उठेगी और वर्तमान नेतृत्व की स्वेच्छाचारिता

और प्रतिक्रियाशीलता का अन्तकर क्रान्तिकारी नेतृत्व को जन्म देगी। आप इसमें भारतीय जनता को भी सम्मिलित कर लेती हैं। एशिया के अन्य देशों के निवासी, नीग्रो, यहाँ तक कि जापान और जर्मनी की जनता भी आप लोगों की धारणा के अनुसार उठेगी। युद्ध के नेताओं के अधिनायकत्व को खत्म करेगी। यह अपनी अपनी राय है। आप लोग इस युद्ध को जनता का युद्ध क्यों कहने लगे? इस तरह सारे देश—नहीं सारी दुनिया में आप कितने बड़े झूठ का प्रचार कर रहे हैं। क्रान्ति और प्रजातन्त्र का इतना बड़ा आदि स्रोत फ्रांस पराजित हो गया। आप लोगों के मुँह से एक शब्द न निकला। इतनी बड़ी ऐतिहासिक घटना पर आपकी पार्टी ने कुछ न कहा—प्रगति की शक्तियों के साथ मौखिक सहानुभूति तक न प्रकट की। आज यदि मित्रराष्ट्रों के साथ रूस का सीमित सहयोग हो गया है तो कैसे यह साम्राज्यवादी युद्ध रातों रात लोकयुद्ध हो गया? आप लोगों ने अपने इस नये नारे का पूरा दुरुपयोग नहीं देखा। सरकार को देश विदेश में यह दावा करने का अवसर मिल जाता है कि कम से कम देश की एक लोकप्रिय जमात इस युद्ध को जनता का युद्ध समझती है? आप देखिये न! कितना बड़ा आपसी द्रोह है यह!'

लीला को आरती का पूरा हाल मालूम था। आरती घर छोड़ कर सीधे यहाँ आई थी। भाभी के पिता के यहाँ वह जाना न चाहती थी। लीला के यहाँ केवल थोड़े दिन रहने का उसका इरादा था। बाद में वह स्वयं अपने लिये स्वतंत्र स्थान तलाश कर लेगी। महमूद चन्द दिन पहले तक लखनऊ में था। महमूद से उसकी बातें हुई हैं। इस मामले में गर्मागरम बहस हुई है। महमूद को वह पहले से जानती रही है। बहन और बहनोई साथ पहले भी वह कई बार लीला से मिला है। लीला आरती से थोड़ी ही बड़ी है। आरती की प्रेरणा का स्रोत और राजनीतिक विचारों की प्रेरकता का स्फूर्ति-बिन्दु वह समझती है। इससे इतर आरती से सुनने की उसे

आशा न थी। अपने प्रेमी की प्रतिकृति है न!

लीला ने कहा—'बहन! मैं भी तुम्हारी तरह यथार्थता की जाँच करती हूँ। न मैं कम्यूनिस्ट पार्टी की मेम्बर हूँ कि उसकी हर बात मानूँ—न मुझे कान्ग्रेस से कोई द्रोह है। मित्रराष्ट्र बड़ा चौड़ा शब्द है। मित्रराष्ट्रों की सरकार और उनकी जनता में बहुत अन्तर है। मित्रराष्ट्रों की सरकार और उसके प्रतिक्रियावादी अधिकारियों से हमें क्या लेना देना है? हम वहाँ की जनता की जागरूकता और बुनियादी समस्या को लेकर चलते हैं। चर्चिल या रोजवेल्ट हमारे लिये इतिहास का पथ नहीं निर्णय करते। हमारे लिये लड़ाई में केवल दो दल हैं। एक ओर अत्याचारी फैसिस्ट शासक हैं—दूसरी ओर उन देशों की या अन्य देशों की स्वाधीनता-प्रेमी जनता। तुम नहीं देखतीं फैशिज्म का विरोध कर हम उसी साम्राज्यवाद का विरोध कर रहे हैं—उसी पर कठोरतम संगठित प्रहार कर रहे हैं जिससे पिछले पचास वर्षों से कान्ग्रेस युद्ध करती आ रही है। फैसिस्ट आखिर साम्राज्यवादी प्रभुत्व संसार पर स्थापित करने के लिये ही तो लड़ रहे हैं। साम्राज्यवाद का यह सबसे बुरा और आखरी रूप है। इस समय हम आन्दोलन छेड़ कर संसार की स्वाधीनता की शक्तियों के साथ बग़ावत कर रहे हैं। साम्राज्यवादी नौकरशाह यह भली तरह समझते हैं कि यदि भारतीय जनता और उसकी देशभक्त पार्टियाँ पूरे देश की प्रतिरोध की भावना और देशभक्ति की ज्वाला को आक्रमणकर्ता के विरुद्ध जागृत कर सकीं तो उनके शासन की समाप्ति का आरम्भ हो जायगा। तुम देखती नहीं—इसीलिये वे राष्ट्रीय समझौते और अस्थाई राष्ट्रीय सरकार की स्थापना का विरोध करते हैं। हमारे सामने इस लिये सबसे बड़ा प्रश्न कान्ग्रेस लीग समझौते का है। दोनों में एकता स्थापित होनी ही चाहिये! इस समय आन्दोलन न कर हमें अपना घर सँभालना चाहिये। हमें आक्रमणकारी का विरोध करने के लिये देश की सारी राष्ट्रभक्त पार्टियों को मिलाना चाहिये! जितना हम संगठित होंगे उतना यह विदेशी सरकार दुर्बल होती जायगी। हमारी

राष्ट्रीय और इतर माँगों को भी तब पूरा बल मिलेगा !'

आरती ने कहा—'बात मेरे दिमाग में नहीं धँसती। कान्ग्रेस अपने विश्वास से देश के लिये लड़ रही है। पुलिस और क्षमता-शालिनी सरकार से लड़ रही हैं। कम्यूनिस्ट देश के नाम पर अपने भाइयों से लड़ रहे हैं। उन्हें सबसे पहले देश के महान राष्ट्रीय आन्दोलन की ओर देखना चाहिये! मेरी समझ में कम्यूनिस्ट और उनके समर्थक देशद्रोही हैं। राजनीति में व्यक्ति या दल के चरित्र का निर्णय उसके इरादों को देखकर उतना नहीं होता जितना उसके कामों का अंजाम देखकर। आप लोगों के कामों से हमारे इरादों और कार्य-क्रम पर आघात होता है। आप जनता को गुमराह कर रहे हैं। आप लोगों का कर्तव्य था—बम्बई की ए० आई० सी० सी० मीटिंग में अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा कर 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव का पूरा समर्थन करते। उसे पास कराने में पूरी ताक़त लगाते! आप लोग देश के 'लेफ्ट विंग' के कर्णधार अपने को कहते फिरते हैं। अवसर आने पर यह सरकार परस्ती कैसी? यह सरासर अवसरवादिता है। महमूद कह रहे थे—मुद्दत बाद कम्यूनिस्ट पार्टी क़ानूनी हुई है। उन्हें जीवन में पहले पहल खुल कर काम करने की अनुमति मिली है। किसी भी ऐसी पार्टी को जो विदेश की प्रेरणा और शक्ति के बल पर चलती हो ऐसे अवसर बार बार नहीं मिलते। कम्यूनिस्ट पार्टी उसका फायदा उठा रही है। इस बहाने अधिक से अधिक कम्यूनिस्ट-चेतना देश में फैले यह चाहती है। मुझे इसमें कोई एतराज़ नहीं। पर स्वार्थों वेदी पर पूरे देश की बलि न चढ़नी चाहिये! आप अपनी पार्टी की शक्ति बढ़ायें—इतने दिन की ज़िलावतनी, कष्टसहन, जनसेवा और संगठन को—देशभक्ति और जनताभक्ति को—जेल यात्रा और तपस्या को 'कैश' करें। पर राष्ट्र में उठती हुई क्रान्ति की दावा को अपने क्षुद्र प्रयत्नों से न रोकें!'

लीला ने कहा—'महमूद जो कहें वह तुम्हें कहना ही चाहिये। उनसे अलग तुम कोई बात सोच कैसे सकती हो? पर यह भी सोचा

है हम लोग जो करने जा रहे हैं वह वर्तमान स्थिति में क्रान्ति नहीं अराजकता कहलायगी। अराजकता कितनी हानिकर और देश की प्रगति की उम्र कम कर देने वाली चीज़ होती है! हम लोग अभी उससे परिचित नहीं हैं इसलिये उसके प्रति हमारे मन में आकर्षण है। यूरोप में वह पुरानी पड़ चुकी है। वहाँ के लोग उसके नुकसान से परिचित हैं। हमें उनके अनुभव से लाभ उठाना चाहिये। यह नहीं झूठी भावुकता और देशभक्ति के नाम पर वही रसवादी, आतंकवादियों वाला रुख! हमें वैज्ञानिक क्रान्तिवाद का सहारा लेना होगा—रसात्मक और विध्वंसमूलक अराजकतावाद का नहीं। इस समय जो आन्दोलन हो हा है—जो तैयारियाँ की गई हैं वह केवल जापान को आमंत्रित करने के लिये हैं। फैसिस्टों की मदद से मिलने वाली आज़ादी हमें सदियों के लिये तोड़ देगी...'

आरती ने कहा—'महमूद जो कहें उसे मैं ज्यों का त्यों मान लेने के लिये मजबूर नहीं। मुझे लगता है इस आन्दोलन में जो देश का साथ नहीं देते वे गद्दार हैं। चाहे सरकारी नौकर हों—चाहे कम्यूनिस्ट। जापान-विरोध और फैसिस्ट विरोध का नाम लेकर आप इतनी बड़ी संघर्ष की उठान रोकेंगे! आप रुके खड़े रहेंगे पर देश न रुकेगा। पराधीनता में हाथ पैर न हिलाकर हम केवल बातें करें! इतने बड़े देश को—इतने बड़े स्वतन्त्रता संग्राम को आप 'फिफ्थ कालम' कहकर उड़ा देना चाहते हैं! केवल व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये, दलगत स्वार्थ के लिये आपकी पार्टी इस समय राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीयता का प्रश्न खड़ा कर रही है। गुलाम देश के सामने अन्तर्राष्ट्रीयता का प्रश्न केवल उस समय खड़ा होता है जब उसकी आज़ादी की लड़ाई आगे बढ़ती हो। अन्तर्राष्ट्रीयता किसी गुलाम देश की प्रगति को रोकने के लिये बड़ी से बड़ी क्रान्तिकारी पार्टी के मुँह से भी अपनी दुहाई नहीं दिलवा सकती। आप लोग साफ साफ अपनी चमड़ी बचाना चाहते हैं। इस संक्रान्ति काल में लोकयुद्ध की आड़

लेकर अपनी बिखरी और टूटी शक्ति को जोड़ना चाहते हैं। ऊँची देशभक्ति और जागरूक राष्ट्रीयता की दुहाई दे देकर।'

लीला ने कहा—सामने साथी जयराज बैठे हैं। पन्द्रह वर्ष इन्होंने जेल में बिताये हैं। मार्क्सवाद का ज्ञान सिर्फ किताबों से नहीं प्राप्त किया जा सकता। जन-संगठन में काम करना पड़ता है। देश की भीतरी स्थिति जैसी अव्यवस्थित हो गई है उसे देखते जल्द गहरा आर्थिक संकट आने वाला है। आप इतना बड़ा आन्दोलन छेड़कर जेलों को आबाद करेंगे। सोचा है—यहाँ अँगरेज़ी हुकूमत की उपेक्षा-पूर्ण नीति से कैसी पस्तहिम्मती और अकर्मण्यता फैलेगी! इस बीच जापान का हमला हो गया तो कौन अपनी भूमि, अपनी इज़्ज़त अपनी दौलत की रक्षा के लिये जनता को जापानियों के खिलाफ लड़ने को तैयार करेगा! यह राष्ट्रीय आन्दोलन जिसे पचास वर्ष के परिश्रम और त्याग से आपने बनाया है नष्ट न हो जायगा! जापानी बूटों के नीचे हम सदैव के लिये कुचल दिये जाँयगे। इसी आवश्यक भावी वास्तविकता के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की घृणा और देशभक्ति को जगाना सब से जरूरी है। कम्यूनिष्ट पार्टी कोई अवसरवादी पार्टी नहीं। उसका ध्रुव लक्ष्य है। जीवन के उच्चतम आदर्शों का प्रतिनिधित्व वह करती है। आप जैसी महिला को ऐसे आरोप लगाना ठीक नहीं।'

आरती के भाई बलराज ने कहा—'मार्क्सवादी होना बुरा नहीं। एक वैज्ञानिक जीवनदर्शन है वह। पर कम्यूनिष्ट मुझे मार्क्सवादी नहीं स्टेलिनवादी नज़र आते हैं। यह एक प्रकार का व्यक्तिवाद है। ऊपर से आज्ञा पाकर तर्क न करना—केवल पालन करना—आज्ञा पाकर जान तक दे देना—एक विजातीय संस्था की यह गुलामी क्या है? अपने देश की बदलती परिस्थिति का तर्कसंगत विश्लेषण करना चाहिये! इतने बड़े बड़े मेधावी और त्यागी—स्फटिकवत उज्ज्वल और निर्मल नेता क्या मूर्ख हैं? उसके नेतृत्व को ठुकराकर हम रूस के तानाशाह का मुँह ताकें?'

स्वयं अपने भविष्य का निर्माण करने की चेष्टा न करें ? अपने को स्वतंत्र करने की चेष्टा न कर हम एक बाहरी संस्था के कहने पर सब कुछ छोड़ दें? कान्ग्रेस में इस समय एक सिरे से दूसरे सिरे तक मूर्ति-भंजक प्रवृत्ति छाई है। वह केवल आप के तौर तरीकों को अस्वीकार ही नहीं करती। उसने गंभीरतापूर्वक क्रान्ति की विधि का विधान बनाया है। देश की प्राणभूत शक्ति किसान, मज़दूर, सिपाही, फ़ौज, पुलिस, सरकारी कर्मचारी आदि केन्द्रीभूत होकर समय पर एक साथ बिखरे ज्वालामुखियों की तरह फूट पड़ेंगे। मुद्दत बाद देश ने लगन के साथ, वैज्ञानिक विस्तार के साथ लड़ाई की तैयारी की है। मैं डेमोक्रेटिक क्रान्ति और समाजवादी क्रान्ति को एक साथ, सम्बद्ध घटनाओं जैसे घटित होने वाले क्रम की तरह भविष्य में आते देखता हूँ। गाँधीवाद जैसे सात्विक और असंघर्षशील दर्शन के भीतर से यह राजनैतिक, आर्थिक विद्रोह फूटेगा! समय की गति यह कहती है।'

जयराज ने कहा—'सब ठीक है। पर समय की—स्थिति की उपयुक्तता भी एक चीज होती है। अगर हम दुनिया के दो दलों को ठीक ठीक समझ लें—प्रगति और प्रतिक्रिया के दलों को पहचान लें तो आज की बदली स्थिति में अपनी राष्ट्रीय नीति का सही निर्धारण भी कर सकेंगे। इस समय सारा संसार फैशिज्म के दानव का विरोध कर रहा है। हम संसार की शेष प्रगतिशील शक्तियों के विरुद्ध जाकर संसार की जनता के सामने अपने स्वाधीनता के दावे को कमजोर करें? इस समय फैशिज्म का विरोध कर उससे लड़ना ही साम्राज्यवादी शिकंजे से राष्ट्रीय मुक्ति का उपाय है। हम आन्दोलन—'डाइरेक्ट' आन्दोलन छेड़ने के विरुद्ध हैं। इसका यह अर्थ नहीं हम जनता में आत्मनिर्णय की भावना का उदय और देश का संगठन नहीं चाहते! कम्यूनिस्टों की स्थिति इस समय विचित्र है। एक ओर आप उन्हें देश-द्रोही कहते हैं। दूसरी ओर उनकी फैसिस्ट विरोधी पुकार और कान्ग्रेस के नेताओं की रिहाई की माँग और राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की

ललकार के कारण सरकार उन्हें भीतर भीतर अपना शत्रु समझ रही है। हम लोगों के विरुद्ध क्या नहीं कहा जाता ? पहले हम मास्को से रुपया पाते थे। अब अँगरेजों से पाते हैं। एक ओर अँगरेज देश विदेश में कान्ग्रेस नेताओं को फैसिस्टों का एजेन्ट बताकर प्रचार कर रहे हैं। रेडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी उनकी हाँ में हाँ मिला रही है। हम लोग कान्ग्रेस नेताओं को इस इलज़ाम से बचाते फिरते हैं। जनता का यह हाल है कि वह राजनैतिक सिद्धान्त और नीति का भेद नहीं जानती। सब को एक लकड़ी से हाँकती है। सब को कम्यूनिस्ट समझती है। क्या हम अपने को बचाने के लिये यह नीति अपना रहे हैं ? अँगरेजों, रूसियों से रुपया खाकर अपना देश उनके हाथ बेंच देना चाहते हैं ? मामूली, चवन्नी वाले कान्ग्रेसी वालन्टियर ऐसा कहें तो हर्ज नहीं। आप लोग स्वयं ईमान रखते हैं। दूसरों के ईमान का सम्मान करें। राजनैतिक मतभेद होने के कारण किसी की नियत पर हमला न करिये।'

शीला ने कहा—'यह आपस की बात है। 'टेबिल टाक' में सब चलता है। आप लोगों ने सोचा है—देश के जनमत को आप अपने व्यवहार और नीति से कितना क्षुब्ध किये दे रहे हैं। जनता प्रचंड गति से एक ओर चलेगी—आप उसे दूसरी ओर ले चलेंगे ! सोचिये ! यह आन्दोलन कितनी बड़ी बात है ! लोगों की चेतना में कितना बड़ा उलट फेर है। गान्धीजी जैसे सिद्धान्तप्रिय अहिंसावादी ने उसे 'खुला विद्रोह कहा है। लोग बराबर क्रान्ति के गीत गाते थे। दो साल पहले के व्यक्तिगत सत्याग्रह को आप ने हास्यास्पद माना था। उस समय आपने गाँधीजी की कटु आलोचना की थी। सामूहिक आन्दोलन—जनसंघर्ष की आवाज आपने उठाई थी। आज देश उस अभिप्रेय की ओर आप से आप पहुँच रहा है तब आप एक विदेशी शक्ति के इशारे पर रास्ते में रोड़े अटकाते हैं !'

आरती ने कहा—'ब्रिटेन अपने को फैसिस्ट विरोधी कहता है। नौ अगस्त के बाद से उसने हमारे विरुद्ध जो युद्ध छेड़ रक्खा है वह

क्या फैसिस्टी नहीं है ? नौ अगस्त के बाद कितनी बेरहमी से दमन किया जा रहा है ! जिस प्रकार देश को लोहे के प्रहारों के नीचे कुचला जा रहा है वह क्या है ? एक ओर कान्ग्रेस फौज को युद्ध में भाग लेने से रोकेगी। उनमें प्रचार करेगी कि वे इस साम्राज्यवादी युद्ध में किसी प्रकार का, कोई सहयोग न करें। दूसरी ओर कम्यूनिस्ट गाल बजा बजा कर इसे जनता का युद्ध कहेंगे। पग पग पर कान्ग्रेस की नीति का और आप की नीति का संघर्ष होगा। आप का कहना है संसार की जनता एक नयी दुनिया के लिये लड़ रही है। उसमें जीवन की समस्त सुविधाओं का अधिक उचित और न्यायपूर्ण वितरण होगा ! पर एशिया में चलने वाले सबसे बड़े स्वाधीनता संग्राम को जो सत्ता ऐसे फासिस्ट तरीके से कुचल रही है उसे आप सहयोग देते हैं ? कैसा अन्तर्विरोध है यह ! किताबी तर्कों के सहारे आप फैशिज़्म को साम्राज्यवाद का विकसित और अन्तिम रूप बता सकते हैं। पर हमारा पहला और आखरी दुश्मन साम्राज्यवाद है। फैशिज़्म एक सामयिक लहर है। उठी है—खत्म हो जायगी। सबसे बड़ा प्रश्न स्वाधीनता का है। स्वतंत्र होने के बाद हम रूस नहीं सब फैसिस्ट-विरोधी देशों के साथ कन्धा से कन्धा भिड़ा कर नाज़ीवाद, साम्राज्यवाद, पूँजीवाद, जुल्म और बर्बरतावाद के विरुद्ध ज़ेहाद बोल देंगे ! बिना अपनी स्वतंत्रता प्राप्त किये केवल अन्तर्राष्ट्रीय हिमायत के लिये देश इस युद्ध को लोकयुद्ध नहीं मान सकता। देश की सर्वोच्च सत्ता जनता के हाथ में आनी चाहिये। आप कान्ग्रेस-लीग की एकता के नारे पर जोर दे रहे हैं। यह प्रकारान्तर से साम्राज्यशाही का प्रचार है। आप नहीं समझते, स्वाधीनता की प्रतीक राष्ट्रीय सरकार के मार्ग में एकता का अभाव अड़चन नहीं डाल रहा। साम्राज्यवादी मालिकों की इच्छा सत्ता त्याग कर कहीं जाने की नहीं होती……'

जयराज ने कहा—'आप असली दुश्मन को फिर भूल रही हैं। असली दुश्मन वे हैं—देश के बाहर भी—भीतर भी जो इस

समय विश्व की विजयिनी जनता के प्रति विश्वास उत्पन्न करने का यत्न नहीं करते? कम्युनिज़्म सच्ची राष्ट्रीयता सिखाती है। मैं पहले आतंकवादी था। आतंकवाद ने मुझे अपने पर विश्वास करना सिखाया। कम्यूनिज़्म ने जनता पर विश्वास करना सिखाया विश्व की जनता आज एक हो गई है। हमारा सम्मिलित परिवार बन गया है। सम्मिलित स्वार्थ हैं हमारे! इस जनता-परिवार में हमारे जैसे पराधीन वर्ग ही सबसे कमज़ोर हैं। हमें कोई ऐसा काम नहीं करना जिससे देश देश की सर्वहारा को क्षति पहुँचे। भारत की स्वतन्त्रता का सवाल विश्व की जनता की स्वतंत्रता की समस्या का ही एक भाग है। उससे अलग कर उसे नहीं देखा जा सकता। पं० नेहरू यह कहते आ रहे हैं। मुझे आश्चर्य है आज जब इस बात की अहमियत समझने का कठिन मौका आया है तब वे स्वयं अपने सिद्धान्त को भूल रहे हैं। आप विश्व की जागृत मानवता और यूरोप में नाज़ी विजय के गढ़ तोड़ती हुई जनता की आशा के विरुद्ध इस लोकयुद्ध के भारतीय 'बेस' को कमज़ोर करने जा रहे हैं। इस तरह के आन्दोलन से जापान को भारत पर विजय प्राप्त करने में कितनी आसानी होगी! हम स्वयं अपने को अपने देश की रक्षा करने के अयोग्य बना रहे हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी काँग्रेस के गर्भ से उत्पन्न हुई है। रूस से वह पथप्रदर्शन की नहीं केवल नैतिक सहानुभूति और क्रान्तिकारी बन्धुत्व की आशा करती है। आपका विचार गलत है हम उसके मुखापेक्षी हैं। यों हम संसार की किसी भी प्रगतिशील शक्ति के मुखापेक्षी हैं। सबसे हमें प्रेरणा मिलती है। रूस ने जिस प्रकार दुश्मन की ताकत का सामना किया है वह दुनिया के इतिहास में बेनज़ीर है। दीवार की एक एक ईंट वहाँ प्राणधारी बन कर लड़ी है। पर इससे हमें अपना दृष्टिकोण धुँधला करने की स्फूर्ति नहीं मिलती। हम अपनी राष्ट्रीय समस्याओं को और तेज़ रौशनी में देख सकते हैं। बखूबी समझ सकते हैं।'

बलराज ने कहा—'मैं राजनीति नहीं जानता समझता। मेरे सामने केवल देश की पूजा और उस पूजा में जीवन के सबसे बड़े लक्ष्यके लिये अपने को उत्सर्ग कर देने का सवाल है। साम्राज्यवाद को समूल नष्ट करना हमारा उद्देश्य है। इस प्रश्न पर समझौता नहीं हो सकता। कम्युनिस्ट पार्टी मेरी समझ में इस समय एक 'सोशल डेमोक्रेटिक' पार्टी रह गई है। उसके सामने कोई क्रान्तिकारी प्रोग्राम नहीं है। जो लोग ठीक राह पर चल रहे हैं उन्हें वह बरगला रही है। जब देश सामूहिक आक्रमण की चेतना और उत्कट बेचैनी से तिलमिला रहा है तब सरकार के साथ बेशर्त सहयोग की बात करना कैसे एक उग्र दल को शोभा देता है·····'

आरती ने कहा—'यही नहीं भैया! दूसरा पहलू लीजिये। देश में अँगरेजों के विरुद्ध—उनके नात्सियों जैसे अत्याचार के विरुद्ध तीव्र असन्तोष, क्रोध प्रतिकार की पिपासा उग्र रूप से फैली है। जन-साधारण के भीतर साम्राज्य-विरोधिनी वृत्ति जागी है। उधर कम्यूनिस्ट अँगरेजों के पक्ष की नीति और नारा लेकर चल रहे हैं। भारतवर्ष में अँगरेज-द्रोह को तजकर जो भी पार्टी अँगरेज-परस्ती सिखाती है वह जनता के हित में पैशाचिक है। वह यहाँ चल नहीं सकती। हमें अँगरेज़ों के खिलाफ़ अधिक से अधिक घृणा चाहिये। उनके प्रति नफ़रत—केवल नफ़रत हमारा नारा है। इस आन्दोलन में किये गये हिंसात्मक कार्यों की जिम्मेदारी कान्ग्रेस और जनता पर लादते समय सरकार कम्यूनिस्टों के तर्कों और साक्ष्यों का सहारा लेगी। कम्यूनिस्ट भी इस नये रूप में कितने बेसुध हो गये हैं! जनता जो हिंसात्मक कार्य कर रही है सरकार द्वारा अत्य-धिक उत्तेजना दिलाये जाने पर कर रही है। जिस समय विदेशी सत्ता के असंख्य भारतीय और अँगरेज कर्मचारियों का जीवन जनता की दया पर निर्भर हो जायगा उस समय क्या होगा? इस उत्तेजना की प्रतिक्रिया तब जनता के मन पर कैसी भयानक होगी! आज जो

रीने में गोलियाँ खाते हैं वे उस समय क्या उससे दूने उत्साह से नर संहार न करेंगे ! प्रतिहिंसा की यह आग कहाँ जाकर बुझेगी ! शहीदों के खून से सिंची यह बदले की लू तब कितने घर परिवार वीरान न करेगी ! पर कम्यूनिस्टों को तो रूस की रक्षा करनी है। रूस विजयी हो—चाहे देश में लगी यह संग्राम की आग सदा के लिये बुझ जाय ! अपने देश में साम्राज्यवाद की रीढ़ न तोड़कर हम बाहर की चिन्ता करें ! कम्यूनिस्टों की सबसे घातक नीति यह है कि वे देश के लड़ाकू तारुण्य को सरकार-परस्ती सिखा रहे हैं। वर्ग के स्वार्थों को देश के सम्मिलित स्वार्थों से अधिक महत्त्व दे रहे हैं ! यह अनुचित है। विदेशी पूँजीवाद को पहले खत्म करना होगा। देशी पूँजीवाद उसके बाद खत्म होगा ! कान्ग्रेस को पूँजीवादी दल के पैसे पर पलने वाली संस्था कहने वाले आज उसके बराबर भी कदम उठा कर चल नहीं पा रहे। संसार में विजित और पराजित देशों ने सदैव इसी प्रकार अपनी खोई आज़ादी हासिल की है। स्वतंत्रता प्राप्त करने की यह विश्ववंद्य स्वीकृत प्रणाली है। बिना खुला मोर्चा साधे कैसे इतनी पुरानी खोई आज़ादी मिल सकती है ? संगीनें और किलेबन्दी हमारे मार्ग को नहीं रोक सकती। आप लोग सँभले ! इतिहास कभी आपको क्षमा न करेगा। युग युग तक आप घृणा की दृष्टि से देखे जाँयगे ! हमारी विजय निश्चित है। देश या आज़ादी के कुन्दन की तरह दमकता हुआ इस आग से कढ़ेगा या सदा के लिये नष्ट हो जायगा। दो में एक से कम में वह सन्तुष्ट नहीं हो सकता। पर आप कहाँ चले जाँयगे ! लोग आप को क्या कहेंगे !'

लीला ने जयराज की ओर व्यंगभरी दृष्टि से देखा। उसके मुख पर बुद्धि और तर्क—राजनीति के वैज्ञानिक विश्लेषण और दूरदर्शिता का अभिमान था। लीला ने इँगलैंड में रहते हुए रूस-यात्रा की थी। वहाँ समता के शासन और सुख का वरदान उसने अपनी आँखों देखा था। कम्यूनिष्ट पार्टी की मेम्बर वह न थी। कम्यूनिष्ट पार्टी की सदस्यता मिलने के पहले व्यक्ति को अपनी सार्वजनिक सेवा का

रेकार्ड दिखाना पड़ता है। लेकिन पार्टी के अत्यन्त क्रियाशील समर्थकों में उसकी गणना होती थी। रुपये पैसे की कमी न थी। उसकी आय का अधिकाँश रुपया पार्टीफन्ड में जाता था। आरती की बात से जहाँ एक ओर वह उसकी हार्दिकता और सचाई पर प्रसन्न हुई वहाँ उसे अपनी समझ के अनुसार उसकी बचकानी बुद्धि पर कौतुक भी लग रहा था। बोली—'सारे संसार में कम्यूनिष्ट पार्टी ही वैज्ञानिक क्रान्तिवाद की प्रतीक है। उसी के कार्यक्रम को अपना कर बड़े से बड़े क्रान्तिकारी अपने सपने को सत्य में परिणत करते हैं। मुश्किल यह है कि उसको अपनाने के पहले बहुत मंज़िलें पार करनी पड़ती हैं। जीवन की बड़ी से बड़ी—वीरतापूर्ण और बलिदानी भूल को भी स्वीकार करना पड़ता है। एक बौद्धिक 'डाक्टरिन' होने के कारण लोग उसे कम समझ पाते हैं—उसकी अपील सीमित होती है। पर जो एक बार उसे समझ लेता है वह दुनिया को बेहतर बनाने वाले इस वैज्ञानिक और सफल तरीके को छोड़ नहीं सकता। छोड़कर कहाँ जायगा!'

आरती ने कहा—'कम्यूनिज़्म के सिद्धान्त से कौन विरोध प्रकट करता है! कोई ईमानदार आदमी कर नहीं सकता। दुनिया के लिये उससे बड़ी और सुसंतुलित आर्थिक योजना इतर कोई नहीं। पर हिन्दुस्तान की कम्यूनिष्ट पार्टी का रवैया आपत्तिजनक है। उन्होंने देश की पीठ पर छुरी भोंकने की सोची है। जिसकी कभी कोई कल्पना न कर सकता था वह वे कर रहे हैं। सबसे पहले देश की आज़ादी का सवाल है। इस घृणित शासन व्यवस्था को पहले खत्म करना है। इसमें जो हमारी सहायता नहीं करता वह हेय है। वह केवल सहायता नहीं करता वरन शत्रु के पक्ष को प्रबल करता है। उसकी दमनकारी शक्ति को बल देता है। उसे हमारे मन्सूबों को कुचलने के सुझाव देता है। यह सब क्या है! कैसा बेरहम मज़ाक है इस सदियों की लुटी कुचली जनता के साथ! कम्यूनिज़्म एक दिन संसार में फैलेगा ही। उसे कौन रोक सकता है! पर भारत को रूस का मानस-

पुत्र नहीं बनना है। रूस की व्यवस्था की नकल हम आँख मूँदकर नहीं कर सकते। पहले हमें जीवित रहना है। खाने, पहनने हकों के बटवारे का सवाल बाद में आता है। आप पहले गाड़ी देखते हैं—घोड़े को नहीं।'

देर तक बहस चलती रही। रोज का हाल था। लीला का घर कम्यूनिस्टों का अड्डा था। शीला और बलराज अब यहाँ आ गये थे। घर छोड़ने के बाद कुछ दिन पड़ोस के एक गाँव में बलराज ने अपने एक मित्र के यहाँ काटे। पर शीला को लखनऊ पहुँचने की धुन थी। जल्द से जल्द वह लीला के पास पहुँच कर आरती से मिलना चाहती थी। वहाँ उसका मन न लगता था। दूसरे के घर तीन बच्चों के साथ पति-पत्नी का रहना दो चार दिन के बाद शीला को खलने लगा। बलराज परिवार को अपने मित्र के यहाँ छोड़कर अकेले लखनऊ जाना चाहते थे। पर शीला न मानी। उसके पास इतना रुपया था कि साल दो साल आसानी से कट जाते। बलराज को वह उपार्जन की चिन्ता से मुक्ति दे सकती थी। बलराज को मित्र की अभिन्नता पर भरोसा था। शीला देहात में रहेगी तो अपने घर पर रहेगी। वर्ना लखनऊ जायगी। उसके पिताजी ताल्लुके पर थे। उनका बँगला खाली पड़ा था। पर शीला बहन के यहाँ ठहरी। आरती पहले से वहाँ थी। लीला के विचारों से आरती के विचारों का कहीं मेल न खाता था। दिन रात वहाँ कम्यूनिस्ट नवयुवक नवयुवती आया करते थे उठते बैठते आन्दोलन को खत्म करने की चर्चा करते थे—योजना बनाते थे। आरती को यह देख कर नैसर्गिक चिढ़ लगती थी। उसका रोम रोम घृणा से तिलमिलाने लगता था। सरकारी नौकरों और राज्यभीरु नागरिकों की, आन्दोलन के प्रति उदासीनता समझ में आती थी। वे विरोधी न थे। राष्ट्रीयता, बौद्धिकता और क्रान्ति का दम भरने वाले ये जन-सेवक जिन्होंने अपने को खपा खपा कर तीव्र वर्गचेतना उत्पन्न की थी और कष्ट सहन,

आत्मत्याग में जो बेमिसाल थे वे कैसे केवल रूस को बचाने के लिये गुमराह हो रहे हैं। वह समझ न पाती थी। ये लोग देश ज्ञानराशि, बुद्धिसागर राष्ट्रीय नेताओं को क्या समझते हैं? आत्म-विश्वास का उसके निकट मूल्य है। सबके निकट होता है। पर यह आत्म-विश्वास नहीं बुद्धि का विकृत अहं है। सारा देश एक ओर—ये मुट्ठी भर बुद्धिजीवी एक ओर! यहाँ आने पर महमूद से उसने नयी नयी बातें जानी हैं। महमूद कितना खरा है। कैसी ज्वलन्त राष्ट्रीयता है उसकी! मुसलमान होते हुए भी देश के लिये बलिदान की कैसी उग्र, अनात्म भावना है उसके अन्दर! महमूद से घन्टों बात करने—समझने बूझने के बाद वह इन वर्ग-वादियों से घृणा करने लगी है। इस समय किसी प्रकार के भेद की बात गुनाह है। जब राष्ट्र अपने जीवन की सबसे बड़ी लड़ाई लड़ रहा हो उस समय, वर्ग-हित को ठुकराना पड़ेगा। कम्यूनिस्ट यह सब नहीं देखते। महमूद ने उसे बताया है—इन लोगों का मज़दूरों पर कैसा गहरा प्रभाव है। इन लोगों का सहयोग इस राज्यक्रान्ति को सफल बनाने के लिये जरूरी है। ये लोग कान्ग्रेस का साथ न देंगे तो केवल तार काटना, खज़ाना फूँकना हाथ लगेगा। वे बड़ी बड़ी मिलें चालू ही रहेंगी जहाँ अपरिमित परिमाण में लड़ाई के लिये सामान बनता है—युद्धोपयोगी उत्पादन होता है। इन लोगों के असह-योग और पारस्परिक विरोध से आन्दोलन का आधा अर्थ समाप्त हो जायगा। बहस करते समय आरती कठोर हो जाती है। उसके सामने मिलों और फेक्टरियों का काल्पनिक चित्र घूम जाता है। एक ओर कान्ग्रेस कार्यकर्ता मजदूरों को हड़ताल करने के लिये उत्तेजित कर रहे हैं—उन्हें मिलों को छोड़कर बाहर निकल, स्वतंत्रता की लड़ाई में हिस्सा लेने को ललकार रहे हैं। दूसरी ओर कम्यूनिस्ट उन्हें देश-रक्षा और जापान के आक्रमण का भय दिखाकर अधिक से अधिक माल उत्पादन करने के लिये बहका रहे हैं। इतनी बड़ी संस्था के सब किये कराये पर पानी फेरने तुले हैं!

शीला और बलराज भी आरती की तरह सोचते थे। इस बीच में कब लीला कम्यूनिस्टों के संपर्क में आई और भीतर भीतर उनके सिद्धान्तों से यहाँ तक प्रभावित हो गई यह सब उन्हें पता न था। लीला से एक साल से उनकी ख़त किताबत बन्द थी। बलराज सब समझते थे। दार्शनिक वृत्ति के होते हुए भी राजनीति की पेचीदगी जानते थे। शीला कम समझती थी। पर आरती ने सारी बात समझा समझा कर—बलराज के सामने महमूद की बताई सब बातें दोहरा कर दोनों को अपने जैसा 'कम्यूनिस्टविरोधी बना दिया था। जयराज लीला के साथ रहते थे। आरती देखती—दिन भर पड़े पड़े सिगरेट फूँका करते हैं—लम्बी चौड़ी बातें करते हैं। लेकिन लीला के मन में उनके लिये प्रबल आकर्षण था! शीला और बलराज ने इस बात को भाँपा। दोनों के आपसी व्यवहार में मित्रता से कुछ अधिक था! और यह, कुछ, छिपाये न छिपता था। इस 'कुछ' के भीतर कभी कभी जीवन का सबसे बड़ा सत्य आकर झाँक जाता था! आरती बराबर लोकयुद्ध पढ़ती थी और जिस प्रकार इस महान लहर को ये लोग नगण्य साबित करने पर तुले हुए थे, वह समझती थी। बराबर वह भैया भाभी के आने के बाद वहाँ से अन्यत्र चलने और रहने की रट लगाये थी। बलराज, भाभी के आने तक उसने प्रतीक्षा की। दोनों ने उसे लीला के यहाँ रहने का आदेश दिया था। पर अब उनके आ जाने के बाद उसे एक एक क्षण वहाँ भारी लग रहा था! शीला को छोड़ने में संकोच होता था। एक दिन आरती ने दृढ़ स्वर में कहा—'अगर तुम मेरे साथ न चलोगी तो मैं कहीं और चली जाऊँगी। यहाँ रहना पाप है। भगवान को कौन मुँह दिखाऊँगी?'

शीला ने कहा—'जहाँ कहो चलूँ! अपने भैया से कहो न! कहाँ चलते हैं?'

आरती ने कहा—'भैया! एक छोटा सा मकान ढूँढ़िये। यह बँगला मुझे खाये जाता है। यहाँ उठते बैठते जो बात होती है

उसे सुनना पाप है। मेरा दिल बेचैन रहता है। और जगह शान्ति से रह तो सकूँगी। ये लोग देशद्रोही हैं।'

बलराज ने बहन की ओर देखा। आरती के चेहरे पर गहरी वेदना के चिह्न स्पष्ट उभर आये थे। शीला भी उसका मुँह देख रही थी। वहाँ एक न रुकने वाले—एक न सुने जाने वाले तुमुल कोलाहल के स्वर साकार हो उठे थे। बलराज ने कहा—'ऐसी बात है! हम कल यहाँ से चल देंगे। मैं तुम लोगों के आराम के ख्याल से यहाँ पड़ा था। तुम्हें कष्ट होता है तो मैं यहाँ क्या करूँगा! शीला! तुम चलोगी?'

शीला ने आरती की ओर स्नेहपूर्वक देखकर कहा—'जरूर चलूँगी। कोई अच्छा सा मकान या काटेज ढूँढ़ लो। पापा का बँगला खाली पड़ा है। चलो वहाँ चलें। वहाँ रहने में आरती की आत्मा को त्रास न मिलेगा!'

बलराज ने कहा—'वहाँ मैं न चलूँगा। लीला की बात दूसरी है। यहाँ मैं रह सकता हूँ। ससुर के बँगले में बिना बुलाये रहना मैं अपमान समझता हूँ। जहाँ वे सुनेंगे बाबूजी के निकालने पर हम लोग यहाँ रहने आये हैं वैसे ही धर्म-संकट में पड़ जाँयगे। बाबूजी ने उन्हें ज़रूर लिख दिया होगा। कोई बात नहीं। इतने बड़े शहर में जगह की कमी नहीं। आरती जो कहे मुझे मंजूर है।'

लीला ने दूसरे दिन बहुत रोका पर ये लोग न रुके। सुन्दर बाग में एक मकान मिल गया। शाम को आरती, बलराज, शीला, उसके बच्चे नये घर में चले आये। आरती का मन हल्का हो गया। यहाँ आकर उसने संतोष की साँस ली। रात को खाना पीना हो जाने पर सब लोग जमीन पर लेटे। गृहस्थी जमते जमते देर लगती है; शीला ने कहा—'लीला ने ज़रूर बुरा माना होगा। एकदम हम लोगों ने नोटिस दे दिया। यह भी कोई बात है! पर आरती की ज़िद.....'

'नहीं भाभी! मेरी ज़िद नहीं, आत्मा की पुकार! वहाँ मुझे

लगता था मैं किसी अवांछनीय षड्यन्त्र में भाग लेती रहती हूँ। लीला को मैं ऐसा जानती होती तो कभी वहाँ न जाती। वह तुम्हारी बहन है तो मेरी ग़ैर नहीं। मेरी भी बहन है। पर इस मामले में पति, भाई, पिता छूट जाते हैं। गाँव का हाल नहीं मिलता। वहाँ क्या हो रहा है? अख़बार में समाचार तक नहीं छपते।'

बलराज ने कहा--'महमूद को हमारा यह मकान मालूम नहीं। आया तो लीला के यहाँ तलाश करेगा। वारंट उसके नाम होगा ही। ज़रूर अंडरग्राउंड होगा। कल मैं यूनिवर्सिटी जाऊँगा। आजकल वहाँ रोज जुलूस निकलते हैं और लाठी चार्ज होता है। यूनियन ग़ैर—कानूनी क़रार दिया जा चुका है। यह मौक़ा है जब मैं आगे बढ़कर कुछ कर सकता हूँ। यह भी सोचता हूँ एक बार गाँव हो आऊँ। शमीम बेहद घबराती होगी। महमूद लापता होगा। उसे ढारस बँधाना ज़रूरी है। आज सुना है—विक्रमसिंह यहाँ ए० एस० पी० होकर आ रहा है। आरती! आज मैंने खबर सुनी है बलिया में काँग्रेसी सरकार क़ायम हो गई है। यही नहीं पूर्वी जिलों की जनता ने एक प्रकार से अँगरेजी शासन व्यवस्था को ही समाप्त कर दिया है। लेकिन बुरी तरह दमन हो रहा है.....'

जरूर जाओ भैया! हमारे जिले में—विशेषकर अपने गाँव के आसपास गहरा संघर्ष हुआ होगा। तुम्हें वहाँ रुकने की ज़रूरत जान पड़े तो हम लोग भी वहाँ आ जायँगे। कम से कम मैं चली आऊँगी। बाबूजी से मिलोगे न! कभी कभी अम्मा के लिये मेरा जी डूबने उतराने लगता है। मिल लेना जाकर!'

'क्या होगा आरती! जो जहाँ है, ठीक है। बाबूजी से अब मैं जल्द न मिलूँगा। केवल शम्मी, महमूद से मिलूँगा। महमूद का पता लगाना है। चाहूँगा उसे साथ लेता आऊँ! वहाँ रहेगा तो पुलिस की गिरफ़्तारी में आ जायगा। यहाँ छिपा रहेगा!'

'प्रतिमा दीदी को भी देखना। मुमकिन है उनके खिलाफ़ वारंट

हो। उन्हें तुम जरूर ले आना। महमूद की मुझे चिन्ता नहीं। वे अपना बचाव कर लेंगे पर····· ·····'

'प्रतिमा को तुम कम समझती हो! महमूद बच्चा है उसके सामने। मुझे वह एक साकार रहस्य—एक तिलस्मी भेद जैसी जान पड़ती है। इतने दिन गाँव में रही। हम लोगों से आत्मीयता भी हो गई। पर आज तक उसके विषय में अधिक न जान सका। कौन है—कहाँ की है—क्या करती है—खाती पीती है। लगता है जरूर किसी गुप्त आतंकवादी दल से अब भी उसका सम्बन्ध है। उसका खर्च कहाँ से चलता है? पर अपने प्रति कितना विश्वास पैदा कर लेती है! गाँव में आते देर नहीं—जिले के सारे कार्यकर्ताओं से परिचय हो गया। कोई कांग्रेस मीटिंग हो प्रतिमा का उसमें होना जरूरी है।'

आरती ने कहा—'भाभी! लाल, गुलाल, कुसुम को बड़ी तकलीफ होगी। ज़मीन पर कभी सोये नहीं। कैसे नींद आयगी! ये गाँव में रह जाते तो अच्छा था।'

'कल चारपाइयाँ आजाँयगी आरती! रात न हो गई होती तो मैं जाकर ले आता। क्या ज़रूरत है, इन्हें घर पर छोड़ने की? जहाँ मैं रहूँगा—जैसे मैं रहूँगा—ये रहेंगे। तुम्हें अलबत्ता तकलीफ होती होगी। आज भर की बात है।'

'नहीं भैया! मैं तुम्हारे साथ ज़मीन क्या कंकड़ों पर आराम पाऊँगी। कभी कभी सोचती हूँ—मेरे पीछे तुम लोगों ने कितनी आपत्ति झेली। क्यों भाभी?'

'और क्या! मज़ा तुम पाओगी—मुसीबत हम झेलेंगे। दुनिया का यही दस्तूर है। एक बात बताओ—विक्रमसिंह से तुम्हारी मुलाकात है या नहीं? सुना है बड़े शरीफ आदमी हैं। तुम उन्हें जानते नहीं? लीला के साथ पढ़ते थे। एक दिन उनकी तारीफ़ कर रही थी। मैंने आरती की बात बताई तब चुप हो गई।'

'लीला सरकारी आदमियों की तारीफ़ करेगी ही। भाभी! क्यों

ऐसे आदमियों का नाम लेती हो। इतने जल्द लखनऊ जैसे बड़े शहर में पोस्टिंग हो गई। ज़रूर अपनी कारगुज़ारी से सरकार को खुश कर लिया है। आजकल अफ़सर जितना ज़ालिम होगा उतना ही सरकार का प्रियपात्र होगा·····।'

'लोला समझदार लड़की है बीबी! मेरी तुम्हारी तरह कुएँ की मेढक नहीं। दुनिया घूम आयी है। आदमी पहचानती है। जरूर उसमें गुण होंगे तब तारीफ करती है।'

'विवाह कर ले उससे। मैं मना नहीं करती। तुम चाहो तो बहन का पैग़ाम उस तक पहुँचा दो। कम से कम जयराज से वह ज्यादा ईमानदार है। जो करता है डंके की चोट पर करता है। छिप कर देशवासियों के गले पर छूरी नहीं चलाता!'

'देखो आरती!'—शीला ने गंभीर स्वर में कहा—'सब लोगों के विचार एक से हों यह जरूरी नहीं। हर इन्सान को अपने स्वतंत्र विचार रखने का अधिकार है। तुम इसे रोक नहीं सकतीं। इन्सान को उसका दर्जा देना ही पड़ेगा। इस तरह एक दूसरे से नफ़रत करने से काम न चलेगा। जयराज को तुम क्या समझती हो? पन्द्रह वर्ष उन्होंने जेल में बिताये हैं। वहाँ धीरे धीरे उसका रुझान कम्यूनिज़्म की ओर हुआ। वह पार्टी मेम्बर बना। पार्टी के कानूनी क़रार दिये जाने पर वह छूटा। उसके विचारों से असहमत होते हुए भी तुम्हें उसकी देशभक्ति और ज्वलन्त त्याग का अनादर करने का अधिकार नहीं। उसने उस समय जान हथेली पर लेकर काम किया जब काँग्रेसी नेता साल साल की जेलयात्रा पर कालमों लम्बे स्टेटमेंट पत्रों में देकर कैद में दाखिल होते थे। आज तुम्हारा उससे मतभेद है तो तुम उसे एक सरकारी नौकर से बुरा ठहराओ! इन्सान को कितनी भी बड़ी उत्तेजना में दिमाग का संतुलन न खोना चाहिये!'

आरती ने कहा—'भाभी! मैं मजबूर हूँ। इस समय मुझे इस आन्दोलन को छोड़ कर कोई बात नहीं सूझती। चाहे जितने दिन जेल में रहा हो—चाहे जितना बड़ा क्रान्तिकारी हो इस—समय वह

आन्दोलन को क्षति पहुँचाता है तो सबसे बड़ा पातक करता है। मदद न करना एक बात है; बाक़ायदा विरोध कर संगठित होती क्रान्ति को धक्का देना बिलकुल दूसरी। मैं उन्हें वीर तब मानती जब वे पार्टी की गुलामी छोड़ कर व्यापक राष्ट्रीय हित को देखते और बढ़ कर नेतृत्व करते। मेरा सिर उनके आगे नत हो जाता। आज वे स्वयं अपने साथ बेदर्द मज़ाक कर रहे हैं। एक दिन खुद पछतायँगे। विचारों की स्वाधीनता की मैं क़ायल हूँ भाभी! पर जब वह मूरख की टेक बन जाती है तो त्याज्य और उपेक्षणीय हो जाती है। लीला की बात मैं नहीं करती। महमूद कह रहे थे—ऐसे न जाने कितने लड़की-लड़के हैं जो फैशनेबुल कम्यूनिस्ट हैं। पर जयराज भीगा हुआ आदमी पन्द्रह साल जेल में अपने को फ़ना करते रहने के बाद भी अपना रास्ता पहचान न पाया! उसे मैं क्या कहूँ? एक बात और है भाभी! कभी कभी आदमी थक जाता है। उस समय वह अपने को संघर्ष के लायक नहीं अनुभव करता। ज्यादा दिन जेल में रहने से और अपनी सेवाओं का सम्मान न होते देखकर अक्सर इन्सान संघर्ष की ओर से विमुख हो जाता है। मानव का स्वभाव है! बिरले ऐसे होते हैं जो आजीवन संघर्ष की ज्वाला में तप तप कर और लाल होते जाते हैं।'

बलराज ने कहा—'शीला! तुम्हारी बहन का दिल बुरी तरह इस भूतपूर्व आतंकवादी और वर्तमान साम्यवादी पर आया हुआ है। क्या बुरा है; पापा का घर जमाई बन कर रहेगा। क्रान्तिकारी जो ठहरा! इन्हें सब कुछ शोभा देता है। इतने दिन फसल बोई है। अब काटने का समय आया है।'

शीला ने कहा—'तुम्हें रश्क हो रहा है। तुम्हें कभी पापा ने इनकार किया है? इतनी बड़ी इस्टेट हमीं लोगों की है। चाहे खायें—चाहे खिलायें।'

बलराज ने कहा—रश्क मुझे उस सूरत में होगा जब कोई तुम्हें पार करने की कोशिश करे! धन का लालच मुझे क्या होगा! कहीं और न जाकर यूनिवरसिटी में ही पड़ा रहता तो

कितना रुपया कमा लेता आज तक! एक बात बता दूँ। क्रान्तिकारी चाहे जितना बड़ा हो—जयराज पालतू पति होगा।'

'फालतू भी भैया!' आरती ने बैठ कर हँसते हुए कहा—'वल्लाह! क्या दिमाग पाया है। एक दिन बोले—काँग्रेसी मुसलमान फ़िफ्थ कालमिस्ट हैं। मुसलिम जनता के लिये वे गद्दार हैं। मैंने कहा—कम्यूनिस्ट क्या हैं? रूस को छोड़कर किस देश में कम्यूनिस्टों ने अपने राष्ट्र के साथ गद्दारी नहीं की। मैं यह नहीं कहती मुस्लिम लीग में देशभक्त नहीं। महमूद काँग्रेस में न होकर लीग में होते तो भी वे इतने ही बड़े देशभक्त होते। लेकिन प्रत्येक काँग्रेसी मुसलमान को मुस्लिम हितों का गद्दार कहना क्या मायने रखता है?'

'जाने दो'—बलराज ने कहा—'शीला को वह पसन्द है—लीला को अज़हद पसन्द है। हमसे तुमसे मतलब? कोऊ काहू में मगन—कोऊ काहू में मगन! दुनिया है। मुझे पापा का ख्याल होता है। मालूम नहीं लड़की के रोमाँस का उन्हें पता है या नहीं।'

'कोई दरवाजा खटखटा रहा है!' शीला ने उठकर मुँडेर के नीचे झाँकते हुए कहा—'अपरिचित जान पड़ता है। तुम उठोगे या मैं जाऊँ?'

'डर न लगे तो तुम चली जाओ!' बलराज ने कहा—'आज हम यहाँ आये हैं। कौन है जो पता लगाता आ पहुँचा! कोई कम्यूनिस्ट बहस करने आया है क्या?'

शीला नीचे जा चुकी थी। उसके पीछे पीछे महमूद ने छत पर पदार्पण किया। उसकी हुलिया विचित्र थी। दाढ़ी मूँछ से लैस चेहरा—सिर पर लाल मुसलमानी टोपी, गन्दी शेरवानी, गंदा पाजामा सस्ते जूते! मुँह में बीड़ी सुलग रही थी। बिस्तर पीठ पर लादे आधे-बूढ़े की तरह झुका जा रहा। आरती झपट कर खड़ी हो गयी। उसका दिल धड़क रहा था। बलराज ने बैठते हुए कहा—जी! फ़रमाइये! कौन हैं आप! रात को कैसे आना हुआ? शीला!

आपको यहाँ क्यों ले आई !'

महमूद ने हँस कर दाढ़ी मूँछ दूर फेंक दी और दौड़कर बलराज के पैरों से लिपट गया। शीला ने कहा—'तुम से मैं अच्छी—फ़ौरन पहचान गई। खूबी यह कि ये लीला के घर से आ रहे हैं! अपने को बाबूजी के यहाँ का मुंशी बताकर तुम्हारी तलाश करते यहाँ तक आये। बाबूजी ने जरूरी सन्देश भेजा है। वफ़ादार मुलाज़िम बिना वलीअहद तक उसे पहुँचाये मान कैसे सकता है। लीला ने कहा —'रात भर रहिये—सुबह जाइये पर माने नहीं। तो रातो रात छोटे मालिक के पास बड़े सरकार का सन्देश पहुँचाना था···'

आरती ने कहा—'रास्ते में ही सब पूछ लिया भाभी! कुछ भैया के लिये छोड़ा होता।'

'तुम्हारे हिस्से की बातें छोड़ दीं रानी! उन्हें तुम पूछना। मैं उन्हें कभी छूती नहीं। मैं महमूद के दिल की दुनिया में नहीं घुसती। वहाँ तुम्हारी सल्तनत है।'

महमूद ने झोले से निकाल कर साफ़ कपड़े पहने, टोपी उतार कर रख दी और जेब से सिगरेट निकाल कर इतमीनान से सुलगाई। बलराज ने कहा—'मैं कल सुबह आने की सोच रहा था! अच्छा हुआ तुम आ गये। तुम सब अन्डर-ग्राउंड हो या कोई पकड़ गया? शम्मी ज़ोहरा मज़े में हैं न! कोठी के हाल चाल?'

'सब बताऊँगा भैया! मैं हूँ—रात है। मुल्क की कुरबानी का पूरा अफ़साना बाँध कर लाया हूँ। आरती! कुछ खाने को दो। कम से कम एक लोटा ठंडा पानी···'

आरती उठकर चली। शीला ने कहा—'महमूद! हम लोग आज तीसरे पहर यहाँ आये हैं। बाज़ार से खाना आया था। अफ़सोस, में कुछ बचा नहीं। खाली पानी, कहो, लाऊँ। भूख ज्यादा लगी हो तो भैया को बाज़ार भेज दो!'

'नहीं भाभी! पानी पी लूँगा! बैठो आरती! खाली पानी पीना है तो इतमीनान से पियूँगा। भैया! आप लोग लीला का बँगला

छोड़ क्यों आये ?'

आरती ने कहा—'इसलिये कि वहाँ तुम इस तरह आकर छिप न सकते ! हम लोग कब तक वहाँ पड़े पड़े काँग्रेस की गल्तियों का लेखा लेते—बहस करते—कम्यूनिज़्म और गाँधीइज़्म का मुकाबला करते ! तुम लीला को जानते नहीं !'

'खूब जानता हूँ। नज़दीक से जानना चाहता था पर भाभी साहबा इजाज़त नहीं देतीं। मैंने उसकी तरफ तबियत से देखा—इन्होंने भौं चढ़ाई ! कोई बात नहीं। अभी यहाँ आने के पहले जब मिला और तुम लोगों के मुताल्लिक़ पूछा तो मन में आया अपने को ज़ाहिर कर दूँ। पर वाह रे दाढ़ी, मूँछ, टोपी का प्रताप। मजाल क्या फ़ैज़ुल्ला खाँ मालूम होकर महमूद लगूँ। लीला पहचान न सकी। वर्ना जरूर रोकती। खाना खाने जा रही थी। कम से कम भर पेट मुझे खिलाती। यहाँ जैसा हाल न होता !'

बलराज ने कहा—'तकल्लुफ़ न करना। भूख लगी हो तो खाना आ सकता है।'

'जी नहीं ! खाऊँगा तो सो जाऊँगा। रात भर आप से बात करनी है। प्रतिमा दीदी को छोड़कर सब पकड़ गये हैं। मुझे ठाकुर देशपाल-सिंह, अबरार, बेचन, गजपाल वगैरह से ऐसी आशा न थी। वहाँ मिलिटरी पहुँच गयी है। पूरा जिला घिरा पड़ा है। मैं कैसे यहाँ तक आया हूँ—आप सुनेंगे तो दहल जाँयगे। प्रतिमा दीदी को जैसे जमीन ने निगल लिया। मौका पड़ने पर फिर नागन के मन की तरह उगल देगी। चाचा साहब मुझे पकड़ाने के लिये जी जान तोड़े पड़े हैं ! मैं कहाँ चंगुल में आता ! पूरा जिला पैदल पार किया है। बाहर आकर स्टेशन देखा है। पर सब थाने फूँक दिये गये भैया ! क़सम खुदा की—सन सत्तावन मच गया·····'

बलराज ने कहा—'पर्वतपूर का थाना फुँक गया। खूब ! कौन कौन था। बाबूजी का क्या रुख था। उन्होंने विरोध किया होगा। किसने 'लीड' किया था ?'

महमूद ने कहा—'मैंने और देशपालसिंह ने। हम लोगों ने असहट में सभा की घोषणा की। वहाँ से उमड़ती भीड़ पर्वतपूर थाने की ओर चली। पर्वतपूर में आ हम लोगों ने बाज़ार में खड़े होकर थाने पर चढ़ाई की घोषणा की। मुझे भय था शायद गाँव के लोग बड़ी तादाद में हमारे साथ न चलें। पर वहाँ तो ऐलान करने की देर थी। चाचा साहब को पता लगा। फ़ौरन भीड़ को शांत करने के लिये आये। पर कौन उनकी सुनता! लोगों ने कहा—लौट जाओ। डूब मरो या पब्लिक का साथ दो। दारोग़ा ने पहले गोली चलाने की धमकी दी। मैंने कहा—हमारी एक लाश के बदले दस लाशें देनी होंगी। सैकड़ों हाथ लाठियाँ और पत्थर लेकर उठ गये। तय था—अगर एक गोली पुलिस की ओर से चलती तो बारह सिपाही वहाँ ज़िबह कर दिये जाते। हमने दारोगा से ही थाने पर तिरंगा झंडा लगवाया। बाज़ार में बड़ी सभा हुई। पुलिस वाले उसमें थे। रियाया में बेहद जोश है। लगभग सब थानों में यह हाल हुआ है। घाटमपूर, टेनी, सरौली में पुलिस ने गोली चलाई है। जनता ने भी उन्मत्त होकर प्रहार किये हैं। घाटमपूर में बेचन मिश्र की रहनुमाई थी। वहाँ जो हुआ आप सुन कर दंग रह जाँयगे। दारोगा और छः पुलिस वाले फ़ौरन मार डाले गये। बाकी भी भाग न जाते तो खत्म कर दिये जाते। थाना ज़मीन से मिला दिया गया है। वहाँ दारोग़ा ने कई राउन्ड फ़ायर कराये थे! भीड़ के कई आदमी मरे और घायल हुए।'

शीला ने कहा—'शुक्र है! हमारे गाँव में यह सब नहीं हुआ।'

बलराज ने कहा—'फिर क्या हुआ! तुम लोगों ने क्या किया!'

'इसके बाद तहसीलियों पर हमले हुए। दो जगह खज़ाने लुट गए। स्टेशन जला दिये गए। पुलों को खोद डाला गया। लेकिन जल्द जल्द क्या हो सकता है! चार दिन तक रैयत का राज रहा। गाँव का डाकखाना यार लोगों ने जला दिया। पूरे

जिले के तार काट डाले गये। तब भारी फौज और पुलिस भेजी गई। अब सूरत बदल गई। लोग एक गाँव से दूसरे गाँव में शरण ढूँढ़ते फिरते थे। जो जो सितम ढाये गये वे न कहने क़ाबिल हैं। बाग़ियों को पकड़ने के लिये गाँव के गाँव जला दिये गये। तोप मशीनगनें लेकर चले हैं। औरतों की इस तरह बेइज़्ज़ती हुई जैसे वे गाजर मूली हों। बेचन मिश्र इसी तरह पकड़े गये। एक खँडहर में छिपे बैठे थे। सामने की झोपड़ी एक गड़रिये की थी जिसने चढ़ाई में आगे बढ़कर हिस्सा लिया था। पुलिस को पता लग गया। उस झोपड़ी में पहुँचे। गड़रिन का सिन अठारह बीस साल का। उसे डराया धमकाया। एक एक छाती पर एक एक संगीन की नोक अड़ाकर उसके शौहर का पता पूछा गया। वाह री बहादुर औरत! टस से मस न हुई। उसे पता भी न था। सामने के बेतरतीब, लम्बे, चौड़े खँडहर में बेचन पंडित छिपे बैठे थे। पुलिस वालों ने दिन दहाड़े उसकी झोपड़ी के सामने ज्यादती करनी चाही! औरत जोर से चीखी! बेचन पंडित का खून खौला! हाथ में गड़ासा था। फौरन निकल आये। एक सिपाही औरत को गिराने की कोशिश कर रहा था। दूसरा पास खड़ा शायद अपनी पारी आने की राह देख रहा था। बेचन ने आकर उसका काम तमाम कर दिया। भरपूर हाथ का एक वार काफ़ी था। दूसरा भागा। मगर बेचन निकल कर न जा सके। पकड़ लिये गये! न जाने कितनी दफ़ायें उन पर लगाई जा रही हैं.....'

आरती ने साँस रोक कर सब सुना। बोली—'तुम कैसे बचे! अब वहाँ क्या हाल है? तुम को ऐसे मौके पर भागना न था। गाँव में या जंगल में छिप कर रहना था! इस तरह आग लगा कर अलग खड़ा होना ठीक नहीं!'

'जानता हूँ आरती। मगर अब वहाँ रहने के मायने हैं अपने को पकड़वा देना। जगह जगह रियाया और फौज में लड़ाई है। अबरार, दसानन की बाँह में गोली लगी है। फौज ने जगह जगह बेज़रूरत

गोली चलाई है। लोगों के दिल इस तरह दहल जायँ कि कभी वे बग़ावत का ख्याल भी न कर सकें। तुम्हारी कोठी में अड्डा है। फ़ौज के कमांडर और पुलिस के डिप्टी कप्तान वहाँ हैं। फ़ौज और पुलिस सारे गाँव में बिखरी पड़ी है। मगर मैं जाऊँगा। मुझे यकीन था प्रतिमा दीदी यहाँ आयँगी। बैठ कर आगे की राह निकालनी है। काँग्रेस का झंडा उठाने वाले सब गिरफ्तार हो गये हैं। हमें नया खून चाहिये! कौन है जो खून देगा। मैं उन्हीं की तलाश में आया हूँ। भाग कर नहीं आया—जैसा तुम सोचती हो। बड़े बड़े किसानों की जमीन जायदाद ज़ब्त हो रही है। मेरी कोठी के चारों तरफ हथियार-बन्द सिपाहियों का पहरा है। मुमकिन है मेरी जमीदारी जब्त कर ली जाय अगर मैं 'सरेन्डर' नहीं करता। जो होना है हो……'

बलराज ने कहा—'नये खून की कमी नहीं महमूद! देश का खून अभी नया ही नया है। पुराना कब पड़ा? आरती का कहना ठीक है। हम लोगों को चलना चाहिये! मुझे शक है तुम्हारी कोठी पुलिस लुटवा न ले। तुम्हारे खून की प्यासी होगी।'

'नहीं भैया! चाचा साहब की वजह से कोठी और शम्मी पर आँच न आने पावेगी। मेरी तलाश वे भी करवा रहे हैं। चाहते होंगे दस पन्द्रह साल को भिजवा दें तो रास्ते का काँटा हटे! एक बात और बताऊँ। पहले का वाक़या है। पुलिस वालों ने एक दिन आकर डराया धमकाया था। चाचा साहब तक खबर गई। उन्होंने दारोगा को बुला कर डाटा और दुबारा ऐसी हरकत करने से मना किया। दूसरे दिन वे हमारी कोठी पर आये। शम्मी के पास बैठ देर तक बात करते रहे। उन्होंने कहा—महमूद के नाम वारंट है पर वह छिप कर आता रहता होगा। उससे कह देना—एक बार मुझसे मिल लें। डरने की बात नहीं। कोठी पर चला आये। दुबारा मिलने पर शम्मी ने मुझसे कहा। मुझे पता था आरती के निस्बत बात होगी। मुझको शहीद बनाकर वे आरती को अपनी बात मानने पर मजबूर करना चाहते हैं। यानी मैं

आरती से कहूँ—मुझे वह भूल जाय और विक्रमसिंह से शादी करे! मैं तय कर चुका हूँ यह न करूँगा। आरती के बिना मेरी जिन्दगी चलेगी। फिर भी उनके हुक्म के मुताबिक उनसे मिल लेना चाहता था। लेकिन मरने की फ़ुरसत न थी। टाइम ही न मिला। शम्मी ने भी मना किया। मैं ज़रूर मिलूँगा।'

आरती ने कहा—'अच्छा हुआ तुम नहीं मिले। हरगिज़ न मिलना। फौरन पकड़ा देंगे। तुम्हारे कहने से होता क्या है? तुम लाख मुझसे कहो। मैं क्या विक्रमसिंह या हुकूमतसिंह—कलेक्टर सिंह या कमिश्नर सिंह से शादी करलूँगी तुम मुझसे शादी न करोगे—मिलना, जुलना, बात करना, छोड़ दोगे। लेकिन मुझे मजबूर नहीं कर सकते, मैं किसी के साथ अपनी तबियत के खिलाफ़ शादी करूँ। मेरी बात मानना—मिलना मत। जब बाहर काम करते करते थकने लगो और जेल जाकर आराम करने की तबियत हो तब उनसे मिलना। मेरे बारे में तुम्हें किसी से बात करने की जरूरत नहीं। मैं नहीं चाहती मुझे लेकर किसी से बहस करो।'

महमूद ने कहा—'जो आप चाहेंगी होगा। जेल जाने की मेरी तबियत बिलकुल नहीं है। मैं बाहर मर जाना क़बूल करूँगा पर, पकड़े जाकर जेल के अन्दर बन्द होना नहीं। बाहर की आज़ाद फ़िजा में संगीनों के साये के नीचे रहा जा सकता है। जेल के भीतर पालतू तीतरों की सी देखभाल और खातिरदारी मुझे पसन्द नहीं। गाँव के कितने ही नौजवान फ़रार हो गये हैं! अँगरेज़ी राज मिटाकर उन्होंने अपना राज जमाने की कोशिश की। बहुत से पकड़ लिये गये हैं। पर मुझे पता लगा, बीस पचीस फ़रार हैं। हर गाँव का यह हाल है—जहाँ जहाँ बलवा हुआ है। मैं सबको इकट्ठा करना चाहता हूँ। सोच रहा हूँ कैसे होगा! कहीं बाहर सब आ सकें तो आ जायँ। रुपये की कमी नहीं। महीनों, बरसों मैं उन्हें अपने पास रक्खूँगा। कैसे होगा यह? प्रतिमा के नाम पहले वारंट न था। अब उनके नाम भी है। डर के मारे गाँव में शाम से सन्नाटा

पड़ जाता है। कोई घर के बाहर नहीं निकलता। ये फ़रार नौजवान पकड़ न जायँ यह कोशिश होनी चाहिये। अगर जिले भर में घूमा जाय तो सैकड़ों आदमी इस तरह हैं। उन्हें बाहर निकाल लाना है। वहाँ रहेंगे तो कब तक अपनी बचत कर सकेंगे? उनके घर वालों को तकलीफें दी जा रही हैं। कुत्तों की तरह एक गाँव से दूसरे गाँव भागते फिरते हैं। पर पूरा जिला घिरा है। मैं अब उन्हें संगठित करने की सोच रहा हूँ। प्रतिमा कहाँ गई—किसी को हवा तक उसकी न मिली।'

आरती ने अकंपित कंठ से कहा—'मैं चलूँगी। मेरे खिलाफ़ वारंट नहीं है। तुम अभी यहाँ रुको। मैं शम्मी के पास जाऊँगी-वहाँ रहूँगी। लोगों पर ज़ाहिर होगा कि मैं शम्मी से मिलने आई हूँ! भीतर भीतर मैं सारी बातें जान लूँगी। प्रतिमा का पता लगाऊँगी। मेरे लौटने तक तुम यहाँ रहो। फ़िज़ूल घूमना फिरना मत। लखनऊ में भी लोग तुम्हें पहचानते हैं! तुम्हारी तलाश पूरे सूबे में की जायगी। सँभल कर रहना। मैं कल चली जाऊँगी। तुम लीला के यहाँ न जाना। कम्युनिस्टों से होशियार रहना। तुम जान तक न पाओगे—पुलिस मकान घेर लेगी।'

महमूद ने कहा—'आरती! कम्यूनिस्टों से मैं यह आशा नहीं करता। रिपोर्ट तो मुझे मिली है! इन लोगों ने जगह जगह काँग्रेसी और सोशलिष्ट पकड़ाये हैं। मैं इस पर एतबार नहीं करता। कुछ हो वे भी आज़ादी के दीवाने हैं। आज हमसे इत्तिफ़ाक नहीं रखते पर अपने ढंग पर वे बराबर ज़ुल्मी सरकार से लड़ते आये हैं। मुझे यकीन नहीं हमें पकड़वाने के लिये वे इतनी नीचता दिखायेंगे। यह सच है वे हमारे आन्दोलन को तोड़ फोड़ का आन्दोलन कहते हैं। मुश्किल यह है कि जब काँग्रेस वज़ारत का प्रोग्राम अपनाये थी तब ये भला बुरा कहते थे। पुराना जर्जर वैधानिक कार्यक्रम है! कहते थे सत्याग्रह के ज़रिये आज़ादी नहीं मिल सकती। लाखों आदमी अँगरेजों की जेलों में आराम से रह सकते

हैं। लाख दो लाख और पहुँच गये तो क्या होता है। ये आन्दोलन केवल मिडिल क्लास के होते है। जनता का इनसे कोई सिलसिला नहीं है। आज काँग्रेस का प्रोग्राम दूसरा है। चालीस करोड़ की आबादी में हमें हज़ारों नहीं लाखों ऐसे आदमी चाहिये जो सरकार का एक एक कानून तोड़कर उसके लिये हुकूमत करना नामुमकिन कर-दें। आज हम यही सब करने निकले हैं—तब ये मास्को के एजेंट हमारी राह में अड़ंगा लगाते हैं। आप जानते हैं भैया! हम आप जैसे मिडिल क्लास के टुटपुँजिये लोगों की पूँजी कितनी छोटी होती है। वह तनिक सी चोट बरदाश्त नहीं कर पाती। काँग्रेस में ऐसे ही लोगों की अकसरियत है। इसलिए इतने आन्दोलन उठे और गिर गये। ग़रीब किसान मज़दूर इन आन्दोलनों में दिली शिरकत न करते थे। काँग्रेस के प्रोग्राम में उन्हें रोजमर्रा की इक्तिसादी मुश्किलों का कोई हल न मिलता था। उनके भीतर सियासत की वह ज़हनियत नहीं—इतने पढ़े, लिखे, एडवांस वे लोग नहीं जो सिर्फ सियासी हकूक के लिये इस तरह की तकलीफ बरदाश्त करें—कुरबानी करें। १९३५ के बाद से बराबर सोशलिस्ट पार्टी इस लाइन में काम करती रही। मुल्क के कोने कोने में किसान, मज़दूर और तालिबइल्मों के संघ बने। जनता के भीतर—प्रोलेटेरियत के भीतर इक्तिसादी हकूक की ज़हनियत पैदा की गई। उसका नतीजा है—आज के आन्दोलन में किसान, काछी, गड़रिये, धुनिये, जुलाहे, कुनबी, कोरी, सब हमारा साथ दे रहे हैं। इन कम्यूनिस्टों ने बराबर हमारा विरोध किया। हमारी पार्टी के बड़े बड़े नेताओं को हटाकर उनके हाथ से 'लीडरशिप' छीनने की कोशिश की। ये बातें चाहे जैसी लम्बी चौड़ी करें पर कान्ग्रेस को तरक्की-पसन्द और जनता की सच्ची जमात बनाने में हमारी पार्टी ने असल काम किया है। राष्ट्रीयता हम नहीं छोड़ सकते। हम राष्ट्रीय समाजवादी हैं। ये लोग कहते फिरते हैं—यूरोप के देशों का—जर्मनी और इटली का उदाहरण दे देकर कहते हैं कि वहाँ के नेशनल सोशलिस्ट आगे चल कर फैसिस्ट हो गये।

इनके कहने के माफ़िक हिन्दुस्तान में भी हम लोग ऐसे ही इटली के 'ब्लैकशर्ट' बन जाँयगे। ये लोग अक्ल से काम नहीं लेते। इटली, जर्मनी स्वतंत्र देश थे। वहाँ के समाजवादी दल फ़ैसिस्ट हो सकते थे। यहाँ हमारा 'रोल' उल्टा है। हम काँग्रेस के 'राइटविंग' को फ़ैशिज्म की तरफ जाने से रोकेंगे। हमारे दल की कितनी निन्दा की गई! गाँधीवादियों ने जो अपने को किसानों, मज़दूरों का ट्रस्टी कहते फिरते हैं हमारे खिलाफ़ कैसे कैसे इल्ज़ाम लगाये! आज कम्यूनिस्ट हम पर उनसे भी गंदे इल्ज़ाम लगा रहे हैं। लेकिन आप देखेंगे—काँग्रेस के बड़े बड़े नेता पुलिस को टेलीफोन करके अपने को पकड़वा लेंगे और जेल के अन्दर इस बार भी 'ए' क्लास के मज़े लूटेंगे! इस बार का आन्दोलन शहरों के मज़दूर और देहातों के किसान ही चलायेंगे! शहरों में मुमकिन है कम्यूनिस्टों के असर के कारन हम उतने कामयाब न हो सकें। पर देहातों में किसान और शहरों में तालिबइल्म आज़ादी की लड़ाई जारी रक्खेंगे। आप चले आये भैया! देहात का जोश देखते नहीं बनता। आज़ादी का कैसा जलता अहसास सोशलिस्ट पार्टी ने देहात की रियाया के अन्दर भर दिया है। कम्यूनिस्ट कहते हैं—यह काँग्रेस का आन्दोलन नहीं—उसका प्रोग्राम नहीं। यह 'फिफ्थ कालमिस्टों, जापानपरस्तों की तोड़ फोड़ है जो दुश्मन के लिये मुल्क का रास्ता साफ़ कर देना चाहते हैं। आप देखेंगे बाद में प्रत्येक नेता—वर्किंग कमेटी का प्रत्येक मेम्बर न केवल आन्दोलन की जिम्मेदारी ओढ़ने को तैयार रहेगा वरन उस पर घमंड करेगा! किसी भी मुल्क की सियासी और समाजी तरक्की वहाँ के नौजवानों और स्टूडेन्ट की इन्क़िलाबी ज़हनियत पर निर्भर करती है। हम ने इस ज़हनियत के अन्दर अपने मुल्क की आज़ादी की आग के पिघले शोले भरे हैं—किसी दूसरे मुल्क के इशारों पर नाचने वाला गुलामी का फ़ितूर नहीं। लेकिन लीला के यहाँ मेरे लिये खतरा नहीं। वह और उसके साथी ईमानदार हैं।'

शीला ने कहा—आरती न जाने क्यो लीला से चिढ़ी रहती है

पहले उसे इतना मानती थी। अब उसे जानवर से बदतर समझती है। कम्यूनिस्ट होने के मायने यह नहीं होते आदमी अपने भाई से द्रोह करे—उसके साथ विश्वासघात करे। राजनीति में मतभेद होते रहते हैं; पर आपस में एक दूसरे के प्रति सद्भावना और भाईचारा बना रहता है। लीला हर तरह से अपनी है। मेरे किसी आत्मीय को उसके द्वारा कभी नुकसान पहुँच सकता है, इसकी मैं कल्पना नहीं कर सकती।'

महमूद ने कहा—'एक बात है भाभी जो पूरे मुल्क में फैली है। कम्यूनिस्ट कान्ग्रेस के राइटविंग के उतने बड़े दुश्मन नहीं जितना सोशलिस्टों के। सोशलिस्टों के लिये उनका कहना है कि आगे चल कर यह जमात फैसिस्ट पार्टी में बदल जाती है और हाथ में ताकत आने पर खुल कर हमारा दमन करती है। यूरोप के कुछ मुल्कों में ऐसा हुआ भी है। उसको लेकर एक गुलाम देश के सोशलिस्ट से वहाँ के कम्यूनिस्ट भाई का डरना समझ में नहीं आता! उनमें इतनी ताकत होनी चाहिये कि आगे की परवाह न करें। आज उन्हें जगह जगह क्रान्ति की चिनगारियाँ बुझाने में दुश्मन सरकार की मदद न करनी चाहिये! हम जेल की दीवारें फाँद कर बाहर आवें और वे हमें फिर उसके भीतर ढकेलने की कोशिश करें! जिसे हम सुलगायें, उसी पर वह पानी छोड़ें! लीला अभी उस बन्दिश में नहीं बँधी। पार्टी की मेम्बर भी वह नहीं, खाली हमदर्दी रखती है—उनकी पालिसी को सही साबित करने की कोशिश करती है। अभी मुझे उससे ख़तरा नहीं, पर औरों से है और रहेगा।'

आरती ने कहा—'मुझे जो कहना था कह चुकी। सुबह मैं चली जाऊँगी। तुम मेरे आने तक यहीं रहोगे। मैं जो खबर लाऊँगी उसके माफ़िक आगे की योजना बनाना। मैं वहाँ अधिक न रहूँगी, पर पूरा हाल लिये बग़ैर आऊँगी नहीं। प्रतिमा दीदी अगर मिल गईं तो यहाँ लाने की चेष्टा करूँगी। उनका वहाँ रहना आवश्यक होगा तो बात दूसरी है। मैं वहाँ उन नवयुवकों को इकट्ठा करूँगी जो क्रान्ति-

कारी आन्दोलन के कार्यक्रम पर विश्वास रखते हैं और अब तक फ़रार हैं। उन्हें अब जिले के बाहर फ़ौरन चले आना चाहिये। बाहर रह कर वे अधिक अच्छी तरह आज़ादी की लड़ाई चला सकते हैं। उन्हें यहाँ निकाल कर ले आना है ; पर पहले वे एक जगह मिलें और एक सूत्र में बँधें। उन्हें सचमुच किसी रास्ता दिखाने वाले की जरूरत होगी। संगठित होकर फिर से जिले पर अधिकार कर सकते हैं। फौज और अतिरिक्त पुलिस गाँव में बराबर बैठी न रहेगी। उसके जाते ही फिर तहलका मचाया जा सकता है। जिन लोगों ने अब की बार सरकार का साथ दिया है और हमारे लोगों को पकड़वाया है उनके साथ विशेष सलूक होना चाहिये। उन्हें ऐसा दंड दिया जाय जो औरों की आँखें खोल दे। बुलेटिन भी बँटवाने, गाँव गाँव में, बाजार बाजार, मन्दिर, मस्ज़िद, स्कूल और चौपालों में चिपकाने होंगे। आप समझ लीजिये, कुछ न कुछ होता रहेगा। वरना गुलाम जनता का मनोबल टूटते क्या देर लगती है। इसलिये बराबर आग में चन्दन की चैलियाँ झोकनी हैं!

बलराज ने कहा—'अकेले तुम नहीं! मैं भी चलूँगा। शीला महमूद के साथ यहाँ रहेगी। यह बात लोगों की चेतना पर आग के दहकते ठप्पे से अंकित कर देनी है कि विद्रोह दबा दिया गया है—ऐसा दिखाई देता है। पर कुछ समय के लिये ही दबाया गया है। गुलाम देश की बेहथियार जनता के पहले ही प्रहार से साम्राज्यवाद पूरे तौर पर नष्ट हो जायगा, यह असंभव आशा है। हाँ!' राष्ट्रीय क्रान्ति का पहला अध्याय है यह! इस तरह के प्रहारों से कब तक शत्रु की सत्ता नष्ट होते होते बचेगी? मुश्किल यह है बड़े बड़े बुद्धिमान और पढ़े लिखे लोग भी क्रान्ति को ज्वालामुखी के विस्फोट जैसी धड़कन-पूर्ण घटना समझते हैं। पर वह एक समाजी सिलसिला—एक राजनैतिक क्रम का नाम है। कई अध्यायों से बना हुआ, एक लम्बा चौड़ा, विकास की धारा का प्रवाह है वह! उसमें उतार चढ़ाव का होना स्वाभाविक है। आज़ादी की लड़ाई में कभी हार

नहीं होती। पराजय का विघटन हमें अधिक शक्तिशाली और लक्ष्य का अनुयायी बनाता है। ये सब बातें बुलेटिनों में रहनी चाहिये। भाषा सरल होनी चाहिए। पर छपने का क्या होगा? महमूद! तुम उर्दू में लिखो; आरती हिन्दी में लिखेगी। इस बीच तुम यहाँ छपवाने का प्रबन्ध करना, तुम्हारे जिले में एक एक मशीन नहीं है!

है भैया! शम्मी आपको कोठी के तहखाने में पहुँचा देगी किसी को कानों कान ख़बर न होगी—आवाज़ तक ऊपर की हवा में न आयगी। मैं आपके सुबह जाने के पहले लिखकर देता हूँ। आरती वहाँ लिखती रहेगी। कागज़, स्याही, अलग अलग खुफ़िया कमरों में पड़ा है। पुलिस ने इस बीच ज़रूर कोठी का चप्पा चप्पा मेरे लिये छाना होगा। ज़िले की पुलिस चाचा साहब का लिहाज़ कर सकती है, पर बाहर की पुलिस और फौज के लिये बाग़ी की तलाश ज़रूरी है। एक मुसलमान खानदान की इज़्ज़त उसके लिए हक़ीर है। अपील और बुलेटिन मेरे नाम से निकलेंगे। आरती! कागज़ ले आओ; कलम है!

दोनों अलग अलग लिखने बैठ गये। बलराज ने शीला से कहा—'तुम को अपने साथ ले चलता, पर अभी नहीं। अगली बार ज़रूर ले चलूँगा। इस बार वहाँ की स्थिति समझने जा रहा हूँ। बाद में मोर्चे पर तुम मेरे साथ रहोगी। बच्चों को शम्मी के पास छोड़ देंगे। उस हालत में, मुझे उम्मीद है, बाबूजी उन्हें अपने पास बुला लेंगे। हम लोग पकड़े गये तो साथ साथ!'

महमूद ने कहा—'नहीं भैया! क्या ज़रूरत है! कोई 'एटहोम' नहीं जो मिस्टर और मिसेज़ साथ जाँय। भाभी बाहर रहकर और कुछ दिन काम आगे बढ़ायेंगी। यही खूबी है इस बार की लड़ाई की। मुझे सबसे बड़ा डर 'कम्यूनल आग' का है। सरकार हिन्दू मुसलमान का झगड़ा पैदा करेगी। देश के नेता बाहर न रहेंगे तो कैसे क़ाबू में आयेगी, वह। खैर, देखा जायगा। भाभी का नम्बर सबसे बाद आवेगा। ये बड़ा काम कर सकेंगी।'

लीला ने कहा—'जैसा तुम लोग कहोगे। जेल में रहना मुझे भाता थोड़े है। पर जब वक्त आ जायगा तब पीछे न हटूँगी। अभी मैं देखती हूँ—इतना बड़ा संगठन होते हुए भी काँग्रेस उस सीमा तक तैयार नहीं है जहाँ तक क्रान्ति को पहुँचाना है। संगठन की भारी कमी है। यहाँ लखनऊ में ही देखती हूँ। बहुत से काँग्रेसी क्षेत्रों में यह विवाद चल रहा है कि जो कुछ जनता कर रही है वह काँग्रेस के प्रोग्राम के माफ़िक है या नहीं। नौ अगस्त के बाद के इन सप्ताहों में हमारी क्रान्ति उन्नत होकर, विजय के बाद विजय प्राप्त करने के स्थान पर उतार पर चलने लगी है। बाहर से देखने पर लगता है, सरकार के इम्पीरियलिस्ट हमलों ने क्रान्ति बड़े मैटिरियल बल का प्रयोग किया है। बड़ी पाशविक शक्ति के सामने निरीह जन-योजना का चकनाचूर हो जाना स्वाभाविक है। मैं जानती हूँ, असली कारण—वह है जो मैं समझी हूँ। तोड़ फोड़ के इस पहले दौर के बाद—थोड़े से टाइम के लिये ही सही—सरकारी सत्ता को जगह जगह नेस्त-नाबूद कर देने के बाद आगे कौन सा प्रोग्राम काँग्रेस ने देश के सामने रक्खा! अँगरेज़ी राज्य के प्रतीक थानों, स्टेशनों, तार के खम्भों को तोड़ने फोड़ने के बाद लोग अपने अपने घरों को चले गये। उन्होंने सोचा भी नहीं आगे क्या करना है। और मुल्कों की प्रबुद्ध राज्यक्रान्तियों में ऐसा नहीं हुआ। यह जनता का दोष नहीं तुम्हारा दोष है। तुम लोग खुद भी क्या करो, पता तुम्हें भी ठीक ठीक न था कि क्या करना है!'

महमूद ने प्रशंसा भरी दृष्टि से शीला की ओर देखकर कहा—'गहरी बात कह दी तुमने? यही कैफ़ियत है। लोगों के सामने साफ साफ एक 'वेलनिट' प्रोग्राम नहीं है। जिसके मन में जो आता है—जैसे आता है—करता है। सुना है, बिहार और साउथ में लीडरों ने कुछ गश्ती चिट्ठियाँ भेजी हैं जिनमें सब बातें साफ साफ लिखी हैं। पर हमारे सूबे के लीडर पहले हिन्दुस्तान के लीडर

हैं—बाद में सूबे के। हम लोगों को यहाँ कहीं कुछ नहीं बताया गया। मैं कई बार मिला और बराबर मैंने दरयाफ़्त किया। कभी मुझे तफ़सीलें नहीं बताई गईं। अधिक से अधिक कहा गया—बग़ावत को अमली जामा देना होगा। हर काँग्रेसी वर्कर इसका सही सही मतलब नहीं निकाल सकता। हमारा औसत वर्कर यों भी पढ़ने, लिखने, सोचने, समझने से ज्यादा सरोकार नहीं रखता। इस मामले में कम्यूनिस्टों को मैं मानता हूँ। दिमाग़ इस्तेमाल करना वे शुरू से सीखते हैं। यहाँ तकली, चर्खे और बैठकबाज़ी से फ़ुरसत नहीं मिलती। लेकिन धीरे-धीरे रास्ते पर आ जायेंगे। एक बार नाकामयाब होकर जितना सीख लेंगे उतना जिन्दगी भर पढ़ने और 'मार्क्सइज़्म' की गुत्थियाँ सुलझाते रहने पर भी न आयेगा।'

रात भर सब लोग जागते रहे। महमूद, आरती ने मिल कर और अलग अलग कई बुलेटिन तैयार किये। जिले में किस प्रकार आन्दोलन शुरू हुआ और सफलता की किस मंज़िल तक पहुँचा; उसके बाद कैसे कैसे अत्याचार हुए, पुलिस और मिलिटरी ने मिल कर जनता को रौंदा—यह सब उनमें बताया गया! सुबह सात बजे गाड़ी चलती थी। आरती के उत्साह का ठिकाना न था। जल्दी जल्दी उसने अपनी और भैया की आवश्यक वस्तुएँ बाँध लीं। शीला पड़ी हुई तरह तरह की बातें सोच रही थी। जीवन कहाँ से बहता हुआ कहाँ आ पहुँचा। अभी पता नहीं, आगे जाकर जीवन-धारा क्या क्या मोड़ लेगी। पति के बाद वह भी जेल चली गई तो बच्चों की देखभाल कौन करेगा! उनकी स्कूली शिक्षा भी अब आरम्भ होनी चाहिये। सोचती थी, यहाँ रह कर सब ठीक करेगी। पर ऐसी आग में कौन कब तक कहाँ रह सकेगा—कुछ ठिकाना है? पाँच बजे काम ख़त्म करने के बाद महमूद की आँख लग गई। चटाई पर वह लुढ़क गया! आरती का काम अभी ख़त्म न हुआ था। वह औरतों और बच्चों के नाम अलग अलग छोटी छोटी अपीलें तैयार कर रही थी। हर घर के भीतर वे बाँटी

जाँयगी। देहातों में पढ़ी लिखी औरतों की संख्या अधिक नहीं है, पर कुछ तो है ही, और, वे पढ़ पढ़ अपनी नानियों, दादियों, मा और सासों को सुनायेंगी। बलराज ने शीला की ओर देखा, रात भर जागते रहने के बाद वह भी निद्रालस हो चली है। नैश जागरण की फीकी फीकी पीतिमा उसके उत्फुल्ल चेहरे पर क्लान्ति के ताने बाने गूँथ रही है। उसके पास जमीन पर लाल, गुलाल, कुसुम सोये हैं। सुबह की शीतल पवन सबको निद्रा में मग्न कर रही है। आरती ने कहा—'सोइये नहीं, भैया! ट्रेन में चाहे नींद ल लीजियेगा। यहाँ आपके न रहने पर क्या होगा? अभी घर में बहुत सी आवश्यक चीजें भी नहीं है। यहाँ भाभी सब इन्तजाम कर सकेंगी! मुझे यह फ़िक्र है। एक नौकर भी चाहिये।

'नौकर मैं शम्मी के यहाँ से साथ लाऊँगा! यहाँ इतने जल्द न मिलेगा। तुमने लिख लिया या नहीं? महमूद भरपूर सो गया है। शीला भी वैसी ही। मैं अब क्या सोऊँगा! तुम जरूरी चीजें रख लो। हमें वहाँ देर भी लग सकता है। पर एक हफ्ते से ज्यादा हम वहाँ न लगायेंगे। जरूरी होगा तो यहाँ आकर फिर चलेंगे। शमीम के लिये मैं चिन्तित हूँ। उसपर क्या बीत रही होगी। तुम अपना काम जल्द ख़त्म करो! ये बुलेटिन हमें दो चार साल के लिये बन्द करा देने को काफ़ी हैं। होशियारी से ले चलना। बाक्स के भीतर रखना—ऊपर नहीं। कल हम लोग छाप कर गाँव गाँव में बँटवाने का सिलसिला बैठा लेंगे। ····शीला शीला! हम लोगों के जाने के बाद सोना। इस समय जाग पड़ो।'

आरती ने कहा—'भैया! मैं सोचती हूँ, आपके साथ डिब्बे में न बैठूँ। मुझे जनाने में बिठा दीजियेगा। हम लोगों को एक साथ देख कर लोगों को शक हो सकता है। आज कल हर ट्रेन में दो चार सी०आई०डी० चलते होंगे! मुश्किल यह है मेरे पास खद्दर को छोड़ कर और साड़ी नहीं। सिल्क की साड़ियाँ कोठी पर ही छोड़ आई। भाभी से ले लूँगी। आप भी खद्दर न पहन कर और कुछ पहनें। तनिक

भी शक करने का मौका हमें न देना चाहिये !'

'तू भाभी से माँग लेगी। मैं किससे मांगूँ। टाइम होता जाकर किसी दोस्त से मांग लाता। चिन्ता न कर! मेरे ख़िलाफ पुलिस के पास आज तक कोई पोलिटिकल रिपोर्ट न पहुँची होगी। मेरी ओर उनका ख्याल न जायगा।'

'नामुमकिन नहीं! यहाँ आने के पहले आपने कई काँग्रेस की मीटिंगों में शिरकत की है। आपका नाम उनके रिकार्ड में जरूर होगा, और इस समय, डी० आइ० आर० का दौरदौरा है। केवल उचटता शक काफी है! न गवाही न पिछला रेकार्ड। मेरा आपका साथ बैठना ठीक न होगा। सामान मेरे साथ रहेगा। आप बिलकुल अकेले रहियेगा! जहाँ शक मालूम हो, गायब हो जाइयेगा। मेरी फ़िक्र न कीजिएगा। मेरे ऊपर किसी का शक न जायगा!

थोड़ी देर बाद दोनों स्टेशन के लिये रवाना हो गये। महमूद सोता रहा, पर शीला जाग उठी। दिन को चार बजे दोनों गाँव पहुँचे। महमूद की कोठी के सामने इक्के से उतरते ही सुकरू के चबूतरे पर बैठा हुआ एक पुलिस वाला लपक कर आया! आरती का दिल धड़क उठा। रास्ता निरापद बिना किसी पूछताँछ के कट गया था! एक प्रकार से वह बड़ी प्रसन्न थी। बलराज ने कहा—'जी! फ़रमाइये। मुझसे कुछ काम है?'

कान्सटेबल गाँव का था! बलराज को पहचान पहले ही चुका था, निकट आकर अपनी बात पक्की करना चाहता था। सलाम करता हुआ बोला—'आप कहाँ से आ रहे है! कोठी के भीतर जाने के पहले दारोगा जी की इजाज़त लेनी पड़ती है। दो तीन बार पूरी कोठी छान डाली गई है। महमूद साहब को पकड़ने की हर कोशिश हो रही है। खैर, आप जाइये.....'

बलराज ने कहा—'आप मुझे जानते हैं। इस घर से मेरे जो ताल्लुक़ात हैं उन्हें भी। मैं भागा नहीं जाता। आपके इन्स-पेक्टर साहब यहाँ आकर मिल सकते हैं—मुझे थाने पर बुला सकते

हैं। मैं महमूद नहीं हूँ, इतना तो आप समझ गये! बाक़ी की फ़िक्र न कीजिये!'

पुलिस वाला वर्षों से गाँव के थाने पर था। उसे आश्चर्य हुआ अपनी कोठी में न ठहर भाई-बहन महमूद की कोठी में क्यों ठहर रहे हैं। पूछने की हिम्मत उसकी न पड़ी। आरती अटेची केस हाथ में लिये पहले ही अन्दर दाख़िल हो चुकी थी। पुलिस वाला मन ही मन आशंका और सन्देह से फूलता हुआ थाने की ओर चला गया। उसे फ़ौरन इत्तला पहुचाने का हुक्म था। बलराज को देखते ही शमीम की आँखें खुशी से चमचमा उठीं। उठकर वह खड़ी हो गई। दोनों हाथ जोड़कर नमस्ते करते करते उसकी आँखें सजल हो उठीं। बलराज ने कहा—'बैठी रहो। मैं तुम्हारा बुजुर्ग़ नहां जो देखते ही उठकर खड़ी हो जाती हो। सुना—कोठी की तलाशी होती रहती है। तुमसे तो किसी ने कुछ नहीं कहा।'

'न पूछो भैया!'—शमीम ने खड़े खड़े ही कहा—'तीन बार कोना कोना छान डाला गया है। मैं अपने कमरे से बाहर निकली नहीं, चारपाई पर पीठ किये बैठी रही! दारोग़ा दरवाजे के पास से ही चारपाई के नीचे, आल्मारियों के पीछे; झाक झूँक कर चला गया! कोठी पर खुफ़ियातौर पर कड़ी निगाह रक्खी जाती है। बैठ जाओ! ज़ोहरा देख! बड़े मामू आये हैं।' कहाँ हैं री। मौसी आई है। आ, जल्द आ। भाभी अच्छी तरह हैं!' 'बच्चों को देखने के लिये तरसा करती हूँ। यहाँ रोज़ आते रहते थे। खुदा जाने, कब वे दिन लौटेंगे। चाचा साहब के पास जाओगे? सामान कहाँ है? आरती से मालूम हुआ महमूद भाभी के पास है। खुदा हाफ़िज़!'

बलराज ने कहा—'हम लोग काम से आये हैं। पर आज नहीं, कल होगा वह। कोठी पर मैं न जाऊँगा; तुम्हारे यहाँ रहेंगे। आगे भी जब आना होगा तुम्हारे मेहमान होंगे। वहाँ से हम लोगों से

अब कोई सम्बंध नहीं।'

जोहरा आकर बलराज की गोद में बैठ गई। आरती और शमीम नीचे चटाई पर बैठी रहीं। बलराज आरामकुर्सी पर लेटे थे, पर आगे की बातें सोच रहे थे। आरती शमीम को एक एक कर सारी बातें बता रही थी। शमीम सब सुन रही थी। जिस काम के लिये महमूद की सलाह से वे लोग आये हैं, वह होना चाहिये। आरती ने कहा—'बाजी! साइक्लोस्टाइल मशीन तहखाने में है। महमूद ने बताया है। मुझे आज तक पता न था। तहखानों में तो पुलिस नहीं घुसी। कल हम लोग छपाई का काम करेंगे। आज ही करते; पर मुमकिन है भैया से इनकायरी करने पुलोस आती हो। किसी को शुबहा तक न हो... .....'

शमीम ने कहा—ज़ाहिर तहखानों को पुलिस बराबर देखती रहती है। अब्बा ने बाग की बरसाती के नीचे एक बनवाया था जिसे कोई नहीं जानता। एक पुराना माली उनके सामने का था, जो जानता था। वह मर गया। महमूद के जाने के बाद उसके कहने के मुआफिक़ मैंने फ़ौरन मशीन स्याही वगैरह सब वहाँ भिजवा दिया। बड़ा अँधेरा है वहाँ। बरसों से खोला नहीं गया। कैसे वहाँ तुम लोग रुक सकोगे! बदबू आती है। मैं तो फौरन नाक दबाकर भाग आई। तुम्हारा घंटों का काम होगा। क्यों भैया? तब क्या किया जाय?'

'देखा जायगा, सोचूँगा।'—बलराज ने गहन चिंता में निमग्न अपना सिर घुमाकर कहा। उनके सामने दूसरा प्रश्न था। पता लगाना होगा—इधर कौन कौन लोग गिरफ्तार हुए, कौन कौन बाहर हैं। घर में बैठकर यह न हो सकेगा। इसके लिये चक्कर लगाने होंगे। गाँव में और आसपास उनके परिचितों की संख्या कम न थी। पर वे खुद एकान्तवासी व्यक्ति थे। ज्यादा मिलते जुलते न थे। बोले—'शम्मी! मैं बाहर जाऊँगा। रात को लौटने में देर हो सकती है, पर आऊँगा ज़रूर। मेरा खाना रखवा देना।'

'मुँह हाथ धोकर नाश्ता कर लो। कहाँ जाओगे ? कल जाना। इधर उधर निकलोगे तो फ़िज़ूल पुलिस शक करेगी। कोठी के अंदर चाहे जो करो, मैं मना नहीं करूंगी। तुम बाहर रहोगे, मेरी जान सूखती रहेगी। चाचा साहब.....'

'उनकी बात छोड़ो ? फ़िक्र न करो। नाश्ते की तबियत नहीं। नीचे मैनेजर से बात करूँगा। इसके बाद गाँव का एक चक्कर लगाना चाहता हूँ।'

क्या देखोगे भैया ?' शमीम ने सहम कर कहा—'न जाने कितने घर जला दिये गये हैं। पास के दूसरे गाँव में, सुनती हूँ, और ज्यादतियाँ हुई हैं। चाचा साहब की वजह से यहाँ फौज ने जो भी किया है सोच समझ कर किया है। इतना बड़ा हाकिम गाँव में रहता है। पुलिस यहाँ दिल के अरमान पूरे नहीं कर पाई। पर और गाँवों में खुलकर अस्मत और दौलत लूटी गई है'—कहते कहते एक अत्यन्त क्षीण लज्जा से शमीम का ग्रीक प्रतिमा जैसा निर्दोष चेहरा यत्किंचित् लाल हो गया। भैया से कैसी बात वह कह गई !

नीचे मैनेजर से बात कर बलराज एक हिन्दू कारिन्दे रामनाथ से बात करने लगे। महमूद का वह खास आदमी था। एक बार जेल हो आया था। पर अब काँग्रेस का क्रियात्मक कार्यकर्ता न था। गरीब आदमी—नौकरी और खेती बारी कर किसी प्रकार परिवार उसे भी कई दिन का पालन करता था। एक एक बात का उसे पता था। पुलिस ने हिरासत में रक्खा था, पर कोई सबूत न पाने के कारण छोड़ दिया था। बहुत सी बातें बलराज को उससे मालूम हुईं। अबरार और दसानन पकड़ लिये गये थे, पर रास्ते में ही पुलिस को धोखा दे भाग निकले थे। गये कहाँ—यह पता नहीं।

प्रतिमा के विषय में रामनाथ का ख्याल था, वह कहीं बाहर चली गई है। बाकी सब लोग पकड़े जा चुके हैं। हाँ, थाने को फूँकने वाले, पब्लिक के लोगों में जोधा, मनकू, ग़फ़ूर, इलाही, रामबिहारी,

बच्चू, जगतनारायण बिन्दा केवट, बकरीदी धुनिया, छोटेलाल कहार, कलानाथ सोनार, कन्हैया लाल पंडा, ऊदन ठाकुर, बैजनाथ सिंह लोध, गनेशी सिंह ठाकुर अब तक लापता हैं। पुलिस सरगर्मी से उनका पता लगा रही है। उन पर हत्या, लूटमार, सरकारी इमारतों में आग लगाने और खुला बलवा करने के इल्ज़ाम हैं। बलराज ने कहा - 'रामनाथ! तुम महमूद के ख़ास आदमी हो। तुमसे कोई बात नहीं छिपाना। इस आग को अभी जलाते चलना है।' भले ही हमें अपनी आहुति देनी पड़े। मैं इन सब लोगों को संगठित करने और सुरक्षित रूप से बाहर निकाल ले जाने के लिए आया हूँ। यहाँ रहेंगे तो कब तक बचेंगे? एक न एक दिन जल्द पकड़ जायँगे। बाहर निकल जायँगे—पैदल, नाव पर या रेल से तो और काम कर सकेंगे! एक बार पिटकर हमें चुप नहीं बैठना! जो हुआ है वह फिर होगा—बार बार होगा। तब तक होगा जब तक नौकरशाही का दम न टूट जायगा! तुम बाहरी तौर पर अपने को अलग रखते हुए भी हमारी बड़ी मदद कर सकते हो। तुम पुराने काँग्रेसी हो। चिन्ता न करना। कोई बात हो गई तो हम लोग तुम्हें बचा-येंगे—तुम्हारे परिवार का पालन करेंगे! प्रतिमा का पता लगाना सबसे जरूरी है। वह मिल जाय तो आधा काम हो जाय। उसे मालूम भर हो जाय—मैं और आरती यहाँ आ गये हैं। जैसे भी होगा, वह महमूद की कोठी में आने की कोशिश करेगी। मैं जानता हूँ, वह कितनी मँजी हुई है। जल्द पुलिस के चक्कर में न आयगी। जिन लोगों के नाम तुमने बताये हैं उनके अलावा और भी लोग फ़रार हैं?

'जी! चार पाँच और थे, पर पकड़े जा चुके हैं। ये लोग इधर उधर नाते रिश्तेदारों के यहाँ जान बचाते फिर रहे हैं। मैंने सुना है, दो दो चार चार की टोली में हैं। मैं कोशिश करूँगा। आप रहेंगे न! आपके आने का समाचार सुन कर सबको बल मिलेगा! यहाँ दमन ने लोगों की रीढ़ तोड़ दी है।'

'कोई बात नहीं। देशभक्ति का गौरवपूर्ण पुरुस्कार है यह! तुम

अपने काम पर निकल जाओ। मैं मैनेजर से कह दूँगा! तुम्हें पूरी छुट्टी है। जहाँ से हो सब बातें जान कर आओ। मैं भी निकलूँगा, पर मेरी जानकारी उतनी नहीं! कल मैं नोटिस और बुलेटिन छाप कर तुम्हें दूँगा। उन्हें चारों ओर बँटवाना है और बाज़ारों, पब्लिक जगहों में चिपकवाना है। रात को हम तुम दो बजे निक- लेंगे। दूसरे गावों से शुरू करेंगे।'

रामनाथ की आँखें पुराने जोश के उभर आने से चमचमा उठीं। बलराज ने कोठी के हर कारिन्दे और सिपाही से बात कर अधिक से अधिक जानने की कोशिश की। सबने जो देखा, सुना और समझा था, बताना आरम्भ किया! लगभग डेढ़ घंटे बाद बलराज बाहर निकले। शाम हो गई थी। थाने से आदमी इनक्वायरी करने नहीं आया यह देख कर उन्हें कुछ विस्मय हो रहा था। आरती के और उनके आने को पुलिस इतनी आसानी से न छोड़ देगी। आरती महमूद के प्रेम की चर्चा लोगों से छिपी नहीं। पुलिस को भी सब पता होगा। बलराज परेशान होकर चारो ओर घूमने लगे! प्रतिमा कहाँ है? यह रहस्य-मयी रमणी कहाँ है? बलराज को विश्वास न हो रहा था, वह ऐसे समय जिले के बाहर गयी होगी। कहाँ जायगी आखिर? एक बार उससे भेंट हो जाती। गाँव का चक्कर लगा कर सबके अभिवादनों का उत्तर देते—बातचीत करते बलराज अपनी चिन्ता में डूबे जंगल की ओर चले गये! चाँदनी निकल आई थी। कुछ मील बढ़ जाने पर बलराज चौंक कर पीछे की ओर लौटे।

बारह

रात को देर तक बात होती रही। बलराज खाना खाकर महमूद की छत पर सोने चले गये। आरती शमीम की छत पर पड़ी थी। आज का दिन खराब हो गया, यह सोच रह रह कर उसके मन में उभर आता था। यहाँ से जाने के बाद लीला के यहाँ रहने से लेकर पिछली रात तक की बातें वह शमीम से बता गई। शमीम को मालूम हो

गया—आरती, बलराज, शीला सब जेल जाने पर तुले हैं। शमीम ने कहा—'मैं? मैं कहाँ जाऊँगी! मुझे अपने साथ जेल ले चलो! जहाँ तुम सब रहोगे वहाँ मैं भी रहूँगी! तुम लोगों को बैठे बिठाये क्या सूझा? महमूद पुराना काँग्रेसी है। तुम लोग उस के नक्श क़दम चलोगे—मैं न जानती थी।'

'मुल्क की आज़ादी का सवाल है, बाजी! कब तक हम गुलाम रहेंगे! पचास साल से हमारी काँग्रेस लड़ाई लड़ रही है। यह आखरी लड़ाई है। फैसला होकर रहेगा। हम हार ही जायँगे तो क्या! रूस में १६०५ में क्रान्ति हुई थी। असफल हो जाने पर भी उसकी अहमियत कम नहीं। अब तक हम अहिंसा के सीमित घेरे में रहे। आज हमने क्रान्तिकारी कार्यक्रम अपनाया है। आगे कभी इसे न छोड़ेंगे। इस बार नहीं तो अगली बार सफल होंगे! मुल्क में गति-हीनता की कैसी सड़ाँद पैदा हो गई थी इतने बड़े देश की शासन-सत्ता को विदेशियों के मुक्त कर तब तक उस पर अधिकार नहीं कर सकते जब तक जनता के नेता जनता के बीच में न रहें; प्राण की बाज़ी लगाकर विदेशी शासन की जड़ उखाड़ फेंकने को तैयार न हों। इसके बाद दूसरी मंज़िल है नया समाज क़ायम करने की। मजदूरों—किसानों का राज्य। ज़मीदारों और पूँजीवादियों का नाश होगा! हम लोगों को रहने के लिये तब ये ऊँची ऊँची हवेलियाँ न मिलेंगी। फौज कब तक—कहाँ तक एक एक जिले को घेरेगी। केवल फ़रार अपने को उत्साहपूर्वक बचाये रक्खें।

शमीम ने शंकाकुल स्वर से पूछा—'सिर्फ़ तुम लोग यह कर रहे हो या और जगह भी हो रहा है। एक जगह करने से क्या होगा? फ़िज़ूल की खूनखराबी है!'

'मुल्क भर में—सूबे सूबे में—जिले जिले में यह हो रहा है! पुलिस की भीतरी घबड़ाहट की थाह नहीं है। बहुत दिन के बाद रोशनी, सही रोशनी मिली है। हम देख सकेंगे...चल सकेंगे.. रास्ता न भूलेंगे। हमारे सामने का मंज़र साफ़ है।'

बलराज छत पर टहल रहे थे। सामने एक ओर उनकी कोठी चाँदनी में खड़ी संगमरमरी अप्सरा सी उजलेपन में नहा रही थी। पर उनका ध्यान उधर न था। दूर गंगा की धारा और उससे कुछ हट कर खड़ी प्रतिमा की झोपड़ी उनकी दृष्टि में थी। बरसात की गंगा आगे बढ़ कर टीले के ठीक नीचे आ गई थी। पर टीला काफ़ी ऊँचा था। दूर से एक नाव चली आ रही है। उसकी छोटी-सी, धब्बेनुमा आकृति धीरे धीरे बड़ी होती जाती थी। रात अभी आधी न बीती थी। बलराज को नाव का आना उतना आश्चर्यजनक न लग रहा था। पर एक रहस्य जैसी अनुभूति आप से आप होने लगी। धीरे धीरे नाव टीले के ठीक नीचे पीछे की तरफ़ रुक गई। आँखों के सामने टीला होने से अब कुछ दिखाई न देता था। बलराज बराबर सिर थोड़ा नीचे कर देखते रहे। आधे घंटे के बाद उन्हें कोई व्यक्ति कुटिया की ओर जाता दिखा। दूर से अधिक न पहचान कर भी बलराज ने समझ लिया टाँगों तक धोती कुर्ता पहने कोई देहाती है। कुछ मिनट नीचे खड़ा रहकर और इधर उधर देखकर वह ऊपर की ओर चढ़ा। कुटिया के भीतर जाकर जब उसने टार्च की रोशनी फेंकी तब बलराज का माथा ठनका। झपट कर कमरे के अन्दर आगये। भीतर के कमरों में होते हुए शमीम की छत पर आकर पुकारा—शम्मी! आरती! जग रही हो न! यहाँ आओ।'

तीनों जाकर फिर वहीं से देखने लगे। इस बीच में बत्ती दो तीन बार जलकर बुझ गई। बलराज ने अर्थभरी दृष्टि से आरती की ओर देखकर कहा—'कौन हो सकता है? पुलिस वाले की हिम्मत रात को वहां अकेले जाने की पड़ नहीं सकती। मुझे विश्वास है—या तो प्रतिमा है या उसका भेजा कोई खास आदमी। पर वहाँ कर क्या रहा है! आरती! भीतर से टार्च लाना। शमीम! कोई चाकू है बड़ा?'

शमीम ने काँपते हुए जाकर एक बड़ा चाकू दिया—आरती ने फ़ौरन एक छोटा पर मोटा डंडा। बलराज ने कहा—'तुम लोग

चुपचाप यहाँ खड़ी रहना। किसी भी हालत में मुँह से एक शब्द न निकालना। गश्त के सिपाहियों को कहीं दूर पर भी देखना तो चारपाई पर बैठ जाना। मैं जाता हूँ। ज़रूर कुछ पता लगेगा।'

लम्बे बगीचे को पार कर पीछे के फाटक से बलराज बाहर निकले। सावधानी से कुर्ते में टार्च और चाकू डाले—हाथ में डंडा लिये झोपड़ी की ओर तेजी से बढ़े। रास्ते में स्तब्धता छाई हुई थी। सामने जङ्गल होने के कारण गश्त वाले उधर न जाते थे। वे भी अपनी जान को डरते थे। इतने आदमी फ़रार हैं। निकलते थे तो चार छः साथ में; एक दो बार रस्म अदाई करके फिर थाने पर लौट आते थे। टीले के पास पहुँचकर बलराज झिझके। वह व्यक्ति अभी ऊपर है। चुपचाप जूते उतार कर एक ओर डाल दिये। धड़कते दिल से ऊपर चढ़े। जीवन में कभी यह सब न किया था। पर खान्दानी राजपूत थे। भय का नाम न जानते थे। पूरा भरोसा था—प्रतिमा या उसका कोई आदमी होगा। कुटिया का दरवाजा खुला था। भीतर जैसे कोई जमीन खोद रहा था। बीच में एक बार खोदने वाले ने अपनी सफलता का अनुमान करने के लिए ज्योंही रोशनी की, त्यों हीं बलराज ने आँख गड़ाकर देखा। देहाती गँवार के वेष में होने पर भी प्रतिमा छिपी न रही। पर अभी सन्देह था। चुपचाप साँस रोके वहीं खड़े हो गये। लगभग आठ मिनट के बाद फिर टार्च की रोशनी हुई। इस बार बलराज ने पहचान लिया। प्रतिमा ही थी। बलराज खुशी से फूल उठे। ईश्वर भी बलिदानी वीरों की मदद करता है। बोले—'प्रतिमा, घबराना मत! मैं हूँ बलराज, तुम्हारा भैया!

देहाती झपट कर खड़ा हो गया! हाथ की सबरी छूटकर गिर पड़ी। टार्च की रोशनी बलराज के मुख पर पड़ी। बलराज अपने स्वाभाविक वेश में थे। प्रतिमा ने कहा—तुम, भैया! कैसे आये! भीतर आओ, कहते कहते प्रतिमा की आँखें अप्रत्याशित सफलता को

ज्योति से चमक उठीं।

'सब मैं बताऊँगा! तुम यहाँ क्या खोद रही हो? नाव कहाँ गई। क्या उस पर कोई और है। मैं आज आरती के साथ आया हूँ। महमूद ने कल रात को जाकर सब बताया! मैं तुमसे मिलने को छटपटा रहा था! पर समय की शक्तियाँ हमारा साथ दे रही हैं।'

'रुपये निकाल रही हूँ भैया! जरूरत आ पड़ी इसलिये खतरे के बीच आधी रात को आई। तहसीली लूटने में कई हजार रुपये हाथ लगे थे। मैंने सब एक अँगोछे में बाँध कर यहाँ गाड़ दिये थे। साथ कहाँ रखती। नाव पर तीन चार आदमी हैं। तुम शायद उन्हें न जानते हो। यहाँ के नहीं हैं। जिले के ही हैं कंचनपूर के फ़रार है सब।' प्रतिमा ने फुसफुसा कर कहा।

'फिक्र न करो। यहाँ कोई न आयगा। मगर सरकार के यहाँ इन का नम्बर अगर नोट होगा तो फँस जाओगी। जाने दो। कितना रुपया चाहिये? चलो दूँ।'

'नहीं भैया! हम लोगों ने ऐसी फुर्ती की थी कि तहसीलदार और उसके मातहतों को यह सब करने का मौका ही न मिला! अब उन्हें निकाल ही लूँ। मैं जिले के सब फरारों को इकट्ठा कर आगे की सोच रही हूँ। दस पाँच मिनट की बात और है। नाव खड़ी रहेगी। आप लोगों का पता न चला। यहाँ तो हमने पूरी म्यूटिनी करनी चाही। अभी कुछ नहीं! अभी फौज और पुलिस के अत्याचारों का बदला लेना है। एक एक लाश की क़ीमत वसूलनी है!'

बलराज ने कहा—'तुम हटो। मैं खोदता हूँ। अब तक कब का खोद लिया होता!'

प्रतिमा हट गई। बलराज पूरे वेग से खोदने लगे। पन्द्रह मिनट के बाद खोद कर—पोटली निकाल गढ़े में मिट्टी भर दी। प्रतिमा ने कहा—'अब!'

बलराज ने कहा—'तुम मेरे साथ चलो। रुपये चाहे नाव पर दे आओ चाहे लेती चलो। महमूद की कोठी में बातें होंगी। यहाँ के

फ़रारों का तुम्हें पता है ?'

'कुछ का है। सब का नहीं। मेरा वहाँ चलना ठीक न होगा। पुलिस ने छापा मारा तो व्यर्थ में पकड़ ली जाऊँगी। इस समय जो पुलिस से अपने को नहीं बचाता वह देश के साथ विश्वासघात करता है। क्यों न तुम मेरे साथ चलो ? चाहो तो जाकर आरती, शमीम से बता दो सब। नाव रुकी रहेगी। देर न करना।'

बलराज ने कहा—'नहीं—तुम्हीं चलो ! कल रात को इसी समय नाव यहाँ बुला लो। फ़िक्र न करो। मैं तुम्हें बचाऊँगा ! मौका पड़ने पर तुम्हें ऐसी जगह छिपा दूँगा जहाँ हवा भी न जा सकेगी। मैं यहाँ बैठा हूँ ! तुम नाव पर हो आओ। बहुत बातें करनी हैं।'

'तुम भी चलो। क्या हर्ज है। हम सब एक ही लक्ष्य के पथिक हैं। तुम को हमारे साथ देख कर उन लोगों का साहस बढ़ेगा। तुम्हें जिले में कौन नहीं जानता !'

दोनों नाव पर आये। प्रतिमा ने उस पोटली को एक व्यक्ति के हाथ में सौंप दिया। बलराज का परिचय जाकर सब ने हर्ष प्रकट किया। बलराज के पिता का नाम और ख्याति सब ने सुनी थी। ऐसे टोडी, सरकारपरस्त का लड़का उनका साथ दे रहा है। बीच में बैठे व्यक्ति ने धीरे से कहा—महमूद लखनऊ में हैं यह जान कर हमें खुशी हुई। आप लोग जो भी कहें हम करने को तैयार हैं। प्राण रहते पीठ न दिखायेंगे। पुलिस के हाथों हम गिरफ्तार न होंगे—हमारी लाशें होंगी। बहन जी हमें जानती हैं ! मुश्किल तब पड़ती है जब हमें पता नहीं लग पाता अब क्या करना है ! हाथ पर हाथ रक्खे बैठ कर कब तक अपने को छिपायें ! हुकुम देने वाले सब पकड़ लिये गये। हमारी मंडल कमेटी के सभापति, मंत्री दोनों गिरफ्तार हो गये हैं !'

प्रतिमा ने कहा—'गान्धी जी कह चुके हैं हर आदमी अपना नेता है। जिस प्रकार से आज़ादी की लड़ाई आगे बढ़ती दिखाई दे बढ़ाओ ! विदेशी शासन से मुक्त होने के लिये सर हथेली पर रख कर घूमो—जनता के गिरते मनोबल को सँभालो। यह तो कुछ नहीं है।

अंतिम संघर्ष और भयानक होगा ! समय की गति के पीछे हमें नहीं पड़ना ! बहुत दिन हमने आश्वासनों से पेट भरा। अब दुश्मन का खून हमें चाहिये !'

दूसरे दिन रात को दो बजे वहीं आने का वायदा कर नाव चली गयी। प्रतिमा बलराज के साथ कोठी लौट आई। बगीचे के फाटक के अन्दर प्रवेश करते ही बलराज ने देखा—छत की मुँडेर पर टिके अवसन्न कुमुदिनी जैसे दो मुखड़े उनकी ओर दृष्टि स्थिर किये हैं। ज्यों ज्यों देर होती थी दोनों चिन्ता बढ़ रही थी। बरसात की चाँदनी रह रह कर बादलों की सिक्तता से धुँधली पड़ जाती थी। ऊपर कमरे में पहुँच कर बलराज ने कहा—'आरती देखो! इन्हें पहचानती हो।'

शमीम ने पहले केवल प्रतिमा का नाम सुना था। देखा न था। आकर इस देहाती युवक को देख स्वभावगत हिज़ाब और हया से पीछे हट गई। आरती ने कहा—'कौन हो भाई! मैंने तुम्हें देखा तो है पर.....गाँव के तो हो नहीं!'

प्रतिमा के छोटे छोटे बाल देहाती युवक जैसे थे! लम्बे लम्बे केश उसने काट फेंके थे! अधमैली टोपी सिर पर थी। मोटे मारकीन के कुर्ते के नीचे कड़े बाडी में कसे शुष्क, चुसे स्तनों का आभास भी न मिल पाता था! पतली, तनी, कृत्रिम मूँछों के बीच पहले वाला लावण्य-लोहित मुँह न था वरन एक कठोर, अनहोना-सा, रूखा सूखा चेहरा था जो दृढ़ संकल्पों की कशमकश से और बीहड़ हो उठा था। कुचले गये अरमानों को नवजीवन प्रदान करने वाली उसकी मुद्रा में जो प्राणवानता थी वह आरती को पहचानी पहचानी लगी। बलराज ने कहा—'ये ठाकुर प्रतिमासिंह है। बुलन्दशहर के बड़े जमींदार—महमूद के पुराने दोस्त हैं।'

प्रतिमा हँस पड़ी। मूँछें निकाल कर फेंक दी और आरती से लपट गयी। आरती को पहचानते देर न लगी। शमीम भी सब समझ गई और पास आकर खड़ी हो गयी। बलराज ने कहा—शम्मी! ठाकुर साहब को कुछ खिलाओ पिलाओ। इतना बड़ा ताल्लुकदार

तुम्हारा मेहमान है। मगर खूब! भगवान पूरी सहायता करता है।'

नींद से आरती की आँखें भारी हो रही थीं। कल रात से वह जगी थी। प्रतिमा ने शमीम से कहा—'रहने दो बहन! मुझे भूख नहीं है। विधाता की गति देखो। इतने दिन यहाँ रही तब तुम से मिलना न हुआ। आज रात को दो बजे कितनी विकट और विपरीत परिस्थिति में तुम से मिल रही हूँ। पर जैसा सुना था वैसा ही तुम्हें पाया। तुम्हें देख कर ही मनुष्य अपने को ऊँचा उठा अनुभव करता है।'

बलराज ने कहा—'हमारी शम्मी ऐसी वैसी है! इसे देख कर आदमी को वही सुख मिलता है जो मई जून की निर्मल गंगा की जल धारा में गोता लगाने से मिलता है.....'

शमीम ने भौंहें तान कर कहा—रहने दो भैया! मैं अपनी तारीफ़ नहीं सुनना चाहती। कुछ तो खाओ बहन! रात इतनी बीत आई है। भूख नहीं लगी?'

'खा पी कर कंचनपूर से नाव पर चली थी! मैं लौटी जा रही थी। भैया के कहने पर आ गई। कल रात को इसी समय लौट जाऊँगी। महमूद लखनऊ में हिफाजत से हैं। मैं भी एक बार बाहर निकलूँगी। संभव है लखनऊ भी आऊँ। यहाँ उनका आना अगले महीने में जरूरी है। तब तक हम पूरी तैयारी कर लेंगे। पिछली बार हम लोगों ने पुलिस वालों की जान बख्श कर बड़ी गलती की। उन लोगों ने बाहर से फौज आने पर हमारे भाइयों बहनों के साथ जानवर की तरह सलूक किया। इस बार चुन चुन कर हम उनकी जान लेंगे'—कहते कहते इस मर्दानी औरत के मुख पर प्रतिहिंसा की डरावनी नागिनें उभर आईं।

आरती ने लाकर सब बुलेटिन सुनाये। सन्यासिनी तब तक धोती उतार कर शमीम से एक साड़ी ले पहन चुकी थी। बलराज छत पर जाकर लेट गये थे। कमरे में ठंडी हवा आ रही थी। सहसा काले बादलों से आकाश घिर गया। कुछ ही मिनटों में जोर की वर्षा होने लगी। बलराज ने अपना बिस्तर उठा कर कमरे में पड़े सोफ़े पर

पटक दिया। प्रतिमा ने कहा—'मुझे क्यों रोका है आज ? क्या बातें करनी हैं ? करो न।'

'जल्दी क्या है।'—शमीम ने कहा—'आप कल दिनभर यहाँ हैं। दिन में कर लीजियेगा ! आरती और भैया कल रात एक मिनट नहीं सोये। आज न सोयेंगे तो सिर में दर्द पैदा हो जायगा। आप भी आराम करिये।'

बलराज ने कहा—'प्रतिमा ! मैं जिस काम के लिये आया हूँ वह बता चुका हूँ। जिले के जितने लोग फ़रार हैं उन सब की एक सभा करना चाहता हूँ। सभा कहाँ होगा—कब होगी यह तुम तय कर लो। इधर बुलेटिन और पोस्टर छाप कर बँटवाने हैं। यह काम मैं कल दिन में कर लूँगा। लेकिन मुझे जिले भर के फ़रारों की लिस्ट मिलनी चाहिये। उन तक खबर पहुँच जानी चाहिये—महमूद ने मुझे भेजा है। लखनऊ में मैं सबके रहने का इन्तज़ाम कर लूँगा। एक एक दो दो कर वे लोग वहाँ पहुँच सकें तो अच्छा ! वहाँ से एक मुक़ाबिल योजना बना कर हम जिले में प्रवेश करेंगे ! इस बार जम कर मोर्चा होगा। हम लोग सब समझ कर फिर एक एक दो दो गाँव गाँव में बँट जायँगे। खुले विद्रोह के लिये जनता को ललकारेंगे ! उसके पहले सब को एक जगह पर समेटना तुम्हारा काम होगा। तुम मुझ से जो कहो मैं करने को तैयार हूँ। जिस गाँव में या जिस जंगल में चाहो सब को इकट्ठा कर लो। महमूद का सन्देश मैं उन तक पहुँचा दूँ। जब तक तुम चाहो मैं यहाँ रुका रहूँ। तुम्हें सुन कर ताज्जुब होगा—मैं तुम्हारी तलाश में शाम को चार पाँच मील जंगल में घूम आया हूँ। शायद तुम कहीं दिखाई पड़ जाओ। अब तुम मिल गयी हो तो जल्द सब काम कर लें।'

'यहाँ के कुछ फ़रारों के अड्डे मुझे मालूम हैं। दो तीन मेरे साथ हैं। मैं कल रात को जाकर परसों से ही सब को खबर भेजना शुरू कर दूँगी। ये नोटिस और बुलेटिन कल दिन में आप छाप डालिये। मुझे भी थोड़े दे दीजियेगा। मैं साथ लेती जाऊँगी। दिन में मुझे आप

जहाँ कहते थे वह छिपा दीजियेगा। अगर किसी मल्लाह ने या घाट वाले ने नाव की खबर पुलिस को दे दी तो फौरन आपके आने और नाव के आने में सम्बन्ध जोड़ लिया जायगा! पूरी कोठी घेर ली जायगी। ऐन वख्त पर मैं कहाँ भागती फिरूँगी? पहले से होशियार रहना अच्छा है। मेरे पकड़ जाने से यहाँ का काम छिन्न भिन्न हो जायगा।'

शमीम ने कहा—'दो तीन बार यहाँ तलाशी हो चुकी है। हमारा बन्दूक और रिवालल्वर का लाइसेन्स जब्त हो चुका है। पुलिस हथियार छीन ले गयी है। शुक्र है महमूद ने कोई ऐसी चीज़ यहाँ नहीं रख छोड़ी जो कानून की लपेट में आती। तुम्हें मैं छिपाऊँगी। छापने की मशीन, कागज़, स्याही सब वहीं है। महमूद पहले से इन्तज़ाम कर गया है। मुझे छोड़ कर और कोई नहीं जानता! मैं खुद सुबह उठ कर वहाँ सफाई कर लूँगी। लोहवान वगैरह सुलगा दूँगी ताकि वहाँ की हवा की घुटन खत्म हो जाय।'

बलराज ने कहा—'मैं सुबह थाने पर जाकर दारोगा से बात कर लूँगा। उन्हें मालूम हो जायगा मैं प्राइवेट काम से शमीम के पास आया हूँ। किसी सियासी मक़सद से नहीं। सियासत से हमें मतलब क्या है? आरती की तबियत बहन के पास चार-छः दिन रहने की हुई। मजबूरन लेकर आना पड़ा। सब ठीक हो जायगा! सिर्फ महमूद के आने की खबर मिलने पर कोठी पर धावा होगा। वर्ना नहीं। तुम्हें यह सब करने की जरूरत न पड़ेगी। इतमीनान से रहो। कोई बात होगी तो बाबूजी का नाम पेश कर दूँगा। काफ़ी है उतना! तुम्हें रुपये की जरूरत हो तो बता दो! मैं शमीम से दिलवा दूँ। मेरे पास तो है नहीं। थोड़ा बहुत शीला के पास लखनऊ में है। मैं शमीम से कहे देता हूँ। जब तुम्हें जरूरत पड़े आकर ले जाना। पर मर्द का वेश बना कर न आना। औरत की तरह आना—ले जाना। है न शम्मी!'

'यह सब तुम्हारा और महमूद का है भैया! जो तुम लोग चाहोगे

होगा ! कल मुझे बता देना बहन ! मैं तुम्हें दूँगी। आगे भी जब जरूरत हो ले जाना।'

'अभी जरूरत नहीं है। आज ही कई हज़ार रुपये ले गई हूँ। पर जरूरत पड़ती रहेगी। आप लोगों का ही भरोसा है। सरकारी ख़जाने लूटने से अगर पूरा न पड़ेगा तो आप लोग देंगे। यहाँ फ़ौज ने बड़े ज़ुल्म किये हैं। दूसरे गाँवों में जाकर देखो तो पता चलेगा। जाने के पहले पूरे जिले को रौंद गई है। हमारे सामने बदले का ज्वालामुखी है—ज्वालामुखी। हम लोगों को हिंसावादी कह कर बदनाम किया जा रहा है। पर सरकारी हिंसा के मुकाबिले हमने अभी कुछ नहीं किया। अब करेंगे! जितना हमने इन लोगों के प्रति भ्रातृत्व और सौजन्य दिखाया उतना इन लोगों ने हमें ज़िबह किया! दूसरे देश में यह सब होता तो रातोरात सल्तनत ढ़हा दी जाती। जो जहाँ सामने पड़ता—मार डाला जाता। पर यह हिन्दुस्तान है! गुलामी ने यहाँ के लोगों का खून पानी कर दिया है। हम लोगों के ललकारने पर थोड़ा बहुत जोश आता है। बाद में जाकर वे ही लोग स्टेशन और थाना फूँकने वालों का नाम बता आते हैं। कभी कभी अपने सिर के बाल नोचने की तबियत होती है। अपना ही सिर पीटने और हाथ पैर कुचलने को जी चाहता है। यहाँ की जनता ऐसी ही रोमान्चकारी जघन्यताओं की पात्र है। जिनके पास हत्या और अत्याचार करने के ऐसे साधन हैं उनके दमन पर आश्चर्य नहीं होता। आश्चर्य होता है—अपनी जन्मजात स्वतंत्रता का अपहरण सहते रहने वाला मानव ऐसे घिनौने अत्याचार कैसे बरदाश्त करता है! इन प्राणहन्ता लुटेरों और दरिन्दों को एक तरफ से कत्ल करना क्यों नहीं शुरू कर देता! अपनी थोड़ी बहुत बची स्वतंत्रता की रक्षा के लिये सामूहिक रूप से खूनी मोर्चा क्यों नहीं बनाने लगता—बनाये जाता और शत्रु का खून बहाये जाता। उसे भय क्यों होता है—हिचक क्यों होती है! एक औरत पर जब बलात्कार होता है तब वह क्यों नहीं महसूस करता सारे भारतीय नारीत्व का अपमान हो रहा है!

धिक्कार है हमें—हमारे देश को !'

बलराज ने कहा—'पाप का घड़ा देर में भरता है बहन ! जब भर जाता है तब उलट फेर होते मिनटों की देर नहीं लगती। अभी हम सामाजिक भय की रूढ़ियों से मुक्त नहीं हो पाये हैं ! रूढ़ियों के बल पर सामाजिक या राजनैतिक क्रान्ति नहीं हो सकती। उसके लिये हमें प्राणों का—सामाजिक सुख-सुविधाओं का मोह छोड़ना होगा। नहीं तो शासन के दानवों की शक्ति घटने के बजाय बढ़ती रहेगी। बहुत से लोग इस आन्दोलन को अव्यवस्था और अराजकता कहेंगे। पर क्रान्ति के बाद-नव-निर्माण होने तक अव्यवस्था अनिवार्य है। किस देश में वह नहीं रही ! भूखा नंगा जन-समुदाय क्रान्ति के वैज्ञानिक आधारों को समझने में समय लेता है। वर्तमान दुरवस्था से वह मौत की ओर ले जाने वाले परिवर्तन को भी अच्छा समझेगा—मुझे विश्वास है। गान्धीजी अभी कुछ समय आन्दोलन न छेड़ते। वे एक बार और समझौते की कोशिश करते। हुकूमत की बौखलाहट ने विद्रोह की बारूद में चिन-गारी का काम किया ! जो हो रहा है प्रतिमा ! वह कम नहीं है। ध्यान रक्खो यह बराबर घना होगा ! एक शताब्दी से अधिक की जमी हुई अँगरेजी साम्राज्य की सत्ता—उसकी शक्ति का भय कोई हमें रोक नहीं सकता ! लपटों से बचते रहने वाली दुनियादारी की भावना हमसे दूर हो चुकी है। सीधे आक्रमण न करने की इतने दिन से चली आने वाली झिझक एक ही झटके में दूर हो गई है। आदमखोर हुकूमत के क्रूर, नृशंस, दमन-चक्र के दमकले इस आग को बुझा नहीं पा रहे। कैसी है यह सर्वभुक् ज्वाला ! ऊपर से देखने में आग बुझी बुझी लग सकती है। पर लपटों की दाहकता कम नहीं हुई। गोलियों की बौछार—जनता पर किये गये नारकीय शारीरिक अत्याचार इस दावानल को बुझा नहीं सके। पराधीन मानवता की सामूहिक आत्मा का हुँकार है यह ! विनाश के मलबों के नीचे भी आग दहका करती है। निराश होने की जरूरत नहीं प्रतिमा ! गुनाह है यह !'

प्रतिमा ने बलराज की ओर चुभती दृष्टि से देखा। यह सीधा

सादा, अपने परिवार के वैभव और सुख—दर्शन के निष्क्रियतापूर्ण अध्ययन में डूबा रहने वाला आदमी संघर्ष की भीषणता के बीच ऐसे प्रेरक प्रबोध दे सकता है ! खून बहते, ताज़े घाव की चटखती गर्मी उसके शब्द शब्द से निकल रही थी। आरती ने बलराज की ओर देख कर सिर झुका लिया ! ये वही भैया हैं जो आत्मा परमात्मा की मीमाँसा बन्द कमरे में अकेले पड़े किया करते थे और दो दो दिन बाहर न निकलते थे। पर जब आग लगती है तो लगती चली जाती है। वही भाई आज उत्साह और स्फूर्ति की धौंकनी बन गया है ! एक ओर नारी-स्वाधीनता के प्रश्न पर पिता के राजसी वैभव को त्याग दिया। दूसरी ओर राष्ट्र की स्वाधीनता के लिये अविराम युद्ध का उपासक बना बिखरी हुई, साधनहीन सैनिकों की टोलियों का संगठन कर रहा है ! खाइयों में, निष्चेष्ट पड़े सैनिकों को मोर्चे पर जमे रहने के लिये ललकार रहा है। और महमूद ! उसे पुरानी पद्धति और कान्ग्रेसी परम्परा की परवाह नहीं। उसके साहस और दृढ़ता से भरे हृदय में कभी कोई शंका—कोई भ्रम नहीं उठता। जनता में आग लगा कर जेल में घुस बैठना लड़ाई का कौन सा तरीका है ? इसके बाद उससे सर्वस्व आहुति कर देने की—मर मिटने की आशा लगाना कितना हृदयहीन मज़ाक है ! आरती ने गर्वपूर्वक कहा—'भैया ठीक कहते हैं प्रतिमा दीदी ! उन कर्तव्यनिष्ठ, गुमनामी, जानों पर खेल जाने वाले वीर सैनिकों की बात करो जो गावों, पहाड़ों और खेतों में जम जम कर फौज की संहार लीला से मोर्चा ले रहे हैं। जो आज शहर शहर में अट्टालिकाओं और पतली, मँकरी गलियों के बीच जम जम कर दुश्मन के सिपाहियों पर धावा करते हैं—यातायात भंग कर रहे हैं। बग़ावत की आत्मा का स्वरूप देखो ! कहीं से उसका कोई अंग कमजोर दिखाई पड़े तो ख्याल न करो ! लड़ाई की टोलियाँ योंही बिखर बिखर कर एक हुआ करती हैं। हमारा गुप्त आन्दोलन—ग्राम पंचायतें जारी रहनी चाहिये। इसीलिये भैया और मैं आई हूँ। महमूद का यहाँ आना हमें ठीक न लगा। उसके नाम

वारन्ट भूल रहा है। हम लोग अभी उतने बदनाम नहीं हैं। एक बार अटूट विद्रोह की परम्परा स्थापित हो जाय.....लड़ाई के साधनों की हिंसकता और अहिंसकता फिर हमें उलझन में न डालेगी। न तो हमारी शक्ति बिखरेगी-न गुटबन्दियों में क्षीण होगी। यही सच्ची सियासी नैतिकता है जो हमारा लक्ष्य है.....'

× × ×

सुबह होते ही शमीम झाड़ू लेकर गुस्ल तहखाने में पहुँची। कोठी के नौकर चाकर तथा बलराज, आरती, प्रतिमा सब सो रहे थे। लगभग डेढ़ घन्टे तक वहाँ बत्ती जलाये वह साफ करती रही। जब बाहर निकली तब आसमान में सूरज चढ़ आया था। बलराज चारपाई पर बैठे ज़ोहरा से बात कर रहे थे। आरती अभी सो रही थी। शमीम को देखते ही वे भौंचक रह गये! 'अरे! कहाँ से आ रही हो तुम! आयने में शक्ल तो देखो! आँख कान, मुँह, नाक, बालों की क्या हालत है!'

शमीम थक कर चूर हो गई थी। धम से फर्श पर बैठ गई और बोली—'वही तहखाना साफ कर रही थी। अब जाकर इस लायक हुआ है कि इन्सान वहाँ खड़ा हो सके। ज़ोहरा! मामा जागी या नहीं। उससे चाय बनाने को कह दे। मामू को चाय भी न दे गई। क्या कहेंगे जाकर! मुँह हाथ धोओ भैया! चारपाई छोड़ो अब। दोपहर को सोना।'

'अब क्या सोऊँगा! तूने कमाल किया! हम लोग सोते रहे—तू पूरा तहखाना साफ कर आई। आरती और प्रतिमा वहाँ चली जायँगी। मैं चाय पीकर थाने पर जाऊँगा। दारोगा को आश्वासन देना है। इस बार तुमने महमूद की शादी की बात नहीं की। बड़ी समझदार हो तुम! मौका देख कर बात करती हो। आरती को जगाओ। मेरा पेस्ट, ब्रश, डाढ़ी बनाने का सामान उसके पास है। इतनी बड़ी हो गई पर सो कर जल्द नहीं उठती।'

'सोने दो। मैं लाकर देती हूँ। रुक न जाओ! नहा कर

दस मिनट में आई। वर्ना तुम्हारे सामान पर यह धूल बैठ जायगी। चाय तब तक आ जायगी। काफी तो न पियोगे ? बरसाती सुबह है—मज़ा आ जायगा ! काफी पियो !

मामा को काफी और नाश्ता बनाने का आदेश दे शमीम बाथरूम में घुस गई। पन्द्रह मिनट के बाद नहा धो, कपड़े बदल काफी और अंडे के बड़े लेकर बलराज के पास आई। बलराज ने उठ कर आरती के सिरहाने रक्खे अपने अटेचीकेस से सब सामान निकाल लिया था—बैठे हज़ामत बना रहे थे। बोले—इतनी जल्द ! नहाना धोना इस बीच हो गया ! बनाओ ! अभी पीता हूँ। आरती और प्रतिमा को भी जगा दो। प्रतिमा ज़रूर जग पड़ी होगी।'

शमीम को इस समय बलराज के पास से जाना न भाता था ! चम्पई रंग की चिकन की साड़ी और ब्लाउज में उसका सद्यस्नात, दस बर्ष के कौमार्य से दीप्त शरीर जगमगा रहा था ! साड़ी का पल्ला गले से लपेटे वह सिर खोले थी। लम्बे लम्बे काले भौंराले अधभीगे बाल पीठ के पीछे बिखरे थे जिनसे एक रुँधी रुँधी सी खुशबू फैल रही थी। सदैव उदास रहने वाला सलोना मुखड़ा इस समय असख्य तारकी मुस्कानों से भरा था जैसे एक एक रोमकूप मुस्का रहा हो...कैसी निरुपम और अरुण उज्ज्वलता उसके जलसिक्त गालों पर छाई थी। कानों तक फैली आँखों में उच्छ्वसित स्नेह के आवेग से छा जाने वाला जाफ़रानी गुलाबीपन ! कैसा अवर्णनीय लावण्य है ! बलराज के मन में एक अविज्ञानित मधुरता जाग पड़ी। बलराज के मन में भरी भरी मधुरता आँखों की राह उछल उछल कर बाहर आने लगी। उन्होंने दो मिनट गौर से शमीम की ओर देखा ! शमीम की आँखें बलराज से मिल गईं। इस बार कुछ गहरी लज्जा से आरक्त होकर शमीम ने सिर झुका लिया। उसके काफी बनाते हुए हाथों में एक अत्यन्त प्रिय लगने वाले कंपन की अनुभूति दौड़ गई। न जाने कैसी तरंगित रुलाई को लेकर पावस का धुँधला प्रभात आकाश में घिरा आ रहा था। बादल पर बादल—जोर की वर्षा के आसार। शमीम को बिना आयना देखे ही

लगने लगा—उसका रूप बलराज के हृदय में किस क़दर मीठे गीतों की कड़ियाँ गूँथ रहा है। चुपचाप छोटी टेबिल पर काफी का प्याला और नाश्ते की प्लेट रख कर सिर झुकाये खड़ी हो गई। बलराज तौलिये से मुँह पोंछते हुए बोले—'सिर्फ एक प्याला बनाया इतनी देर में! जितनी देर पूरे सामान के तैयार होने में लगी उतनी एक प्याला बनने में। तुम भी पियो—अपने लिये बनाओ। तब मैं पियूँगा! आज का दिन अकेले काफी पीने का नहीं।'

शमीम ने कहा—तुम पी लो! मैं जाकर आरती, प्रतिमा को देखती हूँ।'

'नहीं! मेरे साथ एक प्याला पीकर जाओ। पहले मैंने कहा तब तुम गईं नहीं। मेरी बात काटने में सन्तोष मिलता है क्या? बैठो! कुर्सी खींच लो—सामने बैठो न! साथ साथ पियेंगे! क्या बात है! चुप क्यों खड़ी हो! मैं बाज़ आया तुम्हारी ख़ातिर से। जवाब नहीं देना तो पास क्यों आती हो?'

बलराज की झुँझलाहट पर रीझ कर शमीम ने सिर ऊपर उठाया! उसकी अंगूरी आँखों में कातरता, अभिमान, बेबसी और सबके ऊपर झीने विद्रोह की झलकियाँ थीं. वह विद्रोह जो अपने को नीरस, निष्प्रयोजन छीजते रहते देख कर बड़े से बड़े संयमित और आत्मनिरोधी हृदय में भी कभी कभी, दस पाँच वर्षों में एक बार छल-छला आता है। बलराज के लिये असह्य थी वह चितवन—उस चितवन की सजलता में तैरती जीवनव्यापी आग की परछाईं .....

बलराज ने दोनों हाथों से आँखें मूँद ली और वैसे ही अकंपित बैठे रहे.....शमीम ने कहा—भैया! काफी ठंडी हो रही है—बड़े भी! खा पी लो तब दोनों आँखे मूँद कर भाभी का ध्यान करो। मैं मना नहीं करती। मुझे और भी काम हैं.....'

बलराज ने देखा—केवल कुछ क्षण की बात थी। चेहरे पर वही प्रमोद की ममत्वभरी कपूरी शुचिता— आँखों में वही उदार, निर्भय और निरुपम आलोक जो मन के बड़े से बड़े वैपरीत्य और कुन्ठा को

जला कर क्षार कर देता है.. ...ऐसा आतशी शीशे वाला आलोक। एक सदा को खोये कैवल्य में भीतर बाहर डूबी हुई शमीम खड़ी आँखों के एक एक कंपन से काफी पीने का आग्रह कर रही है। बलराज ने कहा—'मैं कह चुका। तुम न पियोगी तो मैं न पियूँगा। तुम क्यों नहीं अपने लिये बनातीं! लो मैं बनाता हूँ'—कह कर बलराज जमीन पर रक्खी ट्रे के पास बैठ गये और काफी का प्याला तैयार कर शमीम की ओर बढ़ा कर बोले—'लो! पियो!'

शमीम ने सुख भार से आनत मन के उल्लास में अपनी अन्तर्दृष्टि डालते हुए, सलूके के भीतर बन्द कलाई को बढ़ाकर बलराज के हाथ से प्याला ले लिया। दो घूँट पी कर बोली—'और तुम! तुम न पियोगे! यों ही ज़मीनशीन रहोगे!'

बलराज ने कहा—'तुम पूरा प्याला पीलो। तब मैं पियूँगा! जब तुम दूसरा प्याला पियोगी तब मैं साथ दूँगा। तब तक ख़ाक-नशीन रहूँगा।'

'तुम मुझे परीशान कर रहे हो। तुम्हारा कहना मैंने मान लिया। अब तुम मेरा कहना मान लो न! चारपाई पर बैठ जाओ—राजा भैया की तरह। क्यों नहीं उठते!'

बलराज उठ कर चारपाई पर बैठ गये और प्याला मुँह से लगा लिया! सामने हाथ में प्याला लिये शमीम खड़ी थी। आँखों में पूर्ववत घनी घनी श्यामल उन्मादकता थी—शालीन मिठास से भरी भरी हगरी तन्मयता थी पर वह नहीं तो पल भर की भी चेतनता सहन नहीं कर पाती। यह वह थी जो चैतन्य को अधिकाधिक पैना कर पीड़ा की अनुभूति को एक प्राणद आत्मविश्वास में—एक वत्सल आत्म-उल्लास में बदलती चलती है। बलराज ने कहा—'अक्सर एक बात सोचा करता हूँ। तेरे सामने होने पर कम सोचता हूँ पर कभी कभी जब रात में नींद नहीं आती और इधर उधर की बातें सोचने लगता हूँ तब सब बातों को ठेल कर वह आगे आ जाती है। जानती हो कौन सी बात है वह! तुम जरूर जानती होगी।'

शमीम आधा प्याला पी चुकी थी! कफ़स में बन्द खंजन सी अपनी उलझती आँखों की फड़फड़ाहट को यथासंभव स्थिर कर हँसी रोकने का यत्न करती हुई बोली—'मैं ग़ैब तो पढ़े नहीं। कैसे जान पाऊँगी—जब तक तुम न बताओगे। क्या है वह?'

बलराज ने कहा—'जिस गहरे करुण आदर भाव से मैं तुम्हारे प्रति भरा रहता हूँ वह भी कुछ क्षण के लिये भाफ़ बन कर उड़ जाता है। सामने एक शरारा—एक जलता हुआ शरारा रह जाता है। बिजली का वह शरारा नहीं जो तुम्हारे सिन्दूरी होठों पर रौशन है वरन आग में दहकते कोयले का शरारा जो सचमुच जलाता है... जलाये ही जाता है। जानती हो उसकी आँच में कैसी झुलसाहट होती है.....'

शमीम के गले में आधी उठने वाली और आधी भीतर ही विलीन हो जाने वाली नये प्रकार की हिचकियों का ताँता लग गया। उसने प्याला उठा कर आल्मारी के हाँशिये पर रख दिया। भावाकुल दृगों को वैसे ही बलराज के मुँह पर स्थिर कर बोली—'क्यों होता है यह! सोचा है कभी? मुझको लेकर तुम्हें अल्लाह से लड़ने झगड़ने की ज़रूरत नहीं! अब क्या है? अब तो कट गई भैया! ज़ोहरा तब साल भर की थी। सोचती थी कैसे.....कैसे कटेगी यह अज़दहे जैसी जिन्दगी.....नागिन जैसी जवानी। अब क्या है! अब बेड़ा पार है। अब तो कँपकँपी—वह फुरहरी भी दिल और जिस्म में नहीं होती। तुम्हारे जैसे देवता भाई की बहन होने का नियाज़ मुझे हासिल हुआ। मुझे क्या डर है? तुम क्यों परवरदिगार से शिकवा करते हो... मैंने तो कभी नहीं किया! कोई बात होगी—तुमसे कह लूँगी···उनसे नहीं। वे दुनिया के मालिक हैं। तुम मेरे बहनापे के···सिर्फ बहनापे के। तुम से कह लूँगी सब.....'

बलराज ने अनुभव किया जैसे उनका झुका सिर उठ नहीं पा रहा है। नमाज़ में जैसे तरुण नमाज़ी को किसी का ख्याल आ जाने पर सिज़दे के सर उठाने का होश नहीं रहता।

बोले—'तुम कहती थीं ग़ैब नहीं पढ़ीं। कैसे किसी के मन की बात जान सकोगी। तुमने सचमुच जान लिया! मेरी बात जानने भर के लिये जरूर ग़ैब पढ़ी हो। तुम मना करती हो तो ऐसी बात न सोचूँगा। पर जब तब मेरा मन बग़ावत करने लगता है—सिर्फ तुम्हारे कारन मुझे उनके वजूद पर शक होने लगता है। जो तुम्हारी जैसी को इतना उजाड़ सकता है उसकी पूजा क्यों की जाय? उसमें और मन्दिरों में पड़े मामूली पत्थर में फर्क क्या है!'

'ऐसी बातें न करो भाई! पाप लगता है। सुबह सुबह ऐसी बात करो जो आँखों में एतबार की लहर पैदा करें—इन सब बातों से दिलकी शान्ति जाती रहती है। और एक प्याला पियो न! कैसी तेज़ बारिश हो रही है। क्या होगा एक प्याले में। काफी गर्म है अभी। एक प्याला और लो। बड़े और लो। तुम्हारे लिये कितने सुबह मामा से बनवाये हैं। वर्ना काफी मैं खुद तैयार कर लेती। वायदा करो—मुझको लेकर विधाता से कोई झगड़ा न करोगे! यह इन्सान के गुनाहों का फल है जो उसे मिलता रहता है। इसमें उनकी रहमत और अमा में कोई फर्क नहीं आता! बन्दा-निमाज़ हैं वे.....कहते कहते शमीम ने आँखें बन्द कर जैसे मन ही मन प्रणाम किया...मन ही मन.....'

बलराज ने कहा—'यही होगा। मैं अपने बागी दिल को ऐसे मौके पर बस में रक्खूँगा! लेकिन तू दुआ देगी तभी मुझे यह भीतरी ठहराव हासिल होगा! तेरी दुआ में बड़ी शक्ति है। वर्ना मैं इसी तरह आन्धी का पत्ता बना उड़ता रहूँगा। इतना पढ़ा लिखा—दुनिया भर का फलसफ़ा चाट डाला पर यहाँ आकर सारा इल्म—सारी पढ़ाई साथ छोड़ देती है। तू चाहे तो मुझे वह बल दे दे.....'

'क्यों न चाहूँगी'—शमीम ने आवेग-पूर्वक कहा—'जो तुम्हें दे सकती हूँ सब दूँगी—कभी नाहीं न सुनोगे! जो नहीं दे सकती समझ लेना वह देने लायक नहीं। बेमसरफ और बेमानी है। उसकी ख्वाहिश कर कभी अपने को छोटा न बनाना! जानती हूँ—तुम

कितने बड़े हो। फिर भी बात की धुन में कह गई। तुम से मेरे दिल का कौन ज़ज्बा छिपा है.....'

बलराज दूसरा प्याला पीने लगे। बारिश जोर की हो रही थी। आरती और प्रतिमा उस कमरे में आ गईं। आरती ने कहा—'बाजी! तुम सुबह के फूलों की रानी मालूम पड़ती हो। नहा धो चुकी हो! तभी इतना गमक रही हो। कितने सुबह उठ पड़ती हो! भैया! आज कुछ काम होना चाहिये।'

'जरूर होना चाहिये। होगा भी। तुझे पता नहीं शम्मी पाँच बजे तड़के उठ कर वह कमरा साफ कर आई है। डेढ़ घन्टे लगे थे। जब वहाँ से आई थी तो रेगिस्तानी धूल की गठरी बन गई थी। अब क्या है। तुम लोग चाय पीकर जाओ—छापना शुरू करो। मैं बाहर थाने की रिपोर्ट लूँगा।

× × ×

तहखाने में प्रतिमा और आरती बुलेटिन साइक्लोस्टाइल करने लगीं। बलराज थोड़ी देर वहाँ बैठे। फिर बाहर निकल गये। आरती ने प्रतिमा से कहा—लखनऊ में कम्यूनिस्टों का जोर है दीदी! खुशी की बात है वह शहरों तक ही सीमित है। देहातों में—किसानों में उनका असर नहीं। 'लोकयुद्ध' और 'पीपुल्सवार' के हर अंक में वे लिखते हैं कि ब्रिटिश शक्ति के विरुद्ध हमारी लड़ाई धुरीराष्ट्र-विरोधी मित्रराष्ट्रों के युद्ध प्रयत्नों को कमज़ोर बना रही है। इसे वे तोड़ फोड़ का आन्दोलन कहते हैं!'

प्रतिमा ने मशीन का हेन्डल घुमाते हुये कहा—'मित्रराष्ट्रों का क्या यह कर्तव्य नहीं वे इस पर तत्परतापूर्वक विचार करें। हमारी आज़ादी की लड़ाई हमारे लिये उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना उनके लिये यह फैसिस्ट-विरोधी युद्ध। अगर हमारी लड़ाई उनके मार्ग में बाधक बनती है तो उन्हें गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिए। किस मुँह से वे दावा करते फिरते हैं कि वे मानवीय स्वतन्त्रता के लिये लड़ रहे हैं! क्यों ऐसी दशा में वे दुनिया के पाँचवें हिस्से को आज़ादी नहीं

देते अगर वे सचमुच उन उद्देश्यों के लिये लड़ रहे हैं जिनका दम वे भरते हैं। भारत की स्वतन्त्रता की लड़ाई से उनको सहायता मिलनी चाहिये। अगर उससे बाधा पहुँचती है तो यह साबित करता है कि उनकी लड़ाई की नैतिकता और औचित्य का आधार झूठा है। उनके शब्दों तथा कार्यों में—आदर्श तथा व्यवहार में इतना फ़र्क क्यों है? वे जो कहते हैं उसको पूरा क्यों नहीं करते? अपने कार्यों को वे अपनी घोषणाओं के अनुकूल बनावें तब संसार में न्यायमूलक शान्ति की सुदृढ़ नींव पड़ेगी। मित्रराष्ट्रों को हमारे स्वाधीनता संग्राम की सहायता करनी चाहिये—न कि उसका दमन और प्रतिरोध। तभी वे उस महान लक्ष्य को आगे बढ़ा सकेंगे जिसके लिये वे अपने जीवन की बलि देने को तैयार हैं। मित्रराष्ट्रों की जनता भी ऐसे ही साम्राज्यवादी शोषण की शिकार है। जब तक साम्राज्य का नाश नहीं होता तब तक ब्रिटिश जनता को भी शोषण, गरीबी से मुक्ति नहीं मिल सकती। यह साम्राज्यवाद और उपनिवेश-वाद मानवता का शत्रु है। अगर मित्रराष्ट्रों की जनता ने यह न महसूस किया तो उसकी सन्तान को अत्याचार, विषमता, गरीबी, लड़ाई और सशस्त्रीकरण की इसी पतित दुनिया में रहना होगा। हमारा क्या बिगड़ेगा! हम तो अब साम्राज्यवाद के कफ़न में कीलें ठोंकने के लिये तैयार बैठे ही हैं। हमें कोई कुचल नहीं सकता।'

आरती ने कहा—'ठीक कहती हो दीदी! हमारे लिये शत्रु नौकर-शाही का सैनिकवाद है। उसके बाद हमें और किसी की चिन्ता होगी। रूस की शासन-व्यवस्था और सामाजिक संगठन के प्रति मेरी श्रद्धा है पर उसे मैं राष्ट्र के जीवन और मरण की घड़ियों में सर्वोपरि स्थान नहीं दे सकती। पहले इन ब्रिटिश बनियों से हम निपटेंगे। रूस ने भारत की आज़ादी के लिये क्या किया? आज तक कभी एक शब्द—एक वक्तव्य वहाँ के अधिकारियों ने इस सम्बन्ध में दिया! हमें कम्यूनिज्म से मोह है क्योंकि समाजवाद का क्रान्ति-कारी रूप है वह। पर रूस के प्रति भौगोलिक श्रद्धा लेकर हम क्या

करें ! इसके लिये क्या हमारा ऐतिहासिक देश काफ़ी नहीं ! जिसकी मिट्टी-पानी से हमारा शरीर बना है उसका हमारी श्रद्धा पर पहला अधिकार है ।'

प्रतिमा ने कहा—'मैं आज रात को जाकर सब को बुलवाऊँगी । महमूद की कोठी पर सब का आना ठीक न होगा । चारों ओर शत्रु का मोर्चा है । मैं आज के तीसरे दिन आकर तुम्हें और भैया को ले चलूँगी । नोट कर लो । रात को ठीक दो बजे तुम्हें मेरी झोपड़ी के नीचे नाव मिलेगी । तुम लोगों को देखते ही हम तीन बार टार्च की रोशनी पानी पर फेंकेंगे । तब तुम लोग आगे बढ़ना – वर्ना लौट पड़ना । आजकल दुश्मन भी नाव पर घूम सकता है । तुम दोनों को मैं उन लोगों से मिलाऊँगी । वहाँ बैठ कर हम लोग आगे की बात तय करेंगे ! इस बीच मैं यथासंभव सब को इकट्ठा कर लूँगी । क्रान्ति करनी है । बिना उसके आज तक दुनिया की भौतिक समस्यायें नहीं सुलझीं । दबावमूलक राजनीति के दिन लद गये ! साधन सदैव संग्राम के द्वारा निर्णित होते हैं । आज के जागृत जंगजू तबके को पाबन्दियों से बँधा स्वतंत्रता का रूप स्वीकार नहीं । हमें अँगरेजों का यहाँ रहना सहन नहीं ।'

आरती ने प्रतिमा को विश्राम देकर स्वयं रोलर घुमाते हुए कहा—'मुझे डर है लखनऊ में महमूद इधर उधर बाहर निकलने पर पहचान न लिये जायँ और पकड़ न जायँ । वहाँ बराबर जुलूस उठते रहते हैं । यूनिवरसिटी में संघर्ष चल रहा है । वहाँ के विद्यार्थी हैं वे ! मैं मनाकर आई हूँ । उन्हें कहीं का काम न देख कर पहले अपने जिले को शासन के कब्जे से मुक्त करना है । यहाँ के काम को क्षति न पहुँचे ।

'कोई क्षति न पहुँचेगी । तुम और भैया मिल कर उनका स्थान ले लोगे । पिछली बार महमूद ने जिस प्रकार 'लीड' किया है उसे जान कर पुलिस और फौज सरगर्मी से उनकी तलाश कर रही है । प्रमुख कार्यकर्ताओं में वही एक बचे हैं जो पकड़ में नहीं आये ! और सब गिरफ्तार हो चुके हैं । मैं चाहती हूँ वे दूसरे हमले के समय

ही यहाँ आयें। संगठन का कार्य मैं देखती रहूँगी। पर जब चाचा बोलना हो तब उनका आना जरूरी है। इन बुलेटिनों को घर घर पहुँचाना है। लोगों को एक बार और जोश दिलाना है। इस बार अगर हम विफल होते हैं तो कोई दूसरा तरीका आख्तयार करेंगे! तुम लोगों को मैं दूसरे दिन रात को फिर यहाँ छोड़ जाऊँगी--नाव के रास्ते से।'

आरती ने कहा—'तुम लखनऊ न चलोगी? कम से कम एक बार महमूद से मिल कर यहाँ का हाल उन्हें बता दो! तुमसे मिलने, बात करने को उत्सुक हैं। चाहो अलग चलो—चाहो हम लोगों के साथ। तुम जब मर्द का जामा पहन लेती हो तब बड़ा से बड़ा सी० आई० डी० तुम्हें पहचान नहीं सकता! मेरे साथ चलो तुम। मेरे नौकर के रूप में! भैया को मैं यहाँ छोड़ दूँगी। सन्देह का कोई अवसर हमें नहीं देना है। वे एक दिन पहले या एक दिन बाद रवाना होंगे! पर इन फरार लोगों को क्या लखनऊ ले चलना ठीक होगा? सोच लो। महमूद ने ऐसा कहा था। दो चार खास खास को लेती चलो! बाकी को किसी सुरक्षित स्थान में छिपा रहने दो! एक एक आदमी हमें इस समय अनमोल है। एक का भी गिरफ्तार होना हमारे लिये हानिप्रद है।'

प्रतिमा फुर्ती से छपाई का काम कर रही थी। पहले से वह इस काम की अभ्यस्त थी। बोली—'ऐसी ही लड़ाइयों से स्वतन्त्रता मिलेगी। इस बार—अगली बार—अनेक बार। हमें हर बार अपनी पूरी ताकत लगानी होगी। राजनैतिक स्वाधीनता के बाद आर्थिक स्वाधीनता का प्रश्न आता है। देश के पूँजीवादी वर्ग युग युग से चले आ रहे—अधिकार शक्ति और सुविधाओं को आसानी से न छोड़ेंगे अपनी सत्ता को कायम रखने के लिये वे मरने मिटने को उतावले हो जायँगे। अब जब होगी आज़ादी की लड़ाई ऐसी होगी—हाँ अधिक संगठित और व्यापक होगी। सरकार के कल पुरजों की खुली गुन्डेशाही का

जवाब हिंसा से देना होगा। बिना हिंसा के पूरे देश पर राष्ट्रवादियों का कब्जा नहीं हो सकता। अगर हम जर्मनी और जापान के खिलाफ शस्त्र ग्रहण करने को प्रस्तुत हो जाते हैं—स्वतन्त्रता मिल जाने पर आक्रमणकारी का शस्त्र बल से प्रतिरोध करने का एलान करते रहते हैं तो हम ब्रिटेन के विरुद्ध पूर्ण हिंसा की ताकत इस्तेमाल करने से क्यों इन्कार करें! कम्यूनिष्ट बार बार कहते हैं—यह आन्दोलन काँग्रेस का आन्दोलन नहीं है। उस पर काँग्रेस की स्वीकृति नहीं है। लेकिन हम अपने नेताओं की ऐसी चुनौतीपूर्ण गिरफ्तारी सहन नहीं कर सकते। क्या कम्यूनिष्टों की तरह हम भी सरकार से पेटिशन करते फिरें कि उन्हें छोड़ दिया जाय। ऐसा आन्दोलन करना नीचतापूर्ण तथा कायरतापूर्ण है। ऐसा था तो वीरतापूर्ण क्रान्ति के उन बड़े बड़े शब्दों का क्या मतलब था जो बम्बई ए० आई० सी० सी० में गाँधीजी के मुँह से निकले हैं। क्या उनका यह उद्देश्य नहीं है कि भारतीय जनता ब्रिटिश हमले के जवाब में उठ खड़ी हो! कौन सा वह प्रबल आवाहन है जो भारतीय जनता को कष्ट की संगीनें सहने के लिये प्रेरित कर रहा है! किस अन्तर्ज्योति से उत्तेजित होकर इस साधना में हजारों नवयुवक रोज समिधा बनते रहते हैं! हज़ारों परिवार रोज मिटते चलते हैं। हज़ारों स्त्रियाँ रोज विधवा और अनाथ बनती हैं। कम्युनिष्टों की तरह हम थके पराजित नहीं हैं जो आत्मस्वार्थ का सस्ता सौदा करने की सोचें। गुलामी की हिफ़ाज़त की जिम्मेदारी गुलामों पर हर्गिज नहीं हो सकती। आज गाँधीजी साम्राज्यवादी अग्निकुण्ड में नैतिक सहानुभूति की आहुति देने को भी तैयार नहीं।

आरती ने कहा—'दीदी! जितने भी लोग बिखरे हुए हैं सब को एकत्र करो। इसके बाद एक बार फिर जिले को अँगरेजी फौज और पुलिस के हाथों से छीन लिया जाय। महमूद को मैं रोक आई हूँ। वे तुमसे मिलने की आशा में वहाँ गये थे। उन्हें क्या पता था तुम यहाँ ज़मीन के भीतर घुसी बैठी हो। इस बार हम लोग इन आततायियों को ऐसा सबक सिखा दें कि ये जीवन

भर याद रक्खें। रुपये की चिन्ता न करो। महमूद की पूरी स्टेट—भाभी के पास का बीसों हजार रुपया तुम्हारी नज़र है। हम लोग अवसर पड़ने पर जनता से चन्दा माँगने निकलेंगे। पर वे फ़रार इकट्ठे हों और हथियार जुटाना शुरू करें। यही इस समय उचित है। उनके मनोबल को मज़बूत बनाना है। ऐसा न हो घर वालों की तकलीफ़ के ख्याल से विचलित हो जायँ।'

प्रतिमा ने कहा—'हरगिज़ नहीं! हमारा कोई साथी गिरफ्तार हो जाय तो हमें पुलिस पर हमला कर उसे छुड़ाना होगा! जितने भी हमारे आदमी पकड़े गये हैं—यहाँ देहातों के थानों में इसी लिये नहीं रक्खे गये कि उत्तेजित जनता उन्हें छुड़ा न ले जाय। हमारे जो साथी जेलों में हैं वे वहाँ रुकेंगे नहीं। बराबर भागने की कोशिश करते रहेंगे! जेल में जाना और पालतू पशु की तरह बन्द रहना आज़ादी की लड़ाई लड़ने का कोई तरीका नहीं। जेल में जाकर बन्द हो जाने की प्रतिष्ठा और परम्परा हमें तोड़नी है। मरघट के मुर्दों को जगाने के लिये जोगी को अलख जगाना पड़ती है—समाधि में जाकर बैठ जाने से काम नहीं चलता। पहले के आन्दोलनों में बराबर यह हुआ। सरकार ने विद्रोहियों को सींखचों के अन्दर डाल दिया या खत्म कर दिया। देश में शान्ति छा गई। इस बार ऊपर से ठंडी लगने वाली राख के भीतर कुरेद कुरेद कर अधबुझे अंगारों को जागृत रखना है। वे बुझे तो देश बुझा।'

आरती ने कहा—'यही सोच कर मैंने और भाभी ने गुप्त तौर पर सब काम करने पर ज़ाहिरा अपने को अलग रखने का निश्चय किया है। तुम्हारा बचते रहना सब से जरूरी है। कान्ग्रेस के इतिहास में इस तरह काम करने का यह पहला अवसर है! किसी को कोई अनुभव नहीं। जिले के इतने पुराने कान्ग्रेसी कार्यकर्ता महीने दो महीने भी अपने को न बचा सके। तुम्हारा आतंकवादी अनुभव पुराना है। तुम्हारे नेतृत्व की हमें खास जरूरत है। अन्डर ग्राउन्ड रहना एक विज्ञान है। हर एक को उसका इल्म नहीं होता। मुझे विश्वास है

जिन लोगों का भार तुमने लिया है वे कभी न पकड़े जायँगे ! तुम उन्हें इस प्रकार रक्खोगी और ट्रेन करोगी कि वे बराबर सरकार की आँखों में धूल झोंकते रहेंगे ! जैसा ठीक समझो करो। यदि वे यहाँ सुरक्षित हैं तो उन्हें लखनऊ ले चलने की जरूरत नहीं। तुम्हारे चलने की भी क्या जरूरत ? महमूद को मैं यहाँ भेज दूँगी। जो तय करना होगा तय कर लेंगे। इस बार हमारा हमला भरपूर और अन्तिम होना चाहिये ! कुछ समय लग जाय यह मंजूर है। ज्यों ज्यों समय अधिक होगा त्यों त्यों सरकार ढीली पड़ जायगी। जो मुस्तैदी पुलिस के इन्तज़ाम में आज है वह तब न रहेगी। हमें अपने काम में आसानी होगी...पर अधिक दिन रुका नहीं जा सकता। जल्द से जल्द इन ज़ालिमों की ज्यादतियों का बदला लेना है। यहाँ क्या क्या नहीं हुआ !.खुले आम लोगों को जूते लगाये गये। बच्चे, जवान, बूढ़े सब को पीटा गया। औरतों पर बलात्कार हुए—छोटी लड़कियों तक के साथ पाशव चेष्टायें करने की कोशिश की गई। जो लोग फरार हैं उनके घर वालों को असह्य यन्त्रणाएँ दी गईं। मैं एक बात देखती हूँ। गुलामी के साथ साथ इन्सान की सहने की शक्ति बढ़ने लगती है। और कोई देश क्या कभी इस प्रकार नारी-उत्पीड़न, घृणित शारीरिक अत्याचार और कुत्सित दमन झेल सकता है ? यह हमारी युग युगों की सहनशीलता है जो ऐसे अवसरों पर हमारे काम आती है। हमें आदमी से काठ बना देती है—काठ !'

× × ×

महमूद की कोठी से निकल बलराज सीधे थाने पहुँचे। दारोगा भीतर बैठे सिपाहियों से गुप्त मंत्रणा कर रहे थे। दारोगा बलराज को पहले से जानते थे। कई वर्ष से वे गाँव के थाने पर थे। बलराज भीतर जाकर एक कुर्सी पर बैठ गये। दारोगा को कुछ बात करने का अवसर न दे, बोले—'मैं कल आप से मिलने आ रहा था पर मौका न मिला। आपके मन में किसी तरह का शुबहा न हो इसलिये मैं आया हूँ। महमूद की कोठी पर ठहरा हूँ तो इतनी कैफ़ियत देना जरूरी

है। आपको पता होगा पिताजी से मेरा कुछ निजी मामलों में मतभेद हो गया है। लिहाज़ा वहाँ ठहरना मेरे लिये नामुमकिन था। इसके बाद महमूद की कोठी में ही मैं ठहर सकता था।'

दारोगा ने कहा—'आप से क्या छिपा है! यहाँ जो हुआ है उसकी वज़ह से हम लोगों को सख्ती से पेश आना पड़ता है। दर्जनों लोग फरार हैं। महमूद के लिये रोज बड़े साहब का हुक्म आता है। बताइये। हम लोग क्या करें। इतना बड़ा मुल्क है—हमें क्या पता वह कहाँ चला गया। यहाँ आये और बचकर निकल जाय तो क़सूरवार हैं हम। आप इतमीनान से जब तक जी चाहे रहिये। आपकी बहनजी भी तो साथ आई हैं।'

'उसी की वजह से मुझे आना पड़ा दारोगा जी! महमूद की बहन के पास आकर रहने की उसकी तबियत हुई। अकेली आ रही थी। मैंने आजकल के समय में उसका अकेले सफ़र करना मुनासिब न समझा। मगर ज्यादा दिन हम यहाँ रहेंगे नहीं। मुझे खुद जल्दी है। बरसों की छोड़ी वकालत शुरू करनी है। यहाँ ज्यादा वक्त ज़ाया नहीं कर सकता। मगर मुझे आपसे एक शिकायत है। आप इतने अर्से से यहाँ हैं कि यह गाँव एक तरह से आपका वतन हो गया है। यहाँ के लोगों के साथ आपकी सच्ची मुहब्बत होनी चाहिये थी। मैंने सब सुना है—जिस तरह पुलिस और फौज ने यहाँ लोगों के साथ ज्यादती की है वह भी मुझे बताया गया है। मैं जानता हूँ आप सरकारी मुलाज़िम हैं और आपको अफ़सरों का हुक्म मानना पड़ता है। लेकिन सोचिये क्या देश की आज़ादी की लड़ाई के प्रति आपका कुछ कर्तव्य नहीं है! कम से कम बागी रियाया ने आप लोगों के साथ जो सलूकात किये थे उनका ख्याल आपको रखना था। फौज आज आयेगी—कल चली जायगी। आपको तीस दिन यहाँ रहना है। कल कोई बात हो जायगी तो आपके परिवार की क्या दशा होगी! आप जानते हैं मुझे सियासी मामलोंसे कोई मतलब नहीं। लेकिन जनता पर ऐसे अत्याचारों की बात सुन कर किसका खून न खौलेगा! यही

बात मुझे आपके इन सिपाहियों से भी कहनी है। सब हमारे भाई हैं।'

दारोगा ने कहा—'आप ऐसा कहते हैं बाबूजी! यहाँ रोज़ अफ़सरों की धमकियाँ आती हैं और तबादले की—तनुज़्ज़ली की बात कही जाती है। उनका कहना है—जिस सख़्ती से मुझे काम लेना चाहिए था वह सख्ती मैंने नहीं दिखाई। एक भी फरार को पकड़ने में मैं कामयाब नहीं हो सका। यहाँ बलवाइयों ने जो जो किया है वह मामूली नहीं है। हुकूमत का नाम निशान यहाँ से मिटा देना चाहते थे। आपके मुअज्जिज़ वालिद साहब के असर से हम लोग थोड़ा बहुत कर सके वर्ना आप हम लोगों का वज़ूद न पाते। फ़ौजी अफ़सरों का यह हाल है कि बात पीछे करते हैं—गाली पहले देते हैं। हम लोगों की जिन्दगी तबाह है। आप इस तरह की बातें करते हैं—सरकार अलग शक करती है।'

बलराज लगभग एक घंटे वहाँ बैठे रहे। तरह-तरह से पुलिस वालों को समझाते रहे और कर्तव्य-पालन की नसीहतें देते रहे। पुलिस वाले सब उन्हें जानते थे। अपनी गम्भीरता और स्वभाव की उच्चता के लिए वे गाँव में प्रसिद्ध थे। दो तीन पुलिस वालों पर उनकी बात का इतना प्रभाव पड़ा कि वे रोने लगे। दारोगा यह देखकर चौकन्ना हो गया पर उसका मन भी बलराज की बातों से प्रभावित हो रहा था। थाने से निकलकर बलराज महमूद की कोठी पर लौट आये। प्रतिमा और आरती सारा काम खत्म कर शमीम के कमरे में बैठी उनका रास्ता देख रही थीं। प्रतिमा शान्त बैठी थी पर भीतर भीतर आशंका से फूल रही थी। आरती ने कहा—'भैया! छपाई का काम खत्म हो गया। आप क्या कर आये। प्रतिमा दीदी का मन बड़ा अशान्त है.....'

बलराज ने पूरा किस्सा सुनाया। प्रतिमा को कुछ सांत्वना मिली। खा पीकर बलराज बाहर चले आये। महमूद के जिस कारिन्दे को उन्होंने इधर उधर भेजा था उसका इन्तज़ार करने लगे। अभी तक

वह लौटकर न आया था। आरती, प्रतिमा, शमीम खाना खाकर आराम करने लगीं। प्रतिमा के दिल को चैन न था। किसी तरह रात हो—नाव आये और वह यहाँ से चल दे। अगर पुलिस तलाशी लेने एकाएक आ गई तो क्या होगा—कैसे वह अपनी बचत करेगा। शमीम ने उसे बार बार आश्वासन दिया था कि उसे उसी तहखाने में छिपायेगी? पर उस समय क्या छिपने का मौका रहेगा? अभी से उस तहखाने में जाकर सड़ने की उसकी तबियत न होती थी। दिन भर चुप बैठना भी असंभव था। आरती खा पीकर फिर सो गई थी। पर शमीम बैठी ज़ोहरा के फ्राक पर बूटियाँ काढ़ रही थी। प्रतिमा ने कहा—'दुबारा कभी आऊँगी तो पनाह दोगी न बहन। मुझे भूल न जाना। जब कहीं ठिकाना न लगेगा तब तुम्हारे पास आऊँगी। न जाने तब क्या होगा—कौन कहाँ रहेगा?'

'तुम्हारा मकान है बहन! मेरे लायक कोई ख़िदमत तुम्हें नज़र आये फौरन इत्तला देना! दो दिन के लिये जंगल में मंगल हो गया। आरती और भैया चले गये तो फिर वही वीरानगी! महमूद को तुम इतने दिन से जानती थीं पर कभी तुमने यहाँ आकर दर्शन न दिये! वाह रे भैया! रात को इतनी दूर से उन्हें तुम्हारे आने का अहसास हुआ! तुम उनके साथ हमारे घर आईं। कुछ दिन रहो न? तुम रहोगी तो आरती और भैया रहेंगे।'

'न बहन! मैं जैसे रात को दो बजे आई थी वैसे चली जाऊँगी—कुर्ता धोती पहन कर। आराम करने की हमें फ़ुरसत कहाँ? बन्धन में आराम कहाँ? मुल्क के आज़ाद होने तक हमें फ़ुरसत नहीं! किसी तरह यह लड़ाई कामयाब हो जाय तो खुशी का सितारा चमके। पर उसके पहले कौन बचेगा—कौन नहीं, यह कहना मुश्किल है। तुम फ़िक्र न करना। महमूद का बाल बाँका न होगा! उसकी बहन होने का गौरव साधारण नहीं है। तुम्हें वह मिला है—मुझे भी उसकी न्यामत मिल चुकी है। मैं बता नहीं सकती—बयान नहीं

कर सकती वह मेरे लिये कितना क्या है। आज वह सामने नहीं है पर उसकी मूर्ति मेरी आँखो के आगे बराबर मौजूद रहती है। वह जल्द आयेगा और तुम्हारी गोद आबाद करेगा.....'

'खुदा जाने कब आयगा बहन! जिस दिन से वह गया है उस दिन से मेरी रूह कोई निकाल ले गया है। वैसे रहती हूँ—सब काम करती हूँ पर लगता है बिना मल्लाह की नाव जैसी मैं न जाने किधर बही जा रही हूँ। तुम से कहीं मुलाकात हो तो कह देना—एक बार यहाँ आ जाय! समझ में नहीं आता ऐसी उथल पुथल में वह कब तक महफ़ूज रहेगा। मुझे तो परवरदिगार का सहारा है। उन्हें जो मंजूर होगा वह होगा! दुनिया में और कौन मेरा है!'

'सब तुम्हारे हैं बहन! महमूद की बहन सारे मुल्क की बहन है। तुम क्यों ऐसी बातें करती हो। जिसे आरती जैसी सती का प्यार मिला है उसे कौन चोट पहुँचा सकता है! मैं तुम्हारे निस्बत महमूद से सुन चुकी हूँ। वह कहीं रहेगा पर उसका दिल तुम्हारे लिये उसी तरह छटपटाता होगा जैसे दिन भर का थका पंछी शाम होते ही अपने नशेमन के लिये बेताब हो जाता है। भैया और आरती अभी कई दिन रहेंगे! हम सब लौटेंगे और जल्द लौटेंगे। भगवान ने चाहा तो इस की बार हम विजयी होंगे। वतन के शहीदों का खून कभी रायगाँ नहीं जाता। उनका एक एक बूँद खून जहाँ गिरता है वहाँ दस दस आज़ादी के सिपाही उठ खड़े होते हैं। यह आग की रवानी है जिसका आगाज़ है पर अंज़ाम नहीं। यहाँ कभी जिन्दगी का सिलसिला खत्म नहीं होता''बढ़ता जाता है वह.....'

रामलाल दिन भर लौट कर नहीं आया। बाहर बैठक में कई घन्टे इन्तजार कर जब बलराज ऊब गये तो भीतर आये। प्रतिमा बैठी ज़ोहरा को कहानी सुना रही थी। बलराज ने कहा—'ज़ोहरा! दिन में जो कहानी सुनता है उसका मामा खो जाता है। तू दिन में कहानी सुन रही है। कैसी निकम्मी लड़की है! अपने मामा को खोना चाहती है! अभी मैं खोते खोते बचा। रास्ता भूला जा रहा था।'

ज़ोहरा कूद कर बलराज के गले से लिपट गयी। गले में दोनों हाथ डालती हुई बोली—'तुम इतने बड़े होकर खो जाओगे मामू! मज़ाक करते हो? बच्चे खो जाते हैं या तुम जैसे सयाने! छोटे मामू (महमूद) कब आयेंगे? बताओ!'

'तू दिन में कहानी सुनेगी तो वह रास्ता भटक जायगा। यहाँ तक कैसे पहुँचेगा?'

'अब न सुनूँगी। उन्हें तुम भेज देना। कह देना ज़ोहरा ने बुलाया है। कितने दिन हो गये उन्हें गये! अम्मी से पूछती हूँ तो बताती नहीं। कहाँ हैं वे? कितनी दूर हैं यहाँ से? मुझे आप साथ न ले चलियेगा उनके पास!'

प्रतिमा का कठोर हृदय भी क्षण भर के लिये नमी से भर गया। बलराज ने कहा—'मुझे क्या पता वह कहाँ है। मुलाक़ात होगी तो तेरा पैग़ाम सुना दूँगा।'

'तुम जानते हो बड़े मामू—सब जानते हो। अम्मी को बताते हो—मुझे नहीं।'

बलराज ने चुमकार कर कहा—'मुझे पता नहीं बेटी! वर्ना बता देता। जैसे भेंट होगी तेरे पास भेज दूँगा। पर तू दिन में कहानी न सुनना।'

'न सुनूँगी। अब आप खुश हुए! कुसुम और लाल भाईसाहब कब आयेंगे? मामी चली गईं। आप चले गये। हम लोगों को ले चलिये न! अम्मीजान तो चलेंगी नहीं। मुझे ले चलिये। कुसुम के पास रहूँगी। मुझे यहाँ कुसुम—लाल, गुलाल भाई साहब के बिना बड़ा सूना लगता है। आप बड़े खराब मामू हैं। मेरी बात पर हँसते हैं। छोटे मामू ऐसे नहीं हैं—आप हैं।'

शमीम नौकरानी के साथ साथ चाय का सामान लेकर आ रही थी। बोली—'ज़ोहरा! तू बड़ी बदतमीज़ हो गयी है। मामू को खराब कहती है। चल हट!'

ज़ोहरा सहम कर खड़ी हो गयी। बलराज ने गोद में लिटा कर

उसका माथा चूमते हुए कहा—'तुम कहती होगी तब वह कहती है। बच्चे माँ की बातें दोहराते हैं। ज़ोहरा मेरे साथ जाने के लिये कहती है। अपनी लतीफ़ मामी के लिये बेचैन है। देख बेटी! तेरी मौसी क्या कर रही है। बुला ला उसे।'

ज़ोहरा आरती को लेकर आ गई। सब लोग चाय पीने लगे। बलराज ने कहा—'माशा अल्लाह! कितनी उम्दा चाय बनाई है शम्मी! क्या बात है! प्याले पर प्याले पीते चले जाओ—पता न लगे। ज़ोहरा को तुम डाटा मत करो। वह तुम्हें तो कह न रही थी। अपने मामू को कह रही थी। कितनी अच्छी लड़की है वह। अगली बार आऊँगा तब तुझे ले चलूँगा। कुसुम तुझे उठते बैठते याद करती है। पर तेरा मामू वहाँ नहीं है।'

शमीम ने कहा—'तुम्हें यह खराब कहेगी और मैं डाटूँगी नहीं! कल महमूद को और मुझे खराब कहेगी। ऐसे ही जबान बिगड़ जाती है। अब कभी न कहेगी।'

बलराज ने कहा—'जो खराब होता है उसे कहा जाता है। तुम अच्छी हो—तुम्हें खराब क्यों कहेगी? महमूद अच्छा है—उसे क्यों कहेगी। वह भूल गई। तुम उसकी जगह पर होतीं तो ख़ानाखराब कहतीं! आधा उसे याद रह गया—आधा भूल गयी।'

शमीम ने वक्र दृष्टि से देख कर कहा—'चाहे जो कहो—मैं तुमसे बहस नहीं कर सकती। आरती! खा कुछ। पूरा दिन बीत गया। खाली चाय पी तूने।'

'बस बाजी! इतना सामान बनवाने के लिये किसने कहा था? चाय तो चाय की तरह पी जायगी। तुम चाय को खाना बना दोगी तो कोई क्या करेगा! बुलेटिन कब बँटेगे भैया! गाँव गाँव में चिपकाना है!'

प्रतिमा ने कहा—'मुझे यहाँ से चले जाने दो तब सब करना। कल होगा यह सब। उधर के गाँवों में मैं बँटवा लूँगी। साथ लेती जाऊँगी।'

बलराज ने कहा—'तुम से भेंट अब कहाँ होगी ? कब होगी ? कैसे होगी ?'

'दो दिन के बाद मैं तुम्हारे पास खबर भेजूँगी। जल्द से जल्द मैं लोगों को इकट्ठा कर मिलाने की कोशिश करूँगी। तुम अभी यहाँ रहो।'

'मुझे लखनऊ लौटना है। महमूद जोश में आकर शहर में कुछ कर गुज़रा तो यहाँ का प्लान बिगड़ जायगा ? उसके लिये घर के भीतर दबकर बैठना नामुमकिन है। मैं शीला को सहेज आया हूँ पर उसकी सुनेगा कब ? बहस करने के फेर में लीला के यहाँ चला गया तो भी खतरा है। यह तय करना है कि उन लोगों को कहाँ रक्खा जाय ? वे लोग यहाँ सुरक्षित हैं तो लखनऊ भेजने की ज़रूरत नहीं। उस सूरत में मैं और महमूद यहाँ आयेंगे। लखनऊ वे जायँगे तब भी यहाँ लौट कर आना होगा। उन्हें जो करना है यहाँ करना है। लखनऊ में वे पुलिस के चंगुल से बच सकेंगे पर रास्ते में खतरा रहेगा। व्यर्थ में खतरा क्यों मोल लिया जाय। एक बार मैं उन लोगों से बात कर आगे की बता दूँ न।'

'यही मैं सोचती हूँ। मोर्चा यहाँ जमेगा और तुम लोग वहाँ से आओगे उन्हें बाहर भेजना कहाँ तक सही होगा। अधिक दिन हमें रुकना नहीं है। रुकने का अर्थ है लड़ाई को ढीला करना जो मुझे गवारा नहीं। तुम सब को देख लो—बात कर लो। खुद आकर नाव पर तुम्हें ले जाऊँगी। इसके बाद तुम फौरन महमूद को भेज देना। लखनऊ में महमूद को आगे आने की जरूरत नहीं। जो कुछ करना है यहाँ इन आरकाटियों का सत्यानाश करना है। इस बार इनके साथ वही किया जायगा जो इन्होंने हमारे साथ किया है। आरती को लखनऊ में छोड़ आना। तुम और महमूद आना। इसे जो करना होगा वहाँ करेगी।'

आरती ने कहा—'महमूद जो कहेंगे वह मैं करूँगी। लखनऊ में यूनिवरसिटी और कालेजों में कम्यूनिस्टों का असर बढ़ रहा है। वहाँ

काम की कमी नहीं है। जैसे हो इनके ज़हरीले असर को कम करना है। ये लोग वहाँ विद्यार्थियों को हड़तालें नहीं करने देते—प्रदर्शन नहीं करने देते! पर ऐसा न होगा! हमारे नेता और कार्यकर्ता बाहर नहीं पर हम लोग हैं। हम उन्हें सार्वजनिक जीवन से उखाड़ फेंकेंगे और तरुणों तरुणियों को गुमराह न होने देंगे। यहाँ जो होगा उसकी कल्पना कर अभी मुझे गर्व और उल्लास से रोमान्च हो आता है। उस मौके पर आकर और रह कर भी बाद में मैं निकल जाऊँगी। भाभी को भी मैदान में लाना है। इस बीच महमूद ने उनकी काहिली दूर कर दी होगी—ऐसा मुझे विश्वास है मुमकिन है वे दो चार मीटिंगों में बोल भी चुकी हों। पर उन्हें और करना है। अभी वे पूरी तरह तैयार नहीं हुई।'

प्रतिमा ने कहा—'तुमको भाभी को पोशीदा तौर पर काम करना चाहिये। उन्हें बोलने की ज़रूरत क्या है व्यर्थ में अपने को पकड़वा देने से क्या होता है? यही बात भैया पर लागू होती है। मैं और महमूद इतने आगे आ चुके हैं कि हमें अपने को छिपा कर रखना कठिन है। तुम लोग अपने को छिपाओ और लड़ाई को आगे बढ़ाओ! फौज में और पुलिस में बगावत फैलाओ उन्हें अपने कर्त्तव्यों का ध्यान दिलाओ। मज़दूरों में जाकर काम करो और उन्हें काम बन्द कर देने के लिये उत्तेजित करो! जैसे भी हो ये मिलें और बड़े बड़े कारखाने बन्द होने चाहिये। युद्ध के प्रयत्नों को लँगड़ा नहीं करते तो सब किया धरा व्यर्थ है। फैक्टरियों और वर्कशाप को बन्द कराओ! देहात में हम थाने और स्टेशन फूँकते हैं। शहर में तुम मिलों और कारखानों को नष्ट करो! मज़दूर क्यों न तुम्हारी बात मानेंगे? कान्ग्रेस के आदेशों का कैसे वे उल्लंघन करेंगे! यह सब तुम्हें करना है। बल्कि वह काम ज्यादा महत्वपूर्ण है। उसे करने के लिये दिमागी शक्ति और प्रभावित करने की क्षमता चाहिये। यहाँ तो जोश दिलाने भर से काम हो जाय।—लोग मरने मारने के लिये तैयार हो जायँगे! वहाँ 'पोलीटिकल गेम' है।

'भारत छोड़ो' नारे का सही अर्थ समझाना है। मुझे यकीन है महमूद यही सलाह देंगे। यहाँ भी हमला कर हमें बाहर निकल चलना है। अधिक से अधिक लोगों को अपने साथ निकाल ले चलना है। उससे पहले ज़िले में स्वराज्य क़ायम कर लेना है। अपने हाथ में शासन लेकर—यहाँ के लोगों को सौंपकर हम फिर अपने उद्देश्य के पीछे निकल पड़ेंगे। यही हमारा अभियान है। भाभी से तुम कह देना आरती! वे वहाँ बैठ कर हमारी जितनी मदद कर सकती हैं उतनी यहाँ आकर नहीं। जैसे भी हो लोगों को हतोत्साहित नहीं होने देना है। जीवन में ऐसे अवसर बार बार नहीं आते.....'

तेरह

लखनऊ में रेलवे वर्कशाप के कर्मचारियों ने हड़ताल की घोषणा कर दी थी। काँग्रेस के कार्यकर्ताओं ने तरह तरह के प्रयत्न कर—उन लोगों के बीच प्रचार कर यह स्थिति पैदा की थी। सम्पूर्ण देश में जो आन्दोलन और तत्सम्बन्धी प्रतिक्रियायें हो रही थीं उससे सरकार का अस्तित्व संकट में पड़ गया था। जगह जगह जनता की सरकार क़ायम हो गई और लोगों ने मिलकर खुद अपनी रक्षा और व्यवस्था का कार्य आरम्भ किया। रेलवे वर्कशाप वालों ने पहले दिन हड़ताल की और शाम को उनकी विराट सभा शहर में हुई। महमूद, शीला के साथ घर पर था। आरती और बलराज तब तक गाँव से न लौटे थे। ज्यों ज्यों उन्हें लौटने में देर हो रही थी त्यों त्यों उसकी चिन्ता बढ़ रही थी। रोज भिन्न भिन्न स्थानों से पुलिस और जनता के संघर्ष के समाचार आते थे। जहाँ कहीं झंडा फहराया जाता था वहाँ आँख मूँद कर हज़ारों की भीड़ पर पुलिस गोली चलाती थी। महमूद का दिल रह रह कर वहाँ जाने के लिये होता था पर शीला उसे रोकती थी और उन लोगों के लौट आने तक रुके रहने को कहती थी। आस पास के ज़िलों के बहुत से क्रान्तिकारी नेता लखनऊ में उस समय इधर-उधर पड़े थे। महमूद ने धीरे धीरे उनसे संपर्क बढ़ाना

आरम्भ किया। उसे तरह तरह के हाल सुनने को मिलते थे। जहाँ जनता की शक्ति के सामने सरकार लोकप्रिय नेताओं को गिरफ्तार न कर पाती थी वहाँ के पुलिस इन्सपेक्टर वगैरह भय के कारण थाना खाली कर भाग जाते थे। पर जाते समय वे थाने में डकैतों, चोरों और बदमाशों को खुलकर खेलने का आदेश दे जाते थे। ऐसी दशा में आन्दोलन के बाद तुरन्त उन स्थानों पर अराजकता का राज्य हो जाता था। वहाँ के कांग्रेसी कार्यकर्ताओं की चिन्ता और जिम्मेदारी बढ़ जाती थी। थाने के इशारे पर दफ़ादार और चौकीदार इन डकैतों की सहायता करते थे। जनता पर कैसे कैसे रोमाञ्चक अत्याचार हो रहे थे! महमूद सब सुनता था और शीला को बताया करता था। लीला के यहाँ उसका आना जाना बन्द था। कभी कभी लीला बहन से मिलने चली आती थी। पर महमूद ने अब बहस करना छोड़ दिया था। रेलवे वर्कशाप के कर्मचारियों की हड़ताल के मामले को लेकर कम्यूनिस्ट कार्यकर्ताओं ने फिर अपना प्रचार शुरू किया था। कांग्रेस मीटिंगों के समानान्तर उनकी मीटिंगें होती थीं। वे लोग कर्मचारियों को हड़ताल बन्द कर काम पर लौट जाने की अपील करते थे। दूसरी ओर काँग्रेस की मीटिंगों पर लाठी चार्ज होता था और हर प्रकार से हड़तालियों को आतंकित करने की चेष्टा की जाती थी। पर उभड़ते हुए जनसमूह वर्षा के परिप्लावित महानद की तरह आगे बढ़ते थे। उन्हें जीवन मरण की चिन्ता न थी।

यूनिवर्सिटी में महमूद को दूसरा ही दृश्य दिखाई देता। नेताओं के पकड़े जाने पर दो चार दिन कुछ प्रदर्शन हुए थे और विद्यार्थियों में जोश आया था। पर यूनियन के गैर क़ानूनी क़रार दिये जाते ही धीरे धीरे जोश ठंडा पड़ गया था। फिलहाल महमूद ने वहीं अपना कार्य क्षेत्र बनाया था। लड़के पढ़ाई में लगने लगे थे। महमूद ने वहाँ पहुँच कर नयी जान फूँक दी। फिर गुप्त बैठकें होने लगीं—विद्यार्थियों के जत्थे इधर उधर शहर में और बाहर जाने लगे और 'करो या मरो' का नारा ऊँचे कंठों से उच्चरित होने लगा। रेलवे वर्क्सशाप की हड़-

ताल में विद्यार्थी कार्यकर्ता जुट गये। लुप्त झपटों के शोले फिर धधकने लगे। महमूद शुरू से विश्वविद्यालय में बहुत प्रिय था। उसे सब जानते मानते थे। भूल गया वह अपने सिर पर झूलते वारन्ट को! खुल कर काम होने लगा और शहर में परचों और बुलिटनों की बाढ़ आ गयी। कभी कभी शीला उसके अधिक बाहर निकलने पर एतराज़ करती और चुपचाप घर में बैठने की सलाह देती। पर अधिकतर अवसर ऐसे आते जब महमूद शीला को अपने साथ ले जाता—विद्यार्थी कार्यकर्ताओं से उसका परिचय कराता। यही नहीं एक दो मीटिंगों से वह बोली भी और सी० आई० डी० वालों को इस नये व्यक्ति के सम्बन्ध में जानने की चिन्ता हो गई। शीला ने धीरे धीरे गृहस्थी जमा ली थी और आवश्यक सामान खरीद लिये थे। आरती और बलराज के आने पर वह उन्हें सभी आवश्यक सामानों से सुसज्जित नया घर दिखाना चाहती थी। शीला के पिता इस बीच आकर लड़की से साथ चलने के लिये आग्रह कर चुके थे। शीला ने साफ़ इन्कार कर दिया था। लाल, माँ के पास रह गया था। कुसुम और गुलाल नाना के साथ चले गये थे। महमूद दिन-दिन भर-रात रात भर गायब रहता था! एक जगह वह जम कर रहना भी न चाहता था। कभी किसी हास्टेल में—कभी किसी कार्यकर्ता के घर पर और कभी किसी अनिर्दिष्ट, अनिश्चित स्थान पर रह जाता। शीला लाल के साथ घर में पड़ी बलराज और आरती का रास्ता देखती। केवल आरती के कारण वह पिता और बहन का घर छोड़ यहाँ बेगानों जैसी पड़ी है। गाँव के भरे पूरे घर की याद आती है—बूढ़ी सास के हृदय पर क्या बीत रही होगी—कैसे बेरौनक और मनहूस घर उन्हें काट रहा होगा, यह सोचती है तो दिल में भारी पीड़ा होती है। पर क्या करे वह! पति की अनुगता है वह। जो वह करेंगे उसे करना होगा! महमूद ने धीरे धीरे उनके जीवन में कितना विराट परिवर्तन उपस्थित कर दिया! जीवन कहाँ से कहाँ पहुँच गया! कैसा संक्रामक व्यक्तित्व है उसका! उसने पूरे परिवार की धारा बदल दी।

महमूद ने कहा—'भाभी! शाम को रेलवे वर्कशाप वालों और जनता का जुलूस निकलेगा। इसके बाद अमीनुद्दौला पार्क में बड़ी सभा होगी। जाओगी तुम? तुम्हें जाना चाहिये। हम लोगों ने यह हड़ताल कराई है। तुम्हें बाक़ायदा 'लीड' करना होगा। चार बजे वर्कशाप के सामने पहुँच जाना है।'

'तुम! तुम क्या न चलोगे? तुम साथ न रहोगे तो मैं क्या करूँगी।'

'मैं जुलूस के साथ न रहूँगा। यहाँ पुलिस को मेरे ऊपर शक होने लगा है। मीटिंग में मैं बोलूँगा पर ऐन मौके पर पहुँचूँगा और तक़रीर के बाद फौरन खिसक जाऊँगा। यहाँ की पुलिस पहले से मुझे जानती है। ज़िले से मेरे निस्बत खबर ज़रूर आई होगी। यही वजह है मैं बराबर अपने अड्डे बदला करता हूं। तुम जाओ हड़तालियों को 'लीड' दो।'

लाल ने कहा—'चाचाजी मैं मकान पर अकेले न रहूँगा। मैं भी जाऊँगा।'

महमूद ने कहा—'तुम ज़रूर जाओगे। मां पर डंडे पड़ेंगे तो बेटे के सिवा उसे कौन सँभालेगा? भाभी! तय रहा। मैं यूनिवरसिटी के लड़कों से कह आया हूँ। मेरी बात खाली न जाय। ठीक चार बजे यहाँ से चल पड़ना।'

शीला ने कहा—'तुम कह आये हो तो जाना ही है। मुझे अपनी फिक्र नहीं। तुम अब बचते नज़र नहीं आते। मैं चाहती थी कि उन लोगों के आने तक तुम बाहर रहो। मेरी जिम्मेदारी ख़त्म हो जाय। तुम कहना नहीं मानते।'

'तुम्हारी जिम्मेदारी तब तक खत्म न होगी जब तक मैं कब्र में दफ़न न हो जाऊँगा। तुम भूल रही हो—अम्मी से तुमने क्या वादा किया था। तुम्हारे आँचल का आसरा मुझे है और रहेगा। भैया और आरती के आने में इतनी देर क्यों लग रही है। प्रतिमा दीदी उन्हें वहां मिली नहीं ऐसा लगता है।'

'यह भी हो सकता है'—शीला ने भारी स्वर में कहा—'बाबूजी ने आरती के आने की ख़बर पा उसे जबरन रोक न लिया हो। वहाँ उन्हें कौन मना करसकता है। तुम्हारे भैया अकेले क्या कर लेंगे? तुम्हारी कोठी से ज़बर्दस्ती उसे पकड़कर ले भी जा सकते हैं। तुम एक दिन विक्रमसिंह की बात कर रहे थे। यहाँ आ गया वह? आज मुमकिन है जुलूस के साथ रहे।'

'उसे चार्ज़ लिये एक हफ्ता हो गया। मगर भाभी! मैंने उसकी तारीफ़ सुनी है। गवर्नमेन्ट की नाक के नीचे रह कर भी बड़ी आज़ादी से काम करता है। उसकी चलती कम है। ए० एस० पी० होकर आया है। जो अँगरेज़ एस० पी० हैं वह बड़ा ज़ालिम है। उसे रोटीन काम सौंप रक्खा है—सियासी मज़मों में खुद जाता है। तुम मिलना चाहती हो उससे। न मिलो मेरी भाभी! खौफ़ लगता है उस पर रीझकर कहीं उस की तरफ़दार न बन जाओ—आरती से उस की हिमायत करने लगो।'

शीला ने कहा—'क्यों! क्या मेरे दिल नहीं। मैं मुहब्बत करना नहीं जानती? मैं उस पर रीझूँगी तो आरती से क्यों हिमायत करने लगी? खुद अपने लिये चुन लूँगी। तुम्हें इसकी क्या परवाह? तुम्हें अपना ख्याल जितना है उतना अपने गरीब भैया का नहीं। दूसरों का ख्याल इन्सान करता ही कब है? पहले आप तब जग,

महमूद हँसते हँसते चारपाई पर लोट गया। बहुत दिन बाद ऐसी दिली हँसी वह हँसा था। शीला की बात ने उसे लहालोट कर दिया। बोला—'वल्लाह! भाभी! क्या बात कही है। इतने बड़े औलिया को छोड़ कर तुम उस पुलिस दारोगा पर रीझोगी! लेकिन ठीक है। मैंने जो नादानी की बात तुमसे कही उसका यह जवाब है। एक बात करो भाभी! एक बार फिर भैया से शादी करो। यानी वैसे ही फूलों की चुनरी पहन कर उनके साथ फिर भाँवरें भरो! लुत्फ आ जायगा। भैया के प्रेम में जो सर्दी आ चली है उसे दूर करने का फ़िलहाल यह तरीका समझ में आता है। शादी को जब ज्यादा अरसा हो जाता है

तब मुहब्बत कुछ फुसफुसी हो जाती है। मुझे ज़ातीय तजुर्बा नहीं। लोगों का कहना है। खुदा जाने कितना सच है? पर मुमकिन है।'

शीला ने कहा—'अभी काँटों का ताज पहनाने ले चल रहे थे। इतने जल्द फूलों की चुनरी पर उतर आये। पहले तय कर लिया करो तब कोई बात कहो।'

महमूद ने घड़ी देख कर कहा—'मैं ताँगा लाता हूँ। लाल तुम्हारे साथ जायगा। मैं मीटिंग के वक्त पहुँचूँगा। तुम सीधे वर्कशाप जाओ। वहाँ तुम्हें रायना, गोपी, मालती, हबीब, कृष्णा सब मिलेंगे। ताँगा वहाँ छोड़ देना। जुलूस पूरे शहर का चक्कर लगायेगा। पुलिस लाठी चार्ज करे तो करने दो। पीछे न हटना! तुम राजपूतनी हो। तुम्हें ऐसी नसीहत देना गुनाह है।'

रेलवे वर्क्सशाप के सामने पिकेटिंग सुबह से हो रही थी पर तीन बजे लगभग जनता इकट्ठी होने लगी। वातावरण बहुत गर्म था। एक ओर लाल झंडा लिये हुए कम्यूनिस्ट कार्यकर्ता थे जो हड़तालियों को और उनके उत्तेजकों को तरह तरह से समझा रहे थे। लोकयुद्ध के नाम पर उन्हें हड़ताल तोड़ देने के लिये और काम पर जाने के लिये—अगले दिन से पूर्ववत कार्यक्रम आरम्भ कर देने की सलाह दे रहे थे। दूसरी ओर विद्यार्थी कार्यकर्ता थे जो मज़दूरों को देशभक्ति की भावना को जगा रहे थे—उन्हें 'भारत छोड़ो' नारे का अर्थ और उसकी क्रान्तिकारी संगति समझा रहे थे और उन्हें हर प्रकार से इस युद्धकाल में काम से दूर रहने का उपदेश दे रहे थे! कम्यूनिस्टों को कायर, देशद्रोही और सरकारी एजेन्ट के नाम से पुकारा जा रहा था। शीला जब वहाँ पहुँची तब जुलूस उठने वाला था। आगे आगे छात्र और छात्रायें तिरंगा झंडा लिये चल रहे थे। कतारें बनने लगी थी—जोशीले नारे लगाये जा रहे थे! वर्क्सशाप में पूरी हड़ताल थी। हजारों मज़दूर उमड़ते हुए जन समूह के समुद्र के आगे आगे वालंटियरों की टोली के पीछे चल रहे थे। शीला ने

देखा—महमूद के सारे साथी जिनका उसने नाम लिया था जुलूस की देख रेख कर रहे है। सबसे पीछे विद्यार्थियों का अपार दल था --उसके पीछे जनता थी। कई दिन के निस्तब्ध, शान्त वातावरण को चीर कर आन्दोलन की एक नयी ज्वाला उठ पड़ी थी जो दावानल की तरह चढ़ती जाती थी। सामने अधिकारियों का दल खड़ा था। पूरे सजधज और तैयारी के साथ। हथियार बन्द पुलिस, फौज के सिपाही, कान्सटेबल और इन्सपेक्टरों की पूरी टोली थी। सबके चेहरो से गभीरता, दृढ़ता और निश्चयात्मकता टपक रही थी। लगता था वे किसी भी घटना के लिये तैयार हैं और उनके पत्थर की तरह कड़े चेहरों से शान्त स्थिरता झलक रही थी। शीला को आकर मालूम हुआ—जुलूस का प्रोग्राम बन चुका है। स्टेशन के ऊपर झंडा फहराया जायगा। उसके नीचे खड़ा होकर वर्कशाप का प्रत्येक कर्मचारी तब तक काम पर न जाने की शपथ लेगा जब तक ब्रिटिश सरकार भारतीय स्वतन्त्रता की घोषणा नहीं कर देती। इस बढ़ते चढ़ते उत्साह के महासागर में कम्यूनिस्टों की आवाज़ नक्कारखाने में तूती जैसी लगती थी। जिस समय वे कुछ बोलना आरम्भ करते थे उस समय कांग्रेसी कार्यकर्ता और विद्यार्थी समुदाय नारे लगाना शुरू कर देते थे। आगे पीछे बगल से वे जय के नारे लगा रहे थे। शीला को देखते ही मालती ने उसे अपने पास बुलाकर आगे के सबसे बड़े तिरंगे झंडे का सिरा पकड़ा दिया और आप पीछे जाकर जुलूस की देखभाल करने लगी। जुलूस स्टेशन की ओर बढ़ा। लोगों के हृदय धड़क रहे थे पर चेहरे आक्रोश और कर्णभेदी जय-नाद से लाल हो रहे थे। लखनऊ में आन्दोलन का यह नया रूप था। स्टेशन की आलीशान इमारत पर राष्ट्रीय झंडा लगाने की नई योजना थी। महमूद ने यहाँ आकर यह सनसनीखेज़ प्रोग्राम बनाया है यह शीला समझ रही थी। पर उसका पता न था। हवा की थपेड़ों में तूफान को खोलकर जैसे वह विप्लावक अन्यत्र कहीं छिप कर नाश की तरंगायित लीला देखा करता है वैसे ही महमूद कहीं अपने को छिपाये जनता का यह रुद्र अभियान देख

रहा था। मालती और हबीब ने शीला के पास आकर पूछा—'महमूद कहाँ है। व न आयेंगे ?'

शीला ने कहा—'वह यहाँ न आयेगा। पर पार्क की मीटिङ्ग में रहेगा और बोलेगा। यहाँ आने पर पुलिस उसे गिरफ़्तार कर लेगी। वहाँ मीटिङ्ग में बोलकर गायब हो जाना उसके लिये मुश्किल न होगा।'

दोनों ने स्थिति को समझ तुरन्त आगे बढ़ नेतृत्व करना आरंभ कर दिया। एक एक क़दम नाप कर वे रखते थे। उनके पीछे मंथर गति से जुलूस आगे बढ़ता था। सामने का बड़ा और पीछे के असंख्य छोटे छोटे तिरंगे झंडे हवा में लहरा रहे थे। शीला के हृदय में छिपी, अंग अंग में रमी भावुकता अपने सारे गौरव और अभिमान को लेकर फूटी पड़ रही थी। ज्यों ज्यों स्टेशन निकट आता था त्यों त्यों तरुणों-तरुणियों का हृदय अभिलाषा की परिपूर्ति की बेला आती जान उत्साह से पागल हो रहा था। अभी तक अधिकारियों की ओर से कोई छेड़खानी न थी। पर स्टेशन पर जो भयानक घटनायें घटेंगी उनकी भूमिका से लोग अपरिचित न थे। वहाँ और बड़ी संख्या में पुलिस और फौज होगी। स्टेशन पर झंडा लगेगा यह तय हो चुका था। दरजनों विद्यार्थियों, छात्राओं और वर्कशाप के मज़दूरों ने अपने नाम इसलिये दिये थे। एक गिरेगा—दूसरा आगे बढ़ेगा—दूसरा तो तीसरा, यह क्रम तय हो चुका था। मालती ने शीला से कहा—'महमूद पार्क में मिलेंगे। पर जुलूस वहाँ पहुँच सकेगा ? क्या मीटिंग हो सकेगी ! मुझे सन्देह है .....'

शीला ने कहा—'क्यों न हो सकेगी ? हम न जा सकेंगे तो यह विराट जन समूह हमारी लाशें लेकर वहाँ पहुँचेगा। तुम चिन्ता क्यों करती हो। जो यहाँ होगा—वह वहाँ होगा। अभी एक मंज़िल तय हो ले—दूसरी तय होते क्या देर लगेगी। समय पर वह आ जायगा.....'

स्टेशन दिखाई पड़ने लगा। जुलूस ने फिर गगन-भेदी स्वर में जयनाद किया। स्टेशन के सामने का मैदान लाल पगड़ियों और लाल

चेहरों से भरा था। आस पास के पार्कों में आदमी ठसाठस भरे थे—जैसे पूरा शहर वहाँ उमड़ आया हो। पचास कदम पीछे ही कर्कश और हुकूमत से मद लिप्त स्वर में आवाज़ आई—'जुलूस इधर से नहीं जायगा। रोक दो या सीधे चलो। पाँच मिनट के अन्दर न मुड़े तो गोली चलाई जायगी।'—कह कर अफ़सर ने कलाई में बँधी घड़ी देखना आरम्भ कर दिया! उसकी आँखों से भयावनी प्रतिहिंसा की लपट उठ रही थी।

मालती ने आगे बढ़ कर अफ़सर से कहा—'जुलूस इसी रास्ते जायगा। स्टेशन पर हम तिरंगा झंडा फहरायेंगे। उसके नीचे हमारे हड़ताली भाई और हम सब लोग आज़ादी की शपथ लेंगे! इसके बाद जुलूस आपके बताये रास्ते से जायगा।'

नारों की ध्वनि ने गंभीर समुद्र के कर्णभेदी नाद का रूप लिया। जुलूस उसी तरह आगे बढ़ता रहा पर सनसनी भी बढ़ती जा रही थी। पहले लोग गोली के नाम पर सहम कर रुक जाते थे वैसी दशा अब न थी। आज़ादी के लिये खून देने की परम्परा बन चुकी थी। पीछे से जनसमूह का लहरा चला आता था। जो पीछे थे वे बढ़ कर बन्दूकों की नलियों के सामने आ जाना चाहते थे! जो आगे थे वे जैसे कूद कर स्टेशन के ऊपर पहुँच तिरंगा झंडा लगा देना चाहते थे।

शीला ने एक बार लाल के लिये चारों ओर देखा। उमड़ते विशाल जनसमूह में वह उसे कहीं दिखाई न दिया। बगल के रास्तों पर—पार्कों में तमाशाई अपने ओठों को दाँतों से दबाये, पंजों के बल खड़े स्तब्ध देख रहे थे—आगे क्या होगा। लोग समझ न पा रहे थे। जो समझते थे वे आगे सोच न पाते थे।

'मैं फिर आगाह करता हूँ। दो मिनट में वापस चले जाओ। वर्ना तुम सब जान से हाथ धोओगे.....'कहते कहते अफ़सर ने उधर इशारा किया जिधर बन्दूकों की चमकती नलियों की कतारें जुलूस की तरफ घूर रही थीं। ग़ज़ब का दृश्य था!

हबीब ने कहा—'हम अपने प्रोग्राम पर अमल करेंगे ! हम मुड़ नहीं सकते ! अपना रास्ता बख़ूबी पहचानते हैं। भाइयो ! आप लोग रुक कर सोच लीजिये ! जिन्हें जान प्यारी है वे लौट जायँ ! जो रुकें वे शान से आगे बढ़ें।'

'हम सब एक साथ मरेंगे'—सहस्रों कंठों का स्वर फूट पड़ा।

जुलूस बढ़ता रहा। दस क़दम आगे गया होगा कि अफ़सर ने फ़ायर का आर्डर दिया ! तीसरे हुक्म पर सन् सन् गोलियाँ चलने लगीं। मालती और हबीब ज़ोर से 'लेट जाओ' कह कहकर फ़ौरन ज़मीन पर लेट गये ! जुलूस के लोग एक साथ सब के सब ज़मीन पर लेट गये। शीला के लिये यह नया अनुभव था। इतने बड़े जनसमूह के सामने झंडा ज़मीन पर छोड़ कर लेट जाना उसे गवारा न हुआ ! संयोगवश गोलियों की पहली बाढ़ में वह साफ़ बच गयी।

मालती और हबीब ने फौरन खड़े होकर कहा—'चलो !' जुलूस के लोग आगे बढ़े। फिर गोली चली, धुँआधार बौछार शुरू हो गयी। तमाशाई पहले चम्पत हो गये थे ! जनता भाग निकली थी। पीछे के कुछ हड़तालो मज़दूर भी जिन्हें जानें प्यारी थीं खिसक गये थे ! केवल कुछ सौ विद्यार्थी और हड़ताली मज़दूर रह गये थे ! गोलियों की बाढ़ देख शीला ने होश सँभाला। हबीब और मालती गिर चुके थे···पर···पर ··शीला ने देखा न जाने किधर से भीड़ को चीरता हुआ, हड़ताली मज़दूर का वेश बनाये—काला पतलून और कालिख से पुती सफ़ेद ट्वील की कमीज़ पहने महमूद लपकता आ रहा है। कुछ ही क्षणों में महमूद और शीला हबीब और मालती की जगह खड़े थे। लहलहाता तिरंगा झंडा भूलुन्ठित, धूल धूसरित न होकर और अधिक शान से ऊँचा हो हवा में फहरने लगा···शीला ने महमूद को पहले पहचान लिया था। अपनी बड़ी बड़ी नक़ली मूँछों में वह 'फ़िटर' मालूम पड़ रहा था·····

जिस भीड़ को उत्तेजना देकर आगे बढ़ाना सरल है उसे गोलियों के डर से भागने से रोकना बहुत कठिन। कायरता और प्राणरक्षा की

भावना कुर्बानी के जज़्बे पर हावी हो जाती है। वह महमूद जैसे व्यक्तियों को ज्वलंत देशभक्ति होती है जो पहले से अलग रहने का निश्चय करके भी अवसर आते ही ख़तरे के बीच कूद पड़ते हैं। पुलिस से बचने और गिरफ्तार न होने की सारी तत्परता खौलते खून के एक बिस्फोट में हवा हो जाती है। शीला ने धक्का देकर महमूद को जुलूस के बाहर की ओर ढकेलते हुये कहा—'तुम क्यों आगये? चले जाओ फ़ौरन, समझते हो—यहाँ मरने वालों की कमी है! जाओ। अपना काम देखो.....'

'न भाभी! आग लगाकर दूर नहीं रह सकता·····लेट जाओ फोरन! सब लेट जाओ। ये हत्यारे हैं! इन्हें हम बाद में देखेंगे। लेट जाओ सब.....'

शीला की समझ में लेटने की क्रिया का महत्व आ गया था। दोनों झण्डे का एक एक सिरा थामे लेट गये। अब जमकर गोली चल रही थी। भीड़ तितर बितर हो गई थी। जो बचे थे वे प्राण की परवाह न कर बढ़ते जा रहे थे। महमूद के गिरते ही रायना ने लपक कर उसका स्थान ले लिया। गोलियों की दूसरी बाढ़ में शीला गिर पड़ी। जिन्हें थोड़ी बहुत चोट आई वे चले गये। जब अस्पताल की लारी महमूद और शीला के पास पहुँची तब दोनों बेहोश थे। बहुत अधिक ख़ून निकल जाने से शीला की प्राणशक्ति अत्यन्त क्षीण पड़ गई थी। हड़ताली मज़दूर और विद्यार्थी नेता पकड़ लिये गये थे। जुलूस छिन्नभिन्न हो गया था। महमूद बेहोश हो शीला के पास पड़ा था। दोनों के शरीर से लाल सिन्दूरी ख़ून की धारा बह रही थी। शीला की मुट्ठी में अब भी तिरंगे झण्डे का एक सिरा था। दोनों के खून से तारकोल का जमा हुई कालिमा भी चटख लाल हो गई थी। लारी दोनों को लेकर अस्पताल की तरफ़ चल पड़ी।

बात की बात में घर घर ख़बर फैल गई। चारो ओर तहलका मच गया। सनसनी पहले से थी। लाल फौरन ताँगा कर लीला के पास पहुँचा। अस्पताल में लीला, जयराज और अन्य कई कामरेड जो

इन लोगों को जानते मानते थे आ गये। शहर में बीसों गुना बढ़कर बात फैल गई। अब तक मरा कोई न था—केवल लोग घायल हुए थे। अतिरंजित होकर संवाद फैला—बीसों मर गये। न जाने कितनी लड़कियाँ काम आ गईं। कुंअर प्रतापसिंह की लड़की (शीला) शहीद हो गई। विक्रमसिंह आई० पी० ने स्तीफ़ा दे दिया। चारो ओर से लोग अस्पताल आने लगे। आज़ादी के नाम पर इन युवक युवतियों ने कितना बड़ा क़दम उठाया है, यह लोग जान गए। शहर की एक एक दूकान बन्द हो गई। धड़ाधड़ सड़कें वीरान होने लगीं। सारे शहर में स्यापा छा गया। ऐसा मरघटी सन्नाटा चारो ओर छा गया जैसे शहर में कोई रहता ही नहीं। सैकड़ों की संख्या में लोग निकलते थे, पर क़ब्रिस्तानी शक्ल लेकर। इक्के, तांगे, रिक्शों और मोटरों का चलना बन्द था। शीला के पिता इलाक़े पर थे। उनकी स्टेट के अन्य कर्मचारी जो लखनऊ में थे आ गये। ड्यूटी बदलने के समय नर्स बाहर निकली तो लीला ने पूछा। नर्स ने बताया—शीला की उम्मीद कम है। गोली मर्म-स्थल पर लगी है और ज़्यादा भीतर घुस गई है। खून काफ़ी निकल गया है। आक्सीजन दिया जा रहा है। सुबह तक बच्ची रही तो आगे आशा की जा सकती है। महमूद के लिए ज़्यादा ख़तरा नहीं। बाँह और पैर में गोलियाँ लगी हैं। घाव उसके भी गहरे हैं पर ख़ून का बहना रुक गया है। पट्टी बँध गई है। वह भी बेहोश है।"

लीला, लाल और जयराज के साथ नर्स स्पेशल वार्ड में पहुँची जहाँ दोनों रक्खे गये थे। मालती, हबीब, कुँजरू आदि लगभग डेढ़ दरजन घायल वहाँ पड़े थे। कुछ की दशा बहुत संगीन थी—कुछ को साधारण चोटें आई थीं। छोटे से कमरे में चारपाई पर बेहोश शीला पड़ी थी। बग़ल के कमरे में लोको वर्कशाप के कर्मचारी के वेश में महमूद घायल पड़ा था। दोनों के पट्टियां बँधी थीं। लाल यह भयानक दृश्य देखकर सहम गया। लीला भी विचलित हो गई। उसने सारी शक्ति लगा अपने को सँभाला। लाल की पीठ पर हाथ रखकर उसने कहा—'घबड़ाओ मत बेटा! जल्द तुम्हारी मा

ठीक हो जायगी।' पर लीला का दिल रो रहा था। बड़ी बहन के लिये उसके दिल में अथाह प्रम था। लाल ने भरी आँखों से पूँछ—'मासी मा की बेहोशी कब टूटेगी? कब वह बात करेगी? चाचा ···चाचा भी.....'

लीला ने पुचकार कर लाल के सिर पर हाथ फेरना शुरू किया। बहुत देर तक वे लोग वहाँ खड़े रहे। दोनों की बेहोशी टूटने को कोई आसार न थे। दोनों में किसी ने करवट लेने की कोशिश तक न की। अन्त में लाल को लेकर लीला चली आई। वह जानती थी बलराज और आरती गाँव गये हैं। वह कैसे उन लोगों को ख़बर दे। अपने पिता के पास उसने फ़ौरन स्टेट के एक आदमी को कार पर रवाना कर दिया था। पर लाल को खिलाने पिलाने के बाद और ख़ुद खा पी चुकने पर भी उसे नींद न आ रही थी। रह रह कर शीला के विषय में सोच रही थी। कहाँ से उसकी बहन को यह अदम्य प्रेरणा—यह बेलौस आत्मसमर्पण का बल मिला? प्राण की परवाह न कर गोलियों की बाढ़ के आगे डटे रहना! यह महमूद इन लोगों का कौन है। उसके पीछे उसके देवोपम जीजाजी ने पिता की स्टेट मोह छोड़ दिया और शीला तीन तीन बच्चों को लेकर पति की अनुवर्तिका बनी संघर्ष करने के लिये साथ चली आई। लाल पलँग पर पड़ा करवटें बदल रहा था। उसे नींद न आ रही थी। लीला ने कहा—क्या बात है लाल? सो जाओ बेटा! तुम समझदार बेटे हो। इस तरह घबराना न चाहिये।'

लाल ने कहा—'कुसुम गुलाल को बुलवा लो मासी! आज की रात पार कर ली तो बच जायगी। टेलीफ़ोन कर उसकी हालत का पता लगाओ मासी!'

लीला ने बालक के हृदय की वेदना का अनुभव कर भरे गले से कहा—'रात कोई जवाब न देगा बेटा! अगर कोई बात होगी तो वे लोग ख़ुद फ़ोन करेंगे। तू सोजा! वहाँ से कोई ख़बर आई तो मैं जगा दूँगी। मसहरी गिरा ले। आँख मूँद कर सो जा!'

लाल ने कहा--'दादा दादी को ख़बर कर देना चाहिये। बाबूजी और बुआजी के साथ वे लोग चले आयें। तुम आदमी भेज दो न मासी! मा की रात कैसे कटेगी! तुम मुझे अस्पताल भेजवा दो! मैं मा के पलँग के पास पड़ा रहूँगा।'

लीला ने कहा—'नहीं बेटे! वहाँ बाहरी आदमी को रहने नहीं देते। सुबह मेरे साथ चलना। तेरी मा की तबियत ठीक होगी। उसे होश आ गया होगा या सुबह तक आ जायगा। तेरे चाचा की हालत बिलकुल अच्छी है। सो जा!'

लाल को सुला कर भी लीला सो न पाई। उसकी आँखों के सामने स्पेशल वार्ड का दृश्य घूम रहा था। नर्स बीच में कुर्सी पर बैठी कभी शीला को देखती होगी—कभी महमूद को और कभी बिजली की बल्ब को। लीला ने लाल को सान्त्वना दे दी थी पर उसका हृदय स्वयं डूब उतरा रहा था। लीला की हालत बहुत ख़तरनाक थी। आते समय जब वह डाक्टर से मिलने गई थी तब उसने उसकी ख़तरनाक दशा की ओर संकेत किया था। शीला न बची तो! लीला इस कल्पना से ही बेचैन होने लगी। उसकी बहन राष्ट्रीय यज्ञ में शहीद हो जायगी। पर वह अकेली, बेबहन हो जायगी। कहाँ मिलेगी उसे ऐसी उदार और प्यार करने वाली सगी बहन! इतने दिन वह उसके साथ रही मगर कभी लीला के राजनैतिक विचारों को लेकर उसने एक असहिष्णु शब्द न कहा। आरती बहस करती थी—महमूद कभी कभी बहस करता था—बलराज बहस करते थे। पर शीला—उदार और निर्भय आलोक का प्रवाह व्यक्तित्व में लेकर मूक मंथर गति से क़ुर्बानी की ओर बढ़ने वाली शीला ने कभी एक शब्द न कहा! जो प्राण का सौदा करते हैं वे कभी उग्र और कटु वाद-विवाद नहीं करते! उनकी आँखों के सामने दया और शान्ति, ममत्व और करुणा का सागर लहराता रहता है। वे शहादत की शान लेकर चलते हैं। उनके दिमाग़ का सन्तुलन कभी खोने नहीं पाता। शीला उन्हीं

सरफ़रोशों में अपना नाम लिखा जायगी ! पर लीला को कैसे शान्ति मिलेगी ? बहन को खोकर वह कैसे रहेगी ? ज्यों ज्यों रात भीगने लगी —लीला की बेचैनी बढ़ने लगी। दूसरे कमरे में जयराज सो रहे थे। लाल सो गया था। लीला ने एक बार सोचा —वह अस्पताल जाकर ख़बर ले। शीला की निद्रा टूटी या नहीं। उसे होश आया—अंगों में चैतन्य की धारा लौटी या नहीं। रात में उसे कोई भीतर जाने देगा ? बलराज और आरती कैसे यहाँ आजाँय ? बहन को कुछ हो गया तो यह कलंक उसे जीवन भर लगा रहेगा। आरती कहेगी— तुम फ़ौरन कार पर आ सकती थीं और हम लोगों को वहाँ से शहर ला सकती थीं। जीजाजी तो कुछ न कहेंगे। जैसे सहन करने के लिये ही वे बने हैं। उनके हृदय में कभी किसी के प्रति शिकवा नहीं उठता। पर आरती तो उसे बींध डालेगी। लीला ने तय कर लिया— 'कल सुबह पर्वतपूर के लिये रवाना हो जायगी।'

सात बजते बजते लीला लाल को लेकर अस्पताल के लिये रवाना हो गयी। आज शाम तक वह पापा के आने की—साथ में शीला के दोनों बच्चों की आशा कर रही थी। जयराज सुबह घूमने जाते थे। उस समय तक घूमकर न लौटे थे। लीला को उनके लिये अवकाश न था। स्पेशल वार्ड के दरवाज़े पर ही नर्स से उसकी भेंट हो गयी। महमूद को होश आ गया था। शीला धीरे धीरे 'सिप्स' कर रही थी। रात में हबीब और कुन्नरू की मृत्यु हो चुकी थी। अस्पताल के बाहर लोग ख़बर पाकर धीरे धीरे इकट्ठे हो रहे थे। लोकों का एक मजदूर भी रात को ख़त्म हो चुका था। भीड़ की गति देखकर लगने लगा —धीरे धीरे सारा शहर वहाँ आ जायगा। यूनिवरसिटी में समाचार पहुँच चुका था। होस्टल के होस्टल उमड़े चले आ रहे थे। महमतो घबराती लीला गई। पीछे कठपुतली की तरह अजीवित लाल था। मृतकों की लाशें वहाँ से हटाई जाकर 'पोस्ट मार्टम' के कमरे में भेज दी गयी थीं। नर्स ने पहले ही महमूद से बोलने के लिये मना कर दिया था। महमूद की दशा पहले से अच्छी

होने पर भी उसकी बाँह का घाव साँघातिक था। पैर की हड्डी को बेध कर गोली निकल गयी थी। पीड़ा की तिलमिलाहट रह रहकर उसके मुख पर अंकित हो उठती थी। लीला को देखते ही उसने हाथ उठाकर सलाम किया। लाल जाकर सिरहाने खड़ा हो गया। लीला ने होठों पर उँगली रख कर चुप रहने का संकेत किया। बग़ल की चारपाई पर शीला ज्यों की त्यों पड़ी थी। उसे होश नहीं आ रहा था। संयोगवश हास्पिटल के इनचार्ज जो कल बाहर चले गये थे और प्रान्त के सर्वोच्च सर्जन माने जाते थे, सुबह आ गये थे। शीला के पिता से उनका अच्छा परिचय था। सुनते ही वे अपने बँगले में बिना अधिक रुके सीधे अस्पताल चले आये थे। शीला के पलँग के पास बैठे वे बराबर दिल की परीक्षा कर रहे थे। लाल की डबडबाई आँखें देख उन्होंने अत्यन्त कोमलतापूर्वक उसे पास बुलाया और पूछा—'तुम्हारी माँ है यह।'

'जी'—लाल ने कहा, पर इस बार आँखों से आँसुओं की धार न रुक सकी। टप टप कर आँसू गिरने लगे। डाक्टर ने स्नेह से पुचकार कर कहा—'रोओ मत बेटा। तुम्हारी मा अच्छी हो जायगी। कुछ घन्टे की बात है। तुम्हारी मा बहादुर औरत है। इसीलिये मौत से अब तक लड़ती आती है। तुम उसके बेटे होकर रोते हो! तुम्हारे नानाजी को मैं जानता हूँ। रोओ मत—बैठ जाओ! लाल चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया। महमूद चाचा के मुँह की ओर देखने लगा। दर्द के कारण महमूद बीच बीच में आँखें बन्द कर लेता था।

आठ बजे लीला लाल को लेकर अस्पताल से बाहर निकली। उसने तय कर लिया वह मोटर पर पर्वतपूर जायगी और बलराज, आरती को लेकर शाम तक लौट पड़ेगी। पिता के लिये उसे विश्वास था वे दोपहर तक आ जायँगे। अस्पताल से कोठी पर आकर उसने जयराज को अपना निश्चय सुनाया और लाल को ले अविलम्ब पर्वतपूर के लिये रवाना हो गई। शहर में पूरी हड़ताल

थी। अस्पताल के बाहर असंख्य भीड़ जमा होगई थी,जो मृतकोंकी लाशों को लेकर जुलूस निकालना चाहती थी। अस्पताल के अधिकारियों को अब तक पुलिस का आदेश इस सम्बन्ध में न मिला था। वे लाशें देने में आनाकानी कर रहे थे। लीला को इन बातों की ओर देखने, ध्यान देने का अवकाश न था। बँगले से ड्राइवर को कार पर ले वह चल पड़ी। लाल ने एक बार दबी ज़बान से माँ के पास अस्पताल में रहने की इच्छा प्रकट की। लीला उसे वहां छोड़ना न चाहती थी। उसे शीला के जीवन में अविश्वास हो रहा था। उसके लौटने तक उसकी जीवन-शिखा जलती है या बुझ जाती है इस में भी उसे सन्देह था।

आँधी की तरह धावा मारती लीला पर्वतपूर पहुँची। रास्ते के मनोरम दृश्य, बरसात के सौन्दर्य-रञ्जित नज़ारे, दूर दूर तक फैले हुए खेत और उनमें भरा सावन-भादों का पानी, आकाश में उमड़ते घुमड़ते मेघ, पेड़ों की पत्तियों पर स्थित जल की सफ़ेद कपूरी बूंदें—कुछ उसे अच्छे न लग रहे थे। सारे देश में साइक्लोन आया हुआ है। घर घर में, चूल्हे-चूल्हे में, छप्पर छप्पर के नीचे आग ढकी है। कौन कब तक उसे सँभालेगा! कहीं वह बढ़कर घर न फूँक दे! बरसात की ऋतु होने पर भी धरती सुलगती है। कीड़े और मकड़ों का ख़ून खौलता है। रास्ते भर लीला का दिमाग़ परेशानियों में उफनाता रहा। स्वाधीनता के यज्ञ में आहुत होकर उसकी बहन—करुणा सी सदय और वत्सला बहन मृत्यु-शैया पर पड़ी है। जीवन और मृत्यु के संघर्ष में झूल रही है। दूसरी ओर वह तूफ़ान के किनारे खड़ी उसके वेग को छाती पर झेलनेवालों को गुमराह समझती है! रास्ते में मीलों तक रेलवे लाइनें उखाड़ दी गई थीं जो बन रही थीं। उनकी मरम्मत हो रही थी। कितने ही छोटे छोटे स्टेशन जला दिये गए थे। बीच बीच में सड़कें कटी थीं, जहाँ से मोटर ले जाने में लीला को बड़ी कठिनाई पड़ती थी। पर वह सारी बाधाओं को चीरती फाँदती द्रुतगति से भागी जा रही थी।

बग़ल में बैठा लाल तरह तरह की बातें सोच रहा है। मन में अथाह शंकाओं की भीड़ होने पर भी मासी का चिन्ताकुल चेहरा देख उससे कुछ पूछने का साहस नहीं होता। रास्ते में जगह जगह पुलों और चौकियों पर पुलिस का पहरा था। रास्ते का उजड़ा उजड़ा सा वीरान वातावरण जैसे खून का घूँट पीकर प्रतिशोध की प्रतीक्षा कर रहा था—सर्वस्व होम देने वाले निष्ठकों के लौटने की राह देखता हुआ जी रहा था। लीला सोच रही थी—कौन इस कमज़ोर उत्पीड़ित जनता की सहायता करेगा? कौन उसे इस निराशा, कुढ़न और प्रतिहिंसा की आग से निकालेगा? इन धधकते शोलों के—अवर्णनीय अत्याचार की इन विदारक स्मृतियों से इन्हें कौन निकालेगा? इस समय अस्पताल में शीला की क्या दशा होगी? सिन्क तो न कर गयी होगी! शीला डूब गई? तो इन बच्चों की क्या दशा होगी! उसकी वृद्धा मा को कितना बड़ा आघात लगेगा। पापा शोक से पागल हो जायँगे। उसके देवोपम जीजा की क्या हालत होगी! संसार में वह कितनी अकेली और अवत्सल रह जायगी! पापा अब अस्पताल पहुँच गये होंगे। रात को नौ बजे तक वह भी सब को लेकर पहुँच जायगी। इस पहुँचने से क्या होगा—क्या हाथ लगेगा? क्या उसकी यह भाग दौड़—यह आतुर व्यग्रता शीला के प्राण की रक्षा कर सकेगी? क्या मृत्यु की ओर रुँधे क़दम से बढ़ने वाली उसकी ममत्वमुखी बहन वापस फिर सकेगी!

लीला को पर्वतपूर में प्रवेश करते करते चार बज गये। गाँव के निकट आते ही लाल उल्लास से अपनी सीट पर उछल पड़ा। उसकी आँखें चमकने लगीं। ड्राइवर को रास्ता बताता हुआ वह महमूद की कोठी के सामने कार ले आया। कई दिन से बारिश रुकी थी इसलिये रास्तों पर कीचड़ न था। कोठी के फाटक के सामने सुकरू के चबूतरे पर पुलिस का सिपाही पूर्ववत जमा था। ड्राइवर ने गाड़ी रोक दी और एक ओर खड़ा हो गया। लाल उतर कर मौसी के साथ अन्दर घुसा। पुलिसवाले ने इस बार निकट आकर तहक़ीकात

न की। चुपचाप खड़ा लीला के आकर्षक अपटूडेट व्यक्तित्व को देखता रहा! भीतर लाल ने मौसी को ऊपर शमीम के कमरे में पहुँचा दिया। बलराज और आरती बैठे बात कर रहे थे! शमीम कमरे में न थी। लीला ने पहुँच कर एक बार क्षण भर करुण दृष्टि से आरती को देखा। दूसरे ही क्षण फूट फूट कर रोने लगी। उसकी अवरुद्ध रुलाई का वेग और हिचकियों के घनत्व से परिपूर्ण उसकी मुद्रा की संशयाकुलता देख कर बलराज-आरती विस्मित हो गये। अविज्ञानित आशंका से दोनों का हृदय फूलने लगा। आरती की दृष्टि तब तक दरवाज़े के पास सहमे खड़े लाल की ओर गयी। बलराज ने खड़े होकर पूछा—'क्या बात है लीला! सब खैरियत है! क्यों···क्या हुआ! आरती ने लाल को बुलाया और गोद में बिठाकर पुचकारती हुई बोली—'क्यों बेटे! क्या बात है! कैसे आये तुम! हम दो एक दिन में आ रहे थे।·····'

लीला ने रोते रोते सब कह सुनाया। बलराज और आरती सुन कर चकित रह गये। पर बलराज ने क्षण भर भी घबड़ाहट का भाव न दिखा कर कहा—'हम लोगों को चलना चाहिये। लाल! नीचे से शम्मी को बुला लाओ! देर न हो!'

लीला ने आँसू पोंछ डाले थे पर हृदय का झंझावात अभी शान्त न हुआ था। बोली—'मैं पापा की बड़ी कार ले आई हूँ। अस्पताल से हटने की मेरी तबियत न होती थी। मगर कोई दुर्घटना हो जाती तो आप लोगों को कौन मुँह दिखाती! अस्पताल के इन-चार्ज पापा के मुलाक़ाती हैं। पापा ख़ुद दोपहर में आ गये होंगे। यही सोच कर मैं चली आई। आरती! फ़ौरन तैयार हो जाओ। हमें जल्द यहाँ से चल देना चाहिये।

शमीम घबड़ाई हुई कमरे में आ गई। महमूद की बात अब तक लीला ने न बताई थी। लाल ने शमीम से कह दिया था। शमीम की आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। पीछे पीछे लाल—उसके बग़ल में फीका, उदास, रोआसा मुँह लिये ज़ोहरा आ रही थी।

शमीम ने कहा—'भैया ! मैं चलूँगी । मोटर में जगह है या नहीं ?'

लीला ने शमीम की ओर देखा । शमीम को लगा उसकी भाभी आठ—दस साल कमसिन होकर आ गई है । भाभी ! वे तो अस्पताल में पड़ी दम तोड़ रही हैं । वे यहाँ कहाँ ! यकीनन लीला है यह ! आरती ने कहा—बाजी ! तुम चलना चाहो चलो ! हम लोग जा रहे हैं । कोई बात होगी तो भैया मोटर लेकर चले आयँगे—तुम्हें ले जायँगे ।'

'नहीं आरती ! महमूद अस्पताल में घायल पड़ा है—यह जान लेने के बाद एक मिनट यहाँ नहीं रह सकती ! ज़ोहरा ! मामा को बुला ला ! उसे समझा दूँ सब ।'

आरती ने लीला की ओर देखा । लीला को अब पूरी बात कहने का होश आया । बोली—'मैं भूल गई बहन ! महमूद भी घायल हो गये हैं । गहरी चोट आई है । जब मैं चली थी तब उनकी बेहोशी टूट चुकी थी । फ़िक्र की बात नहीं ।'

घन्टे भर के अन्दर सब लोग लखनऊ की ओर रवाना हो गये । पुलिस वाला ड्यूटी से जा चुका था । बलराज का काम यहाँ एक प्रकार से ख़त्म हो चुका था । प्रतिमा के साथ नाव पर जाकर बीच में वे लगभग सब फ़रारों से मिल चुके थे और उन्हें आगे की योजना बता चुके थे । आस पास के गाँवों में पोस्टर बँटवा दिये गये थे और मुख्य मुख्य स्थानों पर लगा दिये गये थे । पर्वतपूर के लिये तय हुआ था कि बलराज आरती के वहाँ से चले जाने के बाद पोस्टर लगेंगे । इस संवाद ने आकर सब को विचलित कर दिया । मोटर तेज चाल से चली जा रही थी पर उससे अधिक तीव्र गति से सबके हृदय स्पंदित हो रहे थे। पीछे की सीट पर बैठी आरती, शमीम, लीला, शमीम की दासी रज़िया—पर सब मौन, उदास थीं । आगे ड्राइवर की बग़ल में बलराज व लाल और ज़ोहरा चुपचाप दम साधे चल रहे थे । आरती का मन खौलते हुए कड़ाही की तरह आशंकाओं

और अंगारों से उबल रहा था। पर उसकी आत्मा—उसका राजपूती नारीत्व झंझा के झोकों में भी निश्चल गति से जलती हुई मशाल की तरह अडिग, अकंपित था। एक ओर मा और सहोदरा की तरह वात्सल्यमयी भावज मृत्यु-शैया पर पड़ी, जीवन के लिये मौत के एक एक धक्के से लड़ रही है। दूसरी ओर प्रियतम उसी अत्याचारी शासन-व्यवस्था के दमन-चक्र की गोलियों का शिकार होकर—अवरुद्ध और घायल पड़ा है। राष्ट्र के बलिदान सिन्धु में जो बाड़वाग्नि की ज्वाला उठी है, उसने उस जैसी कितनी तरुणियों के प्रेमियों और भाभियों को जलाकर भस्म नहीं कर डाला? भीतर भीतर उसकी छाती स्वतन्त्रता के दर्प और गौरव से फूलने लगी। उसकी धमनियों का रक्त संचार और उष्ण हो गया। उसका उच्छ्वसित कण्ठ रह रह कर भीतरी आवेग से और उच्छ्वसित हो उठता था। लीला रो चुकी थी—शमीम रह रहकर अपनी छलछलाती आँखें पोंछ लेती थी—पर आरती वैसी ही सूखी थी जैसी ग्रीष्म के तपते सूर्य की आँच झेलती पाषाण-शिला। सहसा उसने कहा—'भैया! भाभी हम सब को पीछे छोड़ आगे निकल गईं। हम लोग हिसाबी बनियों की तरह अपने को बचाने में पड़े रह गये। उन्होंने बढ़कर दिखा दिया किस तरह ख़ून देकर आज़ादी की तरफ बढ़ा जाता है.....'

बलराज ने पीछे की तरफ़ मुँह कर कहा—'लीला ने जो हाल बताया है उससे मुझे आशा नहीं होती उसे जीवित पा सकूँगा। पर उसकी इस बहादुराना मौत पर मुझे खुशी होगी—अफ़सोस नहीं। अन्याय को चबा जाने वाली—अन्यायी को खा जाने वाली आग के धधकने में ऐसे बलिदान चन्दन की चैलियों का काम करते हैं। यह मनुष्य का स्वभाव होता है—जो आमोद प्रमोद और हस विलास में सबसे आगे रहता है। वह अवसर आने पर पहले अपने को कुर्बान करता है। उसके भीतर वह आत्मविश्वास होता है जो उसे डट कर खड़े होने की—तिल भर पीछे न हटने की, शक्ति प्रदान करता है। शीला में ज्वलन्त आत्मविश्वास था। इस आत्मविश्वास ने उसे

मेरे जीवन-सूत्र में बँधने के बाद अपने को मूलतः बदल डालने की प्रेरणा दी। इसने उसे विलास का भव्य भवन त्याग कर मेरे साथ अकेले निकल पड़ने की क्षमता दी। इसी आत्मविश्वास ने उसे पुलिस की भूनती गोलियाँ छाती पर झेलने की शक्ति दी। यही वह आत्म-अवलम्ब है जो मानव के जीवन-व्यापी संस्कारों को बदल देता है। मुझे महमूद की चिन्ता है। शीला अपना कर्तव्य पूरा कर चुकी.....'

शमीम फिर फफक कर रो उठी। बलराज ने कड़ी दृष्टि से उसके शिथिल, अवसन्न और रज़िया के कंधेपर लटककर टिके मुँह की ओर देख कर कहा—'तुम रोती हो! इतने बहादुर भाई, भाभी की बहन होकर तुम रोती हो! जीवन में ऐसा क्या है जो तुम्हें इतना प्यारा है? कोने कोने में—गोशे गोशे में आग दग रही है और तुम मनहूसियत के आँसू बहाती हो! जिसको मैं अक्सर कमज़ोर और ऐशोआराम में डूबी रहने-वाली समझता था उसने सरफ़रोश जाँफ़िसानी दिखाई। तुम्हें मैं बहादुर समझता हूँ शम्मी! तुम रोती हो तो मुझे बुरा लगता है!'

आरती ने कहा—'रोने की क्या बात है बाजी! हमारी भाभी हमें छोड़ कर कहाँ जायगी? महमूद की तरफ़ से तुम बेफ़िक्र रहो। वे फ़ौलाद के बने हैं। अस्पताल में घायल पड़ कर दम न तोड़ेंगे। मरेंगे तो बहादुर सिपाही की तरह लड़ाई के मैदान में मरेंगे!'

बलराज ने कहा—'जब देखो रोना...वही रोना''एक से आँसू—एक सी नमी...। हद है आख़िर! कभी तो हँस कर किस्मत के थपेड़े झेले होते! बात बात पर रोना!'

बलराज के स्वर में खीझ थी—खीझ में एक ऐसी अवश और सूक्ष्म पर असहनीय करुणा थी जिसे जीवन के रक्तकणों ने अपनी ऊष्मा से गर्माया था। शमीम का दिल भीतर भीतर झकोरे के तिनके की तरह काँपने लगा। उसे अपनी भूल मालूम पड़ी। ऐसे समय रोना... भैया के दिल पर क्या गुज़र रही है! पन्द्रह साल से छाया की तरह उठते बैठते साथ रहने वाली जीवन की अभिन्न साथिन बिछुड़ने वाली

है। दूसरी ओर छोटे भाई की तरह प्यारा दुलारा महमूद अस्पताल में घायल पड़ा है। सामने इतना बड़ा काम—इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी है। उसे क्या है? रोना छोड़ कर उसे क्या आता है? न जाने कितने दिन बाद बलराज ने उसे आज डाँटा है। पर इस डाँट के पीछे गहरी अन्तर्व्यथा का आत्मदाह है। इस डाँट के पीछे क्या क्या है—क्या क्या नहीं है.....

लीला ने अब तक शमीम से बात न की थी। बलराज की डाँट और उसकी विवर्ण, अवनतमुखी होती मुद्रा की कातरता ने उसे द्रवित कर दिया। बोली—'महमूद को मैंने ख़ुद सुबह होश में आते देखा है। डाक्टर ने मना न किया होता तो हम लोग उनसे बात भी करते। आप क्यों इतनी ग़मज़दा होती हैं? इस तरह पेश आयेंगी तो नर्स आपको उनकी चारपाई के पास न जाने देगी। भाई-बहन की मुहब्बत का ज़ज़्बा कितना बलवान होता है इसका अहसास मुझे इस बार हुआ है जब से बहन घायल पड़ी है। आप धीरज रक्खें!'

बलराज मुँह फेर कर बैठ गये थे। सामने दूर दूर तक फैले दिगन्त में परिव्याप्त बादलों की धुँधली क़तार और आस्मान में एक दो तारकों की झिलमिलाहट को देख रहे थे। ज़ोहरा का सिर उनकी गोद में था। लाल कभी बाहर की ओर देखता था--कभी पिता के भरे बादल जैसी गंभीर मुद्रा को। मोटर पूरी गति से जा रही थी पर लीला को सन्तोष न हो रहा था। बार बार वह ड्राइवर से स्पीड बढ़ाने के लिये कहती थी। उसकी अधीर और संतप्त आत्मा जैसे उड़ कर लखनऊ पहुँच जाना चाहती थी। अँधेरा गाढ़ा हो रहा था। कभी कभी पंछियों का कोई जोड़ा अपने घोंसले की तरफ़ उड़ कर जाता नज़र आता था। पर उसकी गति में विह्वलता नहीं—जैसे अमनय साँझ के उतर आने का विमर्श था। जैसे ग़म के भँवरमे टूटे दिल की नाव एका-एक बैठ जाय। बीच बीच में प्रकाश की सन्धियों का धुँधला अँधेरा जैसे कालिमा की कँपकपी से भरा आ रहा था। ज़ोहरा उठ कर बैठ

गई थी और लाल से बात कर रही थी। रास्ते के भिन्न भिन्न प्रकार के दृश्यों के विषय में वह तरह तरह की संगत और अनर्गल बातें पूछ रही थी। लाल अपने वयस्क होने के गौरव और ज्ञान का बोध मन में लिये उसकी बातों का उत्तर दे रहा था! बलराज का मन जैसे अपने में बाहर निकल कर दूर दूर उड़ा उड़ा फिरता है। उनकी उड़ान में संगति नहीं है—कोई क्रम नहीं है—कोई अनुकृति भी नहीं है। है केवल एक भेदक, डरावना शून्यत्व—प्राण को पिपासा और प्रवंचना के पार ले जाकर अगति में भटकाती रहने वाली एक दुर्बोध जड़ता। उन्हें रह रह कर आभास होता है शीला अब नहीं है। पर आत्मा की अवसादी तन्मयता में छिपा स्वर सुनाई पड़ता है—शीला है और रहेगी। कैसे अपने उस सहचर और स्वामी को छोड़ कर जा सकेगी जो कभी उसे एक क्षण को नहीं भूला—न भूल सका! कैसे इन मासूम बच्चों को छोड़ कर वह जा सकेगी! और उनका क्या होगा! कौन उनके भीतर ज़िन्दगी के नये नये चाव पैदा करेगा? कौन उनके अभिमानी हृदय में—अलिप्त मन में संसार की ओर ऐसा दुर्दम्य आकर्षण प्रवाहित कर सकेगा! सब छिन्न भिन्न हो जायगा। डाली डाली, कली कली, इस झकोर में भूलुन्ठित हो जायगी। कैसा विप्लावक, विदारक तूफान होगा यह जो सैलाब की तरह आकर न लौटेगा.....'

शहर में जब मोटर ने प्रवेश किया तब दस बज रहे थे। अस्पताल के भीतर पहुँचते ही शीला ने एक ओर पिता की मोटर देखी। उसे लगा—वह जिस भय से अब तक आक्रान्त होती रही है वह अब या तो साकार होगा या भ्रम बन कर वैसा ही निराकार नष्ट हो जायगा। सब लोग उतर कर स्पेशल वार्ड की तरफ चले। पर सब के सब बाहर बरामदे के पास पहुँच कर ही ठिठक गये। बाहर पलँग पर चादर से ढका एक शव रक्खा था। आस पास कुर्सी पर लीला के माता, पिता, जयराज, डाक्टर तथा असिस्टेन्ट सर्जन बैठे थे। नीचे जमीन पर शीला के पिता के स्टेट के बहुत से कर्मचारी तथा स्थानीय विद्यार्थी कार्यकर्ता

बैठे थे। सब लोग लीला बलराज इत्यादि की प्रतीक्षा कर रहे थे। शीला का शव फूलों और मालाओं से लदा था। बलराज सब समझ गये और जाकर एक कोने पर ज़मीन में बैठ गये। आरती ने चीख कर पीछे मुड़ शमीम से कहा—'चली गयीं भाभी! बाजी! सदा को चली गईं! कहकर एक आँसू बहाये बग़ैर आर्तनाद करती, शुष्क क्रंदन करती आरती दौड़ कर शव के पैताने सिर रख कर ज़मीन पर बैठ गयी दुखावेग से उसने अपनी आँखें कफ़न के चादर पर रख दीं। शमीम ग़श खाकर वहीं गिर पड़ती अगर रज़िया उसे अपनी बाहों पर रोक न लेती। लीला चुपचाप मा की कुर्सी के पास आ खड़ी होगयी। ज़ोहरा और लाल ज़ोर ज़ोर से रोने लगे। लाश ले जाने की अनुमति अभी न मिली थी। अस्पताल के अधिकारियों और पुलिस के अधिकारियों से बातचीत चल रही थी। सारी घटना इतनी आकस्मिक थी कि सब लोग अपनी स्थिति को समझ न पा रहे थे। जैसे एकाएक प्रवाह का ज़ोरदार लहरा आ जाय और तल से टिके पैर अपने को सँभाल न सकें—रोक न सकें! रज़िया ने किसी प्रकार गोद में ले जाकर शमीम को मोटर की सीट पर लिटा दिया। कोई किसी से न बोलता था—न किसी की ओर देखता था। सब के सब दुख से अभिभूत—इस प्रचंड आघात से भीतर भीतर टूटे और अवसन्न बैठे, खड़े थे.....

दूसरे दिन शीला का शव उठा। लाखों की भीड़ और जय के तुमुल नाद के बीच फूलों से लदी मोटर पर लाश चली। यूनिवरसिटी के अधिकाँश प्रोफ़ेसर और लगभग सब विद्यार्थी थे। मज़दूरों की हड़तालें जारी थीं। रेलवे वर्कशाप और सरकार की आर्डीनेन्स फ़ेक्टरी के मज़दूर जैसे उन्मत्त हो गये थे। रेलवे स्टेशन पर हुए गोलीकान्ड की यह चौथी शहादत थी। शहर की एक एक दूकान बन्द थी। अवध के एक छोटी पर के ताल्लुक़दार की लड़की पुलिस फ़ायरिंग में मरी जनता की उत्तेजना और चंचलता का क्या कहना! मोटरों पर ताल्लुकदारों की पाँत की पाँत चली आ रही थी। सारे शहर में इस बहादुर औरत की धूम थी जिसने इतनी संघातिक चोट लगने पर भी

लगातार चौबीस घन्टे मृत्यु के साथ संघर्ष किया। विलास और वैभव की मधु मादकता से शराबोर जीवन लेकर भी जिसने राष्ट्र की स्वाधीनता के युद्ध में भाग लिया और सबसे आगे की पंक्ति में बढ़कर प्राणाहुति दी। जिसके लिये जीवन एक आनन्द का गीत था और मृत्यु उसी मधुर कोमल गीत की अन्तिम कड़ी जो आपसे आप पूरी हो गयी। लीला, शमीम और आरती एक मोटर पर थीं। रात में होश आने पर शमीम बन्टो शीला की लाश से लिपट कर रोई है--लीला रोई है। पर आरती और बलराज की आँखें जलते तवे जैसी हो गई हैं जिसमें पूरी बनने के पहले ही आँसू की बूँद नष्ट हो जाती है—ऊष्म से भाफ़ बन कर उड़ जाती है। बलराज तो शव के साथ भी नहीं जा रहे। अपने सुन्दर बाग के छोटे से मकान में चुपचाप कुसुम, ज़ोहरा और गुलाल को लिये बैठे हैं। केवल लाल मा की लाश के साथ चला जा रहा है। आरती ने भाई के मन की अवस्था का अनुमान कर उन्हें साथ चलने को न कहा। राष्ट्रीय शहीदों का मरण त्योहार मनाने वाले श्रद्धालुओं की कमी नहीं होती .. ...!

चौदह

शीला की मृत्यु को पन्द्रह दिन बीत चुके हैं। महमूद अब एक दो दिन में अस्पताल से निकल आयेगा। पुलिस उस पर केस चलाने की पूरी तैयारी कर रही है। सी० आई० डी० ने उसकी शिनाख्त कर ली है—महमूद पहचान लिया गया है। सारे प्रदर्शन और संघर्ष की ज़िम्मेदारी उस पर लादी गई है। इसलिये अस्पताल से निकलने पर महमूद घर न आ सकेगा। बलराज ने आठ-दस दिन के बाद समझा-बुझाकर शमीम को गाँव भेज दिया है। आरती और बलराज लखनऊ में हैं। वर्कशाप की हड़ताल चल रही है। इतने बलिदान लेने के बाद वह जल्द ख़त्म न हो सकती थी। आरती खुलकर आगे आ गई है, लखनऊ में उसके कार्यक्षेत्र का विस्तार बढ़ता जा रहा है। शीला की मृत्यु ने सब

का जीवन एक प्रकार से बदल दिया है। महमूद चारपाई पर घंटों खोया खोया पड़ा रहता है। उसे अब भी विश्वास नहीं होता—शीला इस संसार में नहीं है। शीला यहाँ नहीं है तो कहाँ चली गई! रह रह कर उसे लगता है भाभी की मृत्यु का दायित्व उस पर है। वह उस दिन उन्हें जुलूस का नेतृत्व करने के लिए न कहता तो भाभी न जातीं। बलराज से बात करते करते अक्सर वह रो पड़ता है। दूसरे ही क्षण बग़ल में खड़ी आरती उसके आँसू पोंछ देती है। बलराज का धैर्य और अद्भुत आत्मसंवरण देख सब दंग हैं! दोनों छोटे बच्चे नानी के साथ चले गये हैं, लाल ज़िद कर पिता के पास रह गया है। आरती और बलराज अब पुलिस के कड़े पहरे के बीच महमूद से अस्पताल में मिल सकते हैं। पुलिस ने उसके विरुद्ध अभियोगों की लम्बी सूची तैयार कर रक्खी है। आसानी से वह छूट न सकेगा। कितनी लम्बी सज़ा या आजन्म कारावास उसे होगा यह सब सोचते रहते हैं। पर महमूद को इसकी चिन्ता नहीं, उसे चिन्ता है आगे का कार्य-क्रम कौन सँभालेगा। प्रतिमा खुलकर नहीं आ सकती। उसके सिर पर वारंट झूल रहा है। अभी आरती और बलराज के विरुद्ध पुलिस को कोई सबूत नहीं मिल सका है। महमूद अस्पताल के पहरे-बन्द कमरे में पड़ा घायल, बन्दी शेर की तरह तड़फड़ाया करता है। चारो ओर से आन्दोलन के दब जाने के जो समाचार उसे यदा कदा मिलते हैं उनसे उसका ख़ून खौल उठता है। एक दो दिन में वह जेल भेज दिया जायगा। यदि आवश्यकता पड़ेगी तो जेल के अस्पताल में उसका इलाज होगा। इस प्रकार दुविधा और अनिश्चय में सबके दिन बीत रहे हैं। कहीं किसी ओर कोई प्रकाश की—कर्म की, अग्नि-रेखा नहीं दिखाई देती।

और बलराज! उनके हृदय के भीतर प्रतिहिंसा की धौंकनी चल रही है। रात को अक्सर नींद खुल जाने पर आरती देखती है—उनकी आँखों से न जानेकैसी आग निकला करती है—जब वे कमरे में या छत

पर अस्थिर हो होकर टहला करते हैं। जैसे दिन भर की जमी शान्त अस्थिरता रात की विप्लावनी घड़ियों में, किसी अनदेखी पर रोम रोम में सुलगती आग में गल जाती है·····दिन भर सोया रहने वाला प्राण का झंझावात एकाएक उठ बैठता है। शीला के बलिदान ने उन्हें आदमी से युद्ध की मशीन बना दिया है। उठते बैठते, सोते जागते वह बराबर आगे के विस्फोट की बात सोचा करते हैं। प्रतिमा वहाँ क्या कर रही होगी·····इस बीच उसने कहाँ तक आगे का मोर्चा बाँध लिया होगा। अखबारों में आन्दोलन की ख़बरें नहीं आ रहीं—इसलिए कहाँ क्या हो रहा है यह जानना कठिन है। प्रतिमा लखनऊ क्यों नहीं आती? उसने शीला की मृत्यु और महमूद के घायल होने·····पुलिस द्वारा पहचान लिए जाने का हाल जाना या नहीं? शमीम से वह मिली होगी तो उसे सब पता लगा होगा। न मिली होगी तो यहाँ की घटनायें उसे कैसे विदित होंगी? बीच में शमीम की अनुपस्थिति में एक दो बार वहाँ आई होगी तो उसे न पाकर लौट गई होगी। सारे फरार सिपाही महमूद के आदेश और आकर मिलने की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। यहाँ महमूद हिरासत में पड़ा अपने भाग्य निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा है। उस पर गाँव के थाने पर आक्रमण करने और लोगों को सशस्त्र विद्रोह के लिये उत्तेजित कर खुले आम सरकारी इमारतें फूँकने और फुँकवाने का इल्ज़ाम लगाया जा रहा है। उसका फैसला होता रहेगा। उसकी उन्हें चिन्ता नहीं। एक बार यदि प्रतिमा की योजना कार्यान्वित हो जाय तो दबती हुई स्वाधीनता की आग उकसे। उसकी मन्द पड़ती लपटों में वेग का नया लहरा आये। गाँव में जाकर पिता से एक बार भी वे न मिले। शीला की मृत्यु का समाचार उसके पिता ने उन्हें लिख भेजा होगा। लेकिन पिता न एक बार लखनऊ आये—न उन्होंने सम्वेदना का पत्र भेजा। माता ने सुना होगा तो उन पर क्या बीती होगी! शमीम ने जरूर जाकर सब बताया होगा। दो बच्चे ससुराल में पड़े हैं। लाल

की शिक्षा का और उनकी शिक्षा का क्रम टूटा हुआ है। इन सबके ऊपर—सारे प्रश्नों से बड़ा प्रश्न—सारी चिन्ताओं से बड़ी चिन्ता आगे के मोर्चे की है।

आरती बैठी बुलेटिन तैयार कर रही थी। लाल सो गया था। बलराज पड़े पड़े अन्य ज़िलों से आने वाले बुलेटिन पढ़ रहे थे जो कई दिन से इकट्ठे हो गये थे—जिन्हें वे इधर पढ़ न पाये थे। ग्यारह बजे रात को किसी के आने की आशा न थी। सहसा किसी ने दरवाज़े की साँकल खटखटाई। बलराज ने सिरहाने रक्खा टार्च उठा कर ऊपर छत में रोशनी फेंकी जो नीचे चबूतरे पर खड़े आगन्तुक के चेहरे पर पड़ी। हर्ष से बलराज उछल पड़े। नीचे प्रतिमा गाँव वाले देहाती युवक के वेश में खड़ी थी। बिलकुल अकेली—कन्धे पर पोटली रक्खे—हाथ में मोटी लाठी लिये। बलराज ने ऊपर से दृढ़ स्वर से कहा—'ठहरो! आ रहा हूँ। आरती ने लिखना बन्द कर सप्रश्न दृष्टि से भाई की ओर देखा। बलराज ने कहा—'ठाकुर प्रतिमासिंह आ गये!'

आरती उठ कर खड़ी हो गयी। बलराज नीचे उतर, दरवाजा खोल, आगन्तुक को भीतर प्रविष्ट कर, सावधानी से बाहर इधर उधर देख ऊपर चले आये। आगन्तुक बिना एक शब्द बोले उनके पीछे ऊपर आया। आरती ज्यों की त्यों, उदग्रीव और आतुर खड़ी थी। बलराज ने ज़मीन पर बिछे अपने बिस्तर की ओर संकेत कर कहा—'बैठिये ठाकुर साहब! आपने बड़ी देर लगा दी। हम कई दिन से आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आपको यहाँ का हाल मालूम हुआ होगा। वहाँ सब ठीक है न!'

आरती ने सामने की आलमारी से एक साड़ी निकाल कर देते हुए कहा—'लीजिये पहनिये! मैं दो तीन दिन के बाद पर्वतपूर आ रही थी। अच्छा हुआ तुम आ गईं।' आगन्तुक ने छत के दरवाज़े की ओर सकेत किया। आरती ने उठ कर बन्द कर दिया और कुर्सी पर बैठ गयी। प्रतिमासिंह उस दरवाज़े की आड़ ले बैठ गये

और साड़ी को टेबिल पर रख कर बोले--'मुझे इसी वेश में रहने दो। मुमकिन है कोई पीछे लगा हो—यहाँ तक सूँघते सूँघते चला आया हो। मैंने सब सुना भैया! भाभी अपनी अमर ज्योति ले चली गयीं। मैं उनके अन्तिम दर्शन न कर सकी। पर उनकी याद उठते बैठते सौ गुनी हिम्मत देती है।'

बलराज ने बात काट कर कहा—'उसकी बात छोड़ो! गाँव का--ज़िले का हाल बताओ। क्या स्थिति है?'

आरती ने साश्रु दृष्टि से प्रतिमा की ओर देखा और कहा—'हम कोई यहाँ न थे बहन! गोली लगने के बाद वह केवल चौबीस घन्टे जीवित रहीं। उन्हें होश न आया। हमारा, हमारे परिवार का मस्तक युग युग के लिये ऊँचा हो गया। हम सब सोचते समझते ही रह गये। उन्होंने मर कर दिखा दिया। परतंत्रता की ज़ंजीर को वे इतने ज़ोर से झकझोर गयीं हैं कि वह अब तक झनझना रही है। हम सब को उनका अनुसरण करना है। एक साथ नहीं--बारी बारी से। भैया जो पूछते हैं उसका जवाब दो! यह समय जंग में काम आये सिपाही के लिये अफ़सोस और आदर प्रकट करने का नहीं--आगे की बात सोचने, तय करने का है। तुम वहाँ का हाल बताओ। महमूद के बारे में सुना होगा।'

'सब सुना है। हम जो न चाहते थे वह हो गया। महमूद को पुलिस की गिरफ़्त में न आना था। जो सच्चे नेता हैं वे अवसर आने पर प्राण की परवाह नहीं करते। जनता को मरण के मुख में ढकेल कर वे अपनी चमड़ी नहीं बचाते! महमूद ने उस स्थिति में जो किया, ठीक किया! अस्पताल में इतने दिन रहने पर उसका न पहचाने जाना असंभव था। मुझे विश्वास है वह जेल की बन्दिश में न रहेगा। अच्छा होते ही बाहर आ हम लोगों से मिल जायगा! गाँव में क्या पूरे ज़िले में सब ठीक है। यहाँ के सब हाल हमें मिले हैं। शमीम से इस बीच मैं खुद मिली हूँ। उन्होंने रत्ती रत्ती हाल बताया है। आप लोगों को चलना होगा.....'

बलराज ने कहा—'मैं चलूँगा। आरती यहाँ काम कर रही है। वह यहाँ रहेगी। मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। यहाँ से आवश्यकता पड़ने पर दो चार लोग और चल सकते हैं।'

प्रतिमा ने कहा—'हमें आवश्यकता नहीं। आप चलिये। आरती चलती तो अच्छा था—पर आप कहते हैं तो वह यहाँ रहेगी। हम लोगों ने योजना बना ली है। एक दिन निश्चित समय पर पूरे जिले के थानों पर हमला होगा। फौज अब कहीं नहीं है। पहले हम तार काट कर बाहर खबर भेजना असंभव कर देंगे। रातों रात यह काम हो जायगा। औज़ार वगैरह इकट्ठे किये जा चुके हैं। दोपहर के पहले ही हम लोग निकल निकल कर गाँव वालों को ललकारेंगे। रात को ही दरवाजे दरवाजे नोटिस चिपका देंगे। अँधेरा पाख आ रहा है। गाँवों में पहरा और गश्त ढीला पड़ गया है। सुबह उठकर लोग अपने दरवाजे पर हमारा ऐलान देखेंगे। हमारा नहीं वह—गाँधी जी का 'करो या मरो' का आह्वान होगा। सौ दो सौ की भीड़ का हमारे साथ जुट जाना बड़ी बात नहीं। इस बीच हमारे फ़रार साथियों ने आग लगा रक्खी है! हमें रियायत नहीं करनी। एक सिरे से पुलिस के सिपाहियों और थानेदारों को या कैद करना है या साफ़ कर देना है। थानों पर अधिकार कर हम आवागमन के मार्ग नष्ट कर देंगे। स्टेशनों पर उस दिन शाम को हमला होगा। रातोरात जिले की सारी लाइनें उखाड़ कर फेंक दी जाँयगी। जिले पर हमारा अधिकार हो जायगा। सारी बंदूकें और कारतूस हमारे पास होंगे। जो हमारे मार्ग में आयेगा हम उसका खात्मा करेंगे। ज़मींदार महाजन अगर हमारे पथ में बाधक बने तो उन्हें पहले खत्म करेंगे। आशा है वे अपनी हिफ़ाजत की पहले परवाह करेंगे·····हमें अपने रास्ते पर चलने देंगे। थोड़े बहुत कैदी देहाती थानों में बन्द हैं, उन्हें छोड़ दिया जायगा। इसके बाद शहर पर हमारा धावा होगा। थोड़े से लोगों के हाथ में देहातों का भार छोड़ कर हम शहर में आ जायँगे·····कुछ ही घंटों में जनता को उत्तेजित

कर लोगों को साथ ले वहाँ की पुलिस और अधिकारियों को गिरफ़्तार कर लेंगे'.....'

आरती ने कहा—'भैया मैं चलूँगी। यहाँ बैठ कर बुलेटिन-बाजी करना .....छिपे छिपे इधर से उधर घूमना अब मुझसे नहीं होता। वहाँ चलूँगी जहाँ जनता की अरुण शक्ति का यज्ञ रचा जायगा। आप मुझे यहाँ रहने को न कहें। यहाँ काम करने वालों की कमी नहीं। सबको समझा बुझा दूँगी। यह सब बताऊँगी तो यूनीवर्सिटी से बीसों लोग चलने को तैयार हो जाँयगे। यहाँ के काम में अब मुझे दिलचस्पी नहीं रह गयी। भाभी की आत्मा उठते बैठते मुझे ललकारा करती है। यहाँ अब क्या है! केवल टूटे सपनों को जोड़ना और जोड़ना! वहाँ नये संघर्ष होंगे। मेरा हृदय अब छिप कर काम करते करते ऊब गया है।

प्रतिमा ने उत्साहपूर्वक कहा—'तुम चलो। एक बार फिर प्रान्त में हमारा जिला सिरमौर हो जायगा। सब को ले चलो। जितने अधिक लोग हमारे साथ होंगे उतना ही अच्छा। फ़ौज के अत्याचारों से जनता इतनी पस्त पड़ गयी है कि पहले जैसे सामूहिक आक्रमण की आशा न करनी चाहिये। पर गाँव गाँव के नौजवान हमारा साथ देने को तैयार हैं। हमें उन पर भरोसा है। इस बीच घर-घर हमारे साथी छिप छिप कर गये हैं और आने वाले हमले में साथ देने को कह आये हैं। हथियार हमने काफ़ी इकट्ठे कर लिये हैं। बंदूकें हमारे पास नहीं पर फरसे, गँड़ासे, तलवारें और बल्लम हमने खोज खोज कर इकट्ठी की हैं। बिना खुली लड़ाई के अब कुछ न होगा। एक जिले से दूसरे जिले को प्रेरणा मिलेगी। खून को खून पुकारेगा—मिट्टी को मिट्टी ललकारेगी। तुम लोग कल चलो। मेरे साथ नहीं—अलग।'

बलराज की चेष्टा में प्रतिमा को एक ज्वलन्त परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा था। मन के भीतर भले दाहक नैराश्य भरा हो पर बातचीत से एक लोकोत्तर उत्साह फटता आता है। छाती में इतना

बड़ा घाव छिपा कर ऊपर से समरावेश और कुछ कर मिटने का ऐसा उज्ज्वल विश्वास और उल्लास ! रात भर बलराज प्रतिमा से बात करते रहे। दो बजे के बाद आरती चेष्टा करने पर भी न जाग सकी··· ··उसकी पलकों की पँखुरियाँ आप से आप मुँद गईं। पर प्रतिमा के आजाने से और पर्वतपूर के आस पास की राजनैतिक उथल पुथल का हाल सुन कर बलराज के हृदय के भीतर हलचल मची थी। उनका प्रशान्त व्यक्तित्व ऊपर से यही भान दिलाता था कि कहीं आस पास प्रचंड तूफान छिपा है। शीला की मृत्यु ने उन्हें आमूल बदल दिया है। नस नस में बहने वाले पौरुष के उच्छल स्रोत में किसी ने बदले की पिघली आग घोल दी है। जीवन के सारे आवश्यक आयोजन उन्हें कृत्रिम लगते। जब तक वे एक बार ग्रीष्म का ताप लेकर उठने वाले बवंडर जैसा आन्दोलन नहीं छेड़ देते तब तक अपना सारा जीवन उन्हें छलना मालूम पड़ता है। प्रतिमा के साथ एक एक स्थिति पर उन्होंने विचार किया—छोटी से छोटी बात उन्होंने तय कर ली —सदियों से सुलगने वाली इस विदेशी शासन की पाप-शिखा को बुझाने का पूरा निश्चय उन्होंने कर लिया। प्रतिमा ने ऐसी दृढ़ता—ऐसा अपराजेय बलिदानी संकल्प कम देखा था और महमूद में भी उसे यह एकाग्र परिपूर्णता—केवल आग और बिजली से आँकी जाने वाली दृढ़ता न मिली थी। प्रतिमा ने कहा—'भैया ! इस बार के आक्रमण का नेतृत्व आप करेंगे। जिस समय नंगी तलवार लेकर आप आगे चलेंगे उस समय गाँव में कोई व्यक्ति घर के अन्दर न बैठ सकेगा। इस बार हमें पूरे जिले को अँगरेजी शासन से मुक्त कर अपने अधिकार में कर लेना है। बाहर से फ़ौज-पुलिस के आने के रास्ते पहले ही नष्ट कर देने हैं। शासन के सत्ताधारियों को खत्म कर देना है।'

बलराज ने कहा—'नेतृत्व का प्रश्न नहीं उठता। प्रत्येक व्यक्ति अपना नेता होगा·····उसके हाथ की तलवार उसका नेतृत्व करेगी। हमारे विश्वास की आँखें जिस लक्ष्यबिन्दु पर ठहरी हैं

वहाँ तक जाने के लिये किसी रहनुमाई की जरूरत नहीं।'

उधर हवालात में बन्द महमूद बाहर भाग निकलने की युक्ति सोचा करता था। वह अब बिलकुल अच्छा था—सारे घाव भर चुके थे और पहले जैसी शक्ति उसमें आ चुकी थी। पर उसे बाहर निकलने की कोई युक्ति सूझती न थी। कारा के भीतर वह इस नयी चिन्ता से घुलने लगा। कब तक उसे ऐसे ही मन मसोस कर क्रूर नियति के निर्मम आघातों को सहना होगा। चारो ओर से घेरे इन बंदूकों संगीनों से बचकर कैसे बाहर निकला जाय। निकट भविष्य में उस पर चलाया जाने वाला केस शुरू होने वाला था। महमूद का मन बाहर के समाचारों के लिये—आरती और बलराज—प्रतिमा और जिले के सैकड़ों साथियों की आगे की गतिविधि जानने के लिये तड़प तड़प कर रह जाता। जेल में चुपचाप बन्द पड़े रहना···पालतू पशु की तरह समय पर खाना पा जाना····· जीवन की अन्य आवश्यक वस्तुओं के लिये अधिकारियों का मुँह जोहते रहना उसे कायरता लगती थी। आज़ादी के लिये लड़ने वालों का यह मार्ग नहीं···युग के नायकों का यह कर्तव्य नहीं···समाज के सच्चे सेवकों का यह शेवा नहीं···जो देश के लिये अपना मस्तक तक देने को तैयार हों उनका यह धर्म नहीं। उन्हें बन्धन तोड़ कर निकलना चाहिये—बार बार निकलना चाहिये। बंधनों—घोर संकटों में पड़ कर कोई क्यों अकर्मण्य हो जाय और अपने ध्येय की गतिशीलता भूल बैठे। वर्तमान युग में कहीं किसी देश में आज़ादी की लड़ाई बिना जन जागरण के नहीं लड़ी जा सकती। जन-जागरण के लिये जनता के साथ सक्रिय, सचेष्ट संपर्क आवश्यक है। जेल में बन्द हो जाने के बाद वह संपर्क रह ही कहाँ जाता है! महमूद उठते बैठते यही बातें सोचा करता था। वहाँ की कठोर सतर्क व्यवस्था देख कर उसे कोई उपाय न सूझता था। कैसे वह इस पिंजरे के पाश को तोड़ कर बाहर अपने साथियों से जा मिले·····उनके टूटते मनोबल को सहारा दे। भाभी की मृत्यु के बाद भैया का जीवन

किस दिशा की ओर जा रहा होगा ? प्रतिमा ने इस बीच कैसी कैसी तैयारी कर ली होगी—आरती के दिल पर क्या बीत रही होगी ! एक ओर मा और बड़ी बहन अजीज़ भाभी का सदा को बिछोह····· दूसरी ओर प्रेमी का इस प्रकार पकड़ कर जेल में ठूंस दिया जाना एक बार बाहर निकल कर वह सब को चकित कर देगा। सब लोग उससे ऐसी आशा बाँध रहे होंगे। क्या वह उनकी आशा खाली जाने देगा ? यहाँ बन्द रह कर प्रतिक्षण फाँसी या कालेपानी की प्रतीक्षा करना--दूसरी ओर बाहर निकल फिर कानूनों को तहस नहस कर बग़ावत का झंडा फहराना। जेल के भीतर बन्द रह कर फिरंगी से भारत छोड़ भागने की बात नहा कही जा सकती। यह ललकार मुक्त वायुमंडल में ही उठ सकती है। विप्लव का यह संदेश जेल के बाहर ही उबल सकता है -चहारदीवारी के भीतर नहीं। जेल के भीतर महमूद अकेला था—उसका कोई साथी भी वहाँ न था जिससे यत्रणा कर वह कोई उपाय निकालता। बाहर मैदान में गोली खाकर मरना कितना गौरवपूर्ण है ! महमूद मुसलमान होकर भी मरने के बाद एक बार फिर आज़ाद भारत में जन्म लेना चाहता है। फाँसी ! फाँसी के बाद उसकी आत्मा अन्धी आँधी की तरह एक ओर से दूसरी ओर मँडराती घूमेगी·····उसे मुक्ति न मिलेगी। खून से सिंचे भूमिखंड की तरह अत्याचारों, बलात्कारों और दानवी कृत्यों की घृणित कहानियाँ तन मन पर लपेटे सिसकती रहेगा। उन जघन्य नृशसताओं का जलता एहसास उसे कभी शान्त न होने देगा। महमूद ऐसी निरीह और बेबस मौत नहीं मर सकता। वह मरेगा तो मैदाने-जंग में हँसते हँसते·····अपने भाइयों बहनों के खून का बदला लेते लेते जिनकी आत्मायें उसे आज बदला लेने के लिये ललकार रही हैं। महमूद की आँखों से यह सब सोचते सोचते आग निकलने लगती है। इन सब का खून इन ज्ञात अज्ञात हजारों बहनों पर किये गये अत्याचार, भ्रष्टाचार और बलात्कार उसे बाहर निकल कर दुश्मन पर टूट पड़ने के लिये पुकार रहे हैं। जले घरों के

आकाश में जमे धुँए, जलती आग में उल्टे लटकाये गये मासूम बच्चों के क्षीण आर्तनाद, माताओं-बहनों के रोमांचकारी अपमान—नौनिहाल शहीदों के खून का अभिशप्त खंडित संकल्प—क्या उसे एक क्षण चैन मिलने देते हैं! इस बार बाहर निकल कर वह हिंसा की मूर्ति बन जायगा। एक एक बलिदान·····एक एक लुटी अस्मत का बदला लेगा··· ··यह क्रम तब तक चलेगा जब क एक एक अनाचारी की अर्थी नहीं सज जाती। बाहर से आजकल कोई समाचार नहीं मिलते—कोई पत्र पढ़ने को नहीं दिया जाता। ऐसी दशा में उसके दिल-दिमाग की नारकीय शून्यता उसे····· बौखलाया करती है। अकेला पड़ा अपना दुर्बल और घटनाओं की प्रगति की झपेट से जर्जर मस्तिष्क लिये वह आकाश पाताल तक फैले अपने देशवासियों के खून के छींटे गिना करता है।

उस समय न जाने कितने महमूद जैसे देशभक्तों की यह मानसिक दशा थी जो जेलों में बंद निष्क्रिय भाव से बाहर होने वाले संघर्षों की उड़ती फिरती खबरें सुनते थे या अखबारों में आने वाले टूटे फूटे समाचार पढ़ते थे। बाहर प्रजा के मायूस अरमानों का भूखा मरघट था। बाहर गोलियों, संगीनों, तलवारों के साये में किस तरह असंगठित जनता के पैर बढ़ रहे थे यह सब वे विवशता पूर्वक अनुभव करते थे। बाहर लोगों के होठों पर लहराती हुई·····हवा में उड़ कर आती हुई आज़ादी की तानें वे सुना करते थे—उठते-बैठते—सोते-जागते—खाते-पीते। कैसे इस लहू का बदला लिया जायगा! जनता को कितने पाशविक जुल्मों का सामना करना पड़ रहा है—दमन की कैसी खौफ़नाक आन्धी चल रही है! क्या जनता का यह आन्दोलन लाठियों-गोलियों से कुचल दिया जायगा! कब तक घर घर से बहते उष्ण रक्त की धारा में जुल्म का जहाज चलेगा! शहीदों के रक्त का एक एक बूँद उन्हें बदले के लिये पुकारता था। पर जेल से बाहर भागना! यह उन्होंने न सीखा था·····न उनकी राजनीतिक आदर्शवादिता में इसके लिये स्थान था। पर उनकी

आत्मायें बेचैन रहती थीं। उनके भीतर भीषण द्वंद्व की आग लगी रहती थी। इस समय बाहर उनकी जबर्दस्त जरूरत है। जेल के भीतर पिंजड़े में बंद तीतरों की लाचारी·····जीवन को उबा देने वाली मायूसी है। बाहर कर्म का कोलाहल है—युद्ध की गर्मी है—भीम वेग से बढ़ने वाली रण-सरिता का गर्जन है जो भीतर बाहर की शून्यता को पराजित कर हृदय और रक्त की नलियों को नयी गति—नया दौर देता है। लेकिन उनकी जिन्दगी की परम्परा उन्हें रोकती थी! वे कुछ समझ न पाते थे ····तड़फड़ा कर रह जाते थे। जेल से निकल भागना एक कला है जिसकी शिक्षा न उन्हें मिली थी····न उनके सीखे लड़ाई के व्यूहीकरण में कहीं उसके लिये स्थान था। वे अपने से ही मजबूर थ। वे अपने को ही ढूँढ न पाते थे। उनके सामने लड़ाई का यह रूप कभी आया न था। उसे सामने पाकर भी न पहचान पाते थे।

दूसरे दिन सुबह से लेकर आधी रात तक बराबर बलराज और प्रतिमा बैठे मन्त्रणा करते रहे। किस प्रकार अगला हमला किया जाय यह उनके सामने मुख्य प्रश्न था। प्रतिमा ने योजना की एक एक तफ़सील समझानी शुरू की और बलराज की सारी शंकाओं का जब निराकरण कर दिया तो बलराज आश्चर्य से स्तब्ध रह गये। प्रतिमा के लिये उनके मन में ऊँची धारणा थी। पर उसके भीतर गणनात्मक व्यूहीकरण का बोध है यह उन्होंने न सोचा था। आरती दिन में कुछ घन्टों के लिये बाहर चली गयी। जब लौटी तब उसने दोनों को गंभीर मशविरे में संलग्न पाया। बैठ कर सब सुनने लगी। प्रतिमा ने एक एक मोर्चे का प्लान तैयार कर लिया था·····जितने आदमी उसके पास थे सब के स्थान निर्धारित कर लिये थे। कहीं से किसी प्रकार की शिथिलता न थी। एक प्रकार से सब तैयारी कर और पूरा जाल बुनकर ही वह लखनऊ आयी थी। पर उसका मन अशान्त था। तनिक भी बाहरी शोर गुल या हलचल होने पर वह चौंक पड़ती

थी। किसी तरह वह निर्विघ्न निरापद पर्वतपूर लौट जाना चाहती थी। उसकी चौकन्नी निगाहों को·····सतर्क मुद्राओं को कई बार देख कर जब आरती से न रहा गया तो बोली—'इतना डरती क्यों हो। यहाँ किसी को कानोकान खबर नहीं क्या हो रहा है। डरने से कैसे काम चलेगा। अभी कागजी तैयारियाँ हैं तब यह हाल है। आगे चल कर खुला युद्ध होगा तब ···तब क्या तुम इसी प्रकार घबराओगी·· अपने को सँभालती रहोगी।'

प्रतिमा की आँखों से आग छलक पड़ी·····कुछ कुछ वैसी जैसी कई दिन की भूखी शेरनी की आँखों में सामने बँधे बकरे के पास पहुँचने के पहले ही गोली की आवाज़ सुन कर भभक उठती है····तत्क्षण उसने अपने को सँभाल लिया। एक बड़ी सूखी हँसी हँस कर वह रह गयी और बलराज से फिर बात करने लगी। बलराज ने वक्रदृष्टि से आरती की ओर देखा। आरती अपनी गलती अनुभव कर अनमनी हो नीचे देखने लगी। बलराज ने कहा—'तुम्हारे प्रचंड आशावाद को देख कर विस्मित हो जाता हूँ। तुम क्या सोचती हो एक बार इस प्रकार के दमन का शिकार होने के बाद पर्वतपूर और आस पास के गाँवों की जनता तुम्हारा साथ देगी। तुम देहात के लोगों की ज़हनियत से कम परिचित हो। इस बार उनसे किसी प्रकार के उत्साह या मोर्चेबन्दी की आशा न करो। वह पहला जोश और उभार था जिससे प्रेरित होकर वे लोग पिछली बार आगे आये थे। मुझे अब चारो तरफ ठंडक ही ठंडक नज़र आती है। कहीं कोई दम जैसे रह नहीं गया। शहरों का यह हाल है····देहातों की कौन कहे! लखनऊ में देखो! शीला के मरने के बाद·····इतना बड़ा वाकया हो जाने के बाद भी यहाँ जैसे कुछ हुआ नहीं। आरती से पूछो! बराबर यूनिवरसिटी और कालेजों में जाती रहती है। पर कभी कुछ सुनने में नहीं आता—चारों ओर की हड़तालें टूट रही हैं। जैसे लोगों ने एक रस्म-अदाई कर दी फिर अपने अपने काम में लग गये। देहातों

में और मुर्दनी छायी होगी। मैं यहाँ बैठे बैठे वहाँ की बात बता सकता हूँ।

प्रतिमा ने कहा—'आप का ख्याल गलत है। शहर से आप देहातों की तुलना न करें। पिछले आन्दोलनों में भी शहर के स्कूल-कालेजों में धरना देने के लिये जो वालन्टियर आते थे वे देहात के होते थे। मैं आपके ज्ञान और समझ को चुनौती नहीं देती। आप एक बार स्वयं चल कर वहाँ का दृश्य देखें। और तो और आप सुकरू से बात कर·····उसकी मुस्तैदी देख हैरान रह जायँगे। इस में समझ लीजिये·····।'

आरती ने कहा—'सुकरू चाचा! क्या बात कहती हो दीदा। उनसे इन बातों से क्या मतलब! हमारी कोठी के सामने से निकलते थे तो सहम कर दबते दबते! ऐसे लोगों के बल पर तुम यह सब करना चाहती हो! लाल पगड़ी को देखकर जो पानी हो जाते हैं·····'

प्रतिमा ने कहा—'चलकर देखना। यहाँ बैठकर मैं क्या क्या बयान करूँ? हम लोगों ने भाभी की मौत को भी अपने प्रचार का साधन बनाया। महमूद के घायल होने और उनके मारे जाने के समाचार ने पूरे जिले को उत्तेजित कर रक्खा है। हमारे आदमी छिप कर एक जगह नहीं बैठे रहते। वे पूरे ज़िले का दौरा कर रहे हैं। पुलिस की नाक के नीचे अपना काम करते हैं। लोग उन्हें अपने घरों में आश्रय देते हैं और वे बराबर एक स्थान से दूसरे स्थान पर हटते रहते हैं। इस बार तुम्हारे पिता भी अपने नौकरों से पुलिसवालों की मदद करने के लिये कहेंगे तो कोई न सुनेगा। जिस पुलिस ने उनके घर की लक्ष्मी की जान ली है उसके भाई-बन्द जब मौत के घाट उतारे जायँगे तब वे हँस हँस कर अपने हाथों से उनका संहार करेंगे। युद्ध में सब माफ़ है भैया! भाभी की मृत्यु के दास्तान को हम लोगों ने पूरे जिले में घर घर पहुँचा दिया है। महमूद वहाँ कितने लोकप्रिय हैं तुम लोग जानते हो। दोनों का हाल जब से लोगों ने सुना तब से उन्हें चैन नहीं।

हमने इनका 'पोलिटिकल केपिटल' बनाया है। हमने उन्हें उत्तेजना के शिखर पर पहुँचा दिया है। हम पहले जैसे असंगठित भी नहीं। पुलिस की नाक के नीचे हमने हथियार एकत्र किये हैं। गाँव के बच्चे बच्चे को ये बातें मालूम हैं। मजाल है कोई जुबान पर लाये। वहाँ यही तो अच्छा है। पुलिस को सूचना देनेवाले और सी० आई० डी० वहाँ नहीं। एक दो पर हम लोगों को सन्देह था। उन्हें हमने इस प्रकार सिद्ध किया कि वे रोने लगे। अपनी औलादों के सिर पर हाथ रख कर कसम खा चुके हैं। इस बार वे हमारा साथ देंगे और डट कर देंगे। मैं यहाँ हूँ पर वे लोग मेरे लौटने के लिये बेचैन होंगे। आपको चारो ओर ठंडक नज़र आती है! यह ऊपरी ठंडक है। इस बरफ के नीचे प्रतिहिंसा का ज्वाला मुखी है जो किसी क्षण अपने एक विस्फोट से इसकी पर्तों को उखाड़ फेंकेगा। पूरा जिला एक साथ बाहर से कट जायगा। एक एक तार—एक एक पुल—एक एक सूचना देने का साधन नष्ट कर दिया जायगा। ऊपर से हवाई जहाजों के हमले होंगे तो हम नीचे बंदूकों से उन्हें नष्ट करेंगे। एक बार हम अपना राज्य वहाँ कायम कर लें!'

'यही मैं सोच रहा हूँ प्रतिमा!' बलराज ने भारी स्वर से कहा—'कायम हम कर लेंगे पर उसे बनाये रखना आखरी साँस तक संघर्ष करना! हम कर सकेंगे? इस बार अपने को नष्ट कर हम आजादी के टुकड़े पर आँच आने देंगे। आसानी से काबू में न आयेंगे।'

'हम स्वतंत्रता के संघर्ष में फ़ना भी हो गये तो कितनी बड़ी प्रेरणा देश को दे जायँगे। जिस समय यह खबर चारो ओर पहुँचेगी उस समय जनता में साहस और अभिमान की नयी लहर आ जायगी। मैं उसकी कल्पना नहीं करती। आखिर कितनी फौज आयेगी? कहाँ कहाँ कितना कितना 'बम्बार्ड' करेगी। एक एक गाँव .....एक एक जिले के लिये वे कहाँ तक सेना भेजेंगे? इस समय वे स्वयं जीवन-मरण के झूले में झूल रहे हैं।

उनके साथ हर मुठभेड़ से हमारी ताकत बढ़ेगी—सरकार का पाया कमजोर होगा। हम ग़रीब कुचली, बेज़बान जनता को आज़ादी के लिये लड़ने का नया रास्ता दिखा रहे हैं। वे जितनी बार लौटेंगे हम उन्हें मार मार कर भगायेंगे। एक बार भरपूर सबक पाजाने पर उनकी हिम्मत अत्याचार करने की न होगी। जनता की इस बाढ़ के सामने वे सदा के लिये झुक जायेंगे।'

रात भर तीनों जाग कर पूरा प्लान तैयार करते रहे। बलराज ने जो सुझाव दिये वे प्रतिमा को पसन्द आये। तीनों ने सुबह होते होते सब चीज़ें तय कर लीं। आरती को रह रह कर महमूद की याद आ रही थी। वह बाहर होता तो इस समय नक्शा दूसरा होता। आरती के मन में छिपा कोई कहता था—वह जेल के अन्दर शान्त होकर रह न सकेगा··· ··उसका तूफानी हृदय बाहर निकलने के लिये—अपने जिले में बिखरी विप्लव की आग को एकाकार करने के लिये व्याकुल हो रहा होगा। किसी क्षण वह बाहर आ उन लोगों से मिल सकता है और अपने जानदार व्यक्तित्व से ऊँघते हुए जिले को रणमत्त बना दे सकता है। भाभी! कहाँ हैं आज वे? किस दिव्य लोक में बैठी आज़ादी की इन हलचलों को देख रही होंगी। आज वे होतीं तो भारी उल्लास उन्हें होता। आरती रात भर बैठी रही पर उसे दोनों स्मृतियाँ काट रही थीं। रह रह कर भीतर से रुलाई का आवेग आता प्रतीत होता था। वह उसे रोकती थी·····प्रतिमा की तजबीज़ों को ध्यान से सुनती थी। बीच बीच में उसके मन में जो शंकायें उठती थीं उन्हें प्रतिमा के सामने पेश कर देती थी। प्रतिमा के उत्साह की सीमा न थी। रात भर एक आसन से बैठे रहने पर भी उसके भीतर शैथिल्य और अवसाद का नाम न था। इस बीच उसने जो सोचा समझा और संचित किया था सब ज्यों का त्यों वह बलराज और आरती के सामने उड़ेल रही थी। उसे भी रह रह कर महमूद का अभाव अनुभव होता था। कैसे वह इतने दिन

उसे बिना देखे रह सकी ! महमूद के घायल होने की खबर उसे गाँव में मिली तब वह अपने कार्यक्रम में व्यस्त थी। भीतर भीतर उसे देखने की प्रबल लालसा होने पर भी वह अपने को रोक गयी। उस समय एक ओर उसका लखनऊ आना खतरे से भरा था दूसरी ओर वह अत्यधिक व्यस्त थी। उन्हीं दिनों उसने अपने फरार सहयोगियों को फैलाना शुरू किया था और उन्हें चारों ओर से एक सूत्र में संचालित करती फिर रही थी। हथियारों को एकत्र करना और उन्हें सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाने का काम उस के माथे था। यही नहीं पुलिस के चंगुल से अपने को बचाना और उसकी आँखों के नीचे रह कर उसके हाथ न पड़ना यह सब ऐसे उत्तर-दायित्व उसपर थे कि वह अन्य बातों की ओर अधिक ध्यान न दे पाती थी। आज रात की पिछली घड़ियों में उसे महमूद की याद आती चली जा रही थी। वह होता तो उसे कितना बल मिलता ! महमूद ही नहीं पहले के और भी जो अनुभवी कार्यकर्ता और साथी थे वे सब पकड़ लिये गये थे। बाहर केवल वह लोग थे जो इस बार के हिन्सात्मक कार्यक्रम में आगे आये थे और जो अब पुलिस के निर्दयी चक्र से अपने को बचाते घूम रहे थे। उनके पास जीवट था--बलिदान की ज्वलंत लालसा थी। पर वह अनुभव और सधी हुई संलग्नता न थी जो कांग्रेस कार्यकर्ता की विशेषता होती है। उनके भीतर वह व्यवहारकुशलता और अकस्मात संकट आने पर धैर्य और कुशाग्रता के साथ अपने को बचा कर निकाल ले जाने का राजनैतिक कौशल न था जो कांग्रेस के इतने दिनों के अनवरत अध्य-वसाय की देन था। इस लिये कभी कभी प्रतिमा कुन्ठित हो उठती थी। पर जो अपने को उत्सर्ग कर चुका है उसे कुन्ठा व्यापती नहीं। वह अपने जीवन को हथेली पर लेकर चलने के नशे में प्रतिक्षण चूर रहता है।

रात भर जाग कर सुबह चाय पीते हुए प्रतिमा ने कहा—बताइये कब चल रहे हैं ? मेरे साथ चलेंगे या एक दो दिन बाद

आयेंगे। आरती मेरे साथ जा सकती है! यहाँ महमूद के मुकदमे का क्या होगा! उसके लिये भी प्रबन्ध करना होगा।'

'उसकी मुझे चिन्ता नहीं! महमूद अपनी पैरवी कर लेगा। यहाँ उसके और हिमायती हैं जो उसके लिए वकील वगैरह ठीक करेंगे। मुकदमा एक फ़ार्स होगा। जो होना है मैं जानता हूँ। उसके बचने की एक सूरत है। वह अगर वहाँ से भाग आ सके.....'

'आप यकीन रखिये भैया!' प्रतिमा ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा—'वह जेल से निकल कर ऐन वख्त पर आ मिलेगा। ठीक वख्त पर वह आकर जुलू का नेतृत्व करती भाभी के बगल में खड़ा हो गया था। आप देखेंगे ठीक वख्त पर पर्वतपूर और जौनपुर की संघर्ष करती हुई जनता के बीच आ खड़ा हो जायगा। अवसर आने पर पीछे हटना उसे आता नहीं। उसके भाग्य का देवता शायद यह स्वीकार नहीं कर सकता। क्या हम लोग इस काम में मदद नहीं कर सकते! आप इस सम्बन्ध में ज़्यादा बता सकते हैं। मुझे अनुभव नहीं। यहाँ का हाल आप ज़्यादा जानते हैं। इस सम्बन्ध में आपने उसके साथियों से बात की! बिना बाहरी मदद के कैसे भाग सकेगा! मैं उससे मिल भी नहीं सकती!'

बलराज ने कहा—'हम लोग बाहर से कुछ नहीं कर सकते। वह जो ठीक समझेगा करेगा। बाहर से हम लोग सिर्फ काम को बिगाड़ सकते हैं। उसे जेल में सबसे अलग रक्खा गया है। कोई उससे मिल नहीं सकता। हम लोगों का इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की चेष्टा करना उसे और जकड़न में डाल देगा। अभी क्या कम निगहबानी रहती होगी। हम लोग अपने लक्ष्य की ओर बढ़ें। जिसे आना है वह खुद आगे बढ़कर मिल लेगा। आरती! तू मेरे साथ चलना। तुम अकेली जाओ प्रतिमा! आरती कहीं तुम्हारे साथ सन्देह का

कारण न बन जाय। तुम जैसे आई थीं वैसे ही चली जाओ। मैं यहाँ के काम खत्म कर दो दिन बाद आरती के साथ यहाँ से चलूँगा। मुझे तुम महमूद की कोठी में पाओगी। आरती भी वहाँ रहेगी।.....और कोई जगह नहीं। मैं इस बार वहाँ जाना नहीं चाहता। इस बार मेरा.....आरती का वहाँ आना गुप्त रहे यह मैं चाहता हूँ। तुम क्या कहती हो? मैं नहीं चाहता शम्मी पर किसी प्रकार की आँच आये। फ़तह हासिल कर ली तो धूम से चलेंगे। वर्ना हमारी लाशें वहाँ से होकर निकलेंगी। तुम कोई और जगह बता सकती हो—बिलकुल अलग..... तनहा।'

प्रतिमा ने कहा—'आपको पर्वतपूर जाने की ज़रूरत क्या है? किसी और गाँव में चलें जहाँ आप को कम लोग जानते होंगे। मैं समझती हूँ आप असहट में ठाकुर राममनोहर सिंह के यहाँ पहले जायँ। वहाँ मैं आपको उस दिन मिलूँगी। हमारा हथियारों का स्टाक वहीं है। उसे आप देख लें। वहाँ से आप एक बार सारे अड्डों पर हो आयें। आरती को मैं दूसरा काम बता दूँगी। जिस दिन हमारा हमला हो उस दिन आप पर्वतपूर पहुँच जायँ। यह ठीक रहेगा भैया।'

प्रतिमा भीतर से यह न चाहती थी कि बलराज और आरती शमीम की कोठी पर जाकर ठहरें। शमीम के पास बैठकर दोनों इधर उधर की बातों में न पड़ जायँ यह आशंका उसे थी। वहाँ का वातावरण जैसा स्निग्ध और ममतामय था उसे प्रतिमा भली भाँति जानती थी। दोनों की कर्मठता और लक्ष्य-तत्परता पर उसे विश्वास था पर वह ऐसे भीषण समय किसी प्रकार का खतरा लेने के लिये तैयार न थी। तनिक सा ढीलापन, तनिक सा अनुराग और कोमलता उसके मार्ग में बाधक बन सकते थे। शमीम के व्यक्तित्व में कुछ ऐसा था जो मनुष्य को कठोर मंतव्यों से दूर कर उसके भीतर शान्ति और अहिंसा की पावन ज्योति जगा देता था। यह समय

बदले·····केवल बदले का है। जिन्होंने स्वतंत्रता के लिये अपने प्राण की आहुति दी है उनके खून की एक एक बूँद ज़ालिमों से प्रतिशोध लेने के लिये पुकार रही है—ललकार रही है—चिल्ला रही है। अँगरेज़ डाकुओं को प्रहार करने का मौक़ा न देकर पहले ही उन्हें नेस्तनाबूद कर देना है। प्रतिमा यह नहीं मानती कि शमीम के शान्त क्रोड़ में पहुँचने के बाद आरती और बलराज की मनोदशा में, अन्तर न पड़ेगा। शमीम के लिये बलराज के मन में जो असाधारण अनुराग है उसे वह अनुभव करती है। आरती भी वहाँ जाकर ऐसी ज्वलनशील न रह सकेगी·····।

बलराज स्वय कुछ कुछ ऐसा सोचते थे। वे इस बार महमूद की कोठी पर जाकर व्यर्थ थानेदार और पुलिस के सिपाहियों को सन्देह और सतर्कता का अवसर नहीं देना चाहते। दोनों इस बार वेश बदल कर जाना चाहते हैं। ज़िले में बाईस थाने हैं। सब पर कब्ज़ा कर लेना है। प्रतिमा ने शहर को कब्ज़े में कर लेने की योजना भी बनाई है पर बलराज को अभी उसमें सन्देह है। एक बार जब तक वे खुद अपनी आँखों से सब न देख सुन लें तब तक कैसे मानें? देहातों में सब होकर रहेगा पर शहर पर अधिकार किये बिना देहातों में प्राप्त की गई स्वतंत्रता को किस प्रकार सँभाला जा सकेगा! किस प्रकार उसकी रक्षा होगी! बलराज ने प्रतिमा की बात मान ली। इस बार वे महमूद की कोठी पर न जायंगे।

प्रतिमा ने आरती से कहा—'तुम! बाजी की गोद में मुँह छिपा कर कुछ देर बिना बैठे तुममे कैसे रहा जायगा। वहाँ तुम लोग गये कि हमारी योजना तहस नहस हुई। महमूद की कोठी पर बराबर पुलिस का पहरा रहता है। एक बार आप दोनों वहाँ कई दिन रहे हैं। बार बार आपके जाने को राजनैतिक महत्व दिया जायगा जिससे बना बनाया काम बिगड़ सकता है।'

आरती ने हँस कर कहा—'तुम क्या बाजी से कम हो? अगर

उनकी गोद में मुँह ढाँप कर सुखी हो सकती हूँ तो तुम्हारी छाती के घोंसले में भी चिड़िया-सी दुबकी पड़ी रह सकती हूँ। संघर्ष और सर्वनाश के बीच इतना अवकाश क्या तुम न निकाल लोगो····· ज़रूर निकाल लोगी।'

बलराज ने कहा—'तुम कल सुबह चली जाओ। दो दिन के बाद हम यहाँ से चल देंगे। एक बार बच्चों को देख आना ज़रूरी है। अभी वे आधे यतीम हैं। तब मुमकिन है बिलकुल यतीम हो जायँ। लाल को होस्टल में रख दूँगा। कुछ दोस्त हैं जिनसे मिलना आवश्यक है। वहाँ से जीवित लौटना हो, न हो, कौन जाने। आरती भी सब से बिदा लेकर चलेगी। मैं फिर कहूँगा तुम और आरती सामने न आना। परदे के पीछे सारे कार्य का संचालन करना। हम लोग मिट गये तो तुम दोनों यह ज्वाला हहराती रहोगी। न जाने इस प्रकार की कितनी लड़ाइयाँ लड़नी होंगी ·····।'

प्रतिमा ने आदर पूर्वक बलराज की ओर निहार कर कहा—'जो तुम कहोगे सब होगा। आरती को मैं बाहर न आने दूँगी। पर शमीम के यहाँ भी उसे इस बार न ठहरने दूँगी। जहाँ जिस प्रकार मैं कहूँगी वह रहेगी। रह गई मैं। मेरी बात न करो। मुद्दत से सोया मेरा दुख जाग पड़ता है और मैं भीतर भीतर लहू-लोहान हो चलती हूँ। मेरे घाव बह पड़ते हैं। मैं अब जीवन नहीं चाहती·····मौत·····आज़ादी की मौत चाहती हूँ। भाभी के शहीद होने के बाद पहली बार मुझे अपने जीवन पर शर्म आई। मैं बची हुई हूँ·····जो मेरी बातों से प्रेरित होकर संघर्ष में कूदीं वे ज़ालिम सरकार का मुकाबला करती हुई लड़ाई के मैदान में काम आईं! मुझ से अब जीने को न कहो। जीवन के प्रति ऐसा विराग·····ऐसी नफ़रत उस समय भी न हुई थी जब जीवन का सहारा टूटा था—जब मेरे नारीत्व की किरणों का देवता मुझे छोड़कर अपनी शारीरिक मूर्ति से निकल भागा था। तब मैंने

संकल्प किया था—मैं जीवित रहूँगी। भाभी की मौत के बाद मेरा सकल्प है—मैं उनकी सी मौत मरूँगी। उनकी मौत शान्त थी—मेरी मौत अशान्त·····आवेगपूर्ण होगी। मेरी लाश का एक एक खूनी कतरा पुलिस और फ़ौज के एक एक सिपाही को आग की ज्वाला की तरह चबा जायगा। मेरी भाभी महान थीं। तुम लोगों ने लम्बे अरसे तक उनकी ममता और प्रेम का स्वाद लूटा। वह मुझ से जब मिलीं तब घर छोड़ कर फ़कीर बनने की तैयारी हो चुकी थी। उन्होंने सिंहनी की तरह वैभव और विलास से सराबोर जीवन के पाजड़े को तोड़ दिया क्योंकि वह स्वतंत्र विचार·····योजना में बाधक हो रहा था। मैं उन्हें पहचान गयी थी। पहली भेंट में ही मैंने जान लिया था यह लपट और ज्वाला की बहन है। आज गंगा की ठंडी धारा से लिपटी है·····कल—ग्रीष्म में, नदी के सूखते ही किनारों को भूनती-दहाती बढ़ चलेगी। मुझसे जीवित रहने के लिये न कहो भैया! आरती ज़रूर जीवित रहेगी। आजीवन उस बहादुर औरत की याद में श्रद्धा का तर्पण करेगी जो न जाने कितनी बड़ी थी····· जिसने केवल तीस बहारें देखी थीं पर जो असख्य हेमन्तों को आग का घर बना गई। जब तक जीवित रही—सृष्टि के आदि कमल की भाँति पवित्रता के परिधान में आशापूर्ण और निष्कलुष बना रही·····जिसकी दिव्यता की दीप्ति दिग-दिगंत में लहराती रही··· जिसे तुम जैसा शौहर, आरती जैसी बहन और महमूद जैसा भाई मिला, जो देवर होकर भी उसे मा की तरह पूजता रहा। नंगा से नंगा मज़ाक करते हुए भी जिसकी दृष्टि भाभी के पैर के आगे ऊपर की ओर बढ़ी ही नहीं।·····मैं बड़ी दुखी हूँ··· ज़िन्दगी में यह दूसरी चोट खाई है। एक चोट पहले खाई ज़रूर थी पर उसे समय की पूर्णता और प्रवाह ने भर डाला था। वह अब अन्तर्ज्वाला न रह कर अन्तर्ज्योति बन गई थी·····केवल प्रकाश ·····जलते माणिक सा उच्छ्वसित प्रकाश फेंकती थी। यह चोट मेरे सारे अतीत को नई लौ से जला गई है ·····'

बलराज ने देखा यह वही निर्भय नारी है जो अभी इतने विषद

पैमाने पर हत्या की लम्बी-चौड़ी तफ़सील बना चुकी है। क्या इसके भी दिल है ··क्या यह भी किसी का कोई अभाव अनुभव करती है··· क्या इसके कन्धे से लिपटे मरे सपनों में से किसी में जान बाक़ी है? वे स्वयं शीला की याद में डूब गये। बोले—'क्या कहूँ प्रतिमा! मेरे लिये क्या थी वह जो अब नहीं रही। मिली तो दिल से इस तरह गुज़री कि आहट तक न हुई·····जब चली गई तो मेरे दो बूँद आँसुओं·····दो निराश चितवनों की भी तलबगार न हुई। मुझे उसने इतना चाहा जितना किसी पत्नी ने पति को न चाहा होगा। अप्सरा जैसे शरीर और यौवन में उसने सतियों का कैवल्य जगाया··· रंग महल में रह कर उसने जोगिन का रूप भरा। शादी के बाद जब पहले-पहल गाँव आई तो तीन चार दिन के बाद बोली—'मुझे लखनऊ ले चलो। यहाँ मैं पागल हो जाऊँगी। यहाँ तो·····बड़ा सूना है·····बिलकुल सूना। कहीं कोई साथी नहीं·····कितना वीरान है। मुझे यहाँ से निकालो··· तुमसे दिली फ़रियाद करती हूँ·····तुम मेरे स्वामी हो। पहले तुमसे कहूँगी तब किसी और से या अपने से। मैं नहीं रुकूँगी··· ··मेरी सोसाइटी मुझे दे दो·····'

मैंने कहा—'तुम जा सकती हो। मैं कहां न जाऊँगा·····न नौकरी करूँगा·····न वकालत। जो आदमी एक पैसा नहीं कमा सकता उसे घर से खर्च लेकर शहर में रहते जो शर्म उठानी पड़ेगी वही तुम मुझे झेलने को कहती हो! उस सोसाइटी को छोड़ो शीला, जो आदमी को इतना परवश और अपने को खो देने वाला बना देती है। बताओ, तुमने कभी किसी को प्रेम किया है·····सही सही जवाब देना!

हैरान-सी हो मेरे ठीक सामने बैठ कर बोली थी—फ़ुर्सत नहीं मिली। अभी जल्दी क्या थी? बाल, सिनेमा, पिकनिक शिकार! घूमने फिरने पढ़ने-लिखने से समय न मिलता था। क्यों? क्या जरूरी है यह! मैं तो नहीं समझती।

मुझे यूरोपीय लेखकों द्वारा चित्रित किये गये आधुनिकतम नारी के

चरित्र याद आ गये। अवध के ताल्लुक़दार परिवारों का आमोद-प्रमोद और विलास क्रीड़ा देख चुका था। आश्चर्य न हुआ। बोला—तुममें एक कमी रह गयी। उसे पूरी कर लो। इस घर से प्रेम करना शुरू कर दो। मुझ से नहीं—मेरे घर से जो मुझ से ज़्यादा। स्प्लेनडिड और बडा है·····।

बलराज ने एकाएक दोनों आँखें मूँद ली। न जाने किस गहन चिन्ता में लीन हो गये। आरती ने लगभग दस मिनट के बाद कहा—'तब···तब क्या जवाब दिया उन्होंने। तुमने कभी बताया नहीं यह क़िस्सा। भाभी भला क्यों कभी बतातीं? बोलो·····भैया! चुप क्यों हो? पूरी बात कह दो। सुने बिना न रहा जायगा।'

प्रतिमा ने कहा—बोलो भैया! इस बात का भाभी ने क्या जवाब दिया।'

बलराज ने आँखें खोल कर कहा—'जबाब क्या देती। लाजबाब हो जाने वाली बात मैंने कह दी थी। उससे ज़्यादा पढ़ा-लिखा बुद्धिमान था। लेकिन उसने जबाब दिया। बोली—क्या बेरहम माज़क करते हो। इन्सान को छोड़ कर बेजान ईंट-पत्थर की दीवारों से प्रेम करूँ! तुम्हें न चाह कर तुम्हारे घर को चाहूँ!'

मैंने कहा दूसरा रास्ता नहीं। सिविल मैरिज भी नहीं कि तलाक हो सकती। पर मेरी ओर से तुम्हें स्वतंत्रता है। जहाँ जैसे चाहो रह सकती हो। जिसके साथ·····जिस रूप में ····· जहाँ भी·····।

आरती ने कहा—'आपने बड़ी कठोर बात कह दी थी। ऐसा आपको न कहना चाहिये था। मामूली बात नहीं कही आपने!'

यही उसने कहा था आरती! तब तू मुशकिल से नौ साल की थी। उस दिन से लखनऊ का नाम मेरे सामने न लेती थी। बाद में तो उससे घर छोड़ा ही न जाता था। पापा इस बात पर एक प्रकार से उसे त्याग बैठे थे। कभी वहाँ जाती न थी।

लीला ने मेरे सामने बीसों बार कहा। खुद वहाँ गई·····हफ़्तों उसे लाने के लिये गाँव में पड़ी रही। पर मेरे, बाबूजी के, बाद में महमूद के कहने पर भी गाँव छोड़ कर न निकली। सारा गाँव जान गया है—बहूरानी कभी मायके नहीं जातीं। पूरी ठकुराइन थी····· मूरख टेक गही सो गही ···मेरे साथ केवल इसलिये आई थी कि अब मुझे छोड़ कर रह न सकती थी·····रह सकती तो कदापि न आती। ये सब माज़ी की यादगारें हैं। जितना कुरेदोगे उतना ही आग की कनी उगलेंगी। छोड़ो इन बातों को।'

आरती ने कहा—'दीदी! जब से महमूद और मैं बड़े हो गये थे—अर्थात् उनको समझने के योग्य हो गये थे तब से वह हम लोगों के साथ ही रहती थीं। बीच में भैया का यह हाल हो गया था कि तीन तीन दिन अपने पढ़ने के कमरे से न निकलते थे। खाना भाभी वहीं दे आती और चली आती थीं। गाँव के लोगों की कितनी सेवा की है उन्होंने·····महमूद की अम्मीजान की उन्होंने कितनी सेवा की! कोई घर ऐसा न होगा जहाँ हम लोगों का आना जाना हो और जिस परिवार के किसी न किसी व्यक्ति की उन्होंने सेवा न की हो। शमीम जब बीमार पड़ जाती तो वे हफ़्तों वहाँ रोज दौड़ती थीं। भैया से अक्सर कहती थीं—तुम किसी लायक़ न निकले। डाक्टरी पास की होती तो मनुष्य की सेवा तो कर सकते। तुम दवाइयाँ लिख कर देते—मैं बना बना कर रोगियों को पिलाती। 'फ़िलासफ़ी' और 'ला' में जीवन चौपट कर दिया। भैया कहते—तुम केवल शारीरिक कष्ट और रोग में सेवा करती हो। मैं साधना करता हूँ। श्रीअरविन्द घोष की तरह ऐसा योग-साधन करना चाहता हूँ कि उनकी साधना से राजनैतिक मुक्ति मिले और मेरी साधना से रोगों-बीमारियों से। डाक्टरी पढ़ने पर यही सब करता रह जाता जो तुम किया करती हो। मैं जनता के सामूहिक मोक्ष के लिये प्रयत्नशील हूँ।'

बलराज ने कहा—'जाने दो आरती। और कोई बात हमें नहीं करनी जो उसी की गाथा गायी जाय? दो तीन दिन में तुम्हें

चलना है। यहाँ जो काम हो वह दूसरों को समझा दो। वहाँ तुम रहोगी जब तुम चाहोगी वहाँ से चल दे सकोगी। इस बार हम जान होम कर लड़ेंगे। अधिक से अधिक समय तक हम अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करेंगे—या एक संहारक ज्वाला उठाकर बुझ जायँगे। तुम अभी पीछे रहोगी। मेरे और प्रतिमा के बाद तुम्हारा नम्बर आयेगा। महमूद के पुराने साथियों में से कोई तो उसकी बगल में रहे। वह न छूटेगा तो जेल से भागेगा। उस समय तुम दोनों मिल कर अगला मोर्चा जमाओगे—आज प्रतिमा के साथ मैं जमा रहा हूँ। व्यर्थ के बलिदान उपादेय नहीं होते।

पन्द्रह

'उन्नीस सौ बयालीस' के रक्तिम आकाश की बात कही जा रही है। जनता और काँग्रेस के नाम को मिटा देने पर तुली बैठी सरकार में जगह जगह सघर्ष हो रहे थे। लोग गिर गिर कर उठते थे। बम्बई से शुरू होकर यह आन्दोलन दावानल की भाँति सारे देश में प्रान्त प्रान्त में फैल गया था। यही नहीं, आन्दोलन शहरों की सीमाओं को पार कर देहातों में भी पहुँचने लगा था। ज़िलों के, शहरों के अधिकारी कहाँ तक रोकते! जहाँ भी अवसर मिलता था क्रोधित जनता शासन-व्यवस्था को अशक्त कर स्वयं पञ्चायतीराज्य स्थापित करना चाहती थी। लोग जेलों-कचहरियों पर अधिकार कर, ज़िलापतियों से हथियार डलवा रैयत का राज्य स्थापित कर लेते थे। संयुक्त प्रान्त के बहुत से ज़िलों में यह हुआ। पुलिस और फ़ौज इस झंझावात का सामना करने में अपने को असमर्थ पाती थी। कान्ग्रेस-कमेटियाँ क्षत विक्षत हो गई थीं। बरसों से चला आ रहा स्थानीय नेतृत्व कहीं भी आन्दोलन का सञ्चालन न कर पा रहा था। जनता जहाँ जो ठीक समझती थी करती थी। नये नये नेता, नई नई शक्तियाँ, नये नये स्वप्न जन्म ले रहे थे। ब्रिटिश-द्रोह और प्रतिहिंसा की कैसी प्रबल भावना उमड़ रही थी! आधा खुला—आधा छिपा—कभी खुला—कभी छिपा

आज़ादी का आन्दोलन चलता रहा। गुप्त दलों के संगठन हो रहे थे—फ़ौज और मज़दूरों में भर्ती और युद्ध के ख़िलाफ़ पर्चे बाँटे जाते थे—जगह जगह पर हथियार जुटाये जा रहे थे। मित्र-राष्ट्रों में होते हुए भी देश की दृष्टि में अँगरेज़ धुरी राष्ट्रों की भाँति ही अन्यायी और दंडनीय थे। शायद ही कोई स्थान बचा हो जहाँ झंडे न फहराये गये हों और आज़ादी का एलान न किया गया हो।

पर अब आक्रमण का तूफ़ानी दौर धीमा पड़ रहा था। दमन की चक्की चलनी आरम्भ हो गयी थी। रक्तपिपासा-कट्टरता, नृशंसता, कायरता के साथ भारतीय मानवता की पसलियों को बारूद से भूना जा रहा था। लाठी-चार्ज और साधारण मारपीट का अन्दाज़ नहीं लगाया जा सकता। चारो ओर अमानुषिक बर्बरता का प्रदर्शन कर सरकार अत्याचार की अपनी क्षमता से लोगों का मनोबल तोड़ कर प्रत्येक संभव उपाय से आतंक फैलाना चाहती थी। जहाँ जहाँ अँगरेज़ी राज्य का ख़ात्मा कर दिया गया था वहाँ वहाँ दानवीय ज़ुल्म कर उसे फिर से स्थापित किया जा रहा था। पेड़ों में लटका लटका कर आदमियों, औरतों, बच्चों को पीटा जा रहा था। लेकिन जनता निर्भीक थी। पुलिस के अत्याचार और फ़ौजी शासन भी आन्दोलन को समाप्त न कर पा रहे थे। वह धीरे धीरे गुप्त होता जाता था। जनता निडर होकर सामने मुकाबला करती थी पर गुरिल्ला नीति भी अपनाती जाती थी। संगठन और अनुशासन की ओर उसकी प्रवृत्ति बढ़ती जाती थी। जहाँ जहाँ आन्दोलन दब गया था वहाँ वहाँ भी जनता उसके साथ एक सहयोगी आन्दोलन चलाती रही जो ध्वंसात्मक और हिंसात्मक रूप लिये रहा। उस के ज़ाहिरा रूप से यह भीतरी रूप कहीं ज़्यादा खतरनाक और विदारक था।

लखनऊ से दूसरे ही दिन प्रतिमा चल पड़ी। पूरे जिले में उसने गुप्त रूप से महीनों दौड़ धूप और अथक परिश्रम करके ऐसा संगठन कर लिया था कि एक बार वह स्वयं अपनी और ज़िले की तैयारी पर मुग्ध हो जाती थी। इस समय वहाँ प्रतिमा और उसके दल का गुप्त नेतृत्व

था। बाहर से देखने में कान्ग्रेस और उसका प्रभाव पिछले दमन के फलस्वरूप खत्म हो चुका था। भीतर भीतर दूसरा हमला करने की—पहले से अधिक भयावना और खूनी हमला करने की योजना बन चुकी थी। प्रतिमा ने लौट कर फिर चारो ओर दौड़ना और अपने सहकारियों को दौड़ाना शुरू किया। ज़िले से फ़ौज और अतिरिक्त पुलिस जा चुकी थी। अधिकारी निश्चिन्त थे और जनता के टूटे मनोबल के दुबारा कभी न जुड़ने की आशा किये बैठे थे। उन्हें न मालूम था जन-ज्वाला का नया ज्वालामुखी भीतर-भीतर लावा एकत्र कर रहा है। दो दिन के बाद बलराज और आरती तथा लखनऊ से आरती के दो चार साथी आ जाँयगे। वह उत्सुकतापूर्वक दो दिन बीतने की बाट जोहने लगी। भीतर भीतर उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न था। पूरे ज़िले पर एक साथ हमला होगा। महीनों घूम घूम कर उसने वहाँ की जनता में यह मानसिक तैयारी पैदा की थी·····निराशा के मोटे काले पर्दे को चीर कर आशा और नवोत्साह की दोहरी दीप्ति से उत्तेजित किया था। फिर लोगों के दिल में आग—हृदय में तड़प—रगों में खून और जिगर में नया जोश था। एक एक नवयुवक हँसते हँसते, मृत्यु को वरमाल की तरह अंगीकार करने के लिये तैयार था। लोगों की यह मनोदशा आसानी से न हो पाई थी। इसके लिये प्रतिमा और उसके दल के लोगों ने घर घर घूम कर तैयारी की थी—अलख जगाई थी। अब वे लोग सब प्रकार के विचारों और संकोचों को भूल खुल कर काम कर रहे थे। सारा ज़िला—एक एक गाँव के लोग जानते थे कि ये लोग घूमते फिरते हैं·····नये आन्दोलन की तैयारी कर रहे हैं पर किसी ने कभी कोई खबर पुलिस तक नहीं पहुँचायी। पिछले अत्याचारों की स्मृति से जहाँ एक ओर लोग डरे हुए थे वहाँ नवयुवकों के भीतर प्रतिहिंसा की ज्वालायें भी थीं। प्रतिमा ने उन ज्वालाओं को इस तीव्रता और ऊँचाई के स्तर पर पहुँचा दिया था कि आज वे आकाश की छाती चीर कर ऊपर से बरसती हुई जलाना चाहती—जलाते हुए बरसना

चाहती थीं। जनता के भीतरी आवेग का ओर-छोर न था।

सुबह सुकरू के चबूतरे पर एक पुलिस वाले के स्थान पर कई को देख लोग हैरान रह गये। पूरी कोठी फिर चारो ओर से घिर गई··· ·लगभग पूरा थाना वहाँ आ गया। सुकरू घर के बाहर निकले। यह नयी पहरेदारी और सरगर्मी उनकी समझ में न आई। पर अब वे पहले के सुकरू न थे जो पुलिस को देख कर भीतर भीतर पीपल के पवन प्रताड़ित पत्ते की तरह काँपने लगते थे। अब वे प्रतिमा और उसके दल के लोगों के प्रभाव से बिलकुल बदल गये थे। बोले—'क्या बात है जमादारजी! आज इतना पहरा क्यों है! कल तक तो आप अकेले थे। आज जैसे एक नया थाना खुल गया हो। ज़रूर कुछ कारण है। कोई नयी बात हो गयी क्या!'

पुलिसवाला इस बेवकूफ को अपनी दिलबस्तगी का सामान समझता था। दिन भर एक स्थान पर बैठे बैठे अपने मनोरंजन के लिये इस खफ़ीफ़ से देहाती को छोड़ उसे अन्य कोई व्यक्ति वहाँ सुलभ न था। सुकरू से वह बहुत-सी भीतरी बातें बता दिया करता था—कुछ अपने रोब के मद में आकर और कुछ उसे पूरा दहकानी समझ कर। उसे पता न था वे ही बातें कितनी होशियारी से सुकरू प्रतिमा के दल के पास पहुँचा देते थे। बोला—'रात तार आया है। महमूद जेल से निकल भागा है। सरकार मुकदमा चलाने की पूरी तैयारी किये बैठी है पर मुज़रिम सबकी आँखों में धूल झोंक कर उड़ गया। जेलर और वहाँ के वार्डरों का जो हाल होगा वह भगवान जाने। हम लोगों की भी मुसीबत आ गयी। रोज यहाँ से ज़िले की कोतवाली में रिपोर्ट देनी होगी।'

सुकरू भीतर भीतर प्रखर अन्तर्ज्योति से उद्भासित हो उठे। महमूद भैया के घायल होने—बहरानी के मारे जाने आदि घटनाओं का पूरे विस्तार से उन्हें पता था। वही घायल महमूद भैया अच्छे होते ही जेल से निकल भागे·····कमाल है। इतनी बली सरकार को बेवकूफ़

बना कर बाहर निकल भागना····· सुकरू का पेट फूलने लगा। कैसे यह समाचार प्रतिमा और उसके आदमियों तक पहुँचे। अपने मनोभावों पर अधिकार करना सुकरू सीख चुके थे। गाँव में हुई फ़ौज और पुलिस की अराजकता गुन्डेशाही ने उन्हें होशियार और सतर्क कर दिया था। वेदना और यातना में सुधार और परिवर्तन की वैयक्तिक शक्ति तो होती ही है—उसमें एक सामूहिक प्रभाव भी होता है जो मनुष्य के संस्कारों को बिलकुल नए रंग में रँग देता है—नये स्वरूप में ढाल देता है। सुकरू ने अपनी आँखों से गाँव में पशुता का तान्डव नृत्य देखा है ·····निरीह—निर्दोष स्त्रियों, बच्चों, बूढ़ों पर ज़ुल्मसितम के दर्दनाक, रोंगटे खड़े कर देने वाले दृश्य देखे हैं। मार-काट, लूट-मार, अग्निकान्ड और स्त्रियों पर बलात्कार—क्या क्या उन्होंने नहीं देखा··· ··सुना ? उनकी अध-बूढ़ी औरत फ़ौजवालों की पाशविकता का शिकार होकर··· ··उनके द्वारा भ्रष्ट की जाकर दुबारा उनकी आँख के नीचे नहीं पड़ी। उस दिन से उसका पता नहीं चलता। लोगों का कहना है—अपना काला मुँह दुनिया को फिर न दिखाने का अभिमान और लाचारीभरा संकल्प लेकर वह गंगा में कूद पड़ी है। नारीत्व का यह निर्मम अपहरण क्या सुकरू जन्म-जन्म तक भुलाये भूल सकेंगे ? इस तरह के न जाने कितने सुकरू पूरे ज़िले —प्रान्त—देश में हैं जो अपने ऊपर हुए ज़ुल्म की भट्टी से गुज़र कर बिलकुल बदल चुके हैं। आज वे भस्मावृत अंगारे हैं।

सुकरू ने खीस निकाल कर कहा—'क्या उन्हें पता न होगा गाव में उनकी कितनी सरगर्मी से तलाश हो रही है। यहाँ भला वे क्यों आने लगे ? कब तक बाहर बच कर रहेंगे ? सरकार की प्रभुता के सामने कौन अपने को बचा सकता है। यहाँ की ओर से आप बेफ़िकर रहिए। मैं आज से और चौकन्ना रहूँगा। आप पहले की तरह आराम करिये। चारो तरफ़ मैं नज़र रक्खूँगा ? फौरन खबर दूँगा।'

सिपाही फूल कर कुप्पा हो गया। पुलिस का इतना गहरा रोब है! कुछ देर इधर उधर भी बातें कर वह थाने पर चला गया। वहाँ

दारोगा ने उसे फटकार बताई और ड्यूटी पर मुस्तैद रहने का सख़्त हुक्म दिया तो वह खिसिया कर फिर वहीं लौट आया। इस बीच सुकरू इधर उधर से निगाह बचा महमूद की कोठी में घुस राम लाल के साथ एक कोठरी में बैठे फुसफुस कर रहे थे। रामलाल ने कहा—'अभी बहनजी (प्रतिमा) के पास खबर भेजता हूँ। तुमने यह मार्के की खबर बताई। हम लोग भाँप न पाते। सुनते सुनते कई दिन लग जाते। गरम खबर है कि बड़े भैया आकर जल्द मोर्चेबंदी करने वाले हैं। इस बार जो न हो जाय थोड़ा है। अब महमूद भैया छूट गये हैं। यहाँ वे आयेंगे तो नहीं पर अगर दिल न माना और चले ही आये तो हम लोगों को हर प्रकार से उन्हें बचाना होगा। अपने जीते जी हम उन्हें गिरफ़्तार न होने देंगे। तुम बाहर जाओ!'

सुकरू बाहर निकले तो वही सिपाही चबूतरे पर खड़ा रह रह कर ऊपर की मंज़िल की ओर भाँपने का यत्न करनेवाली दृष्टि से देखने लगता था। सुकरू को भीतर से निकलते देखकर बोला—'क्यों बे पंडित, कहाँ गया था? किसके पास? मेरे यहाँ से हटते ही तुम कोठी के अन्दर!'

सुकरूने वैसे ही खींस बा कर कहा—'गोबर के फेर में कल से हूँ। कहीं मिलता नहीं। अब पूरा घर मुझे लीपना पड़ता है। क्या क्या करूँ—क्या क्या न करूँ! जाऊँ - अब गाँव का चक्कर लगाऊँ! सिपाही अपनी खिसियाहट को छिपाने की चेष्टा करने पर भी छिपा न पा रहा था। उसकी मुद्रा से निराश झुँझलाहट की बेबसी टपकी पड़ती थी। उसे लगता था—अब उन लोगों की ज़िम्मेदारी का अन्त नहीं। जब तक महमूद का पता नहीं लगता तब तक रोज़ ज़िले की कोतवाली से सख्त धमकियां आयेंगी—दारोगा अपनी खिसियाहट कान्सटेबलों पर उतारेंगे। सिपाही अधीरता के साथ सुकरू के चबूतरे पर चहलक़दमी कर रहा था। सुकरू सहमते सहमते एक ओर चले गये। पर उनका मन चंचलता और उल्लास से उछल रहा था।

महमूद भैया जेलवालों की आँख में धूल झोंक कर भाग निकले। बिना गाँव आये उनसे रहा न जायगा। उन्हें कैसे बचाया जाय! कैसे वे शमीम बीबी से मिल भी सकें और किसी को कानो-कान ख़बर न हो·····सुकरू सोच रहे थे। वे जानते थे आज से रात भी महमूद की कोठी पर पुलिस की निगहबानी रहेगी और कान्सटेबिल बदल बदल कर पहरा देंगे। लेकिन उनके घर के पीछे जो दरवाज़ा है उसका पता महमूद भैया को है। महमूद पहले उससे मिल कर ···· वहाँ का हालचाल लेकर अपनी कोठी में प्रवेश करने और बहिन से मिलने की बात सोचेगा। सोचते विसूरते सुकरू चले जा रहे थे, उनका मन गहन चिन्ता में लीन था। रामलाल प्रतिमा और उसके दल के लोगों के पास यह खबर पहुँचा देगा। पर सुकरू को रह रह कर यह लालसा होती थी कि वे जाकर गांव में घर घर में यह घोषित कर दें कि महमूद भैया जेल से भाग निकले हैं और गाँव में आये बिना वे रह न सकेंगे। गाँव वालों पर हुए अत्याचारों और उनके अपमानों का बदला लेने के लिये ही वे जेल से भाग निकले हैं। रास्ते में जो जो मिला—जिसके लिये सुकरू जानते थे कि वह प्रतिमा के दल से सम्बन्ध रखता है और सरकार का विरोधी है (ऐसे आदमियों की तलाश करने की ज़रूरत न थी क्योंकि वहाँ का प्रत्येक युवक इस समय सरकार के विरुद्ध नफ़रत से उत्तेजित था) उसे सुकरू ने यह संवाद सुनाया।

प्रतिमा के दल के लोगों ने यह सुना तो उछल पड़े। हर्ष और विजय के मद से सब की छाती फूलने लगी। सभी के हृदय में यह आशा बलवती हो उठी कि महमूद अब उनसे आ मिलेगा। और कहीं वह जा नहीं सकता। वह गाँव में आयेगा ····संघर्ष का संचालन करेगा। सब मन ही मन भगवान से प्रार्थना कर रहे थे कि महमूद की रक्षा करें। महमूद कैसे भीषण पहरे और सन्तरियों की आँख बचा कर भागा होगा यह सबके लिये एक पहेली थी। प्रतिमा को दूसरी चिन्ता हो रही थी। आरती और बलराज

का गाँव आना अब सुगम न होगा। उन पर सी० आई० डी० वालों की कड़ी दृष्टि रहेगी। ये लोग चलेंगे तो इनके पीछे जासूस ज़रूर रहेंगे·····यहाँ आते आते कहीं वे फँस न जायँ! प्रतिमा का हृदय धड़कनों से भर गया। सुख और आशंका का विचित्र मिश्रण उसके हृदय में हो रहा था। वह क्या करे·····कैसे आरती और बलराज को यहाँ सुरक्षित ले आये!

बलराज और आरती के सामने सचमुच वहाँ नई समस्या खड़ी हो गयी थी। प्रत्येक समय उन्हें आभास होता था कि वेश बदल बदल कर लोग उनके मकान के चारों ओर घूमा करते हैं·····बड़ी ही सतर्कतापूर्वक निगरानी रखते हैं। सारे शहर में महमूद के भाग निकलने से तहलका मच गया था। चारों ओर स्टेशनों और पुलिस के अड्डों पर खबर भेजी जा चुकी थी। अधिकारी हैरान थे कि कहाँ से कैसे महमूद निकल भागा। जिस बात की उन्होंने कभी आशंका न की थी वही घटित हो गया। ज़मीन उसे निगल गई या आस्मान उसे हवा की लहरों पर बिठा कर उड़ा ले गया! उनकी समझ में कुछ न आता था। बाहर सिपाही भरी बंदूकें लिये पहरा देते रह गये। ताला ज्यों का त्यों बन्द रहा पर महमूद ग़ायब! पुलिस उस पर मुक़दमा चलाने जा रही थी। ऐसे ऐसे भीषण अभियोग उस पर प्रमाणित करने की तैयारी कर ली गयी थी कि न्यायालय से प्राणदंड मिलना अवश्यम्भावी था। पर जिसके भीतर आज़ादी की धूनी धधक रही हो उसे जेल की दीवारें कितने दिन बन्द रख सकती हैं। शहर में जहाँ जहाँ महमूद के होने की संभावना हो सकती थी वहाँ वहाँ पुलिस ने छापा मारा। शाम को आरती और बलराज के मकान पर ख़ानातलाशी हुई। वहाँ कुछ न मिला। महमूद के भागने का संवाद सुबह के अखबार में पढ़ने के बाद ही बलराज ने अपने पास के सारे संदेहास्पद कागज़ जला दिये। पुलिस आई—उनके सामान को तितर-बितर कर·····खरी खोटी सुनाकर चली गई। उसी दिन रात को आठ बजे मकान में ताला लगा कर बलराज और

आरती निकल पड़े। अपना ठिकाना बदल कर वहाँ से गाँव पहुँचना चाहते थे। कौन जाने पुलिस उन दोनों को हिरासत में ले ले और प्रतिमा की सारी तैयारी खंडित हो जाय। वहाँ संघर्ष हो भी तो पहली बार की तरह इस बार भी वे उससे दूर पड़े रहें। लाल अपने नाना की कोठी पर जा चुका था। बलराज ने तांगा किया। आरती पीछे बैठी···बलराज तांगे वाले के पास बैठ उसके हाथ में दस रुपये का नोट चुपके से पकड़ा कर कुछ बोले। वे जानते थे पुलिस के गुप्तचर ज़रूर उनकी गतिविधि जानने का प्रयत्न करें। कई घन्टे इधर उधर निरुद्देश घूमते रहने के बाद·····अकारण न जाने कहाँ कहाँ की सड़कों पर चक्कर काटने के बाद जब उन्हें विश्वास हो गया कि अब इनका पीछा करने वाले इधर उधर छूट चुके हैं तब लगभग साढ़े दस बजे दोनों डालीगंज में एक अड्डे पर पहुँचे जहाँ आरती आती जाती रहती थी। वहाँ अभी पुलिस की निगाह न पहुंची थी पर वहाँ भी जो दो चार व्यक्ति गुप्त रूप से काम करने वाले रहते थे उनके बीच महमूद के भाग निकलने की चर्चा छिड़ी थी। सब को आश्चर्य और गर्वमिश्रित आनन्द का अनुभव हो रहा था। महमूद आकर शिथिल पड़ते हुए आन्दोलन के क्रम में जान फूँक देगा। आरती और बलराज ने अपने साथियों भविष्य की योजना बताई ····तीसरे दिन सुबह वहाँ से प्रस्थान करने का अपना निश्चय भी सुना दिया। पर आरती के मन में रह रह कर महमूद से मिलने की इच्छा प्रबल हो उठती थी। महमूद इसी प्रकार उससे मिलने··· गले लगाने के लिये तड़प रहा होगा। उसके सामने अभी अपने को छिपाने और बचाने का सवाल होगा। इस सारी चिन्ता और अकुलाहट के बीच क्या उसे आरती से मिलने की लालसा न होती होगी। कैसे आरती का मन इस पर विश्वास कर ले! महमूद के घायल होने के बाद इन लोगों ने अपने मिलने जुलने और काम करने का यह नया अड्डा बनाया था। महमूद को इसका पता न होगा। आरती रह रह कर यह स्थिर

करने का यत्न कर रही थी कि महमूद कहाँ जायगा—अभी वह लखनऊ में होगा। इतनी जल्द लखनऊ से कैसे जायगा। लखनऊ से बाहर निकल कर जाने में उसे अभी कितना खतरा है यह क्या वह जानता न होगा!'

दो दिन वहाँ रह कर और शहर में उन्हें जो जरूरी काम करने थे उन्हें पूरा कर तीसरे दिन सुबह बलराज आरती को बुर्का पहना स्वयं मुसलमान का वेश बनाकर ट्रेन पर आ बैठे। आरती को उन्होंने जनाने डिब्बे में बिठा दिया। पुलिस की छानबीन जोरों पर थी। प्रत्येक ट्रेन और कम्पार्टमेन्ट में महमूद की तलाश की जाती थी। आरती का मन न जाने क्यों लखनऊ छोड़ने में भारी हो रहा था। उसके प्राण की तलहटी में छिपा कोई कहता था—महमूद यहीं है—लखनऊ में किसी तहखाने में छिपा पड़ा है·····तुमसे मिलने का सिलसिला जोड़ा करता है। इस समय आरती की कितनी जरूरत उसे महसूस होती होगी। पर आरती किस मुँह से—किस हृदय से भाई के साथ पर्वतपूर जाने से इन्कार करे! प्रतिमा दीदी, वहां प्रतिक्षण उन लोगों की प्रतीक्षा में अधीर होगी। उनसे जो वायदा किया है उसका पालन करना है। बुर्के के भीतर आरती को न जाने कैसा लग रहा था। अभी पूरी यात्रा शेष है। गाड़ी चली भी नहीं। उधर बलराज बैठे मन ही मन लखनऊ से अंतिम विदा ले रहे थे। महमूद के जेल से भाग निकलने की घटना इतने जल्द घटित हो जायगी यह उन्हें आशा न थी। दो एक पुलिस वाले उनके डिब्बे में आये और गहरी निगाह से देखते हुए चले गये पर किसी ने कुछ कहा नहीं। बलराज निर्विकार दृष्टि से चारो ओर देख रहे थे। जब गाड़ी चल पड़ी तो उन्होंने मन ही मन निश्चिन्तिता की साँस ली। पर आरती अधीर और चंचल है। उसका मन आज घन की तरह भारी हो होकर उसी के ऊपर अविराम प्रहार करता चल रहा है। उसे महमूद के इस प्रकार भाग निकलने पर अभिमान है पर उससे बड़ी रोम रोम को बेचैन कर देने वाली वेदना की पैनी लौ भी

भड़क उठी है। महमूद को जब पता लगेगा कि वह भैया के साथ गाँव की ओर चल पड़ी है तब क्या वह बिना वहाँ गये मानेगा। तब·····तब क्या वह अपनी रक्षा कर सकेगा? महमूद का दिल उसे देखने और बात करने के लिये कितना बेताब होगा? जिस यातना को वह इस प्रकार आन्दोलन को आगे बढ़ाने के काम को अपने ऊपर समेट समेट कर भूली रहती थी वह आज महमूद के जेल से भाग निकलने का संवाद सुन कर कैसे प्रबल प्रभंजन-तुल्य वेग से घहरा उठी है! वह कैसे अपने को वश में रक्खे? आज महीनों बाद जब अपने सपनों के अधिपति को देखने·····मिलने का अवसर मिला था तब वह भागी जा रही है। माना कि उसका जाना उसी महान उद्देश्य की पूर्ति को लेकर है जिसके लिये महमूद तन-मन धन से कुर्बान हो चुका है। फिर भी मनुष्य का हृदय कितना भूखा-प्यासा होता है। उसके खून की सुर्खी अत्यधिक यान्त्रिक हो जाने पर भी फीकी नहीं पड़ती। तूफानों के बीच वह अपने अहसास को नहीं छोड़ पाता—संगीनों के साये में भी उसकी मधुता मुस्कराती है और पिपासा टूटे अरमानों का मर्सिया गाती रहती है। अपनी प्यारी से प्यारी साध की अर्थी ढोते हुए भी वह आशा के एक हलके—अतिशय हल्के कंपन से ही आत्मविसंज्ञ और आत्मलीन बन बैठता है। आरती का मन एक अनहोने अभिमान से तना आ रहा है। कितना बहादुर और दिलेर है उसका प्रेमी! उसका जीवन केवल तरन्नुम की कड़ी नहीं—आत्म-बलिदान का जलता अंगार भी है। कोई भी सच्चा देश-भक्त इस समय कैसे जेल के अन्दर बन्द रह सकता है? उसे बाहर आना पड़ेगा और रण में जूझनेवालों को नई प्रेरणा और प्रबोध का पुन्सत्व प्रदान करना होगा। जिसे उसके हृदय ने वरण किया है वह प्राण की परवाह न कर अपने पथ पर बढ़नेवाला सच्चा सेनानी है। न जाने कितनी खाइयों और पहाड़ियों को पारकर उसमें अपने पीछे चलने वालों को इस विजयिनी मंज़िल तक पहुँचा दिया है। यहाँ विश्वास और संकल्पपूर्ण आशा का लाल आफ़-

ताव अपनी रोशनी से कण कण को आलोकित किये है। एक बार — केवल एक बार वह उसके पैर पकड़ कर उसका वदन-अभिनन्दन करना चाहती है। पग पग पर रक्त का इतिहास लिखने वाली उसकी गति के स्रोत उन दोनों पैरों को वह जी भर पूज लेना चाहती है। जो मृत्यु के मुख पर पड़े नक़ाब को उलट कर ·····उसके भयावनेपन से टक्कर लेकर न केवल जीवन की दिशा में लौट आया वरन सारे बन्धनों को तोड़ कर निकल भागा वह उसका प्रेमी है—उसके प्राण का धन है!

आज गाँव लौटते समय आरती के मन में तरह तरह की भावनायें उठ रही हैं। आज वह वहाँ से विदेशी सरकार की सत्ता को निर्मूल करने के लिये जा रही है। उसके सामने अब वह ध्येय है जो आज अगणित बलिदान और रक्तदान की परम्परा पर खड़ा हुआ क्रान्ति के पथ का निर्देश कर रहा है। शहीदों के रक्त से रञ्जित आँचल वाली भारत-माता अपने त्राण के लिये जन जन को पुकार रही है। ऐसे समय प्रेम और आसक्ति की सुधियों की माला पिरोना गुनाह है—सब से बड़ा और अक्षम्य! जहाँ जंजीरों की झनन-झनन में इन्किलाब के गीत पल रहे हों वहां हृदय की कोमलता को जगाना·····जागते रहने देना कौन सी समझदारी है? यह समय अभिलाषा की परिपूर्ति का नहीं, स्वतन्त्रता की उपलब्धि के लिये फूट फूट कर अपने जीवन की बलि देने का है। आज़ादी के परचम की छाया चारो ओर नाच रही है। देश के अङ्ग अङ्ग से खून बह रहा है। उसके माथे पर चोटों के निशान हैं—उसका शरीर ताजे घावों से भरपूर है। कैसे कैसे पाशविक अत्याचार किये गये हैं! अगणित शीश उसके चरणों पर चढ़ चुके हैं और चढ़ रहे हैं। अत्याचारी राक्षसों का दल शोणित पी पी कर पागल हो गया है। वह प्रतिशोध की उन तलवारों को नहीं देख पा रहा जो म्यानों के भीतर छिपी हैं। दिल से जो अरमान शोले बनकर निकल रहे हैं—प्राण पर छाया हुआ जो तूफान ध्वंस के गोले छोड़ रहा है उसे इन आततायियों ने कब देखा—कहाँ देखा है? देश के कण-कण में सोया हुआ 'एटम' बम फूटने के लिये अकुला रहा है।

इन असंख्य विस्फोटों के बाद देश में क्या बचेगा—क्या नहीं—यह कहना कठिन है।

गाड़ी पूरी गति से भागी जा रही है। आरती का उससे कहीं चंचल मन इस समय उसके साथ नहीं भाग पा रहा। वह रह रह कर पीछे की ओर लौटता है जहां से गाड़ी चली है। आज महमूद के लिये वह जो अनुभव कर रही है वह पहले की जीवन-संचित अनुभूति से सर्वथा भिन्न और नूतन है। अब तक प्रेम को वह विस्तार—अपने में न अँट सकने वाली प्रसरणशीलता मानती रही है। पर आज उसे रह रह कर महमूद की बाँहों में बँध जाने की साध होती है। आज महमूद के मिलने पर क्या वह सब कर सकेगी जो इतने दिनों तक बराबर करती आई है? अपने शरीर का एक एक स्पर्श देने में वह उसके साथ कितनी कंजूस रही है। आज उसे लगता है—वह अपनी इस यौवन की जागृत और विह्वल सुगंन्धि से गमकती देह ले जाकर उसके पैरों पर डाल दे और कहे—मेरे मालिक—यह तुम्हारी है। इसके भीतर धड़कने वाला हृदय और उड़ने वाली आत्मा तुम्हारी है। चाहो इसे रख लो—चाहो फेंक दो। मैं कुछ न कहूँगी। पहले तुमसे अपने जिस्म को जितना बचाती रहती थी उतना अब तुम्हारे नजदीक ले आई हूँ। कितना बड़ा परिवर्तन आज वह अपने सोचने की दशा और दिशा में अनुभव करती है! उसके मन और आत्मा के सघर्ष का आज अन्त हो गया है। पाप और पुण्य—सामाजिक सौख्य और असौख्य जीवन की लिप्तता और अलिप्तता की कोई द्विधा आज उसके सामने नहीं है। आज वह समर्पण की तरङ्गों से भरी हुई नारी है! कपोलों पर अरुणाई आने के साथ से ही—जीवन में बसन्त के आगमन के फूल खिलने शुरू होते ही प्रेम की परिपूर्णता का अनुभव वह करती आई है। पर इस अभिभूत कर लेनेवाली उपलब्धि ने उसे कभी असंयमित और आत्मज्ञान—अवसित नहीं होने दिया। आज वह इन सारे सोच-विचारों से परे हैं। आज उसे रह रह कर अपने उन व्यवहारों पर क्लेश होता है जो वह मह-

मूद के साथ किया करती थी। महमूद की कितनी नन्ही-नन्हीं मासूम हसरतों ने उसकी आँख के सामने कुम्हला कुम्हला कर अपना दम नहीं तोड़ा! कभी उसने उन्हें कोई सहारा दिया! कभी उसने महमूद के चंचल चिड़िया जैसे हाथ को अपने रुखसारों पर खेलती काकुलों को सँभालने की इज़ाजत दी! क्यों वह तब महमूद को इतनी दूरी पर रखती थी! क्या यह निकटता दूरी थी! क्या इसके भीतर पवित्रता का वह महिम मोह था जो मानव को महान उत्सर्ग की प्रेरणा देता है! आज वह किस आवेश और उत्तेजना में डूबी पड़ी है! आज कैसी आग उसके अन्दर धधक उठी है····· कैसी भूख किसी ने जगा दी है·····कैसी प्यास तड़पा दी है····· वह समझ नहीं पा रही·····इतनी पढ़ी लिखी और वयशील होने पर भी समझ नहीं पा रही। यह मन की चंचलता और शरीर की तन्मयसमर्पण-कामना उसे कहाँ ले जायगी! यह बात नहीं कि पहले न उठती थीं। पर वह उन्हें दबा लेती थी। दबाने से कामना की वे तरंगें दब जाती थी। आज वे दबाने से नहीं दबतीं और प्रबल वेग से उठती है। बुर्के से ढँके अपने शरीर को आरती भली प्रकार देख नहीं सकती पर उसकी इन लहरियों को रोकने की शक्ति उसमें नहीं। इस आग को शान्त करने का एक ही उपाय है। होश सँभालने के बाद से आरती इस आग में जलती आई है। केवल साहसी वीर धैर्य और अमिट लगन के साथ निग्रह की ज्वाला में जल सकते हैं। पग पग पर डरने वाले तुच्छ दुर्बल प्राणी में जलने की शक्ति कहाँ! आरती को लगता है उसे अब यह आग शान्त करनी होगी। उसमें अब अधिक जलने की शक्ति नहीं। उसका सारा मनोयोग और निवृत्ति का निर्वाह झूठा लग रहा है। वह महमूद के चौड़े सीने में अपने को उड़ेल देना चाहती है। तभी उसकी भूख की तड़पन शान्त होगी। तभी उसके अतीत की यह खिंचावभरी प्रतिक्रिया सार्थक होगी। उसके मन का यह उद्वेलन तभी शान्त होगा। आज तक जिस सुख से वह अपरिचित रही है उसे अब वह लूटेगी—दोनों

हाथों से लूटेगी—जी भर भर कर लूटेगी। स्वयं उसे पाने का इतना चाव नहीं है जितना अपने बहादुर साथी की, मुद्दत से स्नेहदान और स्पर्शदान माँगती हुई हसरतों की तपिश बुझाने का ख्याल है। वीर सैनिक के क्रोध की तरह स्थिर, संयत, शान्त, गम्भीर आरती आज पुलक और प्रवाह की अतिशयता से चंचल हो उठी है।

आरती सोच रही थी—महमूद किस धातु का बना है। जब जब वह विह्वल आकुलता और स्नेह की परिपूर्ण स्फूर्ति से उसका शरीर छूने के लिये जिस प्रेरित गति से आगे बढ़ा—उसी प्रेरित गति से वह आरती के मना करने·····संकोच की लजीली तमतमाहट दिखाने पर पीछे हट गया। वह न मानता तो क्या आरती में इतना सामर्थ्य था कि उसे रोक पाती! कदापि नहीं। उसे महमूद के इरादों के सम्मुख झुकना पड़ता। जिसे उसने अपनी समस्त आशाओं और जीवन परिणतियों का केन्द्र मान लिया था उससे वह कब तक ···कितना कतरा सकती। पर महमूद स्वयं मूर्तिमान ज्वाला है। उसमें आग है पर आग से अधिक प्रकाश है। कामुक लावण्य के ज्वार से अधिक उसमें साधक की एकनिष्ठता और आत्म-अस्वीकृति है। वह प्रेम और प्रेमिका के मनोभावों के सौन्दर्य की रक्षा करना जानता है। ज्वालाओं के मधुर नर्तन—अग्नि के अविरल निमंत्रण के बीच वह प्रेमिका के अनुनय पर उसके आलिंगन से दूर रह सकता है। उसके आँचल का एक सिरा अपने हाथ में लेकर आँख से छुलाने का निरीह सात्विक मोह संवरण कर सकता है। जो प्रतिबन्धों में बँधा हुआ भी निरन्तर विकसित न हो सका—अपने धधकते अंगारों को तृप्ति के जल से न बुझा कर उनकी तृष्णामय सोंक से अपने जीवन को उष्ण और आवेगमय न बनाये रख सका वह स्नेह कैसा? अपने धुएँ से अपना ही दम घुटने लगे—अपनी लपटों से अपना ही शरीर जलने लगे पर पानी का सरोवर आँख के सामने रहते हुए भी एक एक बूँद के लिये छटपटा कर सारी

अन्तर्मुख प्रवृत्तियों को बहिर्मुख कर लेना! सचमुच महमूद आदमी से बढ़ कर है।

आरती को रह रह कर विदारक यन्त्रणा हो रही है! उसने अपने प्रेमी को कितना रुलाया है—कितना तरसाया है·····कितनी कठोरता के साथ उसकी कोमलतम उमंगों को ठुकरा दिया है। महमूद के तन-मन की वे सारी विसर्जित ज्वालायें आज आरती के अंतर में नाच उठी है। उसकी आत्मा रो रोकर भगवान से आत्म-निवेदन कर रही है—सुलगती हुई सिसकियाँ भरती है·····अपने सारे आत्मविरोधों और आत्मनिरोधों के लिये क्षमा माँगती है। महमूद के शरीर की सारी आग आज उसके मन में उतर आई है। जल्द से जल्द महमूद के निकट जाकर वह अपने इस दुराव का प्रायश्चित करना चाहती है। जितना उससे वह अब तक दूर रही है उतना ही उसके निकट जाकर अपने को उसकी पूजा में चढ़ा देगी.....

सोलह

जेल के भीतर महमूद का दिल निकल भागने के लिये फड़फड़ा रहा था। उठते बैठते चौबीस घंटे यही सोचा करता था। पर वह बिलकुल अकेला रक्खा गया था और दूसरे इतना कड़ा पहरा उस पर था कि वह टस से मस न हो सकता था। दिन में दो बार उसके सेल का दरवाजा खुलता था और खाना-पानी देने के बाद बन्द कर दिया जाता था। शौचादि की व्यवस्था उसी कोठरी में थी। महमूद को कोई तरीका नज़र न आता था। उसका मन रह रह कर पर्वतपूर के चारो ओर मँडराने लगता था। वहाँ क्या हो रहा होगा ···प्रतिमा और बलराज मिलकर वहाँ की विद्रोह-शिखा बुझने न देंगे पर कैसी तैयारियाँ इस बीच उन लोगों ने कर डाली होंगी! लखनऊ में आरती क्या कर रही है·····चारो ओर इतना सन्नाटा क्यों छा गया है! क्या देश के क्षुब्ध और आलोड़ित यौवन ने—सर-फरोश जवानी ने पराजय स्वीकार कर ली! क्या जन-समुद्र में

एक साथ आये हुए असख्य तूफ़ान एक साथ सो गये ! क्यों रोज पुलिस और जनता की मुठभेड़ नहीं होती·····क्यों जम जम कर सरकारी सत्ता पर हमले नहीं किये जाते ! फौज और पुलिस में बगावत फैलाने की चेष्टा क्यों नहीं की जाती ! क्या जनता की जलाई आग इतनी जल्द बुझ जाती है ! और देशों में तो नहीं बुझी ! क्या हमारा देश उनसे कम पीड़ित और सताया हुआ है ! क्या यहाँ लोगों ने कम अत्याचार और दमन—उत्पीड़न और जुल्म झेले हैं ! महमूद यह सब सोच सोच कर जल्द से जल्द पिंजड़े का पाश तोड़ बाहर निकल आना चाहता है। जो आग उसे ही उसे घेरे इस कमरे में बन्द है उसे वह दिगन्त तरङ्गों पर बिखेर देना चाहता है। कैसे वह संभव हो ····· कैसे वह बाहर निकल अपने साथियों से जा मिले ··· उनके बुझते दिलों को नई दीप्ति से उकसा दे·····

कई दिन से महमूद को पेचिश की शिकायत हो गई थी। कमरे में एक ओर शौच का प्रबन्ध था पर सफाई ठीक ठीक न होने के कारण वहाँ उसका रहना कठिन हो जाता था। सुपरिन्टेन्डेन्ट से उसने यह सब कह कर और बड़े ही विनीत भाव से कह कर बाहर निवृत्त होने जाने की अनुमति प्राप्त कर ली। लेकिन भरी बंदूक लिये सिपाही इतने पास खड़ा रहता था कि उसके शरीर की एक एक हरकत देख सकता था। कई दिन तक यह क्रम चलता रहा। महमूद की पेचिश ठीक हो गई पर बाहर शौच जाने का सिलसिला न बन्द हुआ। सिपाही वहाँ जितने थे वे सब मन ही मन महमूद के आकर्षक व्यक्तित्व तथा स्वभाव की मादक मिठास और उसकी कुर्बानी की चर्चा सुन सुन कर बड़े सदय और हमदर्द हो गये थे। महमूद ने इधर उन्हें और भी मीठी मीठी बातों से खुश कर लिया था। नतीजा यह हुआ कि महमूद रात-दिन कभी शौच के लिये कहता तो पहरे-का सिपाही उसे निकाल कर मैदान में बने शौचालयों में ले जाता आप कुछ दूर पर खड़ा हो जाता और महमूद निवृत्त होने के बाद उसके पीछे पीछे आकर जेल में बन्द हो जाता।

इधर महमूद बहुत दुर्बल हो गया था। इस कारण बीच में कुछ समय के लिये उसकी हथकड़ी-बेड़ी खोल दी गयी थी। उसकी चाल-ढाल में, बोल-बर्ताव में और व्यक्तित्व में एक राजसीपन था जो देखने वाले के मन में यह कल्पना भी न उठने देता था कि यह व्यक्ति कभी जेल से निकल भागने की चेष्टा करेगा। महमूद भीतर भीतर उस मनोवैज्ञानिक क्षण के आने की प्रतीक्षा कर रहा था जब जेल का सन्तरी उस पर पूर्ण विश्वास कर उसे निकल भागने की सुविधा देगा। कम्पाउन्ड की दीवार पर्याप्त ऊँची थी पर महमूद ने दिन की रोशनी में गौर से देख देख कर उसे पूरी तरह समझ लिया था। कहाँ से चढ़कर वह उस पार निकलने व कूदने की चेष्टा करेगा यह उसने सोच रक्खा था। सन्तरियों से वह घन्टों बातें किया करता·····उसके व्यक्तिगत जीवन में ऐसी दिलचस्पी दिखाता था कि अब वे स्वयं उससे बोलने और इधर उधर की बात करने को उत्सुक रहते थे। उनमें एक बैसवारी ठाकुर से उसकी विशेष रूप से पटती थी। बीच बीच में उसकी ड्यूटी बदल जाती थी पर वह फिर आ जाता था। महमूद पन्द्रह दिन से उसे नहीं देख रहा था। महमूद को मालूम था वह भाँग छानता है। कोई त्योहार ऐसा न होता था जिस दिन वह विजया की मात्रा दुगनी न कर देता हो। दुर्गा पूजा शुरू हो गई थी कि अष्टमी के दिन से उसकी ड्यूटी लग गई। महमूद ने उसी दिन रात को निकल भागने का संकल्प किया। सिपाही निश्चिन्त बाहर पड़ा सो रहा था। महमूद ने लगभग दो बजे, जब अँधेरा शुक्ल पक्ष की चन्द्रिका को समाप्त कर आकाश में पूर्ण कालिमा के साथ फैल गया था, भीतर कराहना शुरू किया। ठाकुर बाहर की बेंच पर पड़ा खर्राटें भर रहा था। सिरहाने भरी बंदूक जिसमें सङ्गीन लगी थी, रक्खी थी। कई आवाज लगाने के बाद वह जागा और नींद के वेग में बड़बड़ाया—'क्या है? टट्टी जाओगे? भीतर हो लो कल सुबह साफ करवा दूँगा। तंग न करो खाँ साहब!

महमूद ने गिडगिड़ा कर कहा—'अब तो बाहर ठीक रहेगा। मैंने तुमको नहीं जगाया। तीन बार यहाँ बैठ चुका हूँ। जगह नहीं रह गयी है। तकलीफ तुम्हें होगी मगर मैं फारिग होऊँगा। बड़ी मरोड़ है जमादार! लगता है आतें कट कट कर पाखाने के साथ निकल रही हैं।'

सन्तरी सँभल कर बैठ गया था। कोने में लालटेन जल रही थी। उठकर उसने सींकचों से भीतर देखा—महमूद बेचैनी से पेट दबाये कमर से झुका हुआ खड़ा था। उसे तरस आ गया। बोला—'आपने पहले क्यों न जगा लिया। यह कायदे के खिलाफ है। रात के इस वक्त मेरा सेल खोलना और आपको बाहर निकालना अगर अफ़सरों को मालूम हो गया तो मेरी शामत आ जायगी। दवा क्यों नहीं करवाते? कब तक यह चलेगा? महीनों से आप का यह सिलसिला चल रहा है!'

महमूद ने अत्यन्त कारुणिक भाव अपने मुँह और आँखों में लाकर कहा—'जेल के अस्पताल में ठीक दवा कब मिलती है! कैदी जिये चाहे मरे—उन्हें क्या? उनकी तनख्वाह में बल नहीं पड़ता। महीनों से दवा खा रहा हूँ। बीच में आँव का बनना बन्द हो जाता है तो दस्त रुक जाते हैं। पर फिर आँव बनने लगती है तो दस्त आने लगते हैं। देर न करो जमादार! तुम जाग पड़े हो तो खोल ही दो। वर्ना कपड़े खराब हो जाँयगे। मैं कल जेलर को दरख्वास्त दूँगा कि मुझे अपना इलाज प्राइवेट तौर पर कराने की इजाजत दी जाय। या अल्लाह! बड़ी तकलीफ है। या खुदा! सब का भला कर! इस तकलीफ से निजात दे।'

सन्तरी ने दरवाजा खोल दिया। महमूद बँधने में पानी लेकर बाहर निकला और लम्बे लम्बे डग भरते हुए आकर बमपुलिस में घुस गया। बाहर लालटेन रख कर और बंदूक सँभाल सन्तरी मुस्तैदी से खड़ा हो गया। नींद के मारे उसका बुरा हाल था। कुछ देर खड़ा रहने के बाद वह वहीं जमीन पर बैठ गया। लगभग

चालीस मिनट बाद महमूद जब बाहर निकला तब वह बैठा बैठा सो गया था। भाँग के खुमार में आदमी बेबस हो जाता है। महमूद ने कहा—'ठाकुर साहब! उठिये! मैं आ गया। बड़ी कमजोरी मालूम हो रही है। ऐंठन बन्द नहीं हुई। चलकर भीतर लेटता हूँ ·····खड़े नहीं रहा जाता। आप इतमीनान से आकर बन्द कर लीजिये। कहता कहता महमूद लम्बे डग बढ़ाता हुआ अपनी कोठरी की तरफ चला जो वहाँ से लगभग एक फर्लांङ्ग पर थी। ठाकुर साहब खुमार में झूमते हुए आगे बढ़े। कोठरी के दरवाजे के पास आकर महमूद अँधेरे में एक कोने में खड़े पीपल के पेड़ के तने से चिपट गया। बचपन में उसने आवाज बदलने की कला सीखी थी जो आज काम आ गई। पीपल का पेड़ उसकी कोठरी के सामने की दालान के ठीक किनारे पर था। ऊँघते हुए सन्तरी ने जब लालटेन लाकर कोने में रखी तो महमूद ने आवाज बदल कर—गोया वह कोठरी के अन्दर बोल रहा है—कहा—'बन्द कर लीजिये ठाकुर साहब! मैं अन्दर दाखिल हो गया हूँ। बड़ी तकलीफ हुई आपको। अल्लाह आपका भला करेगा।'

लालटेन से धुँआ अधिक निकल रहा था रोशनी कम। सन्तरी को न सूझा कि वह लालटेन हाथ में लेकर सीकचों से झाँक लेता या भीतर जाकर देख आता। बाहर निकलते समय महमूद ने कंबल के नीचे तह को इस प्रकार मोड़ कर रख दिया था कि धुँधले प्रकाश में यही मालूम होता था कि कोई लेटा है। नींद के झोंके में झूमते हुए सन्तरी ने ताला लगा कर सावधानी से कुञ्जी रख ली और बेञ्च से बन्दूक टिका कर लेट गया। मिनटों में ही खर्राटा बोलने लगा। महमूद साँस रोके दस मिनट वहीं खड़ा रहा। फिर बड़ी सावधानी से पेट के बल रेंगता हुआ लगभग पचास कदम निकल गया। बीच में रुक रुक कर साँस रोक वह सिपाही के खर्राटे सुनने लगता था। पचास कदम निकल जाने के बाद वह अन्दाज से दीवाल के उसी हिस्से की ओर बढ़ा जहाँ से कूद कर बाहर निकलने का उसने प्रोग्राम

बनाया था। पर बाहर सन्तरी होंगे उनका क्या होगा! वे ठाकुर साहब की तरह गाफ़िल न होंगे। महमूद को मालूम था आज उन लोगों ने गहरी भाँग छानी है। पर वे ठाकुर की तरह अपने कर्तव्य को न भूले होंगे। लेकिन दूसरा चारा न था। महमूद धीरे धीरे अन्दाज से ठीक जगह पर पहुँच गया और दीवार में बने गड्ढों का सहारा ले ऊपर चढ़ने लगा। तनिक सी आहट या आवाज किया धरा सब मिट्टी में मिला देगी! महमूद को लगा—अल्लाह उसकी मदद कर रहा है। कितनी आसानी से यह सब हो गया। आगे भी क्या इसी सहूलियत से सब हो जायगा? इतनी रात वह शहर में निकल कर कहाँ जायगा। शहर जेल से कई मील दूर था। महमूद के सामने अभी दीवाल से फिसलने का काम था। ऊपर किसी प्रकार वह पहुँच गया पर वहाँ लेट कर नीचे आने की तरकीब सोचना था। पास में न धोती है न लुंगी कि उसी का सहारा लेकर उतरा जाय। कूदने में गहरी चोट लगने·····हड्डी पसली टूटने का भय। महमूद ने कूदने की अपेक्षा फिसलना ठीक समझा। जिस्म छिल जायगा पर ज्यादा आवाज न होगी··· ··सन्तरियों को आहट मिलने का कम मौका रहेगा। बा र किसी प्रकार की चहलकदमी या सजगता की आवाज न सुनाई देती थी। तीन से ऊपर वक्त था····· सारी रात घूम घूम कर पहरा देने वाले भी निद्रालस हो चुके थे। महमूद अल्लाह का नाम लेकर दीवाल से नीचे फिसला। सपाट दीवाल थी पर नीचे सौभाग्य से घास थी जो बढ़ी हुई थी। बरसात के बाद अभी कटी न थी। महमूद धम्म से कूद नीचे गिरा। सारे शरीर पर एक कड़ा झटका लगा। आँख के आगे चारो ओर अँधेरा छा गया। कुछ देर आत्म-विसंज्ञ अवस्था में पड़ा रहा। ज़्यादा देर की गुञ्जायश न थी। चारो ओर सन्नाटा था। कहीं किसी प्रकार का खटका या अन्देशा न था। महमूद ने सहूलियत की साँस ली। उसके मन का सूखा पौधा आशा से हरा हो गया। वह जेल से भाग निकला। जब बलराज और आरती,

प्रतिमा और अन्य सैकड़ों साथियों से जाकर मिलेगा तो उनके भीतर उत्साह की भीषण लहर दौड़ जायगी। आरती को कितनी खुशी होगी! ब्रिटिश साम्राज्यशाही आखरी साँस ले रही है। उसकी कपाल-क्रिया करनी है। देश भर में घूम घूम कर जनता को स्वतंत्रता और समाजवाद के लिये जूझने का संदेश सुनाना है। यही रणघोष क्रान्ति का तूफ़ान उठायेगा। महमूद थोड़ी देर के लिये बेसुध हो गया ·····जनता के बढ़ते हुए क्रान्तिकारी आन्दोलन का स्वप्न देखने लगा। हिन्दुस्तान के किसान सदियों की गुलामी से छुटकारा पाने के लिये उठ रहे हैं। वे मुफ़्तखोर जमींदारों की जमीन पर कब्जा कर रहे हैं—घूमखोर साहूकारों का सर्वनाश कर रहे हैं—जमींदारों के गुंडों और साम्राज्यशाही की पुलिस को चुनौती दे रहे हैं। कोने कोने से क्रान्ति की लपटें उठ रही हैं। महमूद सँभल कर उठा··· ··फिर बैठ गया। पेट के बल रेंगता हुआ आगे बढ़ा। कुछ दूर जाकर उसने चारो ओर देखा—कहीं कोई न था। वह उठ कर खड़ा हो गया। सारी पीठ छिल जाने के कारण उधड़ कर जल रही थी। देह में कष्टप्रद तनाव था। पर मन पक्षी की तरह उड़ कर सब साथियों से मिल जाना चाहता था। अब वह जम कर क्रान्ति की बुझती ज्वालाओं को नवजीवन के सूत्र में गूँथेगा। देश के राक्षसी दुश्मनों का खात्मा करना है। अँगरेजों के जुल्म और शोषण के काले धब्बे देश के दामन से हटा देने हैं। जब तक यह कलमुँहापन है तब तक आजाद और सुखी हिन्दुस्तान की तस्वीर अधूरी रहेगी। विदेशी दानव हमें चबाये जा रहे हैं।

सुबह होने में देर न थी। महमूद अँधेरे अँधेरे एक अड्डे पर पहुँच जाना चाहता था। उसने तेजी से कदम बढ़ाये। दौड़ना संदेह उत्पन्न कर सकता था। वह चारो ओर चौकन्नी दृष्टि से देखता जाता था। सुबह जेल के भीतर हलचल मच जायगी। तब तक महमूद आराम से अपने साथियों के बीच पड़ा सोता होगा। महमूद माडल हाउसेज़ पहुँच कर ठिकाने से लग जायगा और निश्चिन्त हो जायगा। आरती और बलराज को

खबर भेजकर वहाँ बुलवा लेगा। आरती उसे देख कर इतनी भावविमूढ़ और गदगद् हो जायगी कि कुछ मिनटों तक बोल न सकेगी ·····उसके आने की खबर पाकर सब साथी जान लेंगे कि क्रान्तिकारी ताकतों की जीत निश्चित है। जेल के भीतर बाहर का कोई समाचार न मिलता था। शारीरिक तो कम पर मानसिक यातना उसे भरपूर दी गई थी। सब से अलग—बिना किताबें और अखबार दिये उसे एकान्त कोठरी में ठूंस दिया गया था। सन्तरियों को उससे काम की बात के सिवा बोलने की इजाजत न थी। अपने कौशल और भाग्य-शक्ति की मदद से महमूद भाग निकला था। बाहर आकर सारी रिपोर्ट मिलेगी। कहाँ कैसा कैसा सङ्घर्ष हुआ ····· जनता ने किस प्रकार आगे बढ़ बढ़ कर सरकारी व्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट किया। विद्रोह की ऐसी जबर्दस्त आग लगने पर भी क्या एक एक हिन्दुस्तानी का शोणित नहा खौला। क्या उन्होंने साम्राज्यवाद की मीनारों की ईंट से ईंट नहीं बजाई? क्या इस महाक्रान्ति ने उन्हें क्रान्तिकारियों की पाँत में लाकर नहीं खड़ा कर दिया? इतने दिनों से प्रेरित करते रहने वाले स्वतंत्रता के स्वप्न की पूर्ति क्या उन्हें निकट न दिखाई दी?

धावा मारता महमूद जब ठिकाने पर पहुँचा तब आकाश में सवेरा निकल आया था। यूनीवरसिटी के कुछ विद्यार्थी एक बड़ा मकान लेकर यहाँ रहते थे और बड़े गोपनीय ढङ्ग से वहाँ आन्दोलन का कार्य होता रहता था। पुलिस को स्वप्न में भी आभास न मिल पाता था कि सरकारी नौकरों और मध्यवर्ग के भद्र लोगों—विशेषकर बङ्गालियों की बस्ती के बीच ऐसा मकान है जहाँ जनता को उत्तेजित करने वाले बुलेटिन और पत्र निकाले जाते हैं·····बीच बीच में इधर उधर से हथियार भी एकत्र किये जाकर वितरित होते रहते हैं। महमूद को देख कर उन लोगों के चेहरे पर हर्ष और उल्लास की किरणें नाचने लगीं। जेल में महमूद ने दाढ़ी रख ली थी इसलिये उसकी सूरत बदली हुई थी। लोग ठीक प्रकार से जान भी न

पाये थे। महमूद के आने की हलचल और उत्तेजना ने सब को जगा दिया। महमूद सब से बारी बारी से मिला·····घन्टों बैठा जेल के भीतर की दुनिया के और अपने भागने के हाल बताता रहा। लोगों को महमूद को छिपाने-बचाने की चिन्ता हो गयी। यह अड्डा पुलिस की निगाह में अभी चढ़ा न था पर कोई बात निश्चिन्ततापूर्वक कही भी न जा सकती थी। महमूद को किसी अन्य सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने की वे सोच रहे थे। महमूद ने उनमें से एक को सुन्दरबाग आरती और बलराज का पता लेने भेजा। भाभी की मृत्यु के बाद भैया से वह अब तक नहीं मिला। महमूद का हृदय आसन्न उत्सुकता और उत्कंठा से भरा आ रहा है। दो तीन अन्य साथियों को इधर उधर के अड्डों में भेज कर वह चुपचाप एक कोने में लेट गया। उसके दूसरे साथी उसे विश्राम का अवसर दे अपने अपने काम से लग गये। पर महमद का चित्त इतना अधीर और चंचल था—भीतर भीतर इतनी फुल्लता और परिपूर्णता थी कि वह अपने में आँट न पाता था। आरती से मिलने और बात करने के लिये वह बेचैन था। इस बीच उसके कोमल हृदय पर क्या बीती होगी। एक ओर भाभी की मृत्यु और दूसरी ओर उस पर चलाये जाने वाले मुकदमे की खबर जिसमें फाँसी और कालापानी के अतिरिक्त अन्य सजा की सम्भावना नहीं! कितनी चिन्ता होगी उसे।

जेल के भीतर इस बार महमद को आरती की बराबर याद आती रही है। उसे लगा है जैसे अब वह उसे प्राण की तरह प्रिय·····जान की तरह अज़ीज हो गयी है। देश सेवा की आग में जलने वाला उसका मन प्रेम की लालसा में अब धीरे धीरे लिप्त हो रहा है। इस आग को वह अपने से पृथक नहीं कर पा रहा था। यह जैसे उसके एक एक कण—एक एक क्षण में व्याप्त है। दिल बीच बीच में भले बुझ चलता हो पर यह नहीं बुझती। यह दबाये नहीं दबती—सुलाये नहीं सोती। अपने देश की आजादी की लड़ाई के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी को जानते पहचानते हुए भी वह प्रेम का प्यासा है। इस

आग का जलता अँगारा है। वह अब तक किसी न किसी प्रकार उसे दबाता रहा है। अब इस अमिट भूख को—जलती प्यास को—सुलगती आग को दबाना असंभव है। उसे लगता है यह बिना लालसा की आहुति लिये शान्त न होगी। अक्सर जेल की कोठरी की वीरानी रात में वह सोते सोते एक अत्यन्त मादक सपना देख कर चौंकता हुआ जाग पड़ता था। दिल की तेज धड़कन को सुलाने की चेष्टा करते हुए वह सो न पाता था। सामने से वही भूखी तृष्णा साकार बनी उसे अपनी ओर आती दिखाई देती। रात के काले, आकारहीन आकाश की सारी शून्यता उसकी छाती पर पहाड़ की तरह आकर बैठ जाती। उसका घुटता हुआ दम अपनी सब से प्यारी, खोई हुई चीज को खोजने लगता। घन्टों भटकता पर कुछ हाथ न लगता। एक याद ·····सोकने वाली याद····· बस·····और कुछ नहीं! मन के उद्वेलन को—पिपासा के संघर्ष को जितना वह अपने से दूर खींचता उतना ही वह उसके पास खिंचती। सारी कोठरी जैसे तपी तपी लाल आँखों से उसकी ओर घूरने लगती।

१९४० के व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन में वह जेल गया था। आरती तब भी ऐसी ही कोमल, मधुर और हसीन आरती थी। एक साल के बाद वह छूटा था। उस बार उसने अपने को ऐसा अधूरा - इतना एकाकी नहीं अनुभव किया। प्यार का निमंत्रण उसकी आत्मा को मिल चुका था पर यह ज्वाला तब न थी। था एक स्निग्ध आह्वान—धारा को परिपूर्ति देने वाली सहन शक्ति। आज वह सब कुछ नहा। आज आग ही आग है--एकदम नयी और ज्वलन्त·····दिल के कच्चे कोयले जिसके स्पर्श मात्र से दहक उठते हैं। आरती को लेकर इधर जितने संघर्ष उसके और बलराज के परिवार में चले हैं उन्होंने मिलकर उसे अस्थिर और असंयत बना दिया है। आरती को कितना नज़दीक खींचे वह नहीं समझ पाता। दोनों के विवाह की हसरत लिए हुए भाभी

दुनिया से चली गई। वह भी इसी हसरत की गर्मी में उबलकर भाफ़ बनता हुआ एक दिन शून्य में विलीन हो जायगा? इस समय जो कर्तव्य के बन्धन उसे चारो ओर से जकड़े हैं, उन्हें वह कैसे तोड़े? लपटों के इस अविरल निमंत्रण की अवहेलना करने का साहस उसके हृदय में नहीं। बरसों से राह देखते देखते यह संघर्ष की बिजली निष्क्रियता के बादलों में कौंदी है। इस धधकती लपट के आलिङ्गन में बँधे होने पर भी आरती के बाहुपाश में छिप छिप जाने की लालसा क्यों बलवती हो उठती है? कुछ समझ में नहीं आता। भाभी की ऐसी अप्रत्याशित, अकल्पित मौत देखकर महमूद का मन अब भय की कुन्ठा अनुभव करने लगा है! क्या उसके सैनिक क्रोध और प्रतिहिंसा पर अब विलास और सुखभोग की कामना की राख जमने लगी है? नहीं, नहीं—यह सब नहीं है। पर आरती का प्यार भी तो एक विकसित होती रहने वाली क्रिया है। आज यदि वह पूर्णता को प्राप्त होकर अत्यन्त प्रिय लगने वाली निकटता की माँग करता है तो क्या अपराध करता है?

कब तक वह इस पीड़ा का प्रतिशोध अपने निज से लिया करे? यह आत्म-प्रतिहिंसा वह क्यों स्वीकार करे? क्यों वह बूँद बूँद कर बेबसी का गरल-पान करे? वह क्यों अपनी मोहिनी तृष्णा से पलायन करे—पराजय माने? आरती उसके निर्माण की कल्पना कर रही है। जीवन के पुनीततम आदर्श की तरह उसने उसे स्थिर, दृढ़, निश्चित और उदात्त माना है। आज वह सब क्यों इतना अस्थिर, चचल, अपरूप और भ्रामक लग रहा है? जिसे जीवन-सत्य के अप्रकट रूप की साकारता मान कर महमूद बराबर अशिव से शिव, असुन्दर से सुन्दर की ओर बढ़ता रहा है उसे आज क्यों शारीरिक वेष्ठन में कस कर क्षण भर विभोर हो जाने की आकांक्षा उठते बैठते प्राण को बेचैन किये रहती है? मृगी की भाँति अपने गदराये यौवन से चौंक चौंक पड़ने वाला आरती का वयः सन्धि का काल भी महमूद को याद आता है। स्थूल जगत के लिये·····स्थूल लालसाओं के लिये भी

भले वह महमूद से दूर रही हो पर उसके दिल की कँपकंपी में वह स्पंदन की भाँति संश्लिष्ट—संलग्न और सन्निविष्ट रही है। मानव के इसी सब से सच्चे और शक्तिशाली भाव को लेकर उसका मन यह खिलवाड़ क्यों रच रहा है! यह वासना है—दुरन्त और दुर्निवार! इसे रोकना होगा। प्रेम पाने का यह रूप, शारीरिक उपलब्धि की भावना वर्षा से पहले चमकने वाली बिजली है। उसके सौंदर्य और आकर्षण से इन्कार नहीं किया जा सकता। पर वह चमके या न चमके, असल सुख शान्ति और रस की उस वर्षा में है जो भीतर बाहर—ऊपर नीचे सम्पूर्ण तन-मन-जीवन को प्रेम से भिगो देती है। जीवन की तृष्णा और उबलती कामना इसी मे शान्त होगी··· ·· अन्यथा नहीं।

महमूद का मन क्षण भर के लिये सङ्घर्ष से मुक्ति पा जाता है। उसके हृदय का पुनीततम सोयी प्ररणायें जाग उठती हैं। एक नये प्रकार का आविर्भाव वह अपने भीतर अनुभव करता है जैसे उसकी सम्पूर्ण उदात्त प्रवृत्तियों का स्तूरीकरण होने लगा हो। पागलपन—बेसुधपन का वह उत्तप्त ज्वार शान्त हो जाता है—बुखार उतर सा जाता है। फूल की मधुर गंध की भाँति एक प्राकृतिक भीनापन उसके रोम रोम में जाग उठता है। उसकी आँख प्रभापूर्ण हो जाती हैं। कितनी पवित्र ज्योति है यह! महमूद जीवन के सर्वस्व के अर्पण से इसे प्रज्वलित रक्खेगा। मुखरता इसको बुझाने वाली जलधार नहीं। यह पानी से न बुझेगी। यह अंतर के आत्मदान और जीवन-निग्रह से रुकेगी। पानी की एक एक बूँद के लिये छटपटाने·····व्याकुल बने रहने से काम न चलेगा। इसके लिये आत्मोसर्ग की मये वहदत का पान करना होगा। उसकी एक प्याली इसे ठन्डा कर देगी—रोज रोज की यह जलन तभी शान्त होगी। वह शरीर की आग नहीं मन की आग को भी निर्वापित करेगी। इसे दबाना और ईंधन देना है—भड़काना है। उसे न जाने कितने बुझते दिल जलाने हैं। इसलिये इस आग को साधकके दीपक की लौ का निष्कंप··· ··अविरल रूप देना

होगा। हजारों दीप उसकी प्रकाश-वर्तिका से रौशन हो सकेंगे। तभी यह आवरणहीन, कालिमाहीन शरीर व्याप्ति और लोक-कल्याण के आलिङ्गन में आबद्ध होगा। जिन्दगी अपने मरकज़ को चूम सकेगी—तभी उसका जन्म और जीवन सार्थक होगा। वह इन्सान बनेगा—सच्चे अर्थ में इन्सान बनेगा। वह जीवन की पवित्रतम वस्तु का अपमान नहीं कर सकता। अपनी सारी वासनाभरी तमतमाहट वह अपने भीतर दफ़ना देगा। अपने उत्साह·····आनन्दातिरेक को वह कुर्बानी—केवल कुर्बानी के रास्ते पर बिछायेगा! यही उसे करना है। आज़ादी के लिये जन जन को मतवाला बना देना—बलिदान की रसीली लालिमा बिखेरना उसे इष्ट है। यह इन्किलाबी दौर है। चारो ओर हवा में ज़ीस्त के नगमे उड़े उड़े फिरते हैं। लोगों की जबान पर सदियों के लगे ताले हट गये हैं। मुद्दत बाद यह महसूस हुआ है कि गुलामी के काले दिन बीत गये हैं। बच्चा बच्चा अपने को जवान अनुभव कर रहा है·····बगावत की गोद में बैठा क्रान्ति के गीत गा रहा है। बीच बीच में जनता उन्मत्त होकर सोचने लगती है—गुलामी का अन्त हो गया। स्वदेश में स्वदेशियों का राज्य स्थापित हो गया? इस अहलाद और सन्तोष का कोई मूल्य नहीं। किसी नागरिक या ग्रामीण का जीवन आफ़त से खाली नहीं। अभी क्या चारो ओर छाई मुसीबत की घटा कहीं से कटी है! देश की जिन्दगी में न जाने कितने तूफान अभी बाकी हैं। जब तक हमारे ऊपर से गैरों की—विदेशी आततायियों की हुकूमत दूर नहीं होती तब तक सताये हुए लोगों का क्रन्दन··· ··मज़लूमों का मर्सिया नहीं बन्द हो सकता। जब तक इन जुल्मी हत्यारों का बोलबाला है तब तक हमारे चेहरे पर लगी कालिमा न कम होगी। बड़ी दर्दनाक कहानी है महमूद के वतन की! अभी लोगों की ग़ैरत—इज़्ज़त—अस्मत और दौलत में आग लगाई जाती है। चारों ओर एक मुजरिम मुजरिम मातम फैला हुआ है। देश की मिट्टी का एक एक टुकड़ा इन लुटेरे दरिन्दों की थपेड़ खा खाकर रो रहा है। कैसी है यह

चारो ओर छाई ग्लानि और लानत की उदासी ! कहीं स्वतंत्रता का एक दृश्य नहीं दिखाई देता। लोग आजाद होने की कोशिश करते हुए ही हमेशा के लिये सुला दिये जाते हैं। उन्हें गोलियों से भून दिया जाता है या पकड़ कर तिल तिल फ़ना होने के लिये तनहाइयों में डाल दिया जाता है। पूरा चमन मरघट बना पड़ा है। कहीं जीवन की हरियाली का नाम नहीं है·····कहीं उमंगों की लालिमा का गुलाबी प्रसार नहीं। है केवल अभिशप्त मुर्दनी और उजड़ापन जो फटा फटा-सा सारे देश की चेतना पर पड़ा है। ऐसे समय महमूद प्रियतमा की बीती याद लेकर·····उसके जिस्म की गर्म सुरसुराहट लेकर—मन मोह लेने वाली नयी टहनियों जैसी नज़ाकत लेकर खोया रहेगा। उसे क्या यह सब शोभा देता है ? कैसी दोधारी शमशीर है उसके मन की गति जो दोनो तरफ से काटती है·····जो कभी किसी ओर से चैन नहीं लेने देती। अन्तर्विरोध का यह पैनापन—भीतरी द्वन्द्व का यह तीक्ष्ण आघात उसे उठते बैठते काटता है। वह दोनों ओर से जलता है ····दोनों ओर से जल कर राख होता है। पर यह आग बुझाई नहीं जाती। आग पाक और दोशीज़गी से भरी मानी गयी है·····कैसे महमूद इस पवित्र वस्तु को बुझा दे। अपने जीवन की अमिट, अक्षर, अनश्वर साध लेकर वह इन दो आगों में जलता है। एक ओर यदि उसकी सेंक से—उचटते, शिथिल अङ्गों को स्फूर्ति मिलती है—जोश आता है तो दूसरी ओर उसका दिल और दिमाग जल जल कर भस्म भी होता रहता है। प्यार की सारी तन्मयता, भावना की सारी अमरता, कैवल्य की चिर-अर्चित भावुकता और उज्ज्वलता इस आग में ईंधन बन कर धू धू हो उठती है। रह जाता है केवल बुझे कोयलों की काली राख का अन्धकार··· उसकी भयंकरता। आरती की आँखों की आयु मञ्जरी जैसी श्यामलता और घनी छाँहों वाली मादकता उसे जब याद आती है तो वह बेक़रार और बेअख्तियार हो जाता है। नहीं जानता कहाँ जाकर इन सब बातों का अन्त

होगा कहाँ जाकर यह याद की बिजली से सजीव-तरंग प्रवाहित तार जैसी डोरी टूटेगी·····कहाँ·····कहाँ····· कहाँ जाकर इस धधकती भट्टी का द्वार बन्द होगा ! कहाँ तक वह अपना साथ दे सकेगा ····· अपने विवेक को गलने-पिघलने से रोक सकेगा। कब तक पैरों की मजबूती—आत्मा का ठहराव·····दिल की आरती में जलती बत्ती की ज्योति का यह तनाव अक्षुण्य रहेगा। दो दो जलती निशानियाँ को लिये महमूद महीनों जेल में बन्द रहा। दोनों में जलता-झुलसता वह बाहर भाग निकला है पर जलता हुआ·· ·····

महमूद आँख बन्द किये नीचे दरी पर लेटा है। साथी अपने अपने काम में लगे हैं। कुछ यूनिवर्सिटी जाने की तैयारी में हैं—कुछ दैनिक कृत्यों में उलझे हैं। महमूद का हल्का फुल्का मन चेष्टा करने पर भी सो नहीं पाता। यही ज्वाला उसके साथ भागती चली आई है। उसके साथ बढ़ बढ़ कर झूमी है—झूम झूम कर बढ़ी है। उसके पैरों में वह कम्पन का कारण नहीं बनी···वरन् उन्हें गति की प्रेरणा देती आई है—मन को····· मन के भीतर छाये उत्साह और स्फूर्ति को वह क्यों अभिभूत किये ले रही है ? क्यों उसके भविष्य की प्रगति-ज्वाला को पामाल किये देती है। उसका बलवान मन बाहर मुक्ति-कर्म के नीलाकाश के नीचे आकर अपने डैनों में दृढ़, ऊँची उड़ान क्यों नहीं भर पाता। क्यों वह लड़खड़ा लड़खड़ा कर रह जाता है। जलता दिल को लेकर वह निकला पर मन की आन्दोलन पुनर्संज्ञ-ठित करने की उम्मीदें क्यों बुझी जाती हैं ! कैसी है यह आग उसका रोम रोम जिसे अनुभव कर रहा है। बढ़ता मन—पीछे हटता तन। न पास जा सकता है—न दूर हट सकता है। महमूद एक क्षण के लिये अकेला नहीं रह सकता। भारतीय मानवता की सेवा के प्रेरक प्रबोध जो कभी कभी उठते रहते थे इस समय काम नहीं आ रहे। दुविधा और असमञ्जस की किस फिसलनी धरती पर न फिसलने की सौगन्ध लिये वह अपने में पिस रहा है। न जाने कितना समय इस आग और धुएँ के लच्छों में नाचते नाचते

बीत गया। तब तक साथी घनश्याम ने आ धीरे से कहा—'कप्तान! कप्तान! अच्छा है सो लो! मैं फिर बात करूँगा।'

महमूद ने फौरन आँखें खोली। घनश्याम सामने खड़ा संभ्रमभरी दृष्टि से उसकी ओर देख रहा है। महमूद ने कहा—कहो! क्या खबर लाये? वे लोग मिले? अखबार के जरिये उन्हें कल मालूम होगा। मैं चाहता था आज वे जान जाते—उनका महमूद बगावत की रूहका सिंगार कर जेल से निकल भागा है।'

घनश्याम ने ठहरते हुए कहा—'वहाँ ताला बन्द है। लगता है वे लोग चले गये। मुमकिन है कहीं गये हों। आरती अक्सर यहाँ आती रहती है। उनके भाई कभी आये नहीं पर वे कृपा करती रहती हैं। हो सकता है घूमती फिरती आज आ जायँ। मैंने वहाँ दरयाफ्त करना ठीक न समझा। आस पास सी० आई० डी० के होने का शुबहा हो गया। मैं उचटती निगाह से देखता हुआ पीछे के रास्ते से मक बूलगञ्ज में निकल लाल कुंआ का चक्कर काटता आ रहा हूँ। वर्ना इतनी देर न लगती। आप दिन भर—आज क्या दो तीन दिन आराम करें। यहाँ किसी का ख्याल जाना मुश्किल है। आज पूरे शहर में शोर मच जायगा। आपने कमाल किया है·····उतनी ऊँची दीवार से कूदना·····आप ही जैसे बहादुर का काम है।'

महमूद का मन गिरने लगा। उसी क्षण उसे याद आया—आरती ने एक बार उसके बाजुओं की कैद में दाखिल होने से इन्कार करते हुए, अपने होठों के समीप उसके होठों पर धधकते तृष्णा के अङ्गारों की सेक से उद्विग्न हो कहा था—'महमूद! औरत इन्सान की सब से बड़ी कमजोरी है। मर्द औरत की उतनी ही बड़ी ताकत ····कूवत का सहारा! दूर खींच लो अपनी बाहें। मेरे मन में भी हविश की आग जलती है। मैं उसे लोहू पिला पिला कर जानदार और ताकतवर बनाती हूँ। तुम आग का धुआँ बनाते रहते हो। मैं धुएँ में आग की लालिमा रक्ताभ दाहकता पैदा

करती हूँ। मेरी बात का बुरा मत मानना! मैं तन मन से तुम्हारी हूँ। पर मुझे कबूतरों की सी चुहल पसन्द नहीं। रूप-रङ्ग और जवानी के मद-भरे तरन्नुम में भूल कर अपने मंज़िले मकसूद को भुला दोगे? इतने बेताब न हो महमूद! जिन्दगी आग की लपटों का नाच नहीं। विस्फोट है। विस्फोट!'

महमूद आँख फाड़े घनश्याम की ओर देखता रहा। सामने अतीत के चल-चित्र घूम रहे थे। भीतर की आग रंग बदल रही थी। माँस और मज्जा की आहुति लेने वाली आग के स्थान पर वह ज्वाला उठी जो जीवन की द्विधा, द्वन्द्व, भीति, सकुचाहट को नष्ट कर देती है। यह ज्वाला का नृत्य नहीं उसका 'मार्च' है। उसे कर्म स्फूर्ति बेचैन करने लगी। घनश्याम ने कहा—'आप मुझे क्यों इ ने गौर से देख रहे हैं। मुझ पर सी० आई० डी० होने का शुबहा है आपकी आँखों से असाधारण चमक निकल रही है। ओह! कैसी देदीप्यमान किरण है—लगता है बिजली का फ्यूज होता तार है!'

महमूद जोर से हँस पड़ा। बोला—'घनश्याम! तुम पर शक नहीं करता। तुम्हीं लोग हाथ पैर हो। अपने हाथ पैर पर इन्सान फालिज़ मार जाने के बाद भी शक नहीं करता। लेकिन हमें गाफ़िल नहीं रहना। तुम एक काम करो। एक महरे की पोशाक मुझे दो। तुम लोगों का बीमार नौकर गिरधारी बन कर मैं रहूँगा। नाई को बुलाने की जरूरत नहीं। दाढ़ी और बाल साफ किये देता हूँ। दो चार दिन मेरा निकलना खतरे से खाली न होगा। इससे ज्यादा मैं रुक न सकूँगा। मेरा दिल पर्वतपूर के आस पास मडरा रहा है। यकीनन भैया और आरती वहाँ गये हैं—अगर यहाँ नहीं हैं। वहाँ जरूर कुछ होने जा रहा है। साथियों को अभी मेरे यहाँ होने की ख़बर देने की जरूरत नहीं। तुम लोग सब यही समझो कि मैं यहाँ नहीं हूँ। अभी तुम लोगों के बीच लौट कर आया ही नहीं।'

घनश्याम ने कहा—'अभी जाकर सब को समझाये देता हूँ।

मुमकिन है बात के सिलसिले में किसी साथी से जिक्र कर दें। आपके लिये दूसरी महफ़ूज जगह भी आज-कल में तलाश किये लेते है जहाँ आप इतमीनान से हफ्ते दो हफ्ते रह कर हम लोगों को 'लीड' दे सकें। यहाँ बड़ा सन्नाटा है कसान! लोको वर्कशाप की हड़ताल और आप लोगों वाले वाक़ये के बाद छोटे मोटे दो चार वाक़ये हुए पर संगठित रूप से कहीं कुछ नहीं हो पा रहा। असल बात यह है कि हम लोग क्रान्ति में हिस्सा लेते हैं--लम्बी लम्बी बातें करते हैं पर अपने दिमाग को इन्किलाबी नहीं बना पाते। हम लोगों में बड़ी कमी है। खाली बुलेटिन निकालना--निकालते जाना·····लोगों को लगातार उत्तेजित करते रहना। पर कहीं कोई सार नहीं। यूनिवरसिटी में जाइये देखिये जैसे कहीं कुछ हुआ नहीं। लोग ठंडे पड़ कर अपने अपने काम में लग गये हैं। दो ही चार महीने में यह हाल है तो आगे क्या! आज़ादी की लड़ाई तो बरसों चलती है। यहाँ साहबज़ादे चन्द महीनों में ऊब गये। इस बीच दस बीस पुलिस अफसरों को मारा होता--इतना बड़ा सेक्रेटेरियट है·····उस को फूँक देते। सब अपनी चमड़ी बचा कर चलना चाहते हैं। इस तरह आज़ादी क्या उसकी एक झलक न मिलेगी। क्रान्ति की आग इस लिये नहीं जलती कि ठिठुरे राही ताप की गुलाबी स्फूर्ति पा सकें। वह संहारक ज्वाला होती है जो निर्माण के पहले पुराने, जर्जर अवरोधों और मलबों को साफ कर नई इमारत की आकृति खड़ी करती है। यहाँ लोग उतनी गर्मी·····उतनी ही जलन चाहते हैं जिसे बरदाश्त कर सकें--जो सर्दी के लहरे को दूर कर जाफ़रानी हरारत पैदा कर दे। बस! अधिक नहीं। जिन्होंने पीठ पर डंडे खाये····· पुलिस के बूटों के आघात सहे—जुलूसों में ऊँचे भरे गले से स्वराज्य के नारे लगाये वे क्लास में जाकर प्लेटो-अरिस्टाटल के सिद्धान्त और भिन्न भिन्न देशों के कांस्टी ट्यूशन पढ़ते हैं। धर्म यह है कि पहले जो हवा आँधी का वेग लिये थी वह अब बिजली के पंखे

की 'मीडियम' गति बन गई है·····'

महमूद पड़ा सुन रहा था। बोला—'शहरों में यह हाल है या गाँवों में भी। गावों में आग का वही तूफ़ानी वेग है न! शहरों में हम अधिक आशा कहाँ करते हैं! यह नवाबों का शहर है घनश्याम! इन नामर्द नवाबों का जो अँगरेजी सेना को आते देख कर दरबार छोड़ भीतर जा बेगमात के पेटीकोटों में छिप जाया करते थे। यहाँ जो हो गया उसकी भी उम्मीद मुझे न थी। अब पूरे सूबे की फ़िक्र करनी है। किसानों को लगान देने से रोकना है····जबर्दस्ती किये जाने पर जान होम कर लड़ने के लिये ललकारना है। पुलिस और सेना में बग़ावत की लपट फैला कर उनके भीतर ब्रिटिश विरोधी भावनायें भरनी हैं। आन्दोलन का बेस—लड़ाई की जड़ें और गहरें ले जानी हैं। देहातों में एक बार फिर थानों, पुलों, स्टेशनों को फूँक कर सरकारी व्यवस्था की ताकत कम करनी है। लोग चाहते हैं—शुरूआत में ही क्रान्ति वरदान बन कर घटे—कल्याण बन कर फैले—आबेहयात बन कर अमरत की घटा छा जाय। पर आग को शान्त होने के लिये लगातार आग चाहिये। आग का यह नर्तन बराबर होता रहे - रुके न, देश के रक्त को नित्य नयी नयी पुकार मिलती रहे। हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है—हर काम का नतीजा होता है। हम काम पूरा करते नहीं—नतीजे की उम्मीद में—फल की आशा में आसमान की ओर टकटकी लगा कर देखना आरम्भ कर देते हैं। 'मेटाफिजिक्स' बिलकुल भूल कर कोरे आशावादी रह जाते हैं। लेकिन कौमी भावनाओं के·····सिपाहियों का यह धर्म नहीं। सियासी विद्रोह एक लम्बी--दूर तक····देर तक चलने वाली क्रिया है। वक्त के साथ इन्सान को और उसके ज़ज़बात को भागना होता है। तब पूरी नस्ल जागती है—व्यक्तियों के समूह बनते हैं। देखा जायगा! मैं निकल आया हूँ तो मरते दम तक पुलिस की पकड़ में न आऊँगा। पिछली बार घायल होकर बेहोश न हो जाता तो वे मेरा साया न छू पाते। इस बार मेरी लाश उनके

हाथ लगेगी। मैं बैठ कर आगे के रास्ते सोचूँगा। मुश्किल यह है रास्ता दिखाने वाले नहीं रहे। पर हम निराश नहीं आजादी का लाल सुनहला सेंदुरी आफ़ताब आसमान को चीर कर उभरने वाला है। आस्मान में जो टुकड़े आज टूटे—बिखरे ··· ··फीकेपन में रँगे जान पड़ते हैं वे तरक्की के खूनी सुबह की करवटों के निशानात हैं। तुम जाकर सब को समझा बुझा दो। मुझे कोने में एक कोठरी चाहिये। मैं बाल घुटवे देता हूँ—चोटी रह जायगी। अपने महरे के पुराने कपड़े मुझे देकर उसे बदले में नये कपड़े दिला दो। मेरे पास एक पैसा नहीं इसका ख्याल रखना। पर पर्वतपूर पहुँच कर मुझे उसकी कमी न रहेगी। फिलहाल दो चार रुपये मुझे दे देना। चारपाई पर मरीज़ बन कर पड़ा रहूँगा। घड़े के नीचे के हिस्से में राख भर देना। उसी में खाँसता थूकता रहूँगा। पुलिस लखनऊ में तलाशियों का अम्बार लगा देगी। नौजवानों का कोई अड्डा बाकी न बचेगा। यहाँ भी आ सकती है। उसके पहले एक दो दिन में मुझे कहीं पहुँचा देना तुम्हारा काम है। गाँव पहुँच जाऊँ तो वहाँ फरिश्ते मुझे नहीं पा सकते। पर इस वक्त स्टेशनों पर ट्रनों पर इतनी गहरी निगहबानी होगी कि निकल जाना नामुमकिन है। तुम लोगों की हरकत से कोई सुगबुगाहट या असाधारण चचलता प्रकट न हो। वर्ना आफ़त आ जायगी।'

दिन में जब मकान में अकेला रह गया तो महमूद अपने उत्साह, हिम्मत साहस को तरह तरह से टटोलता रहा। उसका दिल कह रहा था वे लोग पर्वतपूर गये हैं। महमूद जल्द से जल्द आरती के पास पहुँच भाभी की मौत से पामाल उसके दिल को तसल्लियाँ देना चाहता है। भाभी का खून उससे मिन्नतें कर रहा है—वह जल्द से जल्द आरती और उनके शौहर के पास पहुँच उन्हें आसूदगी दे। उसके दिल में शमीम, जोहरा और आरती को देखने की तमन्ना कम नहीं है। क्या भावुकता के तनाव में इतना बड़ा ख़तरा मोल लेना उसके लिये उचित होगा?

वह रह रह कर यहीं ठिठक जाता है। कितनी आसानी से यह सब हो गया। उसे स्वप्न में कयास न था इतनी सहूलियत से वह सजग और धूर्त नौकरशाही को धोखा देकर निकल भागेगा! अब वह अपने को इतने जल्द बिला खास वजह खतरे में डालता है तो अपने मुल्क के साथ विश्वासघात करता है। पर आरती से मिलने की तृष्णा, यह वहशत—खूनी वहशत कैसे शान्त हो। रह रह कर उस असह्य आतुरता टूटते तारे की दमकती आग की तरह काटने लगती है। वह मुहब्बत की लाचारियों कमजोरियों के ऊपर उठेगा। अपना मोह छोड़ देगा—आरती का मोह छोड़ देगा। उस देश का····उस महान पार्टी का मोह केवल करेगा जिसका एक व्रती सदस्य होने का गौरव उसे प्राप्त है·····आज अपने बहादुरी के काम से जिसका सिर उसने ऊँचा किया है। आज उसने लड़ाई की परम्परा में नूतन शक्ति का प्रतिष्ठान किया है। वह पहला सिपाही है जिसने जेल से बाहर निकल भाग कर जलती हुई जनता की आग में अपने को झोंक देने का मंत्र पढ़ाया है। थोड़े से मुहब्बत के वलवलों से बेज़ार होकर किये कराये पर पानी फेर देगा! पर्वतपूर में प्रतिमा और उसके साथियों के हाथों न केवल उसे गाँव का वरन पूरे जिले का नेतृत्व सुरक्षित है। वहाँ उसकी आवश्यकता फिलहाल नहीं। क्यों न वह लखनऊ या अन्य किसी स्थान को अपना अड्डा बना वहीं जमे·····वहाँ छिपे छिपे आज़ादी की लड़ाई का संचालन करे। अपने दुश्मनों से घृणा करना सिखाये·····इस घृणा को धीरे धीरे एक मारात्मक—प्रतिहिंसात्मक रक्त-पिपासा रूप दे दे। अवरोधी को देखते ही प्रत्येक भारतीय उसका नाश कर देने के लिये—उसकी गरदन मरोड़ देने के लिये व्याकुल हो उठे। दमन का चक्र तब बेकाम हो जायगा। गुलामी की बेड़ियों से जकड़ा देश एक हुन्कार और भर ले तो इन जालिमों का सर्वनाश हो जाय जो अत्याचार करने में दुनिया के इतिहास में अपना सानी नहीं रखते। सारा देश आर्डिनेन्सों

की पिटारी में बन्द है। उत्तेजना असन्तोष की चोटी चूम रही है। इतिहास तेजी से पन्ने उलट रहा है।

अत्याचारों की एक स्मृति महमूद को सब ओर से समेट कर प्रतिहिंसा का 'प्लान' बनाने में संलग्न कर देती है। महमूद क्या सम्पूर्ण भारतीय मानवता उनकी स्मृति कर सिसकने लगती है--हिचकने लगती है·····उसके अन्दर की ज्वाला दहकने लगती है। प्रत्येक सरकारी अफ़सर को जनता खूँ-ख़ार दृष्टि से देख रही है। पर केवल देखती रह जाती है। उसके भीतर वह हत्यारापन नहीं जागृत होता जो नव-निर्माण की ईंटों में रक्तलिप्त सीमेन्ट का काम करता है। बदूक और संगीन के जोर पर जनता से जघन्य से जघन्य काम कराने वाले कलंकी नौकरशाहों के कारनामे क्या महमूद भूल चला है? जब उसे युद्ध की मोर्चेबंदी करनी चाहिये तब माशूक की याद कैसी! क्रान्ति के अङ्गारों को फैलाने का राष्ट्रीय कर्तव्य भूल वह आरती की तलाश में गाँव दौड़ा जा रहा है। नाज़ियों की नृशंसता को भी लज्जित करने वाली हृदय-हीनता से फौज और उसकी पालतू पुलिस शहर शहर, प्रान्त प्रान्त पर शासन कर रही है। जनता पर हिंसा का आरोप लगाकर अपने अनाचारों का औचित्य प्रमाणित कर रही है। पतित से पतित और अवनत से अवनत देश भी स्त्रियों और बच्चों पर ऐसे अमानुषिक अत्याचार होने पर हिंसा अहिंसा के सोच में न पड़ेगा। हमारे पास हथियार नहीं हैं। जनता निशस्त्र है और निहत्थी लड़ती है। पर उसे हथियार दे दो·····तब उसके सामने उसकी प्रसूता रमणियों पर बलात्कार करो—उसके बच्चों को भाले की नोकों पर टाँगो! तुम देखोगे वह तुम्हारे टुकड़े टुकड़े कर गीदड़ों और चीलों को खिला देगी। तुम निरपराध व्यक्ति को केवल इसलिये कि उसके भीतर स्वतंत्रता की भावना है—हाथी के पैर में बाँध कर घसिटवाते हो। जब उसका समय आयगा तब वह तुम्हें कुचल कुचल कर मारने के लिये इससे भी भयानक तरीके सोच निकालेगा। कभी न कभी

उसकी बारी आयेगी·····अति शीघ्र आयेगी। महमूद को याद आ रहा था—प्रतिमा ने अगले संघर्ष की जो योजना बनाई थी वह जिलों में रेलों पर कब्जा कर उन पर बैठ स्टेशनों, थानों चौकियों को फूँकते हुए आगे बढ़ने की थी। न केवल अपने जिले के वरन आस पास के सभी जिलों के स्टेशनों और हवाई-अड्डों को फूँक फूँक कर आगे बढ़ने की योजना थी। पिछली बार उन्होंने रेल की पटरियों को उखाड़ कर—मालगाड़ियों को फूँक कर उनका सामान जला दिया था। इस बार फौज से डरकर जनता भागेगी नहीं डट कर सामना करेगी·····हँस-हँस कर अपनी फड़कती लाशें देगी। महमूद इसी तरह की बातें सोच सोच कर दिन भर बेचैन पड़ा रहा। आरती का ख्याल उसने दिल से निकाल दिया है। उसे असाधारण अधिकार और दृढ़ता अपने मन पर प्राप्त हो गयी है। अब आगे की बातें सोचनी हैं। सौ पचास थाने और स्टेशन न फुँके तो उसके जेल से निकल भागने का उद्देश्य ही क्या पूरा हुआ! विदेशी हुकूमत का कोई चिन्ह देश में शेष न रहने देना चाहिये। अँगरेजी अमलदारी सदैव के लिये लुप्त हो जाय यह करना है। लहू में स्नान कर स्वतंत्रता देवी की आराधना करनी है।

महमूद ने दिन भर सोचकर आगे का कार्यक्रम निश्चित कर लिया। उसने सब से पहले विद्यार्थियों के नाम उबलती हुई अपील निकाली और उन्हें कर्तव्य की बलिवेदी सूनी छोड़ विमुख हो जाने की लज्जा देते हुए फिर आगे बढ़ कर रक्तदान के लिये ललकार सुनाई। उसने इसी तरह की एक और अपील पुलिस के नाम, सरकारी कर्मचारियों के नाम निकाली। शब्द शब्द में उसके क्षुब्ध दिल की पिघली आग थी जो अक्षर अक्षर से छलछला रही थी। छटपटाते घायल भाइयों-बहनों के आर्तनाद क्यों उनके हृदय में प्रतिहिंसा की ज्वाला नहीं जागृत करते! क्यों वे भूखे शेरों की तरह इस अन्यायी सरकार·· उसके टुकड़खोर गुलामों पर नहीं टूट पड़ते! क्यो उनकी आँखों से लहू नहीं टपकता! क्या

उनकी आत्मायें मर गयी हैं ? क्यों नहीं वे हिंसा-अहिंसा, हानि-लाभ, जीवन-मरण का मोह छोड़ इस महायज्ञ की धू धू करती ज्वालाओं में कूद पड़ते ? महमूद का इरादा दोनों बुलेटिनों को छपवा कर सारे प्रान्त में बँटवाने का था। इस समय उसके सामने एक गाँव या जिले का प्रश्न नहीं, पूरे प्रान्त का रूप था। वह अपने को·····अपने जैसे तरुणों को वहाँ की विप्लववाहिनी हलचल··· · संघर्ष की उन्मादिनी ज्वाला को अधिकाधिक वेग से ऊर्ध्वमुखी बनाने के लिये, पग पग पर रक्त का इतिहास लिखने के लिये जिम्मेदार समझता था। उसके भीतर का उत्तरदायित्व-बोध घना होता जाता था। अपने भाग निकलने की हलचल शान्त होते ही वह पूरे प्रान्त का दौरा करने के लिये निकलने वाला था।

सत्रह

पर्वतपूर पहुँच कर आरती शमीम से मिलने के लिये बेचैन हो उठी। पर्वतपूर के पास कंचनपूर नाम का गाँव था जहाँ महेन्द्र-सिंह नाम नवयुवक जमीदार के पास प्रतिमा ने दोनों को ठहरा दिया था। बलराज दिन दिन भर घूमा करते। आरती को प्रायः घर के भीतर रहना होता। दोनों सुरक्षित रूप से वहाँ पहुँच तो गये थे पर अभी आगे के खतरे की घंटी न बजी थी। महमूद के बाहर निकल भागने की खबर जब से आई थी तब से प्रतिमा और उत्साहित हो रही थी। आरती ने आकर·····सारी तैयारियों से परिचय प्राप्त कर देखा—एक तलस्पर्शी जनान्दोलन किस प्रकार दूर दूर तक फैले छोटे छोटे गावों के भिन्न भिन्न क्रान्तिसूत्रों को मिलाकर एक कर देता है। त्याग और बलिदान की कितनी अज्ञात नई लीकें स्थापित हो चुकी थीं। आरती के मन में शरद ऋतु के आकाश की तरह कितने नक्शे बनते बिगड़ते थे। यहाँ आरती को पत्र भी न मिलते थे जो आन्दोलन की गतिविधि से उसे अवगत रखते। महमूद बाहर किस प्रकार अपने को पुलिस की गिद्ध-आँखों से बचाता फिरता

होगा—कैसे अपने आकर्षक, प्रभावशाली व्यक्तित्व को छिपा पाता होगा ! आरती के जीवन का स्वप्न—उसके यौवन का प्राण कितने कच्चे धागे पर लटकता हुआ चारो ओर शिकारी कुत्तों से अपना बचाव करता घूम रहा है ! मालूम नहीं वह शान्त रहता होगा या उसी प्रकार उत्तेजनापूर्वक क्रान्ति की बातें—समाज व्यवस्था को बदलने की बातें·····नवयुग-प्रवर्तन की बातें करता होगा। यह दिगन्तव्यापी विकराल ज्वाला भी लोगों की आँख में उँगली डाल कर—फाड़ फाड़ कर दिखानी पड़ती है ! सरकार जिससे अपने को पक्षाघातग्रस्त अनुभव करती है उसे ये मध्यवर्ग के बाबू लोग नहीं समझ पाते ! इतने पढ़े लिखे, 'इन्फार्मड' होते हुए भी ! जनता जोश से फूली न समाती थी पर बाबू क्लास अपने हलवे माड़े की चिन्ता में मग्न था। क्रान्ति के इस दुर्दान्त जन स्रोत में वे अपने को खो नहीं पाते·····क्यों ? क्यों यह कमजोरी और लाचारी है ? संगठित दमन के विरुद्ध भी तो असंगठित, स्वतःस्फूर्त क्रान्ति बरसों चलती है। यहाँ कुछ ही महीनों में उसकी शक्ति घटने लगी। इसका तेल भीतर से खत्म हो रहा है या इसे भड़काने की पूरी कोशिश नहीं की जाती ? कांग्रेस के भीतर के वाम-पक्षी दल इतने निकम्मे क्यों साबित हो रहे हैं। काँग्रेस के जिन नेताओं को छिप कर—अपने को बचाकर गुप्त कार्यक्रम को आगे बढ़ाना था वे बेईमानी कर, पुलिस अधिकारियों को टेलीफोन कर कर अपने को गिरफ्तार कराये दे रहे हैं। लम्बी लम्बी बहसें करने वाले समाजवादी केवल जबानी हिंसा कर सकते हैं। कर्म की भयानक कमी आरती उनमें देख रही है। कहाँ है वह व्यवहारिक क्रान्तिवाद जिसकी भारत जैसे पराधीन देश को पग पग पर आवश्कता होती हैं। आरती भीतर ही भीतर आवेश और क्षोभ से फूलने लगती है। कैसे एक दम अँगरेजों का नाश कर भारत को स्वतन्त्र कर डाले—वह समझ नहीं पाती। हवा में कैसी व्याकुल स्तब्धता है। शाम को, दिन भर के कार्यभार से थक कर घर लौटती हुई चिड़ियों के परों की तरह सम्पूर्ण राजनैतिक

वातावरण में थकावट का बोझ है। अपने को ही आरती क्षमा नहीं कर पाती। उसकी सारी देशभक्ति·····क्रान्तिप्रियता फ़रेब है। आन्तरिक प्रेरणा यह नहीं·····केवल अपने प्रियतम की निकटता—उनके हृदय का सान्निध्य प्राप्त करने का बहाना! नहीं तो आरती इस प्रकार हाथ पर हाथ रख कर बैठी रहती? प्रतिमा चारो ओर कर्म की आन्धी बनी डोल रही है·····भाभी कर्म की पुकार करते करते अमरलोक सिधारीं। वे भी औरतें हैं। आरती उनसे क्यों भिन्न है। देशभक्ति, क्रान्ति, परिवर्तन और आज़ादी की लड़ाई में भी भिन्न भिन्न व्यक्ति भिन्न भिन्न उद्देश्य लेकर आते हैं। सामाजिक शक्तियाँ कभी इस भिन्नता का लाभ उठा पाती हैं—कभी नहीं। महमूद को पाने का यह तरीका उसे सब से आसान लगा और उसने अपनाया। यह एक आकस्मिक बात थी कि महमूद उसे प्यार करता था। वर्ना अपने उद्देश्य में असफल हो जाने पर न जाने कौन सी भयानक प्रतिक्रिया उसके मन पर होती। वह कहाँ—निराशा के किस टूटे कगारे सी गिर कर कहाँ लगती। आरती का मन ऐसी ही कड़वी कड़वी बातों से भरा रहता है। जो लोग अभी····· कमर और रीढ़ टूटते जाने पर भी क्रान्ति की अलख जगाये पड़े हैं ·····दमन की राक्षसी पद्धतियों से लोहा ले रहे हैं उनके कंधे से कंधा मिलाकर वह क्यों नहीं लड़ती! वह मर्द का बाना पहन कर बाहर नहीं घूम सकती! आखिर प्रतिमा ने क्या किया है! यन्त्रवत वह काम करती रही है पर इस तरह क्रान्ति की महाज्वाला कभी धधकती नहीं। एक आध कोयला कोई भले सुलगा ले पर वह प्रचंड वह्नि-शिखा जो दिशाओं दिशाओं प्रभंजन-तुल्य गति से धावित होती है यों नहीं धधका करती। आज जब भारतीय मानवता के सब मूल्यों पर हमला हो रहा है तब इस प्रकार की पस्ती····घर में बैठ कर काल्पनिक रँगबाजी करना उसे शोभा देता है? उसके आदर्शों और मूल्यों की सारी पसलियाँ टूटी पड़ी हैं। आरती कभी कभी मन में भाग्य की बात कह कर कुछ क्षण के लिये सारी अशान्ति और व्या-

कुलता का निराकरण कर लेती है। वह जानती है कि जो बात समझ में न आये, अपने वश की न हो और मन को अशान्ति और अकुलाहट से भरती रहे उसे भाग्य कहने की परिपाटी युगों से चली आ रही है। पर क्या भाग्य बदला नहीं जा सकता? कैसे यह उत्साह और मरणजयी उल्लास जन जन में संक्रमित किया जाय?

आरती ने मन ही मन संकल्प की दीक्षा ले ली। शाम को बलराज और महेन्द्र दिन भर इधर उधर घूम कर लौटे तो आरती ने पुरुष वेश में इनका स्वागत किया। बड़े बड़े काले-भौंराले केशों के स्थान पर जो मुक्त होने पर सहज ही कटि प्रदेश का चुम्बन करने लगते थे छोटे छोटे, देहाती युवकों जैसे बाल थे। बलराज के ढीले-ढाले लम्बे-चौड़े कुर्ते ने उसके वक्ष देश की समस्या बहुत कुछ सुलझा दी थी यद्यपि प्रतिमा जैसी सफाई वह अभी न ला पाई थी। कारण प्रतिमा की शुष्कता और आरती के भराव का अन्तर था। सिर पर मैली मारकीन की टोपी और वैसी ही धोती पहने वह सामने आ खड़ी हुई तो बलराज कुछ क्षणों स्तब्ध रह गये। संघर्ष के लम्बे क्रम से होकर उनका जीवन न निकला था। वे क्रान्ति की धारा का लपेट में आगये थे और अब भूत की तरह उसमें काम कर रहे थे। प्राण से प्रिय बहन का यह कठोर, अनहोना अस्वाभाविक रूप देख उन्हें अवसाद सा हुआ। बैठते हुए बोले—'तुम्हें यह क्या सूझी! देखा महेन्द्र! क्या दुःसाहस है इसका। मुश्किल यह है कि तू अब भी लड़की मालूम होती है। प्रकृति बदलना कठिन है। केवल बाल काट डालने से अगर औरत मर्द बन जाया करे तो हो चुका! प्रतिमा की नकल न कर। जैसी थी वैसी बनी रहती।'

महेन्द्र का बलराज के परिवार से पहला परिचय था। महमूद से वे परिचित थे। पर आरती और बलराज के साथ इतने निकट हो कर रहने का पहला अवसर था। यों व बड़े जमींदार थे पर बलराज और उनके परिवार का सम्मान पूरे जिले में था। बलराज

के यश की चर्चा वे बरसों से सुनते आ रहे थे। बलराज की बात का उत्तर न दे वे भीतर चले गये। आरती का यह रूप देख एक ओर मन ही मन हँसी आती थी तो दूसरी ओर भीतर भीतर उसके आत्मत्याग की सघर्ष-तत्परता देख संभ्रम-पूर्ण सम्मान का भाव भी उनके मन में उत्पन्न होता था। महेन्द्र के परिवार में उनकी माता और विधवा बड़ी बहिन थी। इसी वर्ष उन्होंने शिक्षा समाप्त की थी। विवाह अभी न हुआ था। प्रतिमा का ही सृजन वे एक प्रकार से थे। जिले में घूम घूम कर····· घर घर जाकर प्रतिमा ने इस प्रकार के बहुत से देश के दीवाने तैयार किये थे। महेन्द्र के भीतर अजीब अस्थिरता उठ पड़ी थी इसलिये वे भीतर आकर बहन से चाय भेजने के लिये कहने लगे। महेन्द्र की मा आँगन से उसकी आवाज सुनकर अपने कमरे से निकल आईं। बोली—'कहाँ था तू दिन भर। सुबह का निकला अब आ रहा है। आरती कहाँ चली गई? घन्टों से बाहर है। न जाने कैसी लड़की है! भीतर बैठती ही नहीं। भाई के कमरे में या बाहर मरदाने में रहती है। उर्मिला! चाय बाहर भेज दे। जल्दी कर।'

महेन्द्र बाहर आकर बलराज के पास कुर्सी ले बैठ गये। आरती बैठी कुछ सोच रही थी। बलराज ध्यान से एक बड़े नक्शे को देख रहे थे····· बीच बीच में पेन्सिल से जगह जगह 'पाइन्ट' रखते जाते थे। आरती का ध्यान उधर से हट कर अपने भीतर चला गया था जहाँ युगों का भूखा प्रेम अपना सारा देवत्व और मानवत्व लेकर जाग उठा था। वह जनता के इतिहास-निर्माण में भाग लेगी। उसके त्याग, तपस्या, वीरता को देख लड़कियाँ उस जैसी बनने ·····हँस हँस कर अपने को उत्सर्ग करने का महामंत्र लेंगी। जीवन के वाम पक्ष से कतरा कर दूर भागने की प्रवृत्ति वे छोड़ देंगी। उनका छुईमुई पन छूटेगा····· ·····वे विशाल कर्म-क्षेत्र में खुल कर निकलेंगी। महेन्द्र ने कुछ क्षण चुप रह

बलराज से कहा—'भैया ! महमूद यहाँ आयेंगे जरूर। वे अगर जान लेंगे यहाँ हम लोग पक्की तैयारियाँ कर चुके हैं तो कैसे रुकेंगे ? उनसे वहाँ रहा न जायगा। उन्हें किसी प्रकार यहाँ की तैयारी का पता लग जाता।'

आरती ने भूमि की ओर स्थिर अपनी दृष्टि उठा कर बलराज और महेन्द्र की ओर देखा। उसके हृदय का तार महेन्द्र की बात के स्वरैक्य में झंकृत हो उठा। वह उठते बैठते चलते फिरते यही सोचती है। पर कौन महमूद को इस योजना की खबर देगा ? बलराज के साथ न आकर अगर लखनऊ में रह जाती तो जरूर उससे भेंट हो जाती। बलराज ने नक्शे की ओर दृष्टि गड़ाये हुए मस्तक सिकोड़ कर कहा—'महमूद का इतनी जल्द लखनऊ छोड़ना आसान नहीं। वहाँ पुलिस शिकारी कुत्तों की तरह एक एक आदमी को सूँघती चलती होगी। उसके साथी इस समय बाहर आने की सलाह कभी न देंगे। मैं भी वहाँ होता तो न देता। उसकी आशा तुम लोग न करो। जेल से बाहर निकल आया यह क्या कम है! कभी न कभी—कहीं न कहीं कुछ करेगा ही। यहाँ के लिये हम लोग काफ़ी हैं। प्रतिमा की बुद्धि और मोर्चेबन्दी देख कर दङ्ग रह जाता हूँ। पूरे जिले को·····उसमें होने वाली हलचलों और हमलों को इस नक्शे में बाँध दिया है। महेन्द्र ! समझ लो आकर। पूरा ज़ोन तुम्हारे हवाले है। एक साथ चारो ओर से आघात होंगे तब हमारी विजय होगी····· ··'

'चाय पी लें भैया ! जम कर बैठेंगे। आरती ! आपको मा पूछ रही थीं। आप उनके पास हो आइये। इस वेष में देख-कर वे चौंकेंगी पर आपने तो अपने को बदल ही डाला। कब तक उन लोगों के सामने न जाइयेगा। उर्मिला ने आपको इस नये रूप में न देखा होगा वर्ना वह अम्मा से कह देती। बहिन-जी आपको इस रूप में देख कर बड़ी खुश होंगी। पर मैं भैया की बात दोहराता हूँ। आप अभी अपने को उतना नहीं बदल

सकी जितना चाहती रही होंगी। चेहरे की कोमलता सब से बड़ा व्यवधान है।'

आरती कुछ क्षण स्थिर दृष्टि से महेन्द्र की ओर देखती रही। बोली—'दो चार दिन देखती हूँ। नहीं तो इस कोमलता को सदैव के लिये विदा कर दूँगी। मुझे इससे कोई मोह नहीं रह गया। कोमलता के अलावा और कोई नुक्स तो मेरे वेश-परिवर्तन में नहीं?'

बलराज ने कहा—'तुझे कोमलता से मोह नहीं पर कोमलता को तुझसे है। वह तुझे नहीं छोड़ना चाहती। जाते जाते तुझसे गले मिलकर—लिपट लिपट कर रोयेगी? तब तू क्या करेगी? यह जन्म की साथिन आसानी से न छूटेगी।'

आरती ने दृढ़ता से कहा—'तुम मज़ाक करते हो भैया! मैं अपने हाथ से इसका गला घोंट दूँगी। मेरे लिए यह सब से बड़ी बाधा है। आज घन्टों मेरा मन ग्लानि से भरा भरा रहा है। तब मैंने यह निश्चय किया। यह मेरे पैर की जंजीर बनी है। लखनऊ में कोई बात न थी। यहाँ जिले में इसके कारण मैं कहीं आ जा नहीं सकती।'

चाय पीते पीते महेन्द्र ने कहा—'आरती के लिये कोई काम असंभव नहीं। अपने जीवन के पिछले हिस्से के साथ जोड़ने वाली कोई कड़ी वह नहीं चाहती। आने वाली लड़ाई में हम लोगों के साथ आगे आगे रहेगी। आपको कोई पीड़क चिन्ता हो रही है? आपके चेहरे पर कैसी उदासी झलक आई है! क्यों परेशान हो गये?'

बलराज ने कहा—'रात के आखरी हिस्से में देखे भयावने स्वप्न की तरह मुझे आरती का यह स्वरूप लगता है महेन्द्र! मेरी चेतना उखड़ उखड़ जाती है। पहाड़ी नदी जैसी अशान्ति की धारा के तेज बहाव में हम बहे जा रहे हैं। जो इसमें कूदना नहीं चाहते—जो तैरना नहीं जानते उनकी भी अपने से एक नहीं चलती। इस प्रचंड तूफानी बहाव के सामने सब को आत्मसमर्पण करना पड़ता है·····

जो जितना डूबने की चेष्टा करता है वह उतना ऊपर आता है ! जो जितना ऊपर आने को अकुलाता है वह उतना डूबता है। मनुष्य डूब कर भी डूब नहीं पाता—उतरा कर उतरा नहीं पाता। न जाने कौन महान ऐतिहासिक शक्ति उसे धारा के साथ बिलकुल हमपहलू रखती है। तुम्हारे जैसा व्यक्ति अपनी जमींदारी के दैनिक कामों को भूल कर बह निकला।'

महेन्द्र ने कहा—'सब प्रतिमा दीदी का प्रभाव है। मैं आप से बड़ा न जमींदार हूँ न आप जैसा विद्वान फिलासफ़र जिसकी धाक आज भी यूनिवरसिटी में जमी है। मुझे लगता है प्रतिमा स्वयं एक संस्था है·····एक बड़े बलवान, शक्तिशाली प्रबुद्ध चेतन समूह की प्रलम्बित छाया। प्रतिमा ने घर घर घूम कर मेरे जैसे सैकड़ों तैयार किये हैं। उनकी लगन असाधारण है। इस लड़ाई की जीत का सारा श्रेय उन्हें होगा। ऐसे ही दधीचियों की हड्डियों से क्रान्ति के वज्र बनते हैं। पत्थरों में पिसते पिसते फूल भी ज्वाला का घर बन जाता है। अब तो हमें आप जैसा मनस्वी नेता मिला है·····'

बलराज जैसे कहीं और थे। यह सब सुन ही न रहे थे। उनके चेहरे पर ऐसा खोयापन घुमड़ रहा था जो देखने वाले को अविभूत कर लेता है ! जैसे उनका सारा मन किसी दानवीय चक्की में पिसा जा रहा है·····वे अपने को पिसते जाने से रोक नहीं पा रहे। उनका सारा चेहरा विरोधी भावनाओं का रणक्षेत्र बना हुआ है।

आरती ने कहा—'जब तक कोमलता के भीतरी तन्तु न मरेंगे तब तक उसकी बाह्य अभिव्यक्ति मेरे लाख रोकने पर, संयमित करने पर न रुकेगी। मैं अपने नारीत्व को समाप्त कर देना चाहती हूँ। इस लड़ाई में मैं लड़ते लड़ते मैदान में मर जाना पसन्द करूँगी। अब जीवन में कोई आकर्षण नहीं रह गया। महमूद का आकर्षण है पर उससे बड़ा जो भाभी का प्यार था वह जीवन से इतने आकस्मिक ढंग से चला गया। जब मरना है—देर में या जल्द तब इससे शानदार और आबदार मौत कौन हो सकती है !

महेन्द्र भाई ! आप कल से मुझे अपने साथ ले चलिये। इधर का हिस्सा पहले नहीं घूमी। मुझे सारे मोर्चे समझा दीजिये। अपना नौकर मुझे बताइयेगा। जमींदार के साथ एक दो नौकर रहते हैं। मैं किसी खास मोर्चे पर न रह कर सब में रहूँगी·····पूरे संग्राम में कार्य करती रहूँगी। आप मेरी फुर्ती देख कर हैरान हो जाँयगे। आप जैसे कर्मठ भाइयों का भ्रातृत्व कभी मेरे कारण लांछित न होगा·····'

महेन्द्र ने कहा—'तुम्हारे तेजस्वी मन की गाथा मुझे मालूम है। तुम जो न कर डालो थोड़ा है। मा और उर्मिला को तो यह नया रूप दिखा आओ। तुम्हारे जैसे व्यक्तित्व पाकर पूरा प्रान्त नया साहस भर कर हुङ्कार उठेगा। अपने प्राण का दान इस प्रकार भर भर कर देते रहना उसे कितना अनुप्राणित करेगा··· '

आरती ने बात काट कर कहा—'दान नहीं महेन्द्र भाई ! दान का नाम न लो। उसके भीतर मुझे धन के वैभव और साम्राज्य की लिप्सा की भीषण गन्ध आती है। दान शोषण की औलाद होता है। यह मेरा कर्तव्य है जिसे तुम सब के सौहार्द ने मिलकर इतना सुखद बना दिया है। दान की बात से मुझे नफ़रत है।'

महेन्द्र के संस्कार अभी यहाँ तक न बदल पाये थे। वे उन जमींदारों में थे जिनके यहाँ दान का खाता अलग रहता है। जो किसानों का शोषण परम्परा से चले आ रहे रूप से करके भी दान देना और पुण्यार्जन करना मानवीय कर्तव्य समझते हैं। कभी उन्होंने न सोचा होगा कि जिसका सारा खून पी डाला जाय उसे दस पाँच सेर अन्न या जोड़े दो जोड़े वस्त्र देकर कैसे पुन्य लूटा जा सकता है। कब तक विषमता का यह फुँकारता अजगर समाज को इस प्रकार डसता चला जायगा। सदियों व्यापी शून्यता की नीरव सुबुकाहट कब कम होगी·····'

शाम पूरी पूरी घिर आई थी। बादलों का कल्लोल सारे वातावरण में लहरा रहा था। बलराज गहन चिन्तना में मग्न थे। यान्त्रिक

गति से उन्होंने चाय पी ली थी पर उनका मन उड़ा उड़ा फिर रहा था जो पकड़ाई में न आता था। उनकी दृष्टि चारों ओर से सिमट कर उसी नक्शे पर केन्द्रित थी जिसे प्रतिमा ने हफ्तों काट छाँट कर तैयार किया था ·····जहाँ जिले की पूरी मोर्चाबन्दी उभरी पड़ी थी—नीरव निष्प्राण निःशब्द रेखाओं के रूप में। महेन्द्र ने कहा। भीतर चल कर बैठें! आप मुझे बुला रहे थे न! आरती अभी आ जायगी।'

दोनों भीतर चले गये। घंटों महेन्द्र बलराज में योजना को लेकर चर्चा होती रही। महेन्द्र प्रतिमा के सब से विश्वस्त साथियों में था। अगस्त आन्दोलन आरम्भ होने के समय वह बाम्बे में था। वहाँ उसने पुलिस के पशुतापूर्ण अत्याचार का जो रूप देखा था—जिस प्रकार घरों के भीतर जबर्दस्ती घुस घुसकर बच्चों और औरतों को गोली से भूने जाते देखा था उसने उसके जीवन की धारा बदल दी। उसे राजनीति से कोई सम्बन्ध न था। बम्बई में उसके एक मित्र सिनेमा में गीतकार थे। उनके निमंत्रण पर वह वहाँ का सौंदर्य, सिनेमा का विलास-वैभव देखने गया था। पर वहाँ से प्राण की वंशी में अपमान और मर्म-वेदना से भरी प्रज्वलित श्वासें लेकर वह लौटा था। आज जीवन-सत्ता की रक्षा—जिन्दगी की माँग का प्रश्न है। महेन्द्र वहाँ से चला तो आया पर वातावरण के अपेक्षाकृत शान्त हो जाने तक उसे वहाँ रुकना पड़ा था। और इस बीच उसने भीषण दृश्य वहाँ देखे। बन्दूक की नली औरतों की छातियों से सटा कर उनसे जबर्दस्ती नालियाँ और पाखाने साफ कराये गये। केवल नेताओं का नाम मुँह पर लाने से मासूम बच्चों को गोलियों से पिरोये जाते उसने देखा। युवक महेन्द्र वहाँ से प्रतिहिंसा की मूर्ति बन लौट आया। इसके बाद जिले में जो पहला मोर्चा हुआ उसमें उसने क्रियात्मक भाग न लिया क्योंकि इन बातों से दूर रहने के कारण उसे पता भी न था—कहाँ क्या तैयारियाँ हो रही हैं या हो चुकी हैं। इस नवीन जागृति से वह

बिलकुल अनजान था। आज उसे उठते बैठते दमन की प्रतिहिंसा ललकारती है। यही कारण था कि प्रतिमा जब उसके घर पहुँची तो थोड़ी देर में ही उसने दोनों हाथ जोड़ते हुए तन-मन-धन से आज़ादी का आन्दोलन बढ़ाने की प्रतिज्ञा की·····

अठारह

प्रतिमा को महमूद के जेल से भाग निकलने का समाचार मिल तो गया पर वह उसके आने की आशा न बाँध सकी। यहाँ हमला करने की तारीख तय हो चुकी है। उसे आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। आज कल प्रतिमा के काम और दौड़-धूप की सीमा नहीं। पूरे जिले का वह चक्कर लगाती है। शहर के बचे खुचे कार्यकर्ताओं से मिलकर उन्हें उत्साहित और संगठित कर आई है। आज़ादी का क़ातिल सुरूर उसे मतवालेपन की साकार मूर्ति बना रहा है। इस बार वह पहले आक्रमण की असफलता को बचाकर पूरी सफलता और निर्भीकता चाहती है। निश्चित समय पर सारे जिले में हजारों हाथ एक साथ उठें·····अपने प्रहारों से सरकारी व्यवस्था को चकना चूर कर दें। भीषण योजना उसने बनाई है। कोई सरकारी कर्मचारी उनकी गति का अवरोध करें तो तुरन्त उसे दुनिया से उठा देना है। किसी प्रकार की दया या मानवीय अनुकम्पा की वहाँ गुन्जाइश नहीं। जिले का भविष्य तरह तरह की सभावनाओं के कच्चे गारों पर खड़ा काँप रहा है। प्रतिमा ने कितनी बड़ी जिम्मेदारी ले रक्खी है। जिले के नेता पकड़े जा चुके हैं; केवल महमूद बाहर है पर दो दिन से--निकल भाग कर। विनाश का भयानक अट्टहास होने जा रहा है। रोज रात को—दिन को—शाम सुबह गाँव गाँव में प्रतिमा पिछले आन्दोलन के फरारों और नये साथियों से मिलती है·····उन्हें समझाती रहती है। लोगों के उत्साह की सीमा नहीं। महीनों से निष्क्रिय जीवन बिताते वे ऊब गये हैं। उन्हें फिर कुछ कर गुजरने का अवसर मिलेगा। पिछली

बार फौज और पुलिस की ज्यादतियों की लोमहर्षक याद उन्हें आती है तो वे बदले की रक्तरोधक भावना से थरथराने लगते हैं। गुलामी का ग्लानिप्रद भार ·····विवशता का यह बोझीला अपमानित आत्मनियंत्रण अब उनसे ढोया नहीं जाता। इस बार पुलिसवालों को आस्तीन के साँप की तरह कुचल कर खत्म कर देना है। हमारे ही टुकड़ों से पल कर ये हमारी मा बहनों पर बलात्कार करते हैं। इन नरपिशाचों को सब से पहले साफ करना है। जिस प्रकार उन्होंने जनता को ··· जनता के सेवकों को तड़पा तड़पा कर मारा है वैसे ही इस बार इन्हें कुत्ते की मौत मारना है—पागल कुत्ते का·····

लोगों की ड्यूटी बँट चुकी थी। जितने थाने हैं उन पर एक साथ प्रहार होगा! पुलिस-स्टेशनों पर एक साथ कब्जा कर एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर बलवाइयों का दल बढ़ेगा। जितने पुल हैं वे सब उड़ा दिये जायँगे। बारूद का प्रबन्ध हो गया है। हथियार भी अच्छे बुरे सब के पास हैं। लाठियाँ और भाले हमारे शताब्दियों के साथी हैं। पुलिस-थानों पर कब्जा करने के बाद हथियारों की समस्या आप से आप हल हो जायगी। सारे जिले का कार्य सूत्र हाथ में लेकर अपनी सरकार चला देनी है। अदालतों तहसीलों में नये अधिकारी नियुक्त कर जनता के शोषण और अवमानित मनोदशा का अन्त कर देना है। शासक शासित के बीच की भयानक विषमता मिटा कर दोनों को एक कर देना है। प्रत्येक निरपराध व्यक्ति जो सामाजिक दृष्टि से सच्चा और निर्दोष है शासक का गर्त और तनाव अनुभव करेगा। जिसकी सामाजिक आत्मा और व्यापक विवक अपराधी है वह शासित बनेगा। केवल यही भेद है जिसे मानना है। ये जो जनता के खून से पली, ऊँची ऊँची तोंदें लिये कलेक्टर, डिप्टी, कप्तान, तहसीलदार, दारोगा, पटवारी और पुलिस के दीवान चलते हैं— जिनकी चर्बी में हजारों मज़लूमों के माँस का सत और निचोड़न होता है अब हमारे स्वामी और जीवन-प्रणेता न रह जायँगे। उन्हें अपने सदियों के पापों का—इस घातक सामाजिक

और राष्ट्रीय अपराध का पश्चाताप करना होगा। हिन्दू मुसलमान का प्रश्न नहीं। अगर हिन्दू मुसलमान जनता का दमन करने के लिये एक हो सकते हैं ....विदेशी सरकार के अनुशासन में बँध सकते हैं तो वे साथ साथ, कंधे से कंधा मिलाकर विदेशी हुकूमत से लड़ाई क्यों नहीं छेड़ सकते! प्राण लेने और प्राण देने के निश्चय के साथ वे आगे क्यों नहीं बढ़ सकते? कारागार की दीवारों के पीछे हिन्दू मुसलमान दोनों के कितने पतझड़ साथ बीते हैं—कितने बसन्त साथ साथ आये हैं। भयंकर कैदखानों में—अन्दमान के नरकों में उन्हें साथ साथ सड़ना पड़ा है! छोटी छोटी मानवीय सुविधा के लिये लम्बी चौड़ी भूख हड़तालें करना पड़ी हैं। ज्यों ज्यों जनता की क्रान्तिकारी शक्ति में उनका विश्वास बढ़ता गया है त्यों त्यों उनके मन जगते और धर्म की सकुचित सीमाओं से ऊपर उठते गये हैं। जन-आन्दोलनों में हिन्दू-मुस्लिम मजदूरों किसानों ने पुलिस की गोलियाँ साथ साथ खाई हैं। आज आजादी के महायुद्ध में वे साथ साथ हिस्सा क्यों नहीं ले सकते? आज जान हथेली पर लेकर इस आग में कूदना है। अपने प्राण की आहुति देकर देश का ऋण चुकाना है। अँगरेज साम्राज्यशाही के विष ने—गलत 'लीडरशिप' ने आज भले मुसलमानों के भीतर साम्प्रदायिकता का जहर घोल दिया हो पर प्रतिमा ने वे दिन भी देखे हैं जब दोनों एक साथ अपना सम्मिलित सीना तान कर पुलिस की लाठियों के सामने खड़े हुए थे। जब उन लोगों से लड़ने का सवाल आया है जो सदियों से हमारी आज़ादी और कमाई हड़प रहे हैं—जिनके जेलों में न जाने कितनी किशोरता—कितना यौवन—कितना प्रौढ़त्व दफ़न हो चुका है तब उनके नेता उन्हें इस जीवन-मरण के संघर्ष से दूर रहने का आदेश दे रहे हैं! देश का कितना बड़ा दुर्भाग्य है। पर उन्हें यह ललकार सुननी होगी। वे भी आजादी की लड़ाई के सिपाही हैं—योद्धा हैं—नेता हैं। उन्हें गलत आदर्श की ओर ले जाने वाले स्वार्थी नेतृत्व का नाश होगा। न जाने कितनी बार—सन् सत्तावन से लेकर आज तक हिन्दू

मुसलमानों ने साथ साथ क्रान्ति के सतत प्रवहमान इतिहास में अपने खून से नये अध्याय जोड़े हैं। कांग्रेस ने उन्हें मिल कर देश के दुश्मनों से लड़ने·····खून की आखिरी बूँद तक लड़ते रहने का रास्ता दिखाया है। दोनों का खून साथ बहा है—दोनों की इज्जत, आबरू, अस्मत साथ साथ लूटी गयी है। दोनों के बेगुनाह बच्चे साथ साथ क़त्ल किये गये हैं। आज जब अभूतपूर्व साहस, वीरता और संगठन के साथ जनता अपने दुश्मनों से लोहा ले रही है तब मुसलमान क्या हिन्दुओं से दूर रहेंगे? प्रतिमा के अणु अणु में लहराता प्रचंड आशावाद यह स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं होता·····हमारा खून चूसने के लिये हिन्दू-मुसलमान एक हो सकते हैं—नौकरशाही के कलंकित साये में मिल सकते हैं तो दुश्मन से अपनी और बहादुर लड़ाकों की रक्षा करने के लिये क्यों नहीं मिल सकते। प्रतिमा यह समझ नहीं पाती। फूट के अंगारों को और अधिक धधकाने वाले—उन पर प्रतिहिंसा के प्रचार का पेट्रोल छिड़कने वाले इस भीषण क्रान्ति-प्रवाह में कहाँ जाकर टिक सकेंगे?

प्रतिमा आज महीनों से योंही छुनी छुनी चारो ओर घूम रही है। उसके जीवन में बरसों से सोया हुआ प्रेरणा का रुद्ध प्रवाह खुल पड़ा है·····धारासार प्लावन के वेग से आगे बढ़ रहा है। वह अपने को, दुनिया को भूल कर मतवाली हो उठी है। जीवन में एक क्षण का विराम नहीं। चलना·····चलना·····बस चलते जाना प्रकाश की मंजिल—आशा की सुनहली किरण का उदात्त आलोक अभी दूर है। पर रास्ते में जो प्राण का पारावार उमड़ रहा है····· जो जिन्दगी का तूफ़ानी बहाव है यह तनिक मन्द न पड़े·····कहीं से इसकी गति में किसी प्रकार की स्थिरता न आने पावे—यही वह चाहती है। जनता को इन हत्यारों के सामने आत्म-समर्पण न करना पड़े·····मशीनगन की तरह अविराम गति से चलते दमन चक्र के खूनी हमले के सामने प्रजा अपने मनोबल को सँभाले, दृढ़ पगों से खड़ी रहे तो विजय कहीं जा नहीं सकती। वह निश्चित है।

प्रतिमा अपने जीवन के भीतर बहने वाली इस धारा को—उसमें उठती हुई आग को कितनी दूर तक फैला दे यह समझ नहीं पाती। उसका मन होता है प्रान्त प्रान्त में वह घूमे ..... लोहू से पानी पर आते हुए इस नये रंग को जमाने भर में फैला दे। कुर्बानियों से चमकती देश की शून्य वेदिका अब भी कितनी प्यासी है! अब भी उसके भीतर का दानव—क्रान्ति का भस्मासुर संतुष्ट नहीं हो पाया। दिशि दिशि से हुन्कारें उठ रही हैं..... कोने कोने से रक्ताक्त नयी जवानी बढ़ी आ रही है। राष्ट्र खून दे देकर अपनी आज तक की भूलों को सुधार रहा है। पाषाण के चरणों पर गिर कर आशा की टकटकी बाँधनेवाली भारतीय मानवता की मिट्टी आज बोल उठी है .....स्वयं बंधन जैसे चेतना की नयी जमीन पर खड़ा मुक्ति को पुकार रहा है..... ...नयी गति से भरी आग के किनारे खड़ा हुआ अभय जीवन जैसे मरण को चुनौती दे रहा है। प्रतिमा को उठते बैठते यह सब लगता है। इसी प्रकार की बिजली के झटके उसे प्रतिक्षण 'करेन्ट' मारा करते हैं। वह बेचैन होकर—हो होकर अपने को ही काटने लगती है। पर यह दाह—यह आत्म-ज्वलन गति के वेग भूला रहता है। चलने में प्राणी का यह महादाह भूल सा जाता है। जब रात को कभी कभी विश्राम का—एकाकी विश्राम का अवसर मिलता है—दिन भर दुनिया में मर्द बनी रहने वाली—घर-घर—गली-गली, गाँव-गाँव घूमने वाली नारी जब रात को फिर कुछ क्षण के लिये नारी बन जाती है तब जैसे सारी अवरुद्ध कर्म के कोलाहल में भूली रहने वाली वेदना भीषण वेग से जाग उठती है। एक अनजानी—अचीन्ही महाप्यास दिल के एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल कर रह जाती है। कौन सी अमलियत है जिसने उसे औरत से मर्द—एक नकली और झूठा मर्द बना रक्खा है। वह अपने को अब यहाँ तक लाकर और कहाँ लिये जा रही है? प्रतिमा यह सब तब तक सोचा करती है जब तक नींद आकर उसके थके हारे तन.....मन को पूर्ण रूप से निष्क्रिय नहीं बना देती।

बलराज और आरती के आने से प्रतिमा को सन्तोष है। उसे आरती का परिवर्तित रूप विचित्र जान पड़ा। उसने जब उसे बदले हुए मर्द के जामे में देखा तो तुरन्त पहचान कर भी उस समय कुछ न बोली। बलराज और कहीं गये थे। आरती महेन्द्र के साथ प्रतिमा के गुप्त अड्डे में हो आई। थोड़ी देर तक महेन्द्र से बात करने के बाद जब उसके मुँह से अनायास अप्रत्याशित रूप से निकल पड़ा—'क्यों न आरती!' तब आरती को जोर की हँसी आ गई। बोली—'आरती यहाँ कहाँ—पर बैजू—महेन्द्र बाबू का नौकर। आपको धोखा हो गया।'

प्रतिमा थोड़ी देर बाद आवश्यक बातें समाप्त कर और लोगों से बात करने चली गयी। आरती वहाँ बैठी रही। इधर उधर लोग थे पर कोई उससे बात न कर रहा था। महेन्द्र प्रतिमा के कथनानुसार एक ओर जा चुके थे। सब लोगों को काम सहेज कर जब प्रतिमा कोने में रक्खी अपनी लाठी उठा कर चलने लगी तो उसी कोने पर दीवार के सहारे बैठी आरती पर उसकी दृष्टि गयी। बोली—'बैजू! तुम अभी बैठे हो। एक बात है। तुम इस वेष को पूरा पूरा उतार नहीं पाई आरती! बाल काट डालने और मर्द की पोशाक पहन लेने से औरत मर्द नहीं बनती। तू अपने चेहरे पर तरंगित स्वभाव-सुलभ कोमलता और नारीत्व को कहाँ कैसे छिपायेगी? तुझे यह सब करने की जरूरत क्या थी। औरत बनी रह कर तू हमारी सहायता न कर सकती थी? क्यों तूने यह नाटक किया? मेरी नकल उतारी है। घर के भीतर बैठ कर वेश-परिवर्तन क्या असर डालेगा। तू मेरे साथ चल। मैं तुझे बदल दूँगी। आधा तीतर—आधा बटेर ठीक नहीं। मगर दूर चलना है। महमूद का कुछ पता मिला। वह जेल से निकल भागा है यह सुना होगा।

सुना है। मैं तुम्हारे साथ रहूँगी अब! इस लिये यह दुःस्साहस किया है। बिलकुल तुम्हारी जैसी बन जाना

चाहती हूँ। मुझे जीवन में अब कुछ नहीं लेना देना। जितनी दूर हो चलूँगी। भैया से कह दूँ। अब महेन्द्र के यहाँ न रहूँगी। तुम्हारा डेरा कहीं न कहीं होगा। तुमने कहा था मैं अपने को इतना नहीं बदल पाई कि लोगों को वास्तविकता का पता न लग सके। तुम्हारे साथ निकलूँगी तो तुम्हें भी कहीं खतरे में न डाल दूँ यह सोचती हूँ।'

प्रतिमा ने कहा—'जंगली रास्ता है। शायद ही कोई व्यक्ति रास्ते में मिले। वही जगह है जहाँ मैंने थोड़े बहुत हथियार इकट्ठे कर रक्खे हैं। बड़ी मुश्किल से मिले हैं। मैंने एक एक हथियार के लिये कोशिश की है। तू वहाँ नहीं गई। महमूद एक बार हो आया है। इतना घना जगल है कि दिन में लोग वहाँ जाने में भय खाते हैं। मैं यथासंभव रात को वहाँ पहुँच ही जाती हूँ। खुद अपने इस छोटे मोटे भंडार पर पहरा देना चाहती हूँ। आज शाम को उन्हें वहाँ से हटा कर पर्वतपूर पहुँचाना है। बैलगाड़ी लेकर नारायण और रघुबीर वहाँ आयेंगे। उनके बँटने का मौका आ गया है ···'

आरती ने कहा—'पर्वतपूर में कहाँ रहेंगे सब ? उन्हें वहाँ से हटाने की जरूरत क्या आ पड़ी ? लोग आकर अपनी अपनी चीज उठा लेते·····खुद बाँट लेते।'

'अभी नहीं बँटना है। ऐन दिन बँटेंगे। उतनी दूर उनका रहना ठीक नहीं। एक जगह जमा रहना भी खतरे से खाली नहीं। उन्हें वहाँ से हटवा कर मैं अपने दायित्व से मुक्त हो जाऊँगी। कहीं पड़ रहा करूँगी। अभी मुझे बराबर वहाँ पहुँचने और रहने की चिन्ता बनी रहती है।

रास्ते में आरती ने कहा—'धीरे तो नहीं चल रही। मर्द को जितना तेज चलना चाहिए उतनी तेज मेरी चाल है न ! अपने मुँह पर ऐसा फर्क ले आना चाहती हूँ कि मरने के बाद भी शिनाख्त न हो सके—'यह आरती का मुँह है·····यह एक औरत की लाश है जो मर्द का वेश रख कर लड़ी है। मर्द की लाश जैसा

सलूक उसके साथ किया जाय। न जाने कहाँ का भराव मेरे शरीर में आ धँसा है। जो चलने नहीं देता। मैं तुम जैसी सुखना चाहती हूँ।'

'एक दिन में आदमी नहीं सूखता आरती! बरसों तिल तिल कर अपने शरीर को सुखाना पड़ता है। तुझे यह क्या सूझी। महमूद इस रूप में देखेगा .....'

'शायद ही मुझे देख सकें। हमारा आक्रमण होने में केवल चार दिन शेष हैं। मैं नहीं समझती वे इतनी जल्द यहाँ आ सकेंगे। बाद में— जिले के स्वतन्त्र हो जाने के बाद वे आये भी तो निश्चय क्या कि मैं मिलूँगी। इतनी बड़ी मुठभेड़ के बाद कौन बचेगा—कौन नहीं यह अभी से कहना क्या अर्थ रखता है?'

प्रतिमा के हृदय में कोमलता की एक सूक्ष्म.....अति सूक्ष्म तरंग दौड़ गई। बोली—'हम जान लेने निकले हैं। आसानी से जान देने नहीं। तू कैसी बात करती है!'

'नहीं दीदी'—आरती ने दृढ़ स्वर से कहा—'मैं अपने को किसी प्रकार धोखे में नहीं रखना चाहती। मैं जानती हूँ जो होने जा रहा है वह कितना भयानक है। लखनऊ में बैठी न जानती थी। यहाँ आकर थोड़े दिनों में समझ गयी। जिस बड़े स्केल पर तुमने यह योजना बनाई है वह अब मुझसे छिपा नहीं। ऐसी दशा में हमको मोर्चे मोर्चे पर लड़ते फिरना होगा। एक ही जगह लड़ कर और जीत कर हम सन्तुष्ट न हो सकेंगे। कहाँ कहाँ मौत से बचत माँगोगी? मैंने दृढ़ संकल्प किया है भाभी से कम शानदार मेरी मौत न होगी। उनकी मौत के समय उनकी बगल में महमूद थे.....मेरी आँखें तुम्हें देखते देखते—तुम्हारी हुँकार के ताल पर अपना दम तोड़ते हुए मुँदेंगी। मैं प्राण लेकर भाग न सकूँगी। लड़ाई के मैदान में मर कर जीवित यादगार छोड़ जाना अधिक श्रेष्ठ है। आरती के वेश में यहाँ स्वतन्त्रता पूर्वक निकल न सकती थी। बहुत से लोग आसपास के जानते पहचानते होंगे। अब मैं तुम्हारे साथ

रह सकूँगी—घूम सकूँगी·····मौका पड़ने पर प्राण देकर तुम्हारे कीमती प्राण बचा सकूँगी। रह गयी महमूद से मिलने की बात। महमूद के लिये जब मा बाप को छोड़ दिया तब इस मिलने से बड़ा कोई मिलन है! वे इस बात को जानते हैं। उनके दिल में मुझसे मिलने का जज़्बा साल दो साल नहीं उठता। मिल वे मुझे पहले चुके हैं। मैं किसी से नहीं मिलना चाहती। अब तो संघर्ष—केवल संघर्ष। दुश्मनों का खून! भाभी की हत्यारी सरकार ·····उसके प्रतिनिधियों का खून! वही मैं चाहती हूँ—वही मुझे मिलने दो। जी भर मिलने दो··· ···'

प्रतिमा ने उत्साह से कहा—'मिलेगा—जी भर मिलेगा। यहाँ मिलेगा—लखनऊ में मिलेगा। सूबे में—पूरे हिन्दुस्तान में मिलेगा। पचासी साल से अपने को दलता रहने वाला देश आज मृत्युन्जय बन कर उन्मत्त हो उठा है। एक भाभी का बदला लेना है! न जाने कितनी भाभियों, भाइयों का रक्त हमें बदले के लिये ललकार रहा है। न जाने कितने भतीजों, भतीजियों का निर्मम बध ·····उन पर किये गये बर्बर अत्याचार हमें प्रतिहिंसा का दावानल बन जाने की चुनौती दे रहे हैं। पर·····इतना निराश नहीं होना है। अभी तेरी शादी बाकी है ·····'

आरती खिलखिला कर हँस पड़ी। दूसरे ही क्षण उसकी हँसी विराट शून्यता की छाँह बन कर आप से आप विलोप हो गयी। जैसे एक शक्ति के खोने और दूसरी के साथ साथ उभरने में प्राणवान तार लगा रहता है। उसकी आँखों में वह सब उभर उभर कर बाहर आने लगा जो अपने ही भार से दबा दबा पड़ा रह जाता है। जैसे भक्ति पर वेदना की पीली, विषण्ण छाया फैल आती है। प्रतिमा को यह चीज पहचानी-सी लगी। ऐसा ही तूफान उसके जीवन में आया था—साहस और हौसलों को ज्वालाकार बनाने वाला वैसा ही तूफान आरती के जीवन में आया है। ऐसे तूफान आज भी शान्त होती तपन को बढ़ाते हैं। ऐसे ही तूफानों की आज मुल्क में

घर घर जरूरत है। प्रतिमा ने फिर कहा—'महमूद जहाँ होगा उलझनों और कामों से घिरा होगा! उसे एक जिले या मोर्चे की सीमा में नहीं रहना। अब उसे प्रान्त, प्रान्त, देश भर में चक्कर लगाना चाहिये। लोगों के अन्दर जेलों में बन्द साथियों को छुड़ाकर भाग निकलने की प्रेरणा पैदा करनी चाहिये। यहाँ का काम खत्म होते ही तुम जा उसके साथ रहो। इस काम में उसका हाथ बँटाओ। तुमको साथ पाकर वह और उत्साह से काम कर सकेगा। उसका पता लखनऊ में साथियों से लग जायगा।'

आरती ने कहा—'बच गई तो मैं भी बाहर निकलूँगी। जा जाकर जेलों को आबाद करने का इरादा हमें छोड़ देना चाहिये। बहुत हो चुका यह। साथ साथ तुम मेरी उनकी शादी की बात करती हो। जब मुल्क की बरबादी हो रही है—सारी दुनिया की जान खतरे में पड़ी तिलमिला रही है तब मेरी शादी! हमारे सामने मुल्क की शादी का ख्याल है। इन्सान की शादी ठहर सकती है। दुख और अत्याचार के भीतर से टपकते मानवता के रक्त को देखती हो·····

प्रतिमा ने कहा—'तुम्हारी शादी देखने के लिये जीवित रहना चाहती हूँ। भाभी जिस मुराद को लिये चली गयीं उसे तुम्हारी माँग भरते देखना चाहती हूँ। उठते बैठते इसे भूल नहीं पाती। एक बरस लग सकता है—दो लग सकते हैं। तूफानों के बीच समय बीतते क्या देर लगती है! यह होकर रहेगा। मौत ठोकर मार कर मेरी पसलियां तोड़ दे सकती है। मैं होऊँ न होऊँ मेरी यह साध जीवित रहेगी। प्रत्येक संकट, प्रत्येक खतरे, प्रत्येक पराजय से तुम्हारी रक्षा करेगी। यही नारी का अन्त है। यही उसकी व्यक्तिगत और समाजी परिणति है। इससे जिसने इन्कार किया वह डूबी। कुछ ऐसी होती हैं जो इन्कार करने के पहले ही डूब जाती है। सौख्य, सृजन, सौकुमार्य के तल तक कभी नहीं उभरतीं। उसका वीराना जीवन कभी आबाद नहीं होता। मैं नहीं चाहती तू ऐसी होकर रह जाय। तुझे

जीवन का वह सब प्राप्त करना है जो एक स्वतंत्र क्षेत्र·····स्वतंत्र, रूढ़ियों से मुक्त, धर्म की दानवता से छूटे समाज में प्राप्त होता। जहाँ तेरे सुख-माधुर्य का स्वर जीवन की लहर लहर पर गूँज उठता····'

आरती ने कहा—'थी मेरे भीतर दोनों हाथ से तन मन का सुख लूटने की आकांक्षा·····किसके जीवन में नहीं होती·····कौन जीवन में परिपूर्ति पाने की लालसा नहीं रखता। अब मेरे सामने वह सब नहीं। अब है केवल कर्त्तव्य की आग-भरी प्रेरणा जिसमें धीरे धीरे सुलगती रहती हूँ। मेरे जैसे असंख्य युवक-युवती जिसके ताप में बराबर सिंकते रहते हैं। यहाँ मैं अकेली नहीं। मेरी ज्वाला सारे राष्ट्र की ज्वाला है। मेरा अरमान देश की जाग्रत मानवता का अरमान है। उसके ध्यान में मैं अपने व्यक्तिगत सुख-दुख भूल गयी हूँ।'

प्रतिमा ने कहा—'यही होना चाहिये। हमारे सामने शहीदों के रक्त से भीगा रास्ता है—जलती आग की लहरों पर मँडराते स्वप्न हैं जो प्रलय के भीषण झंझावात में भी न मुरझाँयगे। यह विराट जन-विप्लव इस बार सफल होगा। हमारे गाँव में सफल होगा—प्रान्त में सफल होगा—पूरे देश में सफल होगा। इसके बाद समाजी व्यवस्था में विप्लव होना है। लोग विप्लव का नाम सुनकर घबराते हैं····· सोचते हैं यह विनाश की भूमिका है। लेकिन निर्जीवता और जड़ता की अगति में पड़े समाज को फिर से गतिवान बनाने की चेष्टा का नाम विप्लव है। हमें दोहरा संघर्ष करना है। विदेशी आततायियों के बाद उन देशी शोषकों को समाप्त करना है जो श्रेणी-भेद का लाभ उठा कर हमारा तन चूसते हैं·····अपने महल भरते हैं। दोनों संघर्ष साथ होंगे। दोनों में हम सफल होंगे·····दोनों अभीष्ट हैं।'

आरती ने कहा—'हमारे पास तोप, बम, मशीनगन, राइफिल कुछ नहीं। हम निहत्थे हैं पर जागृति की नयी किरण हमारी जिन्दगी में उतर चुकी है। ऐसी प्रखर जन-चेतना—अत्याचार-जनित उद्विग्नता

से त्राण पाने की ऐसी आकुल आकाँक्षा देश में शायद ही कभी इस प्रचंड वेग से जली हो। विद्रोह में सफलता-असफलता का प्रश्न नहीं उठता। प्रत्येक विद्रोह सफल है। प्रत्येक शीशदान—एक एक बलिदान जय का विराम-चिन्ह होता है। जो पराजित हो जेल की चहारदीवारियों में बन्द हो जाता है वह नैतिक बल को उत्तेजित नहीं करता।'

प्रतिमा ने कहा—'अँगरेज अपने दमन के मद में फूले पड़े हैं। पूरी कड़ाई से उन्होंने हमें कुचला है। सोचते होंगे—काँग्रेस मर गयी। जनता वर्षों सर न उठा सकेगी। हमारे आतंक से मरी अपने आप में पराजित आग छिपाये पड़ी रहेगी। पर आग पराजय नहीं जानती। या बुझ जाती है या अविजेय, अपराजेय बनी रहती है। क्रान्ति और असन्तोष को जन्म दे देकर बराबर अपना ताप विकीर्ण करती है। वह बुझी नहीं·····बुझ सकती नहीं। उसे जलना है·····भीतर-भीतर राख से ढँकी रह कर जले·····चाहे प्रचंड लपटों में प्रज्वलित और साकार होकर। अब मैं चलूँगी। महमूद का रास्ता देख रही हूँ। किसी क्षण आ सकता है। पर उसके लिये हमें रुकना नहीं।'

आरती ने कहा—'उनका दिल यहाँ लगा होगा। मौका ढूँढ रहे होंगे। देखना दीदी! ऐन वक्त पर आ जाँयगे। जो जलन उन्हें बेचैन कर जेल से बाहर निकाल लायी है वह यहाँ खींच लायेगी। हम लोगों से मिलने के लिये उनका दिल बेक़रार होगा। आकर वे देखेंगे कुर्बानी और लड़ाई में उनका ज़िला सब से आगे है।'

उन्नीस

नौकरशाहों ने जनता के आन्दोलन को कुचलने में अत्याचार और बर्बरता की हद कर दी। पूरे जिले में आतंक जमा कर वे चले गये थे पर भीतर भीतर धधकती रहने वाली ऐसी आग छोड़ गये जो चारो ओर फैल कर—पूरे जिले को—उसकी

सरकारी व्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट कर देना चाहती है। गाँव-गाँव, तहसील-तहसील में वर्ग-वर्ग की एकता की नींवे मजबूत हो रही हैं। जनता का विश्वास और साहस दृढ़ हो रहा है। उसके लड़खड़ाते पैर जम रहे हैं। गाँव-गाँव, थाने-थाने में तैनात पुलिस की टुकड़ियाँ उनके जंगी प्रदर्शनों को सँभालने में फिर अपने को असमर्थ पाने लगी हैं। नेता जेलों में बन्द हैं—खूनी अफ़सरों का राज्य है पर अपने ऊपर लगे प्रतिबन्धों को तोड़ मरोड़ कर जनता झंझा-गति से जाग उठी है। पर सोई ही कहाँ थी। वह तो घावों की तिलमिलाहट थी जिसने थोड़ी देर के लिये उसे निश्चेष्ट बना दिया था। आज उसने फिर आवाज बुलन्द की है—चलाओ गोली! हम नहीं डरते। शहीदों·····बलिदानों का बदला लेकर रहेंगे। मौत को चुनौती देकर वह फिर निकल पड़ी है। उसका जोश बेमिसाल है। एक एक शहीद के रक्त की—एक एक लुटी अस्मत की उसने शपथ ली है। देश के स्वतंत्रता आन्दोलन ने तमाम पुराने बन्धन तोड़ कर फेंक दिये हैं। जनता के अब तक के अनुभव उसे लड़ने पर मजबूर कर रहे हैं। लड़ने वालों की संख्या प्रति दिन बढ़ती जाती है। चारो ओर लड़कर आज़ादी लेने की प्रतिज्ञा दोहराई जा रही है। ऐसी इस्पाती एकता दिखाई दे रही है जो संघर्षों की भट्टी में तपा-तपा कर गढ़ी गई है·····जिसे देखकर पस्त से पस्त हृदय में भी नई आशा—नई जिन्दगी की पिपासा जाग उठती है। हमले की ऐसी दृढ़ और सूत्रबद्ध तैयारी की गई है कि इस बार निपटारा हो के रहेगा। आरती बराबर घूमती रहती है। उसे कोई पहचान नहीं पाता। अपनी धुन में डूबी गाँव गाँव जाकर आखरी मोर्चे के लिये लोगों को तैयार कर रही है। महमूद के आने की आशा प्रति-क्षण उसके प्राण में जागती रहती है। ज्यों ज्यों आक्रमण का दिन नज़दीक आता है त्यों त्यों उसकी आतुरता बढ़ती जाती है। हथियारों का वितरण हो चुका है। कार्यकर्ताओं को अपने अपने काम सौंपे जा चुके हैं। मीटिंगों की घोषणा हो चुकी है। जगह जगह सभायें होंगी जहाँ स्वतंत्रता की शपथ ली जायगी·····इसके

बाद जुलूस गाँव में घूम कर थानों पर कब्जा करेगा। स्टेशनों पर अधिकार कर लिया जायगा। पटरियाँ उखाड़ कर·····तार काट कर, पुलों को नष्ट कर बाहर से आने जाने का मार्ग बन्द कर दिया जायगा। हवाई जहाज से सेना दमन के लिये आयेगी तो नीचे से उस पर गोलियाँ चलाई जाँयगी। अंतिम क्षण तक लड़ने, आत्म-समर्पण न करने का संकल्प सब लोग कर चुके हैं।

नियत दिन आ पहुँचा। चारो ओर सभायें होने लगीं। स्वतंत्रता की प्रतिज्ञा दोहराई जाने लगी। जब तक थानों में संवाद पहुँचे और ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति के प्रतिनिधि सिपाही और थानेदार घटनास्थल पर पहुँचने की तैयारी करें तब तक जय-जयकार करती, झंडा फहराती भीड़ें थानों की ओर बढ़ चलीं। हिन्दू-मुसलमान की जय, अपनी रोटी अपना राज, वन्देमातरम और इन्किलाब जिन्दाबाद, के नारों से वातावरण काँप रहा था। पुलिस के सिपाही और दारोगा पहले गोली चलाने की—शक्ति-प्रदर्शन की धमकी देते हैं बाद में निरुपाय होकर·····चारो ओर लटकती मौत की नंगी तलवार देखकर जन समूह में मिल जाते हैं। गान्धी टोपी लगाकर गान्धीजी और नेहरूजी की जय बोलते नज़र आते हैं। उसके पहले तार काटे जा चुके हैं—रातोरात रेल की पटरियाँ उखाड़ डाली गयी हैं। जो गाड़ी जहाँ थी वहीं रुकी खड़ी हैं। स्टेशनों पर गाड़ी की प्रतीक्षा में बैठे मुसाफिर ग्रामीण जनता की बढ़ती भीड़ों को आश्चर्य-पूर्वक देखते हैं—फिर उन्हीं में मिल कर इमारतों और स्टेशन के अन्दर सामान, तार, सिगनलों को नष्ट करने लगते हैं। उनकी प्रतिहिंसा का आरपार नहीं है! साम्राज्यवाद के शव को वे नोच कर टुकड़े टुकड़े कर देना चाहते हैं। लोगों के हाथों में गुप्त, उत्तेजक परचे हैं जिन्हें पढ़ पढ़ कर उनका खून खौल रहा है। आन्दोलन के वेग, फैलाव और उग्रता का पता आज चल रहा है। पुलिस-चौकियों, डाकखानों, तहसीलियों और स्टेशनों पर तिरंगे झंडे फहरा रहे हैं। पहले से

अधिक जोश, संगठन, हिम्मत के साथ लोग उठ खड़े हुए हैं। दो दिन के भीतर अँगरेजी शासन और व्यवस्था का अन्त हो गया है। जिस घमासान रक्तपात की आशंका प्रतिमा और उसके साथियों ने की थी वह भाग्यवश एक दो स्थान छोड़ कर कहीं न हुआ। जहाँ हुआ वहाँ पुलिस के सिपाही मारे गये हैं या घायल होकर भाग चुके हैं। अधिक देर तक वे जनता के संगठित बल के सामने न टिक सके।

जनता का असन्तोष और क्रोध जब क्रान्तिकारी रूप धारण करता है तब बड़े बड़े साम्राज्यों की नींवें हिल जाती हैं। तभी सर्वहारा का विराट संयुक्त मोर्चा बनता है जिसके सामने बाधाओं के समुद्र सूख जाते हैं—कठिनाइयों के हिमालय गल जाते हैं—दमन के ज्वालामुखी निस्तेज पड़ जाते हैं। प्रतिमा ने आज चारो ओर कर मिट या मर मिट का बलिदानी तूफान खड़ा कर रक्खा है। वन्देमातरम् का भाव भरा गीत गाया जा रहा है। तिरंगा झंडा शान के साथ वायु की लहरियों पर लहरा रहा है। जितना वह ऊपर उड़ता है उतनी ही आजादी की माँग ऊँचे जाती है। हवा की थपेड़ों के सिर पर खड़ी होकर यह माँग दिग्-दिगन्तों में व्याप्त हो उठी है। कौन शक्ति है—दमन का कौन रूप है—अत्याचार का कौन भयानक विस्फोट है जो इसे रोकेगा! यह इन्सानी खून की फरियाद है—आत्मा की पवित्रतम गहराई का आह्वान है यह! इसी पुकार के पीछे नतमस्तक हो अमरता चलती है·····इसके साथ सिर झुकाये नूतन निर्माण चलता है·····इसका क्षण-क्षण बलिदानों का इतिहास बन जाता है। यह वीर-प्रसविनी, आग उगलने वाली ललकार आज प्रचंड वेग लेकर आन्धी की झपटों का संचार करती घहरा रही है·····देश-व्यापी अन्धकार की नसों में किरण की धार बन कर फूट पड़ी है। सरकार के पुराने हिमायतियों, पिट्ठुओं और जमींदारों का साहस नहीं होता कि प्रतिहिंसा के उत्साह-उमंग से भरे जन-समूह के सामने आयें। भीतर भीतर वे लोग आशंकित हैं। जिस अँगरेजी साम्राज्य में

सूर्य नहीं अस्त होता उसके विरुद्ध कब तक ये निहत्थे बाग़ी टिक सकेंगे ? इस समय सरकारी कर्मचारियों की भाँति वे भी दाँत निकाल निकाल कर अपने को जनता का सेवक घोषित करते—रैयत का राज्य स्थापित हो जाने पर सुख प्रकट करते हैं। जानते हैं जनता को किसी प्रकार की धमकी देना व्यर्थ है। वह अपने प्राण हथेली पर ले सब कुछ करने पर तुली बैठी है। देश को—देश की धरती को बाँधने वाली प्रत्येक चीज को वह नष्ट-भ्रष्ट करने पर तुली है। आगे चल कर जब फौज आयेगी—ऊपर से गोलियों-बमों की वर्षा होगी तब क्या होगा इसकी किसी को चिन्ता नहीं। इस समय विदेशी शासन के अड्डों को अपने अधिकार में ले लेना है—परतंत्रता के चिन्हों को सदैव के लिये मिटा देना है। बाद में जो पड़ेगी झेल लेंगे। अधिक से अधिक जान ही तो जायगी। उसके लिये सब तैयार हैं। आजादी के कुछ दिन गुलामी के लम्बे जीवन से अच्छे हैं।

प्रतिमा, बलराज, आरती और अन्य साथियों की व्यस्तता और दौड़-धूप का ओर-छोर नहीं है। गाँव-गाँव, तहसील-तहसील में वे ही लोग पंच, मुखिया, चौधरी, तहसीलदार, डिप्टी, दारोगा जो कहिये बन गये हैं। न नियुक्ति का प्रश्न है—न चुनाव का। पहले से ही वे जनता के थे—अब और हो गये। लोग उनकी जय-जयकार मनाते हैं। उनके संकेत पर प्राण देने, प्राण लेने के लिये तैयार थे। पर्वतपुर में सब लोग मन्त्रणा करने अगला कार्यक्रम बनाने के लिये इकट्ठे होते हैं। सरकार की सम्पत्ति नष्ट हो जाने से—सरकारी सत्ता के असमर्थ हो जाने से जनता को असुविधायें हैं पर विजय के मद में वह सब भूली पड़ी है। कचहरी के झगड़े, लगान की चिन्ता, आपसी झगड़े और भेदभाव, सब भूल कर लोग अपने राज्य के आनन्दोत्साह में फूले फूले फिरते हैं। देश की आजादी के लिये प्राण दे देने की प्रतिज्ञायें उठते बैठते होती हैं। अब जैसे किसी को किसी से शिकायत नहीं। सब के मन और आत्मायें शान्ति और

बंधुत्व में डूबी हैं। कैसी परिभाषाहीन उदात्त अवस्था है। केवल दो दिन की स्थानीय स्वाधीनता ने उनकी दृष्टि बदल दी है। यहाँ तक कि हिन्दू-मुसलमान का भेदभाव मिट गया है। सब के सामने केवल एक प्रश्न है—कैसे इस स्वाधीनता की रक्षा की जाय? यह सुखद, अभिमानपूर्ण स्थिति कब तक चलेगी? कब तक विदेशी फौज और पुलिस का शिकंजा इस प्रकार टूटा रहेगा? उसे जुड़ते क्या देर लगती है! तब जो संघर्ष होगा—जो घमासान युद्ध होगा उसमें कौन बचेगा कौन नहीं! घर घर में बल्लम-गँड़ासे पैनाये जा रहे हैं। भाले और तलवारें जिनके पास हैं वे उन्हें सँभाल रहे हैं। पिछली बार जो गाँव देशभक्तों के खून से लाल हो उठे थे वे इस बार बिना रक्तपात के स्वतन्त्र हो उठे हैं। जहाँ पुलिस और जनता में मुठभेड़ हुई है वहाँ पुलिसवालों को जान देकर या घायल होकर भागना पड़ा है। वे सब जिले के बाहर से आने वाली पुलिस और फौज की राह देखते समय काट रहे हैं। भीतर भीतर उनके क्रोध और असंतोष की सीमा नहीं। आने दो इस बार फौज को। एक एक किसान को जूतों से पीटा जायगा। पिछली बार मुलायमियत से काम लिया गया है। इस बार इन काँग्रेसी बदमाशों को ऐसी सजा दी जायगी कि हमेशा के लिए टूट जाँय—कभी बग़ावत न कर सकें। सरकारी अहलकारों, कान्स्टेबलों और चौकीदारों के क्रोध की सीमा नहीं है पर विवश हैं। मन ही मन फुँकार कर रह जाते हैं.....

जब से आरती आई तब से अब तक शमीम से नहीं मिल पाई। लगातार तैयारियों में फँसी रही। जनता ने अपने हाथ में व्यवस्था की बागडोर ले ली है तब से काम का एक हिस्सा खत्म हो गया है पर अभी सब झेलना बाकी है। आरती तथा अन्य सब साथी जानते हैं। उन्हें मालूम है पिछली बार जो हुआ था उससे न जाने कितने गुना इस बार होगा। उनका निश्चय दृढ़ है। रणभूमि में शत्रु से लड़ते-लड़ते—आजादी की रक्षा करते-करते

अपने प्राण देने का उन्होंने निश्चय कर लिया है। उनके जीते पुलिस वाले और फौजी किसानों के घर में न घुस सकेंगे—उनकी औरतों को बेइज्ज़त न कर सकेंगे। महमूद का अब तक पता नहीं। आरती की आँखें उसे ढूँढ़ा करती हैं मगर पातीं नहीं। वैसी ही रिक्त, प्यासी रह जाती हैं। अपने माता-पिता से मिलने भी वह नहीं गई। इन कुछ महीनों के भीतर क्या क्या हो गया—कैसे बड़े बड़े परिवर्तन हुए·····जीवन कहाँ से कहाँ चला आया! जो न सोचा था वह हो गया! स्वप्न में जिसकी संभावना न थी वह खो गया ·····हमेशा को खो गया। संघर्ष की जिन लपटों से जान-पहचान, परिचय न था वे जीवन को भस्मीभूत करती उमड़ आईं। प्रतिमा, बलराज बराबर घूमते रहते हैं। साथियों को एक दूसरे से बात करने मिलने-जुलने का अवकाश नहीं। उसके और भैया के यहाँ आने की खबर भी शमीम को संभव है न हो। सुकरू को उसने मना कर दिया था। और कौन है जो वहाँ यह समाचार देने जायगा। महमूद के जेल से भाग निकलने की खबर उन्हें मिली होगी। वे भी उसकी तरह महमूद के लिये पलक-पाँवड़े बिछाये बैठा होंगी। महमूद के यहाँ तक आने में कठिनाइयाँ हैं—जैसी बाधायें हैं वे सब आरती समझती है। शमीम उन्हें क्या समझती होगी? वह महमूद की सूरत देखने के लिये अधीर हो उठी होगी! अधीर आरती भी है। महमूद को देखने·····देर तक देखते रहने·····आँखों द्वारा उसे भीतर-भीतर पी लेने की लालसा आरती को कम नहीं। लेकिन आरती और बहुत सी बातें जानती समझती है जिन्हें शमीम नहीं समझती। उनकी आँखों में भाई की मुहब्बत ने पर्दा डाल रक्खा है जब कि आरती की आँखों में इस पवित्र प्रेम ने·····उसकी घनीभूत, श्यामल-श्यामल तन्मयता ने नवीन प्रकाश की मशाल जला दी है। आरती को लगा वह शमीम से बिना मिले न रह सकेगी। उसकी नयी बालकटी सूरत देखकर शमीम को कैसा लगेगा·····अचकचाकर रह जायगी वह!

महमूद की कोठी पर अब पहरे का नाम न था। गाँव में जब रैयत का राज स्थापित हो चुका तब देशभक्त के मकान पर पुलिस की निगरानी कैसी ! प्रतिमा और बलराज बाहर थे। आरती ने पुरुष की पोशाक उतार कर एक साड़ी पहन ली। चादर से सिर और मुँह ढाके वह भीतर प्रविष्ट हुई। अपने कमरे में बैठी शमीम ज़ोहरा को पढ़ा रही थी। आरती ने चादर एक ओर फेंक दी—दौड़कर शमीम से लिपट गई। शमीम ने कुछ क्षणों में आरती को पहचान लिया। उसकी वेशभूषा और कटे बालों में अपने को छिपाने की चेष्टा करते हुए भी न छिपा सकने वाले मुँह को देखकर कुछ देर हैरत में डूबी रहने के बाद बोली—'कहाँ से आ रही हो ? अब तक कहाँ थीं ? यहाँ तख्ता पलट गया। सुनती हूँ रियाया ने अपनी हुकूमत कायम कर ली है। बैठो !'

आरती जमीन पर बैठ गयी। आवेग-विह्वल कंठ से वह बोलने की चेष्टा करने पर भी न बोल पा रही थी। शमीम के मुख पर चिन्ता और उदासी की काली रेखायें वक्राकार खिंची थीं। पिछले महीनों में उसके मन पर जो बीता था उसने उसे जैसे निष्प्राण, निष्प्रयोजन बना दिया। पहले की तरह स्नेह-स्निग्ध हरीतिमा और श्यामलता तो है पर चारो ओर से झुलसी झुलसी-सी। बोली—'महमूद जेल से भाग निकला है। तूने सुना होगा—वह कहाँ है ? दुबारा पकड़ लिया गया तो खैरियत नहीं। तुझे उसका पता है ? भैया कहाँ हैं ? तू आई कैसे ? मैंने सुना रेलें बन्द हैं ?'

आरती ने धीरे धीरे सब बताया। शमीम को विश्वास न हो रहा था। ये लोग हफ्तों से यहाँ हैं पर उससे मिले नहीं। भैया ने उसे खबर देने की—उसकी सुध लेने की आवश्यकता न समझी ! बोली—'तुम लोगों को भी महमूद का पता नहीं। यहाँ आने के लिए उसका दिल फड़फड़ा रहा होगा। तेरा सामान कहाँ है ? अब यहीं रह। कहीं जाने की जरूरत नहीं !'

'नहीं बाजी ! सिर्फ तुमसे मिलने आई हूँ। मेरा यहाँ रहना

अभी ठीक नहीं। हम लोगों पर संगीन जुर्म लगाये जाँयगे। मेरा तुम्हारे साथ किसी तरह का संपर्क न साबित होना चाहिए। यों वास्तविकता लोग जानते हैं। पर इस बार के आक्रमण से किसी प्रकार का तुम्हारा सम्बन्ध है यह प्रकट हो गया तो व्यर्थ उलझन में पड़ोगी। मैं बराबर आती रहूँगी। ज़ोहरा मेरी गोद में क्यों नहीं आती। मुझसे डरती है? क्यों री! मुझे बिलकुल भूल गयी! प्रतिमा दीदी ने मुझे मना कर रक्खा था। पर तुमसे मिलने के लिए बराबर अधीर रही हूँ। भैया काम में ऐसे फँस गये—यहाँ आते ही—कि तुमसे मिल न सके। हम लोगों ने इतने कम समय में सफलता पाई।'

'क्यों प्रतिमा ने तुम्हें मुझसे मिलने को मना किया? क्या मैं मुखबिर हूँ?'

'नहीं बाजी'—आरती ने हँस कर कहा—'उनका ख्याल था तुम्हारे पास मैं आऊँगी तो उस महान उद्देश्य को भूल जाऊँगी जिसके लिये हम लोग हथेली पर जान लेकर आये हैं। उन पर नाराज न हो बाजो! तुम नहीं जानती वे किस पत्थर की बनी हैं। कर्तव्य की कठोरता और महानता साकार होकर उनके रूप में पैदा हुई है·····'

शमीम ने कहा—'उनका रोकना मुनासिब हो सकता है। पर तुम लोग मुझे जानते हो। कभी मैंने तुम लोगों के रास्ते में रुकावट डालने की कोशिश की? महमूद इसे जानता है। भैया इसे जानते हैं। मैं मदद न कर सकती तो तुम्हारे रास्ते में रोक-थाम भी न पैदा करती। खाने पीने का क्या इन्तजाम है? तुम लोग कहाँ ठहरे हो—?'

'कहीं नहीं बाजी! एक ठिकाना नहीं। कभी कहीं—कभी कहीं। मैं बहुतों का नाम भी नहीं जानती। बहुत से गाँवों में इस बीच घूमी हूँ। खाने पीने का हमें होश नहीं रहता। जब जहाँ जो मिल गया खा लिया·····जहाँ

थककर चूर हो गये सो गये। जहाँ नाव दिन भर चलने के बाद लग गयी वहीं किनारा बन जाता है।'

'क्या शक्ल बना रखी है! न मर्द में—न औरत में! बालों ने क्या बिगाड़ा था? सोचती हो इस तरह अपने को छिपा सकोगी? लोगों की आँख में धूल नहीं झोंकी जा सकती। मर्द मर्द है—औरत औरत। दोनों एक नहीं हो सकते। तुम्हें क्या खिड़वाड़ सूझा! भैया ने रोका नहीं।'

आरती ने कुछ उत्तर न दिया। शमीम की आँखों में कौतुक की हल्की रेखा उभर आई। आरती अर्ध-मुदित मन से उसकी ओर देख रही थी। उन आँखों में—उनकी व्यथा-सिक्त पुतलियों में जो कठोर अनहोना था वह आपसे आप गला जा रहा है। इस गलन में रह रह कर जीवन का मूक विस्मय नाच उठता है जो आरती को इस समय पूरे वेग से मार रहा है। शमीम ने दो मिनट रुक कर कहा—'महमूद तुम्हें इस रूप में देखेगा तो क्या कहेगा? तुम्हें देखेगा·····'

'दुमकटी कबूतरी—बाजी! और वे क्या कहेंगे। इसके अलावा मेरा नाम इस सूरत में क्या हो सकता है।'—कहकर आरती जोर से हँस पड़ी।

आरती ने कुछ देर बाद गंभीर होकर कहा—'देखो बाजी! अपने को छिपाकर—बचाकर काम करना होता है तब इन छोटी छोटी बातों पर ध्यान नहीं दिया जाता। मुझे अपने को पुलिस की निगाह से बचाना है—परिचितों और गाँव वालों की पहचान में नहीं आना है। प्रतिमा दीदी, भैया, दूसरे साथी दिन-दिन, रातरात एक कर—दौड़ दौड़ कर काम करते·····मैं कमरे में बन्द पड़ी आराम करती। मैंने देखा मेरे मार्ग में मेरा रमणीत्व बाधा है। एक क्षण में फैसला कर लिया। मुझे अब इन बातों का मोह नहीं।'

जोहरा अब आकर आरती की गोद में बैठ चुकी थी। उसकी

ठोड़ी पकड़ कर हिलाती हुई बोली—'मामू कब आयेंगे मासी! वे कहाँ हैं—तुम्हें पता है?'

आरती ने प्यार करते हुए कहा—'क्या बताऊँ बेटी! जहाँ तू, वहाँ मैं।'

'और बड़े मामू! तुम कहती हो वे यहाँ है। हमारे घर क्यों नहीं आते। तुम्हारे साथ क्यों नहीं आये? अम्मीजान! उन्हें बुलाओ न। तुम बुलाओगी जरूर आयेंगे। तुमने बुलाया नहीं इसलिये नहीं आये।'

शमीम ने कहा—'सुनती हो इसकी बात! मैंने मना कर रक्खा है। इस घर में आने के लिये अब उन्हें बुलाने की जरूरत पड़ा करेगी। आरती! तू रह जायगी तो भैया इस बहाने एक बार आ जायँगे।'

आरती ने प्रयत्न किया पर शमीम न मानी। रात को आरती ने महमूद की कोठी पर रह जाने का निश्चय किया। जानती थी भैया और प्रतिमा कल दोपहर के पहले न लौटेंगे। रात में खाना खाकर जब लेट गयी तब शमीम ने कहा—'तुम लोगों ने सब कर डाला मगर पिछली बार की तरह फौज आयी तो क्या होगा? कत्लेआम शुरू हो जायगा। इतनी बड़ी सल्तनत की हुकूमत से लोहा ले तुम लोग कितने दिन टिकोगे?'

आरती ने कहा—'असली लड़ाई बाकी है बाजी! हमने आसानी से मोर्चे सर कर लिये हैं। जितनी मुखालफ़त की आशंका थी उतनी न हुई। बाहर से हमला होगा तब हमें मैदान में उतरना होगा। सोचो यह खबर बाहर जायगी तब हमारे आन्दोलन को कितना बल मिलेगा। लोगों की मुर्झाई उम्मीदों पर नये साहस और बल का पानी पड़ जायगा। हम मिट भी गये तो क्या होगा! लोग आते हैं·····चले जाते हैं, पैदा होते हैं·····जीते हैं·····मरते हैं, पर आजादी की लड़ाई तब तक

जारी रहती है जब तक मुल्क से जुल्मी सरकार खत्म नहीं हो जाती। हमारे पास हथियार हैं। आसानी से हम न मरेंगे—दो-दो चार-चार को मार कर मरेंगे। इतिहास में इतना तो अमिट अमर हो जायगा कि इतने दिन तक हमारे जिले में अँगरेज़ी सरकार का अन्त रहा—हम लोगों ने अपनी स्वतंत्र व्यवस्था कायम की। प्रान्त और देश को नयी प्रेरणा मिलेगी। विप्लव के ये बादल मुमूर्ष देश के प्राण में नया राग भरेंगे।'

शमीम सो गयी है पर आरती को नींद नहीं आ रही। पिछली बार वह जब यहाँ थी तभी उसे भाभी की मृत्यु-शय्या का मर्मघातक संवाद मिला था। इसके बाद वह भाभी को जीवित न पा सकी। महीनों बाद आज फिर उस कमरे में—उस पलँग पर लेटी है। अगहन की रात·····तारों की छोहभरी रात अपनी शीतल श्यामलता में कैसी उन्मादक लग रही है! रह रह कर उसके भीतर चिन्ता उठ खड़ी होती है कि महमूद यहाँ क्यों नहीं आया। उसने अपना समाचार किसी विश्वस्त साथी के द्वारा क्यों नहीं शमीम, प्रतिमा या बलराज के पास भेजा। वह आरती को बिलकुल भूल गया है! क्या आरती से किये गये वायदे उसे भूल गये हैं? यहाँ की योजना और तैयारियों का उसे पूरा पता नहीं तो आभास अवश्य है। उसे मालूम है यहाँ बड़ा मोर्चा बनने जा रहा है। फिर कैसे उसे वहाँ चैन पड़ रहा है? माना, पुलिस जोरों से उसकी तलाश कर रही है। ज्यादा निकलने बैठने में उसे भारी खतरा है। लेकिन जेल से बाहर निकल सकता है तो किसी न किसी प्रकार यहाँ पहुँच सकता है। आरती अपने दिल को समझाती है·····अपनी उछलती उत्तेजनशील उमंगों को शान्त करती है पर वे नहीं मानतीं। एक बार महमूद से भेंट हो जाय·····वह उसके साथ चल दे। लगता है वह उसे छोड़कर किसी के साथ न रहेगी! जहाँ जहाँ वह जायगा छाया की भाँति आरती उसके साथ

जायगी। जिस रूप में महमूद रहेगा आरती उसके साथ रहेगी। गिरफ्तार होंगे—दोनों साथ होंगे। वियोग का दाह उसे सहन नहीं। जिसके पीछे मा, बाप, घर, परिवार छोड़ा वही न मिला तो जीवन व्यर्थ है। बलराज उसे न रोकेंगे····· प्रतिमा उसे न रोकेगी। कोई रोक सकता है तो स्वयं महमूद। पर महमूद के रोके वह न रुकेगी। उसे उसने पति मान लिया है! पत्नी का स्थान पति के चरणों में ·····उसके अनुगत अनुसरण में है। आरती को यही करना है। अपने को अधिक वह न छल सकेगी। अब तक व्यर्थ के शील····· नारी-मर्यादा के मोह में पड़ी रही। जिसे मन ने वरण किया उससे अपने को इस प्रकार बचाते, कतराते रहना कितना बड़ा पाप है! आरती पाप करती रही है। अब अधिक पाप न करेगी। कर्तव्य के उत्तरदायित्व से बँधा महमूद उसे साथ चलने से रोकेगा। वह उससे दूर दूर बनी रह कर भी उसके निकट रहेगी·····उसे आँख की ओट न होने देगी। जहाँ वह जायगा बराबर अपने नारीत्व का मंगल-कवच लिये उसकी रक्षा करेगी। अपने सतीत्व पर उसे अखंड विश्वास है। उसके प्राण-धन का बाल भी बाँका न हो सकेगा जब वह साथ रहेगी। रात आधी के लगभग हो आई है। गाँव में सन्नाटा छाया है। दिन भर उत्तेजना से फूले फूले फिरने वाले तरुण और बालक, अधेड़ और वृद्ध रात्रि में सब कुछ भूल शान्त पड़े सो रहे हैं। जाग रहे हैं केवल काँग्रेस द्वारा नियुक्त रक्षादल के लोग जिन्हें रात को गाँव के बाहर चौकसी रखने का काम सौंपा गया है। आरती पड़ी जाग रही है। उसे नींद नहीं आ रही। कमरे की खिड़की खुली है जिससे बगीचे का पूरा दृश्य दिखाई देता है जो चाँदनी रात में दूध से नहाया अपनी घनी हरीतिमा में डूबा है। सिमटती हुई चाँदनी और फैलते हुए अन्धकार की रहस्यात्मकता में कौन सी संगति है··· दोनों में कैसी अनदेखी अनबूझी आत्मीयता है यह आरती को समझ में नहीं आ रहा। उसके जीवन में भी चाँदनी और अन्धकार की

ऐसी अचीन्ही आत्मीयता है। दोनों कभी बारी बारी से--कभी साथ साथ आते हैं·····अपने आप में डूब जाते हैं·····लय हो जाते हैं। विचित्र धूप-छाँह है यह! इसके पार जा है वह दूर के दीपक की भाँति झिलमिलाता तो है पर बिजली की ललकार-भरी चमक के समान लपक लपक कर उसे सुख के मार्ग पर आगे बढ़ने की प्रेरणा क्यों नहीं देता? क्यों उसका अस्तित्व इस दुध-फेन-सी अमल-धवल चाँदनी की सीमा का आग्रह नहीं मान पाता? क्यों उसे अपने सुख की परिमिति नहीं दिखाई देती? क्यों वह रह रह कर आकाश-पाताल की बातें सोचा करती है। सहसा शमीम ने चौंक कर पुकारा—'महमूद! महमूद! आ गये तुम! कहाँ लौटे जा रहे हो! रुको--रुको न!'

आरती ने शमीम को पुकार कर कहा—'चौंक रही हो बाजी! महमूद कहाँ है। उठते बैठते जो सोचा करती हो रात में वही ख्वाब देखती हो!'

शमीम ने आँखें खोल कर कहा—'सच आरती! मैंने अभी अभी देखा था—महमूद आया है। इस कमरे में तुझे लेटा लौटा जा रहा है। देख न! मेरा दिल अब तक धड़क रहा है। बिलकुल साफ देखा था·····'

आरती ने कहा—'धोखा है बाजी! मैं बराबर जाग रही हूँ। न कोई आया न गया। मुझे देखकर महमूद को लौटने की क्या जरूरत है?'

शमीम कुछ मिनट तक चुपचाप पड़ी छत की ओर देखती रही—फिर सो गई। आरती की नींद और दूर भाग गई। शमीम की बात ने उसके वज्र-कठोर अन्तर को जोर से झकझोर दिया। महमूद यहाँ तक आ मुझे देखकर लौट चला! क्यों? क्यों बाजी ने ऐसा अकल्पित, असंभव स्वप्न देखा? यह असंभव क्यों है? महमूद मुझे देख कर क्यों नहीं लौट जा सकता? मेरे प्रति उसके मन में ऐसा भाव आ जाय तो आश्चर्य क्या? आखिर उसमें

कौन आकर्षण है·····कौन बल और अधिकार उसके पास है जिसमें बाँधकर महमूद को रक्खे। बाजी का सपना कैसा बेदिल·····बेरहम है। आरती को चैन न पड़ रहा था। उसे स्वयं अपनी भावुकता·····मन की कोमल प्रवणता पर आश्चर्य हो रहा था। लेकिन जो अहसास की तीव्रता है उसे वह कैसे सहन करे। कैसी निर्वासित·····निर्ममता के आघातों से विद्ध रात है यह! हृदय के सब से गहरे भाग से आने वाले रागमय स्वरों के टूटने की करुण चीत्कार जैसे उसके स्पंदनहीन वक्ष पर छाई जा रही है। उफ़ान में लहराती भावना की उत्तेजना कितनी फीकी और उदास लगती है! बाजी का यह स्वप्न क्या उसके जीवन की शेष रातों के लिये सन्देश लेकर आया है। उसकी आँखों के सामने किन रीती, पाप-लिप्त और अनुताप-विह्वल प्रतिध्वनियों का मेला लगा है जो जलती हैं·····जलाती हैं·····बुझती हैं तो बुझती चली जाती हैं। कौन निष्ठुर हृदयहीन देवता है, वह जो उसे जलते हुए·····जलते हुए·····जलते हुए तोड़ रहा है·····नष्ट कर रहा है·····उसे सदा के लिये प्रयोजनहीन बनाये दे रहा है। डाह की यह प्लावनकारी अनुभूति उसकी सारी चेतना पर छाई जा रही है। उसकी सारी सजीवता, प्राणवानता·····विद्रोह की उफनाती विशिष्टता इस स्वर-भंग के साथ खोई जा रही है·····बालापन से अब तक सँवार सँवार कर रचे इन्द्र-धनुष की त्वचा वेदना के धुन्ध में विलीन होती जा रही है। वह इतनी व्यर्थ, त्याज्य, घृणित है कि महमूद यहाँ तक आकर, उसे देख कर लौट जायगा। जो संघर्ष के बीज से जन्मा उगा है वह क्या इतना दृष्टिविहीन होगा! न जाने कितनी मध्य-निशाओं में पाली गई उसकी आशायें झूठी ठहरेंगी। जीवन के तपाये हुए सोने की दीप्ति और दमक क्या अन्त में नकली साबित होकर रह जायगी, उसे विश्वास नहीं होता। बाजी का सपना झूठा है—उनकी कल्पना झूठी है—उनकी आशा और अभिलाषा, आशंका और चिन्ता का विन्यास झूठा है। वे ऐसा स्वप्न देख नहीं

सकतीं। स्वप्न की जीत·····सत्य की हार होने पर भी स्वप्न में सत्य की झलक होती है। सत्य की सूक्ष्म सामाजिकता उसमें रहती ही है। महमूद यहाँ तक आ उसे छोड़ कर चला जायगा·····बिना उससे दो बात किये, बिना इसके नमित मुख, आवेग-विह्वल दृगों को ऊपर उठाये·····बिना उसकी निजी, असमर्थ यातना को बूझे पहचाने·····कैसे वह मान ले—कैसे वह विश्वास करे। प्रेम के सशक्त आकर्षण केन्द्र में बँधी बँधी वह मंजरी की तरह गमकी है·····मंजीर की तरह बजी है·····रागिनी की तरह गूँजी है और उल्का की तरह प्रकाश की जाज्वल्यवान लकीरें खींच खींच अपने भावना के आकाश में एक सिरे से दूसरे सिरे तक नाचती रही है। उसके ऊपर होकर मुक्ति की राह का प्रसार हुआ है जो अपनी समर्थता की अटूट गूँज है।

आरती को जान पड़ता है किसी भारी बोझ से उसका मन दब गया है··· ··उसकी आँखों की—हृदय की ज्योति न जाने कहाँ चली गयी है—उसके नेत्र प्रकाशहीन लग रहे हैं। उसकी जन्म जन्म की साथिन—हृदय के भीतर लहराती रहने वाली प्रेरणा जैसे उसका संग छोड़कर जा चुकी है। उसके प्राण की वेदना—हृदय की कँचोटन इतनी घनीभूत हो गयी है, जैसे उसकी अनुभूति आज सुन्न पड़ गयी है।·····शब्द शब्द थक गया है·····अभिव्यक्ति मूक हो गयी है। सारे विचार अस्त-व्यस्त हैं···· भावनायें उदभ्रान्त हो रही हैं·····मन जड़वत हो गया है। आत्मा कितनी भरी भरी लगती है। सिर से पैर तक आरती विडम्बना से नहा उठी। शमीम का स्वप्न आरती को भुलाये नहीं भूलता। परिस्थितियों से, विकरालताओं से, विपरीतताओं से जूझने का जो उसका जीवन भर का अभ्यास है वह भी आज परेशानी की इस दानवी लीला में छूटा छूटा लगता है। वह अपने को निराशा·····आशंका के समुद्र में डूबती उतराती अनुभव करती है। कहाँ का अवसादी ज्वार किसी ने उस पर सिर से पैर तक बिछा दिया है·····कहाँ का·····जिसको

वह क्षण भर भूल नहीं सकती, उसको आज जी भर·····आशा के उल्लास से परिपूरित होकर याद नहीं कर पाती। जो बहुत दूर होने पर भी सदा पास खड़ा मुस्कराता प्रतीत होता है, वह आज तन-मन-प्राण में पूर्ण रूप से व्याप्त होकर भी क्यों दूर दूर जान पड़ता है ! उसकी भूली भूली—छाया सी लिपटी तस्वीर आज हृदय से इतनी न्यारी क्यों लग रही है। संघर्षों की कटु घाड़ियों में विवश कामनायें हार चुकी हैं—पराजय की राख से आवृत जब तब नन्हीं चिनगारियों की तरह भले चमक जाती हों पर कहाँ है आज उनकी ज्वलन्त सुर्खी जो देखने पर भी नहीं दिखती·····जिसकी कामद उष्णता आज अपने में ही डूब चुकी है। पड़े पड़े उसने अपने आँसुओं से गगन को अर्घदान देना आरम्भ किया। चुपके चुपके बहने वाले आँसुओं की नमी ने उसके गालों को सिक्त कर दिया। तुरन्त उसे अपने इस दुर्बलपन पर हँसी आ गई। महमूद के प्रेम को लेकर चिन्तित होने की उसे आवश्यकता क्या ! वह क्यों इतनी अधीर हो रही है ! जिसको लेकर कभी क्षण भर के लिये दिल ने कमजोरी का अनुभव नहीं किया आज उसकी अनुपस्थिति में उसकी उपेक्षा की कल्पना कर उसे अश्रु बहाने का क्या अधिकार है ! क्यों वह इस प्रकार अक्ल बहाकर अपने प्रेमी का बुरा चेत रही है ! झपट कर आरती उठी·····पलँग पर बैठ गयी। शमीम पड़ी सो रही है पर आरती क्यों एक एक कर अपने मधुर भावों के बिरवे उखाड़ती जाती है। उसकी आशा और विश्वास जैसे लौट कर फिर उसके पास आ गये।

बीस

जनता की सरकार कायम हुए आठ दिन भी न हुए थे कि सनसनी भरे समाचार आने लगे। रेल की पटरियाँ स्थान स्थान पर उखाड़ डाली गयी थीं, पर स्थल-मार्ग सब बन्द न हो पाये थे। पुलों को जिस प्रकार नष्ट करने की योजना थी वह पूरी न हो पाई थी। फौज भरी लारियों में भर भर कर जिले पर फिर अधिकार

करने के लिये रवाना हो चुकी थी। रास्ते में जम जम कर जनता की टुकड़ियों से उसके युद्ध होते हैं। दो चार लोगों ने जो पर्वतपूर आ सके ये अपनी बाहों और जाँघों पर बंदूक की गोली के घाव दिखाये। भारी फ़ौज और उससे भी भारी पुलिस तोप बन्दूक लिये बग़ावत को दबाती चली आ रही है। जिधर के पुल नष्ट न हो पाये थे, उधर से खाकी मोटरें, जैसी लोगों ने पहले नहीं देखीं चली आ रही हैं। लोहे की चादर से मढ़ी जिनसे मगरमच्छ सी थूथन बाहर निकाले बंदूकें दिखाई देती हैं। धरती की फसल को रौंदती—दायें बायें गोलियों की बौछार करती—बजरीली धरती की छाती पर सरकारी शासन और प्रभुता के ठप्पे लगाती। बड़े बड़े किसानों-जमींदारों की जमीन जायदाद ज़ब्त हो रही है। बहू-बेटियाँ बेइज़्ज़त हो रही हैं। छोटे छोटे बालकों को भी गाँधीजी की जय बोलने पर संगीनों के घाट उतार दिया जाता है। मकान ढहाये जा रहे हैं—हवेलियाँ फूँकी जा रही हैं—खेतों, खलिहानों, फसलों में आग लगाई जा रही है। लोग भाग कर घरों में घुसते हैं पर पुलिस द्वारा जबर्दस्ती बाहर निकाल निकाल कर पीटे जाते हैं। अपमान और आपत्ति की सीमा नहीं है।

लोग इन ख़बरों के लिये इतने जल्द तैयार न थे। पिछली बार का भयंकर दमन वे देख चुके थे, इसलिये इस बार के दमन की भयंकरता को वे अच्छी तरह अनुमान कर सकते हैं, पहले संक्रमित जोश में बहकर लोगों का ध्यान अंजाम की ओर न था। अब··· अब क्या किया जाय? उनके पास अच्छे बुरे जो हथियार हैं, उनको लेकर सरकार से लड़ने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं। लड़ कर आजादी ली है·····लड़कर उसकी रक्षा करेंगे। क्रान्ति के उद्योग का अन्त विदारक ····विनाशक होता है। विप्लव के बाद जो दमन होता है उससे समाज के अन्दर मर्मवेधी आर्तनाद घहरा उठता है। लेकिन विप्लवियों का दिल नहीं दहलता। वे वैसे ही अडिग, अकम्पित अपने मार्ग पर बढ़ते जाते हैं। उठ उठ कर गिरते हैं·····

गिर गिर कर उठते हैं। क्या उनका इतिहास·····उनके संघर्ष और आत्म-त्याग की गाथा व्यर्थता की गाथा होती है? पर्वतपूर में, आस-पास के गावों में खलबली मच गयी। लोग तत्परतापूर्वक जगह जगह इकट्ठे हो आगे के कार्यक्रम को समझने लगे। अन्तिम साँस तक लड़ने·····लड़ते लड़ते प्राण देने के लिये युवक-युवक तैयार हो गया।

जिस गति से सरकारी फौज़ और पुलिस गाँव उजाड़ती चली आ रही थी उसे देखते एक दो दिन में उनका पर्वतपूर पहुँच जाना निश्चत था। लोगों के मन में आतंक था पर एक दूसरे के सामने खम ठोक कर कहते थे—सर उतर जाय पर दुश्मन के आगे सिर न झुकायेंगे। जो अपने बाप की औलाद है वह लड़ाई में आगे रहेगा। जो दोगले हैं, वे प्राण लेकर भागेंगे। प्रतिमा और दल के दूसरे लोग घूम घूम कर चारों ओर लोगों को उत्साहित करते फिर रहे हैं। जगह जगह लोगों की नाकेबन्दी की जा रही है, और छोटे छोटे दलों को तैनात किया जा रहा है। नवयुवकों के उत्साह की सीमा नहीं है। आतंक है तो बच्चों, स्त्रियों और वृद्धों के हृदय में। थाने पर आक्रमण करके या इधर उधर से जो थोड़ी बहुत बन्दूकें इकट्ठी की गई हैं वे विशेष विशेष लोगों को बाँट दी गई हैं। शेष लोगों के पास बल्लम, गँड़ासे, भाले हैं या लाठियाँ हैं जो युग युग से भारतीय ग्रामीणों का बल रही हैं। फ़ौज के सामने दिखाई पड़ते ही एक साथ उस पर टूट पड़ना है। बाद में आत्म-समर्पण की स्थिति आयेगी, तो तत्काल नहीं करना·····छोटी छोटी टुकड़ियाँ बना, फौज को भिन्न भिन्न दलों की ओर खींच कर बाँट लेना है। उस दशा में उनकी शक्ति बँट जायगी। तब पीछे से संगठित हमला होगा। आरती, बलराज, प्रतिमा और दर्जनों अन्य साथी घूम घूम कर लोगों को हिम्मत बँधा रहे हैं। शाम को गाँव गाँव में आम सभा करने की योजना बनाई गई है जहाँ उत्तेजक व्याख्यान दे देकर जनता के काँपते मनोबल को मजबूत बनाया जायगा। इस समय किसी को दम लेने की

फुरसत नहीं। सब के सामने जनता के गौरव की रक्षा का सवाल है। जिस प्रकार हो एक बार सारे बंधनों को तोड़ कर उठा विद्रोही मस्तक ऐसा ही तना और ऊँचा रहे। वे चाहते तो फरार हो सकते थे। गाँव के कुछ समझदार युवकों ने बलराज और प्रतिमा से—अन्य नेताओं से अपनी रक्षा करने के लिये इधर उधर जंगलों में गायब हो जाने का प्रस्ताव किया। पर प्रतिमा और उसके साथियों को यह स्वीकार नहीं। आदर्श के सम्मुख प्राणों का मूल्य क्या? संकट और दमन के इस अग्निकुन्ड में निरीह जनता को झोंक कर अपने प्राणों की रक्षा करने की बात उन लोगों को तुच्छ मालूम पड़ी। सब ने साथ मिल कर लड़ने··· ··जो कुछ हो उसे साथ भोगने का निश्चय किया। महमूद के आने की आशा छूट गयी थी। ऐसी विकट स्थिति में उसका न आना ही श्रेयस्कर है। वहाँ दूर रहेगा तो आगे कुछ और कर सकेगा।

रात को बारह बज गये हैं। प्रतिमा के निवास-स्थान पर बड़ी दालान के भीतर लेम्प जल रहा है। आठ दस लोग बैठे मन्त्रणा कर रहे हैं। शाम को सरौली से दो व्यक्ति भाग कर आये हैं। उन्होंने अपने शरीर के घावों को दिखाकर फ़ौज और पुलिस के अत्याचारों और विजयोन्माद की सारी गाथा सुनाई है। एक एक कर सब गाँव आत्म-समर्पण करते जाते हैं। दो चार जगह मुठभेड़ हुई है, पर लोगों में आत्म विश्वास की आग नहीं। उनके काँपते पगों—हिचकते हृदयों में स्थिरता नहीं। पर शाम को गाँव गाँव में जो लोग सभायें करने और संघर्ष का ऐलान करने गये थे, वे एक एक कर लौट आये हैं। उन्होंने बहुत उत्साह वर्धक समाचार दिये हैं। लोगों में जोश है—मरने मारने का हौंसला भी है। पर वह कितनी देर तक ठहरा रहेगा··· ··कब तक वे अपने संकल्प पर टिके रहेंगे यह कुछ कहा नहीं जा सकता। प्रतिमा के साथी अपने कर्तव्य-पालन से विफल न हो रहे थे। लोग बैठे तरह तरह की बातें कर रहे थे तरह तरह की योजनायें सामने रखते थे··· ··उनकी असंभवता

सोचकर स्वयं ही उन्हें वापस ले लेते हैं। एक समस्या को सुलझते देर न लगती कि फौरन दूसरी सामने आ खड़ी हो जाती है। लोगों को खाने-पीने, सोने, विश्राम करने की सुधि नहीं। सब की आँखों में एक अधीर नशा—एक प्राणोन्मादक आतुरता भरी है। सब जान की बाज़ी लगाने पर तुले हैं। पर जिनके लिये वे यह सब कर रहे हैं वे क्या अन्त तक उनका साथ देंगे। क्या वे उनके साथ लड़ कर मृत्यु का आलिंगन करने में पीछे न रहेंगे? सरौली में यह नहीं हुआ है। गोलियों की पहली बौछार में ही लोग भाग खड़े हुए हैं। उनकी तनी लाठियाँ तनी ही रह गई हैं। रुकने वालों में कुछ वहीं ढेर होकर गिर पड़े हैं—कुछ को घायल होकर फ़ौज की पकड़ में आ जाना पड़ा है। केवल दो व्यक्ति घायल हो जाने पर भी किसी न किसी प्रकार अपने को बचाते छिपाते यहाँ तक आ सके हैं। अन्य गाँवों में भी यही हो रहा है। सरौली में आज फ़ौज का खेमा लगा है। कल वे लोग इधर आ सकते हैं या पूर्व की ओर के गावों पर हमला कर सकते हैं। पर्वतपूर की ओर वे पहले चलेंगे यह निश्चित नहीं यद्यपि यहाँ पर फ़ौज के साहबों का विशेष कोप होगा। उन्हें मालूम हो गया होगा पूरे विद्रोह का सूत्रपात और संचालन यहीं से हुआ है। यहीं खास खास नेता और कार्यकर्ता हैं। यहाँ आकर ही वे दम लेंगे। यहाँ फिर से पुलिस के भय का राज्य स्थापित हो गया·····बलवाइयों का दमन हो सका तो उनके लिये विशेष चिन्ता की बात नहीं! सब लोग गंभीर दृष्टि से एक दूसरे की ओर देख रहे हैं।

प्रतिमा बैठी सोच रही है—भारतवर्ष का ·····भारतवासियों का जीवन मानों दूसरों के खेल की सामग्री है। उनमें अपनी कामनायें हैं पर उन्हें पूरी करने की शक्ति कभी उनके पास होगी? जो पर्वतपूर और आस पास के गाँवों में—पूरे जिले में हो गया है वह यदि एक साथ पूरे देश में हो जाता तो आज क्यों फ़ौज और पुलिस के पास इतनी शक्ति रह सकती। हमारी सब चेष्टाओं का इतिहास

व्यर्थता का इतिहास है·····हमारे सारे प्रयत्नों का परिणाम निष्फलता से परिपूर्ण है। पर वह ऐसी बातों को अधिक देर अपने मन में स्थान नहीं देना चाहती। उसने अपने उछलते मन को दबा कर निरुद्वेग हृदय से आने वाले कल की बात करनी-सोचनी शुरू की। अपने मन की विराट शून्यता के उदास स्वरों को भीतर भीतर घोट कर वह विधाता के विधान को भूल चली। सब से बड़ी कठिनाई शस्त्रों की कमी है। आज प्रत्येक पुरुष और स्त्री सशस्त्र होती तो क्यों इतनी चिन्ता होती? हमारे पास शस्त्र नहीं हैं·····इतने दिन से नहीं है कि आज हमें मिल भी जाँय तो हमारी ज़हनियत निशस्त्र हो चुकी है। शताब्दियों से भिन्न भिन्न राज्य-शक्तियों की चक्की में पिसते पिसते देश-वासियों की लांछनाओं की अवधि नहीं रही। फिर भी उन्हें अपने आदर्शों पर अटूट श्रद्धा क्यों नहीं होती! क्यों नहीं वे अपने जीवनादर्श के लिये अपने रक्त की अंतिम बूँद तक बलिदान करने के लिये तैयार रहते? क्या प्रतिमा और साथियों का महीनों का श्रम व्यर्थ हो गया! क्या एक क्षणिक उत्तेजना ही उत्पन्न कर सकने में वे समर्थ हुए। पर्वतपूर में ऐसा न होने पायेगा। यहाँ की प्रजा एक साथ संघर्ष करेगी·····एक साथ मरेगी·····मरेगी। प्रतिमा ने बलराज की ओर स्थिर दृष्टि से देख कर कहा—'भैया! मैं समझती हूँ कल यहाँ फ़ौज आ जायगी। सरौली यहाँ से दूर नहीं। हम अपने को भली भाँति संगठित भी न कर पाये थे कि हमला हो गया। लेकिन हमें अन्त तक लड़ना है।'

बलराज ने कहा—'दूसरा रास्ता नहीं। हमने आग बोई है·····हमें अंगारों की फ़सल काटेंगे। लोगों को तड़के से ही भेज दो। फ़ौज के आने की सूचना हमें समय पर मिल जानी चाहिये। यहाँ लोगों को तैयार रहना चाहिये। एक स्थान तो ऐसा हो जहाँ की एक एक ईंट शत्रु से लोहा ले। आत्मसमर्पण करने की मेरी राय नहीं। हम लोग

हारने लगें तो यहाँ से निकल चलने की व्यवस्था भी रहनी चाहिए। उसके पहले ही लड़ाई में शहीद हो गये तो बात न्यारी है। मर कर भी तब हमारा मस्तक ऊँचा होगा।.....सहसा मुकरू आकर खड़े हो गये। उनके पीछे उनसे लगभग दूना ऊँचा एक व्यक्ति था जिसे देखकर सब लोग चौंक पड़े। ग्रामीण वेश में भी उसकी मुद्रा आभिजात्य के तेज से पूर्ण थी। पर उसके सारे मुख पर थकावट, चिन्ता, क्लान्ति और शंकना की कुन्ठा छाई थी। मुकरू ने कहा—'आ गये! महमूद भैया आ गये। आप लोग इन्हें पहचान नहीं पा रहे.....'

सबकी आँखों के सामने का पर्दा हट गया। लपक कर बलराज न महमूद को छाती से लगा लिया। सबके आश्चर्य की सीमा न थी। आरती का रोम रोम पुलकित हो उठा। प्रतिमा का हृदय उल्लास से दुगने वेग से धड़कने लगा। वहाँ बैठे सारे के सारे व्यक्ति महमूद को घेर कर खड़े हो गये।

बलराज ने कहा--'कैसे पहुँचे यहाँ तक! रास्ते में जगह-जगह पुलिस और फौज का राज्य है। कमाल किया है तुमने .....यहाँ तक अपने को बचाते ले आये। शम्मी से मिले या नहीं! कहाँ थे अब तक! यहाँ का संवाद मिला था!'

महमूद ने सिर पर बँधा मुरैठा एक ओर फेंक कर अपना फटा-पुराना देहाती चदरा भी उतार फेंका। बोला—'आप लोग मुझे घेर कर खड़े क्यों हो गये। चलिये बैठिये। सब सुनाऊँगा। जब से जेल से बाहर निकल कर आया तब से ऐसी ही भाग दौड़ लगी है। पुलिस शिकारी कुत्ते की तरह पीछे पीछे सूँघती चलती है। यहाँ तक आना आप लोगों ने और मुश्किल कर दिया है। पटरियाँ उखड़ी पड़ी हैं। रेलों का रास्ता बन्द है। जहाँ नाव मिल सकी है वहाँ उस पर बाकी पैदल आया हूँ। यहाँ का हाल जिले के भीतर दाखिल हो जाने पर सुना। उसके पेश्तर यहाँ के लिए रवाना हो चुका था। यहाँ के लिए मेरा दिल तड़प रहा था। लेकिन

आसार अच्छे नहीं। मेरे साथ दो साथी और हैं। सुकरू चाचा को मकान पर छोड़ आया हूँ। आप लोग यहाँ हैं मुझे रामलाल से मालूम हुआ। मैं उसे मना कर दिया है अभी मेरे आने की खबर शम्मी को न दे। यहाँ कैसी तैयारी है? लोगों के अन्दर मैंने जिस जोश-खरोश की उम्मीद की थी वह दिखाई दे रहा है। रेयत का राज है!'

प्रतिमा और बलराज ने सारा हाल कह सुनाया। बलराज को महमूद के आने से क्षणिक स्वाभाविक उल्लास अवश्य हुआ था। पर वे मन ही मन उसके आने से चिन्तित हो उठे थे। वे आरती ही को किसी न किसी प्रकार यहाँ से निकालने की सोच रहे थे·····कहाँ महमूद खतरों से खेलता हुआ खुद आ धमका। अब वह कहाँ जायगा···कैसे जायगा·····

आरती की ओर महमूद का ध्यान अब तक नहीं गया है। भावुकता से यथासंभव अपने को अलिप्त रखने का प्रयत्न करते हुए भी आरती का मन महमूद को देखकर उत्तेजित हो गया है··· उसकी नाड़ी का स्पंदन तीव्र होता जा रहा है। महमूद ने तब तक प्रत्येक व्यक्ति को ध्यानपूर्वक देखना आरम्भ कर दिया था। आरती पर उसकी दृष्टि ठहरते ही कुछ हैरत में पड़ गई। आरती की पुरुष वेशभूषा·····खुले सिर पर वैसे ही छोटे छोटे कटे छँटे बाल उसे जितने विचित्र लगे उतनी ही उसकी मुखमुद्रा पहचानी·····हृदय के समग्र प्यार से सनी लगी। बोला—'वाह! आरती! वाह! देश-भक्तों की टोली में नया रूप लेकर तुम शामिल हुई हो। तुम्हें देख मेरी आत्मा फिर दिव्य रंगों से रंगीन हो उठी है। दीदी का असर तुम पर पूरा पूरा हो गया। मुझे माफ़ करना! ध्यान से न देखता····· तुम अगर पहले की तरह जमीन पट निगाह गड़ाये बैठी रहतीं तो शायद पहचान न पाता। भैया से तुम्हारी निस्बत पूछने जा रहा था। अच्छा हुआ उसके पेश्तर तुम्हें देख लिया वर्ना बेवकूफ कहाता।'

प्रतिमा ने कहा—'तुम आ गये—मेरे डूबते दिल को सहारा मिला। यहाँ का मोर्चा सँभालो। लोगों के उखड़ते पैरों·····सहमते दिलों को नई हिम्मत—नयी क़ुवत दो। हम सब तुम्हारी राह देख रहे थे यद्यपि अब इस दशा में तुम्हारे आने की ओर से निराश थे। पर तुम तूफ़ान हो! रुकना जानते ही नहीं। जेल से निकल भागे—चारो ओर से घिरे जिले में घुस कर ऐन वक्त हमारे बीच आ गये। तुम्हें क्या कहूँ·····कैसे तुम्हारी तारीफ़ करूँ। मेरे फूलते हाथ पैरों को तुमने आ नया बल दिया।'

महमूद ठहाका मार कर हँस पड़ा। आरती ने मुग्ध दृष्टि को थोड़ा फैलाकर देखा—उसके मुख पर वही सुपरिचित गड्ढे पड़ गये हैं जो उसके रोमन सिनेटर जैसे सुन्दर मुख को और सुन्दर बनाये दे रहे हैं। महमूद ने अट्टहास करते हुए कहा—'बस दीदी! ज्यादा तारीफ़ ठीक नहीं। मैं यहाँ आया क्या यहाँ की मिट्टी-हवा की कशिश मुझे खींच लाई। उठते बैठते तुम लोगों के बारे में सोचा करता था। कब कौन कहाँ क्या कर रहा होगा—यही स्वप्न उठते-बैठते मेरी आँखों में नाचा करता था। लखनऊ में जब आरती और भैया न मिले·····तलाश करने पर भी न मिले तो मैं समझ गया वे लोग पर्वतपूर में हैं। तुम्हारे ज्वालामुखी दिल का मुझे पूरा पता था। तुम चुप होकर बैठ न सकोगी। भीतर भीतर इस शैतानी सल्तनत को मिस्मार करने का इरादा बलंद हो रहा होगा। मुझे लखनऊ से इलाहाबाद, बनारस, मेरठ जाना पड़ा। यहाँ मैं जल्द से जल्द पहुँचना चाहता था। मेरे खास वतन में इन्कलाबी तहरीक हो रही हो·····मैं इधर-उधर घूमता फिरता रहूँ यह मुझे मंजूर न था। खुदा का शुक्र है मैं आ गया। देर में आया पर तुम लोगों के साथ मरने-मारने का नियाज़ मुझे हासिल होगा। आज कत्ल की रात है बहन! कल कर्बला की लड़ाई होगी। सरोली तक आ गए हैं तो कल हमारे गाँव की बारी है।'

आरती ने मुदित दृष्टि से महमूद की ओर देखा। सचमुच आज

कत्ल की रात है। यही कत्ल की रात उसकी सोहाग की रात भी कही जा सकती है। आज महमूद का मिलना दैवी संकेत है। एक दो दिन में जो होने वाला है उसमें वह बचकर महमूद से मिल पाने का सुयोग पाती या नहीं यह कौन कह सकता है। जिसकी दृष्टि से संघर्ष का क्रान्तिकारी रूप एक क्षण के लिए ओझल नहीं होता वही महमूद आज जीवन-मृत्यु का फैसला करने वाले संग्राम के पहले रात की पुलक-प्रपूरित घड़ियों में आ मिला है। अब वह अपने प्रियतम के तन की छाँह बनी उसकी आँखों के नीचे लड़ते-लडते वीर गति को प्राप्त हो सकेगी।

महमूद ने कहा—'जाता हूँ भैया! दोनों साथियों को यहां ले आऊँ। आज गांव में अपनी स्वतन्त्रता है। महीनों से जेल में रहते रहते·····बाद में अन्डरग्राउन्ड जीवन बिताते बिताते आज़ादी की मंज़िल भूल सा गया हूँ। जरा बाहर निकल कर····· नथुने फुलाकर जीभर आज़ादी की हवा की सांसें लूँगा। आता हूँ तब बात करूँगा। वे अकेले उकता रहे होंगे। दोनों बिहार के सोशलिस्ट हैं महीनों से फ़रार घूम रहे हैं।'

आरती का मन महमूद के साथ जाने के लिए व्याकुल हो उठा। उसे शमीम के सपने की याद आ गई। महमूद ने एक बार भी आरती से अपने साथ चलने की बात न कही। साथियों के पास जाना क्या यहां के काम से ज्यादा जरूरी है—आखिर वे घर में बैठे हैं—अभी उनके लिए खतरा नहीं। फिर वापस जाने की कैसी जल्दी? बोली—तुम्हें जाने की जरूरत क्या है। यहां जो बातें हो रही हैं वे कम ज़रूरी नहीं। सुकरू चाचा उन्हें लेकर यहां आ जायँगे। तुम बैठो। घर जाना होगा—और बाजी से मिलना होगा। तुम्हारे लिये रो रोकर मरी जाती हैं·····तुम यहां तक आकर—इतना बड़ा खतरा मोल लेकर भी अब तक उनसे न मिले! यह नहीं होने का।'

प्रतिमा ने कहा—'आरती ठीक कहती है। तुम क्यों जाते हो?

बे लोग आराम से पड़े होंगे। उन्हें यहाँ बुलाकर तकलीफ देने की जरूरत! सुकरू महराज से कह दो। जाकर उनके आराम का प्रबन्ध कर देंगे। तुम यहाँ बैठो। हम लोगों को रास्ता बताओ। कल सुबह मौत के मुँह से निकलना है। तुम समझते हो हम फौज का सामना कर सकेंगे।

'क्यों न कर सकेंगे'—'महमूद ने निश्चिन्तता से कहा—'रास्ता क्या दिखाना है। तुम सब का देखा हुआ है। लड़ाई लड़ने का सीधा रास्ता होता है। दुश्मन के ऊपर हमला करना—यही एक तरीका है। इस फ़िक्र क्या बात है। फौज आजायगी तब स्वतंत्रता के नारे लगा लगा लोगों को लड़ने के लिये ललकार कर हम आगे बढ़ेंगे। जब तक हमारे होश-हवास ठीक रहेंगे हम 'शत्रु का सामना करेंगे।'

प्रतिमा ने कहा—'सुबह हम आम सभा करेंगे जिसमें तुम्हें बोलना है। लोगों को तुम्हारे आने की खबर मिलेगी तो उत्साह की लहर दौड़ जायगी। शाम को हम लोग सभा कर चुके हैं। उसमें लोगों को तरह तरह से उद्‌बोधित भी कर चुके हैं। पर तुम्हारे आने का दूसरा प्रभाव पड़ेगा। लोगों को मालूम होगा—हमारा प्यारा नेता जेल से भाग कर आज़ादी की लड़ाई में अपनी बलि देने आया है। समय और सुयोग मिला तो आस पास के जिन जिन गांवों में हम चल सकेंगे तुम्हें लेकर चलेंगे। तुम्हारे बोलने की शक्ति मैं जानती हूँ। तुम्हारे जैसे वक्ता ही क्रान्ति का सामधेनी मंत्र सुनाते हैं। इसके बाद हमें वे जगहें तय करनी हैं जहाँ हम शत्रु के साथ लड़ेंगे। मोर्चे बनाने हैं।'

महमूद ने मस्ती के साथ कहा—'बस! इतनी सी बात! जो तुम कहोगे सब करूँगा। पर आज की रात सो लेने दो। सुबह से लेकर अब तक पच्चीस मील पैदल चल कर आया हूँ। यकीन न हो मेरे दोस्तों से पूँछ लो। सुबह बिलकुल मोहलत न मागूँगा। मैं बैठा तो रहूँगा पर मेरा जिस्म और दिलोदिमाग़

बेकाबू रहेंगे।'

आरती ने कहा—'यह भी तय करना है क्या हम लोगों में एक दो आदमी फौज को भड़काने के लिये जाँय। गोरे अफ़सर और सिपाही थोड़े होंगे। अधिक तर हमारे देश वासी भाई होंगे जो इस प्रकार हमारे किये कराये पर पानी फेर रहे हैं। मेरी बात सब लोगों को ठीक जान पड़ती है तो कौन जायगा—यह तय करना है। तुम्हारा जाना ठीक न होगा मैं जानती हूँ। पर हम लोगों में जिनको ठीक समझो भेज दो।'

महमूद ने कहा—'जब अँगरेज और देशी फौजें गाँव गाँव, तहसील तहसील बलवे को दबाती, कुचलती चली आ रही हैं बिलकुल सरहद पर आगई है—ऐसी नियत लेकर किसी का भी जाना ठीक न होगा। फौरन वह पकड़ लिया जायगा····· बिना अदालत मुकदमे के उसे गोली मार दी जायगी। बेफ़ायदा जान देने में कोई अक्लमन्दी नहीं। फौज के हेड-क्वार्टर में जाकर उसे समझाना बुझाना, भड़काना बात दूसरी है। यहाँ इस तरह की कोशिश रायगां होगी·····एक दो जानें ले लेगी।'

महेन्द्र ने कहा—'मैं भी आरती बहन की बात बेमुनासिब समझता हूँ। वे लोग इस समय दमन के नशे में अन्धे हैं। उनसे किसी प्रकार की आशा करना हमारे लिये व्यर्थ है। मुमकिन हो तो हम लोग पता लगा कर रात को उन पर हमला करें·····इस प्रकार कुछ कर सकें तो करें। फौज को भड़काना और अपने को मौत के मुँह में जाकर झोंकना बराबर है। आप लोगों को रात में फौज पर हमला करने की बात कैसी लगी।'

महमूद ने कहा—'आरती की बात से आपकी बात में ज़्यादा सेन्स है। सोचिये! रात को हमला करने हम लोग कितने आदमी चल सकेंगे? वहाँ काफी चौकसी होगी। दस पांच पहरेदार होंगे। मान लिया उनका हमें भय नहीं। पर सैकड़ों

आदमियों की फौज पर हमला करने वाले भी उतने ही होने चाहिये। उनकी लारियों में मशीनगनें लगी हैं। हमारे पास सब मिलाकर बीस पच्चीस बन्दूकों से अधिक न होंगी। क्या हम लाठियों से उनका मुकाबला करेंगे? हमारे पास बम भी नहीं हैं।

महेन्द्र ने कहा—'मुकाबला हमें करना होगा — और लाठियों से करना होगा। चाहे हम हमला करते समय करें चाहे आत्म-रक्षा करते समय। हमारा साथ हमारी लाठियाँ देंगी। हम लोग रात को सोते समय अचानक हमला कर उनकी बंदूकों - लारियों पर अधिकार कर लें तो बड़ी बात होगी। आज की रात केवल हमारे पास है। कल संभव है वे लोग दिन में यहाँ चढ़ आवें। कल दिन में नहीं आते तो कल की रात हमारे पास है। हमारे हाथ में कितनी बड़ी शक्ति आ जायगी! आवश्यकता केवल वहां चलकर अधिक से अधिक फौजियों को समाप्त कर देने की है। इसके बाद हम न केवल फिलहाल निश्चिन्त हो जा सकते हैं वरन आग जब हमारे ऊपर फिर हमला होगा तब हमारे हाथ में अपनी रक्षा करने के लिये पर्याप्त मात्रा में शक्ति रहेगी।'

महमूद ने सँभल कर बैठते हुए कहा—'आपकी बात समझ में आती है। कितने आदमी हम यहां से चल सकेंगे? फौज कितनी है? उनके पास सामान कितना है! बिना सब बातों को समझे-जाने हमारा आक्रमण करना गलत होगा। आपने आज दिन में कुछ पता लगाया है? जितनी फौज हो उससे दुगने आदमी लेकर हम रातों रात धावा कर दें तो कामयाब हो सकते हैं। बोलिये! कुछ खबर है?'

सरौली से जो आदमी घायल होकर शरण ढूँढते आये थे उन्होंने बताया कि फौज और पुलिस की संख्या चार—पांच सौ के बीच में है। अधिक नहीं। कुल मिला कर पन्द्रह सोलह लारियाँ है। हथियार उनके पास बहुत हैं। दो तीन लारियां तो ऐसी है जिनमें गोली बारूद मालूम पड़ता है क्योंकि उनमें सिपाही

नहीं बैठते हैं। सौ के लगभग गोरे सैनिक हैं। शेष देशी सिपाही हैं। खबर गर्म है कि पीछे और फौज आ रही है। लारियों के अलावा हवाई जहाज आ रहे हैं जो मौका पड़ने पर बमों की बरसा करेंगे। सब लोहे की टोपियों और जिरह बख्तर से लैस हैं।'

महमूद ने कहा—'पीछे तो पूरे ब्रिटिश साम्राज्य का बल है। उसकी चिन्ता नहीं। अभी जो है उसकी बात करिये। पीछे वे न जाने क्या क्या ला सकते हैं। आप लोग सोच लीजिये। इतनी बड़ी फौज पर अगर हम रातोरात चढ़ चलते हैं तो नतीजा ज़ाहिर है। इस गांव में हम लोग मिल कर कितने आदमी हो जायेंगे।'

प्रतिमा ने कहा—'गांव में सब मिलाकर भी पांच-छै सौ से अधिक न हो सकेंगे। कल का दिन हमें मिल जाय तो कुछ हो सकता है। इधर दक्खिन की ओर के गांवों से आदमी आ सकते हैं। कल रात को दस बजते बजते मैं पन्द्रह सौ आदमी लाठी, बल्लम, गड़ासे, तलवार, भाले और बन्दूकों से लैस दे सकती हूँ। मुश्किल यह है क्या कल का दिन हमें मिल सकेगा! मुझे यकीन है कल दिन में फौज यहाँ आ धमकेगी। रात को हमला करने की बात मेरे मन में उठती रही है। महेन्द्र ने उसे कहकर मेरे मन की बात कही है। हमें एक दिन पहले यह बात सूझती तो इस समय दूसरा दृश्य होता। दक्खिन की गाँवों की ओर हमारे बहुत से साथी बँटे हुए हैं। वहाँ अभी फौज का जाना नहीं हुआ। कल सुबह हम लोग सब रवाना होकर दल के दल लेते हुए, शाम को यहाँ आ जायँ और दस बजते बजते सरौली की ओर बढ़ें। कुछ लोग यहां गांव में रहकर दिन भर लोगों को इकट्ठा करें। हम लोग पहले हमला बोल दें तभी कुछ हो सकता है। अपने को बचाने के फेर में पड़कर हमने उन्हे अवसर दिया तो मिट जाँयगे·····'

महमूद ने दस मिनट चुप रह कर कहा—'यह तय रहा। अल्लाह का नाम लेकर हम कल दिन भर लोगों को इकट्ठा करें। शाम होते होते सब लोग गङ्गा किनारे जमा हों और सौगन्ध लें·····

गंगाजल हाथ में लेकर·····माथे पर चढ़ा कर···पीठ न दिखायेंगे। अगली मुठभेड़ में चाहे हार जाँय पर इस बार दुश्मन को फतेह कर लौटेंगे····· जो न लौट सकेंगे वे हमेशा के लिये वहीं रह जाँयगे। होठ पर खूनी शब्द·····मुँह पर क्रान्ति की कराल, पैनी, मज़बूत रेखायें लेकर हम चढ़ाई करेंगे। मुझे स्कीम पसन्द आ रही है। कोई दूसरा रास्ता नहीं। अपने प्राण की रक्षा की जा सकती है। यह मुझे मंजूर नहीं। हमें लड़ कर·····मर कर और मार कर जनता को सक्रिय नेतृत्व देना है। रातोंरात आदमी रवाना करो दीदी! अफ़सोस है आज की रात नहीं इस्तेमाल की जा सकती। अल्लाह को मंजूर होगा तो कल वे लोग यहाँ न आ सकेंगे। कल रात को वारा-न्यारा हो जायगा।'

महेन्द्र ने कहा—'यह आप कैसे कह सकते हैं! हम लोग जनता को इकट्ठी करने—यहाँ लाने के लिये चारो ओर बँट गये·····उधर वे आगये तो क्या होगा? तब यहाँ और पस्ती रहेगी। ऐसा न हो लोग अपने घरो में घुस जाँय—फौज को खुल कर नंगा नाच नाचने दें।'

महमूद ने कहा—'यहाँ का जिम्मा मैं लेता हूँ। मैं दिन भर जो लोग मिलेंगे उनके साथ इन दरिन्दों का मुकाबला करूँगा। आप लोग जब तक न आयेंगे तब तक हम लड़ते रहेंगे। जल्द से जल्द यहाँ आने की कोशिश करियेगा। ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को साथ लाइयेगा। जिन लोगों ने आगे बढ़ बढ़ पटरियाँ उखाड़ी हैं—थानों, स्टेशनों पर कब्जा किया है·····तार काटे हैं····· सरकारी इमारतें फूँकी हैं वे अब आगे आयें। लड़ाई के मैदान में जौहर दिखायें। असली लड़ाई अब है। तब हमीं हम थे—जो चाहा कर लिया। अब लड़ें—अपने को आज़ाद करें। यह मोर्चा हमने जीत लिया तो आगे के लिये इतनी ताकत पा जायेंगे कि हमें जीतने में दुश्मन को नाकों दम आ जायगा। मुझे अफ़सोस हो रहा है। काश! दो दिन पहले आ जाता। यह बात

हमें पहले क्यों न सूझी ? आज कुछ नहीं हो सकता। फिज़ूल जान देने से फायदा नहीं। दुश्मन की लाश गिरा कर हमारा एक साथी गिरता है तो उसकी मौत स्वारथ है। अब भगवान पर भरोसा कीजिये। उसकी मर्जी होगी तो फौज़ यहाँ न आकर दूसरे गाँव जायगी। वर्ना यहाँ सुबह से लोगों को जुटाकर हमले के लिये तैयार करना शुरू कर दूँगा।'

लोगों की झुकी कमरें एक बार फिर तन गयीं। प्रचंड आशा-प्रद·····लम्बा चौड़ा·····वृक्ष के तने वाला·····चट्टान वाला कठोर फौलादी विश्वास सब के बीच लहर की तरह दौड़ गया। इस पदार्थवादी परिपूर्ण विश्वास के भीतर रह रह कर कल दिन के हमले की आशंका चमक उठती थी ! लोग जैसे उस ओर ध्यान न देना चाहते थे। रातो रात लोग रवाना होने लगे। प्रतिमा और बलराज, महेन्द्र और आरती, महमूद और रामलाल को छोड़ कर जब सब चले गये तब प्रतिमा ने कहा—'भैया ! तुम और महमूद यहीं रहो। रामलाल को परागी भेज रही हूँ। खुद करछना और बरगदा जाऊँगी। वहाँ के कसील ठाकुरों-लोधों ने साथ दे दिया तो बड़ा काम हो जायगा। मुझे वहीं जाना चाहिये। महेन्द्र अपने गाँव जायँगे। वहाँ से अधिक से अधिक संख्या में लोगों को लायेंगे·····'

बलराज ने कहा—'यहाँ रह कर क्या करूँगा—महमूद यहाँ के लिये काफी है। मैं मरौली की तरफ जाऊँगा। कोशिश करूँगा फौज और पुलिस के बारे में ज्यादा जानकारी ले सकूँ। वे लोग इधर बढ़ते दिखेंगे तो जैसे होगा दिन भर उन्हें फेरने की कोशिश करूँगा।'

प्रतिमा ने उत्सुक दृष्टि से देख कर कहा—'तुम कैसे क्या करोगे ? पुलिस और फौज के साथ, जितने कान्स्टेबिल और इधर उधर के दारोगा होंगे सब जाकर मिल गये होंगे। हमारे गाँव के दारोगा और कान्स्टेबलों का कई दिन से पता नहीं। वे लोग बढ़ बढ़ कर बागियों और बलवा करने वालों की शिनाख्त कर उन्हें पकड़वा

रहे होंगे। तुम्हें देखते ही पकड़ा देंगे। अकेले कर ही क्या लोगे? तुम कहीं न जाओ। यहीं रहो—महमूद के साथ दिन भर यहाँ के नौजवानों को तैयार करो। फौज के बारे में ज्यादा खबर क्या मालूम होगी। काम भर के लिये बहुत लग चुकी है। सौ-दो सौ आदमी ज्यादा होंगे। यही न! हम कल शाम तक यहाँ दो हजार के लगभग हो जाँयगे। दक्खिन पश्चिम के सारे गाँव अभी बचे हैं। फौज एक तरफ से ही चढ़ाई कर रही है। सरकारी शक्ति बँटी है इस लिये दोहरी मार नहीं।'

महमूद ने कहा—'यहाँ आपका रहना जरूरी नहीं। मगर सरौली जाकर आप क्या कर लेंगे? मुफ्त में अपने को पकड़वाने से फायदा? और लोग जहाँ गये हैं उन जगहों में आप कहीं जाना जरूरी समझें—चले जायँ। मैं तो सुबह से जो करना है शुरू कर दूँगा। अपने गाँवों में आदमी भेजने हैं। अकेले रामलाल से काम न होगा। अभी जाकर कारिन्दों को बुलाता हूँ—सुबह होने के पेश्तर रवाना करता हूँ। रात का आराम हराम हो गया अब। कल इतना बड़ा काम करना है·····आज क्या सो सकूँगा? आरती! कहीं जाओगी या यहीं रहोगी? लखनऊ में लोग तुम्हारी कमी महसूस करते हैं। मैंने कह दिया—देहात का पहला हक आरती पर है।'

आरती कुछ न बोली। उसे लग रहा है आज उसका मन दुलहिन का मन हो गया है। प्रतिमा और बलराज महमूद से आरती को लेकर शमीम के पास जाने के लिए कह वहाँ से रवाना हो गये। इस समय किसी को दूसरी बात की ओर ध्यान देने की फुरसत नहीं। सुकरू पहले जा चुके थे। महमूद ने आरती से कहा—'क्या इरादा है ज़नाब का—रात भर यहाँ बैठियेगा या चलकर मेरी झोपड़ी को रौनक बख्शियेगा·····रात आधी हो रही है। सोचता हूँ इस वख्त ड्योढ़ी पर दरबान को जगाऊँ या रात यहीं काट दूँ। तुम पास बैठी हो तो एक रात क्या पूरी जिन्दगी कट सकती है। जेल में

तुम्हारी इतनी याद आती थी कि खुदा की पनाह। लगता था तुम्हें अब देख भी न सकूँगा। देखना क्या—आज तुम्हें पा गया। कल की रात मौत की संगीनों से लिपटी होगी·····आज की रात मीठी, सुहानी लज़्ज़तों से भरी है। तुम्हें एक बार इतने नजदीक से देख कर अब मरने का गिला न होगा। आरती! मेरी संगमरमरी सपने की परी! चुप मत रहो! आज बोलो! कल बोलने का नहीं बिना उफ़ किये खामोशियों के साथ सीने पर गोलियाँ खाने का मौका होगा। तुम्हारे मैले मरदाने कपड़ों के भीतर से फूटती गोराई में बसन्ती चाँदनी की गोराई छन रही है। लगता है अपने फेफड़ों में तुम्हें खुशबू की तरह ज़ज्ब कर लूँ! अपने होठों में दहकने वाली तृष्णा की कभी न बुझनेवाली तपिश में तुम्हें इस कदर लपेट लूँ कि तुम हमेशा के लिए मुँहबन्द कली की तरह मेरी रूह से सटी पड़ी रहो। बोलो आरती! मुझ पर नाराज़ हो?'

आरती ने महमूद के चेहरे की तरफ देखा। वही लाल दिल है जो अंगारों की शराब खींच खींच कर—उनका अर्क निकाल कर देश-भक्ति की भूखी आँच को पिलाया करता है। जो गुप्त प्रेरणा उसे प्रत्येक बाधा, प्रत्येक खाई को लाँघने की प्रेरणा दिया करती है वह आरती को सामने पाकर जैसे एक उद्देश्य·····एक सिद्धि बन जाती है। आरती क्या अपने हृदय में कम दारुण, प्राणान्तक पिपासा की अनुभूति कर रही है! कैसी मदोन्मत्त, दुर्जेय आकाँक्षा का जीवन-व्यापी संगीत चारो ओर से सिमट कर—एकाकार होकर--स्थिर-प्रज्ञ होकर उसकी साँसों से लिपटा हुआ है! उसके गले से लिपटे कितने अधमरे सपने आप से आप सचेत, प्राणवान हो उसे बहार की सुशीतल मदहोशी प्रदान कर रहे हैं! महमूद के अंक में बैठी वह अनन्त प्रतीत हो रही है। नूतन आनन्द से उसका हृदय उमड़ रहा है। मनुष्यता और दिव्यता का अद्भुत संमिश्रण उसके भीतर हो रहा है। आभा की कैसी वृष्टि रोम रोम से हो उठी है! सारे शरीर की अव्यक्त भाशा पक्षियों के मधुर कलरव की तरह अंग

अंग में बोल उठी है। आज वह पूर्ण निमग्नता अनुभव कर रही है। आत्मा में भावना का समाधिस्थ हो जाना ·····कामना की आग में जल जल कर राख होना·····राख हो हो कर जलना·····कैसा अनिर्वचनीय ··· आँखों को मूँद देने वाला सुख इसमें मिलता है! महमूद के आ जाने के बाद का एक एक क्षण उसे अपने समग्र अस्तित्व का सार जान पड़ता है। आज उसका जीवन-निग्रह अपना अनुवर्तन नहीं चाहता। कोई मिथ्या अभिमान उसके सामने नहीं। कन्धों पर रक्खी कर्तव्य की चट्टान खिसक कर थोड़ी देर के लिए ढीली हो गयी है। चाहती है महमूद के गले में भुजाये डाल दे। लगता है महमूद की श्वास श्वास में अमृत बह रहा है·····बात बात में जादू भरा है जिसमें वह बीन-मुग्ध कुरंग की तरह फँसती जा रही है। कैसा मादक बदला है जो शरीर अपने बरसों के संचित सपनों से ले रहा है। पागल की तरह लिपट कर वह महमूद के हृदय और शरीर से चिपट जाना चाहती है।

महमूद ने कहा—'रात को जब देर तक नींद न आती थी तब जंगली फूलों के हार जैसी तुम्हारी बाहों की याद मुझे बेचैन करती थी। दिल के अन्दर बम की तरह कोई चीज फटती जान पड़ती थी। तुम मिल जाती हो··· मुझे लगता है मैं खो जाता हूँ। खुद अपना ·····अपनी हसरतों का विरोधी बन जाता हूँ। मगर नहीं! मुझे तुमसे कोई ख्वाहिश नहीं। तुम्हारे जिस्म को छूने का मुझे अधिकार नहीं। ऐसी बातें करने से फायदा? तुम्हारे हुस्न का पुजारी बन कर मुझे जिन्दगी बितानी है। मेरे लिए ज्यादा से ज्यादा तुम मौसमे-बहार की एक महकती छाया हो। अन्दलीब तुम्हें देख सकता है····· महसूस कर सकता है·····तुम्हारे शबाब की बादे-सबा में उड़ा उड़ा फिर सकता है मगर तुम्हें छू नहीं सकता। मैं तुम्हें छू नहीं सकता। बसन्ती चाँदनी की लुनाई की तरह तुम मेरे लिए एक छाया हो ····· धूप-छाँह की रुपहली छाया!'

आरती ने काँपते हुए महमूद के पैर पकड़ लिये। भावावेग से

उसका गला रुँधा आ रहा था। उच्छ्वसित कंठ से बोली—'मेरा अपराध क्षमा करो। मैंने तुम्हें बहुत दबाया है·····तुम्हारी उमंगों को बराबर पामाल किया है। आज मेरा घमंड टूट गया। तुम्हारी शरण में खड़ी हूँ। चाहे जो सजा दो·····चाहे जो सजा दो। संभव है आज हमारे जीवन का अन्तिम मिलन हो। मुझे माफ़ कर दो। अपनी पवित्रता का मेरा सारा गर्व नत हो गया है। मैं तुम्हारी तुलना में तुच्छ हूँ।'

'मेरे लिये तुम विहिश्त की ज़ल्वागाह हो।'—महमूद ने आरती को अपनी ओर खींच कर कहा—'तुमने क्या कसूर किया है जो तुम्हें माफ करूँ? तुमको पाकर मुझे कोई फरियाद नहीं·····परवरदिगार से कोई शिकवा नहीं। तुम मेरी हो जाओ—मैं सारी दुनिया फकीरों को बख्श सकता हूँ। मगर तुम····ऐसी ही पास·····बिलकुल पास रहो।

'मैं रहूँगी·····अब तुम्हें न छोड़ूँगी·····जहाँ तुम चलोगे चलूँगी·····रहूँगी। मैं रह नहीं सकती। ये दिन मैंने जैसे काटे हैं—मेरा दिल जानता है। मेरे कहने से क्या होता है। तुम्हारा मुझ पर पूरा हक है। तुम अपने अधिकार का दावा क्यों नहीं करते? मैं रोकती हूँ तो रुक क्यों जाते हो? क्यों नहीं आगे बढ़ कर अपना हक जताते? अब तुम्हें न रोकूँगी। तुम रुक जाते हो इसलिये रोकती हूँ·····मान जाते हो इसलिये मना करती हूँ·····क्यों मेरा इतना ख्याल रखते हो·····'

'इसलिये मेरी आरती!'—महमूद ने कहा—'कि तुम्हारा ख्याल मेरा ख्याल है। तुम्हारी इज्ज़त और अस्मत की पूजा करता हूँ तो अपने को भी बेदाग-पाक रखता हूँ। प्यास से दम घुटने लगे यह मजूर पर देवता की आरती जूठी नहीं कर सकता। अब तो मुझमें ज़ब्त का माद्दा पैदा हो गया है। तुम्हें कुछ कहना न पड़ेगा! नीम के बौर जैसी दबी दबी आने वाली तुम्हारी सोंधी गन्ध को·····तुम्हारे बालों के गुच्छे की गीली गीली केसरी खुशबू को अपने से

दूर ' ···उतनी दूर रक्खूँगा जितनी दूर सपने से सच होता है····· बरसात के पहाड़ से—कोमल, सफेद बादली धुएँ से, जमीन का दहकता अनुताप होता है। जिसे उठते-बैठते, साँस साँस, धड़कन, धड़कन में महसूस करता हूँ उसे न पाऊँगा तो मर न जाऊँगा। तुम्हारी ज़िद बेमानी नहीं हो सकती। तुम्हारे इरादे और भगवान के इरादे में कोई फ़र्क नहीं। पहले कभी कभी चिढ़ जाता था। अब मैंने अपने को मजबूत बना लिया है। मुझे ऐसी जलती खुशी न चाहिये।'

आरती का दामन जैसे असंतुलित हो होकर···महमूद की गोद में गिरा पड़ता है। वीणा के तारों की तरह उसकी अन्तरात्मा काँप काँप उठती है। कैसा अकथ, अवदात आनन्द है! महमूद के पार्श्व में वह अपनी सीमा तोड़ कर—शब्दहीन संगीत का विराट राग बन कर उसमें अधिकाधिक प्रोज्ज्वल होती जाती है! कैसी आत्म-विसंज्ञ चेतना है इस सहस्रधार स्नेह की जिसमें वह अपने को ही नहीं अपने स्नेह के पात्र को भी भूली जा रही है। जिस आधार पर झुककर सपने रचे जाते हैं उसे भी कभी कभी भीतर की प्लावित संपूर्णता विस्मृत करती हुई बहा ले जाती है। वैसी ही अन्तःसलिला आरती के चारो ओर लहरा रही है। महमूद की गोद से मुख उठा कर आरती ने अपनी उलहने भरी छाया महमूद की पुतलियों में समेटते हुए कहा—'यह' मैं नहीं चाहती। मुझे हुक्म दिया करो। मुझे अपनी बात मानने पर मजबूर क्यों नहीं करते मेरे सरताज़!'

'प्रेम मजबूर करना नहीं, मजबूर होना जानता है। जिस दिन अपने मन की बात के लिये तुम्हें मजबूर करना शुरू कर दूँगा उस दिन मेरी मुहब्बत की चोटी नीचे गिर जायगी। जहाँ बेएतबारी होती है वहाँ मजबूर करने का सवाल आता है। मैं तुम्हारे अलगाव की कद्र करता रहा हूँ। उसे मैंने कभी अपने लिये तकलीफदेह नहीं माना। दुनिया के हिले-मिले जीवन से जब नाता टूट जाता है·····जेल की तनहाई में जब पड़ा पड़ा दिल की तवारीख़ के सफे उलटा करता हूँ तब तुम्हारा अछूतापन·····तुम्हारी मोतिया दोशीज़गी मुझे अपने

इरादों पर और मजबूत करती है। जो बिलकुल नज़दीक होकर····· कलेजे से सटा होकर भी नहीं मिलता उसके अहसास में ताकत होती है·· ···जिन्दगी की ताकत·····आग की ताकत···जलते शरारों की गर्मी·····'

आरती अपने को रोक नहीं सकती। महमूद की बाहों में उसे बँधना है। आज वह अपने प्रियतम के लिए निषेधात्मक अनन्त न होकर हाड़-मांस की धड़कती हुई नारी है जिसे जीवन के मिथ्या स्वप्न इस क्षण नहीं भा रहे। इतने दिन उसने जिस अक्षुब्ध पृथकता को पाला पोसा है·····जिस शान्तिप्रद मानसिक अव्यग्रता को अपने सामने बनाये रक्खा है वह आत्मा का दीपक बुझा देने पर तुली है। उसकी आत्मा सचेत हो उठी है···· जैसे वह कभी सो नहीं सकती। आज जिस अनन्तता को उपलब्ध करने की पुकार उसके अंग अंग से उठ रही है वह सारे बन्धनों, सीमाओं का अतिक्रमण करने के लिए विह्वल हो उठी है। उसके गोल गोल चकाकार निर्निमेष नेत्र व्याकुल हो उठे हैं। उसके सारे प्राण खिंचकर दोनों बाहों में आ गये हैं जो महमूद को घेरे ले रही हैं। न जाने कैसे कैसे दिव्य सपनों से वह उमड़ रही है। बहती नदी के तरंगित प्रवाह जैसी आज उसकी नारी-सुलभ चपलता पूरे वेग से अपने सागर से जाकर लिपट जाना चाहती है·····

महमूद ने आरती के शिथिल शरीर को यथासंभव सीधे करते··· ··· बगल में अपने कंधे के सहारे बैठाते हुए कहा—'बचपना कर रही हो। इतनी बेताबी तुम्हें शोभा नहीं देती। तुम राजपूतनी हो आरती! अब तक तुमने मुझे सँभाला है। जब मेरे भीतर ज़ीस्त की शराब ने तेज़ नशा पैदा किया है तब तुमने मेरे बेकाबू होते दिल को फर्ज़ का सन्देश सुनाया है। उसी सन्देश की सुनहली गूँज पर मैंने अपने मनसूबे कुर्बान कर दिये हैं। कभी कभी मुझे लगने लगता था तुम संगमरमर की मूरत हो जिसमें दिल नहीं··· ···दर्द नहीं। लेकिन मैंने सीखा—कैसे मुहब्बत के चिराग को दिल के खून से रोशन

रक्खा जाता है। यह ज़ाहिरा मुहब्बत उस असली मुहब्बत को नहीं पा सकती जिसकी जुदाई में भी विसाल है···जहाँ जुदाई ही नहीं···एक लमहे के लिये जहाँ पूजा की याद दिल से नहीं उतरती·····मुझे उसी फ़िज़ा में बन्द रहने दो। उसके बाहर जो है वह मेरे लिए बेमसरफ़, बेमानी है ·····'

आरती को एक ठहराव-भरी ठोकर लगी। मन ही मन महमूद के देवत्व की चाँदनी में वह नहा उठी। कितनी गहरी, सुदृढ़ है वह नींव जिस पर उसने जीवन का देदीप्यवान स्वप्न खड़ा किया है। एक उद्दाम उल्लास उसके रक्त में नाचने लगा। पवित्रता की धधकती हुई नेत्रहीन, दृष्टिहीन, प्रकाशशून्य अनुभूति से वह बेचैन होने लगी। अपनी अयास फैली बाहों को नीचा कर उसने दोनों हाथों से महमूद के पैर जकड़ कर बाँध लिये ···अपने बालकटे, कुछ कुछ भांड़े सिर को उसके पैरों के ठीक नीचे जमीन पर रगड़ने लगी। महमूद के पैरों की छाँह जिसमें वह आकंठ डूबी पड़ी थी उसे श्वेत··· चाँदनी की तरह शुभ्र, पारदर्शी जान पड़ी। कितनी विराट, स्पंदनहीन आत्मउपेक्षा है इस कोमल-कराल आत्मा में! कैसा हल्का, कोमल, कृतज्ञ दबाव उसे पराजित किये दे रहा है। कितनी देर तक ऐसी आत्मविसंज्ञ अवस्था में पड़ी रही वह जान न पाई। उसकी सारी कँपकँपी—सारा रोमान्च जो एक सुखमय जुगुप्सा का सृजन कर रहा था·····सारी उत्तेजना जो कन्धों से चलकर भुजाओं और पीठ को कँपाती हुई पैरों तक चली आई थी चैतन्य की शीतलता में डूब गई। जिस सम्पूर्ण के ·····मुक्त के··· ···पुरुष के पैर पर वह बिछी पड़ी है वह उसका अभिन्नतम अंग होकर भी कितना ऊँचा, अशरीरी, पुनीत है····· सिर से पैर तक जैसे दिव्य ही दिव्य है। क्या उसकी शक्ति का तेज वह सहन कर सकता है··· ···उसके नेत्रों से टपटप आँसू गिरने लगे··· ···जैसे महमूद के पैरों से नीचे की भूमि की कंचन-मेखला पर मोती पिरोये जा रहे हों·····जैसे चाँदी की बूँदों से विभूषित झालर झुला-

भुलाकर अपने स्पर्श का प्रतिदान पाने का वह आग्रह कर रही हो·····

महमूद ने चौंक कर कहा—'उठो आरती! यह नमी कैसी? क्या रो रही हो! मेरी बातों से तुम्हारे दिल पर चोट पहुँची है? तुम्हें यक़ीन दिलाता हूँ तुम्हें नाराज करने की नियत से मैंने एक लब्ज नहीं कहा। तुम्हें आज ख़ुशी की मुस्कानें बिखेरनी चाहिये····· तुम रोती हो! मेरी ग़मनसीब जिन्दगी में तुम्हारे साथ गुज़रे दिन तुम्हारी अस्मत-भरी वफ़ा की यादगार हैं। मैंने उस यादगार को अपने गले में तावीज की तरह पहन रक्खा है। मेरी तरफ देखो! रोने में क्या रक्खा है। रोते हैं वे जो अपने को बात बात में बेअख़्तियार पाते हैं। तुम शक्ति की देवी हो ···· मुज़स्सिम ज़ब्र और सब्र की मल्का! तुम्हें रोना ज़ेब नहीं। समझ रही हो तुमने इतने दिन मेरे साथ जो सलूक किया उसका बदला ले रहा हूँ। ग़लत ख्याल है तुम्हारा! जिसको मैं दिल में सबसे ज्यादा इज़्ज़त करता हूँ उसे लेकर ऐसे इन्सानी जज़्बात अपने भीतर नहीं रख सकता। तुम मेरे लिये वही हो जो हमेशा रही हो। इतने दिन की जुदाई का यह अंजाम होते मैं देख नहीं सकता।'

आरती ने सिर उठाकर कहा—'मुझे जी भर रोने भी न दोगे?' मेरी रुलाई गुस्से की—मान और परिणय की रुलाई नहीं। यह पहाड़ के पैर पर अपनी लघुता के कारण सिर धुनती रहने वाली नदी का आत्म-ज्वार है। आज तुमने मुझे जो दिया है वह युग युग मेरे साथ रहेगा। तुमने मुझे बहुत कुछ दिया। पर आज की देन वह है जो फरिश्तों को मयस्सर नहीं होती। मैं इसे सँभाल पाऊँगी? तुम्हारे पास न रहने पर भी क्या मैं इस पाकीजगी की थाती को ढो सकूँगी? मुझे शक्ति दो—अपने को बिना तनिक भिगोये जीवन की लहरों पर ऊपर ऊपर निकल जाने का हल्कापन दो। आज जो तुमने दिया है मैं उसकी पाबन्द उम्र भर ऐसी ही बेदाग बैठी रहूँ यही चाहती हूँ। भीतर भीतर निर्मलता में घुली जा

रही हूँ। इसे तुम समझ सकते हो। अपनी उँचाई इन्सान को नहीं दिखाई देती। मन्दिर के भीतर बैठी मूर्ति के देवता को कलश का कँगूरा नहीं दिख पाता। तुम्हारी ऊँचाई उसी किस्म की है··· ··उसी की जात हो तुम !'

महमूद ने आरती की ठोड़ी को कोमलता पूर्वक हिलाते हुए उसका हाथ अपनी आँखों से छुआते हुए हँस कर कहा—'शायरी कर रही हो ! मैंने यह सब पाया कहाँ ! किसने मुझे धीरे-धीरे हड्डी, गोश्त, जिस्म के ऊपर उठना सिखाया ! किसने शुरू से मेरे बहकते दिल, फिसलते हाथ-पैरों पर काबू रक्खा ! ····· मुझे जानवरपन की ओर बढ़ने न दिया। इसके लिये मैं तुम्हारा मशकूर हूँ·····जैसे और बहुत बातों के लिये हूँ। तुम्हीं ने धीरे धीरे मेरे दिल में संयम की किरन जलाई जो आज तक नहीं बुझी·····जिसने बुझना जाना ही नहीं। तुम से यह न्यामत पाकर मेरा जीवन बन गया है····'

कैसा शान्त, करुण संगीत है ! कहीं विलास की उत्तेजकता, प्रवृत्ति के चटपटेपन की चमक नहीं। कैसी अमानवीय उदारता···· प्रेम के प्रति पूजा भाव है जो किसी बात की निस्सारता को जानते हुए उसे भ्रम की तरह हृदय में बनाये रखता है। उम्र भर के लिये मतवाला बना देने की क्षमता रखते हुये भी जो तपस्वी के प्रशान्त मौन की तरह निस्पृह ममत्व का दाता है·····जिसे छू कर ···· जिसका रस कानों में ग्रहण कर मन की चञ्चलता स्थिर-प्रज्ञता में डूब जाती है। आकाश की तरह शान्त, पहाड़ी झील की तरह स्वच्छ, संगमरमर के पहाड़ से गिरते नर्मदा के दुग्ध-फेनिल जल-प्रवाह की तरह निष्कलुष, गंभीर, आत्म-संगठित, अजेय, अभेद्य महमूद उसका प्रेमी है·····उसका पति है·····उसका अधिकारी स्वामी है। उसके पैर पर बहे आरती के आँसू विषाद के नहीं उल्लास और गर्व के जल-कण हैं। आज महमूद में उसे प्रेम की उस स्थिरता के दर्शन हुए जो आत्मा के विकारों को शान्त कर देती है·····उसे सत्य के प्रकाश से

भर देती है····उसमें लालसा की जगह तप, भोग की जगह उत्सर्ग का संस्कार भर देती है। आज उसे पुरुष के प्रेम के भीतर सच्च नारीत्व का वरदान मिला है। आज उसने अपने जीवन-देवता को पहचाना है!

आरती ने अनुनय के स्वर में कहा—'सो जाओ अब! मैं प्रतिमा दीदी का बिस्तर निकाल लाती हूँ। ड्योढ़ी पर इस समय जाना ठीक नहीं। बाजी से सुबह मिल लेना·····'

'तुम क्या रतजगा करोगी? तुम बिस्तर पर लेटो। मैं जमीन पर लुढ़क जाऊँगा।'

आरती ने कहा—'अपने दिल से लिपट कर अपने को खो देने के लिये मैं व्याकुल हूँ! तुम लेटो। तुम्हारे सिरहाने बैठ कर आज की रात काटना चाहती हूँ। चन्द घन्टे बचे हैं। तुम्हें मेरी बात माननी है। मुझ से सोने का इसरार न करना। मैं रात भर जाग कर तुम्हारे कल्याण की कामना करूँगी। भगवान मेरी रक्षा करेंगे।'

'नींद से बेहाल हो उठा हूँ। बिस्तर लाने की जरूरत नहीं—तुम्हारी गोद में सिर रख कर सोये लेता हूँ। मालूम नहीं दुबारा यह सुख मिलेगा या नहीं।'

आरती का हृदय प्रभंजन से पिटते निरीह पीपल पात की तरह काँप उठा। महमूद आरती की गोद में जो उसे दूर से जीवन का सर्वस्व-सुख जान पड़ा करती थी कोमलतापूर्वक सिर रख कर जमीन पर सीधा लेट गया। आरती की साँसों की सिहरन उसके कानों में प्रविष्ट हो हो कर जैसे उसे लोरी सुनाने लगी·····वह सोने लगा।

आरती ने कहा—'जेल में मेरी बहुत याद आती थी! क्यों? इस बार मुझे भूले नहीं।' महमूद ने अर्ध-निमीलित नेत्रों को उठाकर कहा—'तुम्हें कभी नहीं भूला। जब जब जेल गया तुम्हारी तस्वीर प्राण के बीच बोलती रहती थी। इस बार उठते बैठते तुम्हें

देखता था।'

आरती ने कहा—'तुम्हें तकलीफें भी बहुत दी गयीं। ज़ालिमों ने यह भी न सोचा कि अस्पताल से तुम जेल में गये थे। लखनऊ में कभी कभी खबर मिल जाती थी।'

महमूद ने कहा—'इतमीनान से सब बताऊँगा। जेल से बाहर आकर—खास तौर पर यहाँ तक पहुँचने में जो तकलीफें झेलीं उनके आगे सब मात हैं। ऐन वक्त पर पहुँच गया।····· चाहता हूँ मेरी मौत इसी तरह हो·····तुम्हारी गोद में।'

आरती ने स्नेह से महमूद के सिर पर हाथ फेर कर कहा—'ऐसी बातें न करो। उस भयानक दिन के आने के पहले मैं दुनिया से चली जाऊँगी। तुम जानते हो हिन्दू स्त्री के लिये सधवा रहते मर जाना उसके सतीत्व का सब से बड़ा वरदान माना जाता है। मेरी यही अभिलाषा है। तुम्हारे सारे संकट लेकर मैं पहले मर जाऊँ····· ···'

महमूद ने पड़े ही पड़े तन कर कहा—'हम दोनों आज़ाद हिन्द की गोद में मरेंगे। उससे पहले हमारे दुश्मन मरेंगे—'हम नहीं। खबर थी तुम्हारी शादी विक्रमसिंह के साथ होने वाली है। बाद में पता लगा झूठ है! चाचा साहब का क्या हाल-चाल है?'

'सुना है हफ्तों से बाहर हैं। अम्माजी को साथ ले गये हैं। होते भी तो मैं मिलने न जाती। माँ से मिलने को कभी कभी दिल बेचैन होता है। पर भाभी को सदा के लिये खोकर अब वहाँ किसी से मिलने न जाऊँगी। तुमने सिर क्यों उठा लिया? मुझे तकलीफ़ नहीं हो रही। आज मेरी जिन्दगी का सब से हसीन दिन है·····तुम मेरी गोद में इस तरह लेटे हो! कितनी मुबारक अनमोल घड़ी है।'

'मेरी जिन्दगी की पहली सोहानी रात है। मेरी जिन्दगी अब तक बेक़रारी में गुज़री। आज मुझे वह सुख मिला है जिसका ख्याल आते ही मैं शरमा जाया करता था।'

आरती ने मुदित होकर कहा—'आपको लड़की होना चाहिये था।

शर्म की लाली उन्हीं के चेहरे पर अच्छी मालूम पड़ती है। मुझे बना रहे हो ऐसा कह कर····'

'सच कहता हूँ आरती! मैं इस सौभाग्य का क़यास न कर सकता था जो आज अनायास मिल गया। अक्सर लगता था—तुम्हारा मेरा नाता खूबसूरत झूठों का सिलसिला है। आज मुझे वह सच लगता है·····धड़कते दिल की तरह ·····टपकते लहू की तरह·····आज मुझे महसूस हो रहा है····आरती मुझ से प्रेम करती है।'

'केवल प्रेम नहीं देवता!'—आरती ने महमूद के मुँह पर अपना सिर झुकाते हुए कहा—'वह तुम्हारी पूजा करती है। लेकिन खाली हाथों·····धूप दीप नैवेद्य ····झाँकी का श्रंगार·····कहीं कुछ नहीं। एक माला अपने हाथों गूँथ कर वह तुम्हें आज तक न पहना पाई। पर वह तुम्हारी पुजारनी है। वह तुम्हारा पुजापा है··· तुम्हारी आरती ··बतिका···स्नेह और ज्योति···नीराजन का सारा उल्लास वह है। अपनी अबोध पुजारनी की दरिद्रता···इस मुफ़लिसी के लिये माफ़ करना! उसके पास जो नहीं उसकी आकाँक्षा कर कभी अपने को छोटा न बनाना। उसके पास जो है वही तुम्हारा है। जो नहीं है वह तुम्हारा नहीं तो संसार में किसी का नहीं।'

महमूद ने आँखें बन्द कर ली थी। जैसे वह पुतलियों से मंडला-कर निकल पड़ने वाले अन्धकार के भीतर भीतर अपने सुख की थाह पाना चाहता है·····जैसे उसे अपने सौभाग्य और उपलब्धि की परिणति नहीं मिल रही। उसकी दशा उस पक्षी की तरह थी जो उड़ते उड़ते, पख टूट जाने से विवश हो, गिरता जाता हो पर इस गिरने की छटपटाहट में भी जिसे अपना स्थान मिला जा रहा हो·····महमूद लगभग दस मिनट बाद उठकर बैठ गया। बोला—'तुम्हारी जाँघों में दर्द होने लगेगा। मेरा सिर वजनदार है। इस तरह तुम्हें तकलीफ़ न दूँगा। लाकर बिस्तर सिरहाने रख दो। इसके बाद जमकर बैठो। मैं न रोकूँगा। जानता हूँ तुम कितनी नाज़ुक

हो। इतनी देर लेटा रहा—बहुत है।'

आरती ने प्रतिमा का बिस्तर लाकर बिछा दिया। महमूद कहने सुनने के बाद उस पर लेट गया। आरती सिरहाने तकिया के बगल में ज्यों की त्यों बैठ गई। मेघाच्छन्न आकाश की प्रकाशहीन रजनी और पवन की अचंचलता ने विराट स्तब्धता फैली दी थी। वाणी की शक्ति छीन लेनेवाली शारदी निशा की तीसरा प्रहर था जिसमें आरती वैसी ही अयत्न, अयास बैठी थी। जैसे युग युग से ऐसी ही महमूद के सिरहाने बैठी आई है·····उसका यह बैठना अनन्त काल तक चला जायगा·····किसी शापग्रस्त देवी की तरह मुग्धता में डूबा अपना गात लिये ऐसी ही बैठी रह जायगी।

महमूद को नींद नहीं आ रही। उसने कुछ मिनट बाद कहा—'इस तरह की हत्या की नींद सोने का मैं आदी नहीं। तुम बैठी जिस्म का होम करो····· मैं आराम से सोऊँ! ऐसा कभी हुआ है·····या आज होगा। लेट जाओ न! बैठे रहना क्या जरूरी है!'

'मेरी साधना है यह'—आरती ने कहा—'तुम सोओ! मैं तुम्हारे पास बैठी ज्वाला की तरह जागती रहूँगी। मेरा जागरण तुम्हारे सुख के मार्ग की बाधायें हरेगा·····तुम्हें मंगल-कवच पहना देगा। मुझसे कुछ न कहो। चुपचाप सो जाओ।'

'मुझे नींद नहीं आती। इस तरह मैं न सो सकूँगा—बौखलाहट में पड़ा रहूँगा।'

'ऐसी क्या बात है'—आरती ने कोमलता से कहा—'सो जाओ न! कितने जगे-थके हो। सुबह उठ कर काम में लगना है। चन्द घन्टे बाकी हैं। सो लोगे तो सुबह तबियत उतनी भारी न रहेगी। मैं बराबर सोती रही हूँ। आज की रात मुझे जाग लेने दो।मेरी पूजा का मुहूर्त आ पहुँचा है। मुझे जागना है·····'

आरती के दिल में न जाने कितनी बातें भरी हैं जो एक दूसरे को ठेल कर बाहर निकल पड़ना चाहती हैं। पर महमूद का सोना आव-

श्यक है यह भी वह समझती है। महमूद कुछ मिनट बाद सो गया। उसने एक हाथ आरती के पैर पर रख छोड़ा है जिसे आरती ने यत्नपूर्वक अपनी गोद में रख लिया है। महमूद के बनने में वह टूट सकती—उसके उठने में सदा को मुमूर्ष होकर गिर सकती·····उसके सोने में जाग सकती····· यही उसकी लालसा रही है। महमूद गहरी निद्रा में निमग्न हो गया है। आरती उसका हाथ उसी प्रकार अपनी गोद में रक्खे जाग रही है। उसे लगता है आज की रात निरवधि, असीम हो सकती·····यदि यह रात छमासी हो होकर लम्बी होती जाती·····सुबह न होता। महमूद ऐसा ही सोया रहता·····वह ऐसी ही विनय-सी प्राणवान बनी उसके सिरहाने बैठी जागती रहती। सामने आले पर तेल का दीपक जल रहा है जिसकी मध्यिम ज्योति चंचला की तरह अदृश्य हो जाने के लिये बीच बीच में काँप उठती है। आरती के दिल जैसा विघ्नों के सहारे बढ़ने वाला स्नेह उसमें भी है। ज्यों ज्यों रात बीतती है त्यों त्यों वह धुन्ध से भरता जाता है। आरती की निष्ठा प्रेम की वह अपराजेय धार है जो पीड़ा की नाँव पर अपना घर खड़ा करती है—आघातों की अगणित संख्या जिसे सोहाग का सिन्दूर देती है। जीवन ज्यों ज्यों आग का घर बनता है त्यों त्यों वह अपने सतीत्व पर इतराती है। महमूद सो रहा है·····आरती जाग रही है····उसके साथ जाग रही है चारो ओर फैले-बिखरे जंगल की आत्मा। कुछ दूर पर तरंग-संकुल महानद की महाप्राणता जो जन्म के प्रथम क्षण से लय के अन्तिम क्षण तक नहीं सोती ···सागर में लय हो जाने के बाद भी जो उसके अतृप्त हृदय के हाहाकार के साथ एकाकार होकर चिर जागरण की ललकार बन जाती है। आरती ने शेष रात जागते व्यतीत की। बीच बीच में ऐसा नहीं हुआ कि उसकी बाहें महमूद को घेर लेने को·····दबा डालने को न फड़की हों। लेकिन आरती की जागृति आज सुषुप्ति पर विजय पा रही है। अन्धकार के पट पर बिजली की तरह थिरकती न जाने कितनी छायायें आती हैं·····वैसी की वैसी लौट जाती हैं। इन छायाओं में

पहाड़ से टकरा कर भागते हुए नये बादल की तरह उज्ज्वल धुँआ होना है·····एक उत्कट भाफ़ जो कितनी मनोरंजक, स्निग्ध विस्मयपूर्ण जान पड़ती है। कैसी विराट भव्यता उसे घेरे है। उस विशालता में वह खोई हुई है·· देवत्व की उन्हीं तरंगों में बही जा रही है··· आत्म-निरोध के उसी अचंचल आकाश में वह उड़ी फिरती है। कैसी उदान्त तरंग है यह जो उसे बहाती है··· ··उड़ाती है·····सब कुछ भुलवा देती है। कैसी अतान्द्रिय, निर्वेद, परम शून्यत्वमय अनुभूति है जो आज उसके प्रियतम से ही नहीं सारी सृष्टि से·····सारे संसार से उसे एक रस बनाये दे रही है। जिस के भीतर ऋषियों-मुनियों के चैतन्य की गहनता, अन्तर्मुखी दृष्टि होती है। संपूर्ति की रसात्मक तृष्णा में बड़ी एक वस्तु होती है जो सापेक्ष दृष्टि से अपूर्ण होते हुए भी अपनी तुष्टि का आग्रह नहीं करती·····जिसके भीतर अंगीकरण की नहीं अस्वीकरण और अपरिग्रह की पैनी धार—लौ-भरी धार होती है। अखंड विश्वास·····प्रचंड श्रद्धा के सहारे जो अन्तःकरण की गहराई से निकल निकल कर लालसा की अतृप्ति पर छा जाती है। किसी नैतिक निषेधवाद पर आधारित न हो कर जो मानवता की सब से भीतरी जड़ों को सींचती है—उद्दाम प्रवृत्ति का माँगलीकरण करती है····· जीवन की पुनीततम प्रेरणा होती है यह! आरती आकंठ उस में डूबी बैठी है। आत्मा का मूल तत्त्व उसे पकड़ाई दे रहा है। कैसी जागरूक सहज शक्ति उसे अपने भीतर चलती फिरती जान पड़ती है! प्रेम के अन्तर्दर्शन ने आज उसके विवेक-चक्षु खोल दिये हैं····वे खुले रह गये हैं·····शायद ही जीवन में कभी बन्द हो सकें। कैसी अगाध रहस्यमयता, अपार्थिवता है इस जागरण में·· ·आत्मा की दिव्य ज्योति-शिखा के मुँदने खुलने में·····नये जीवन के संचार का·····नई आस्तिकता की उत्पत्ति का यह कैसा प्रबल दबाव है·····एक नये विश्वास के जन्म का यह कैसा ज्वलन्त उल्लास है जो उसके रोम रोम से पिघल पिघल कर

निकल रहा है। कैसी उग्रता है इस अवतरण में·····सरिता के फूटने के धारासार प्लावन जैसी जो अपने भीतर अँट नहीं पाता····· अपने को अपने में जकड़ नहीं पाता·····चारो ओर फैल फैल कर बढ़ता है·····बढ़ बढ़ कर फैलता है।

सुबह होना चाहता है। पौ फट रही है। महमूद ऐसी प्रगाढ़ निद्रा में लीन है कि करवट तक नहीं बदलता। आरती के हृदय की भावनायें बाहर के संसार के विस्तार से सिमट कर—भीतर की गहराइयों के एकान्त से उबर कर महमूद के मुँह के बिम्ब पर केन्द्रित हो रही है। बीच बीच में उस पर से हट जाती है·····फिर आ आकर वहीं रेखाकार हो केन्द्राकार हो उठती हैं। बीच बीच में वह महमूद का निष्चेष्ट हाथ उठा कर आँखों से·····होठों से·····छुआती है, फिर रुक जाती है·····श्वासों के आरोह-अवरोह से प्रकंपित महमूद के अधरों का वक्राकार तनाव और फैलाव देखने लगती है। उनमें कोई अवज्ञा नहीं—कोई ताना नहीं। है परितोषभरी शीतलता····· निरुद्वेग हास्य और लहरों के लजीले चाँचल्य जैसा अवदात आत्मदान·····आत्म-निवेदन·····आरती महमूद के माथे पर रह रह कर अत्यन्त कोमलता पूर्वक हाथ फेरती है। उसका हृदय और अधिक कोमलता के साथ उसके पैरों पर फिर रहा है। उसकी आत्मा जैसे एक विराट परिधि का वृत्त बन कर महमूद के चारो ओर रुँधी कढ़ी है। सारी इन्द्रियाँ विश्वास, साहस, विवेक की उदारता में डूब डूब कर भविष्य के मद का संधान कर रही हैं। शारद निशा के चौथे प्रहर में आरती को ठंड सी मालूम पड़ती है जिसके पार प्रभात के प्रकाश की हल्की हल्की सुनहली भूमिका है। कुछ घड़ियों तक वह महमूद को और छू सकती है·····उसकी उँगलियों को अपनी ठोढ़ी से दबा सकती है·····अपने हृदय का कंपन उसके हाथ की स्पंदनयुक्त नीली रेखाओं में प्रवाहित कर सकती है। रात को जो अन्धकार उसे काटने दौड़ता था उसके सिमटने की इस बेला में उसके प्रति मोह होने लगा। दिये की क्षीण होती हुई प्रकाश

शिखा को उसने बड़े अपनत्व के साथ तन-मन-प्राण में छिपा लेना चाहा। यही प्रकाश-वर्तिका उसके मौन समर्पण·····प्रेम की मंगल कामना में सारी रात जागते रहने की साक्षी है। यह दीपक यदि उसकी छाती में प्रविष्ट होकर आजीवन आज की मनुहार-भरी रात का साक्ष्य देता रहता···। अतीत की सारी स्पष्ट और अस्पष्ट उत्तेजनायें, प्रखर दंश और कशाघात आज आप से आप इस अवैयक्तिकता की व्यापकता में लहराते लहराते मुलझे जा रहे हैं। आकारहीन घनीभूत भावना मात्र होकर वह अपनी इच्छा के सामर्थ्य को कितनी आकुलता के साथ आत्मसात कर रही है! उसका तन मन पुकार पुकार कर, महमूद को जगा जगा कर कह रहा है·····मुझे शक्ति दो मेरे सोहाग के देवता·····तुम्हें ही प्यार करते·····तुम्हारे प्यार को सह सकूँ·····उसके अनुरूप अपने को शोध सकूँ···· मेरे भीतर ऐसा ही प्रकाश जलाते चलो। मेरी आत्मा की अवगुंठित बिजलियों को ऐसी शान्त ज्योति में जलने दो····

इक्कीस

सुबह जब महमूद की आँख आरती के बार बार जगाने पर खुली तब आकाश में सूर्य काफी चढ़ आया था। आरती जानती थी आज दिन भर महमूद को काम करना है। जोर जोर से उसका सिर हिला कर उसने उसे जगाया। महमूद ने नींद के कड़ुयेपन से दुखते नेत्रों को बिना खोले कहा—'सोने दो आरती! क्यों सता रही हो। नींद लगी है।'

'उठो न अब! तुम्हें गाँव भर में घूम घूम कर लोगों को संगठित करना है। भूल गये—तुमने भैया और दीदी के सामने कितनी बड़ी जिम्मेदारी अपने कंधों पर ली है। उसे यों ही रह जाने दोगे? उठो! अब मैं न सोने दूँगी। एक एक घटा कितना मूल्यवान है। बाजी से मिलने न जाओगे? तुम्हारे दो दोस्त सुकरू चाचा के यहाँ पड़े सो रहे हैं। उनकी सुधि न लोगे? उठो जल्द! मेरी ओर देखो।

मैं रात को एक मिनट नहीं सोई। तुम नींद में ऐसे डूबे कि एक बार बोले भी नहीं !'

महमूद आँखें मलता हुआ उठ बैठा। कर्तव्य की प्रेरणा ने थकावट और नींद-भरी विश्राम-लोलुपता पर विजय पाई। आरती के बड़े बड़े, निग्रह और जागरण की लालिमा से आरक्त नेत्रों की ओर देख कर बोला—'फिजूल रात भर जाग कर पहरा दिया। ऐसी क्या बात थी—कौन सा भय था ? अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। दो चार घन्टे सो लो। लौट कर आऊँगा तब जगा लूँगा। तुम्हारा मुँह इतना उदास और कुम्हलाया क्यों है ?'—कहते हुए महमूद ने आरती के दोनों हाथ प्यार से पकड़ लिये और उन्हें थपथपाने लगा।

'अब न सोऊँगी। कब सोऊँगी·····कैसी नाद सोऊँगी नहीं कह सकती। आज का दिन आज की रात किसे कहाँ ले जायगी ! तुम्हारे पास रात भर जाग मैंने तुम्हारे माध्यम से भगवान से विनतियाँ की हैं। तुम्हें बीच में रख कर विजय के लिये असंख्य निवेदन किये हैं। मैं सो जाती तो यह सब कौन करता ? तुम्हें घेर कर रात भर मँडराने वाले फरिश्तों का स्वागत कौन करता ?'

महमूद ने हँस कर आरती के दोनों हाथ छोड़ दिये। उसके सिर को हल्के हल्के झकझोर कर बोला—'यहाँ बिलकुल गोबर रह गया है अब। तुम्हारा सारा इल्म और दिमाग आज खो गया है। मुझे रात को फरिश्ते घेरे रहते हैं—दिन में जन्नत की हूरें मेरे साथ नाश्ता करती हैं···· खाना खाती हैं—यही सब तुम कहती हो। मुझे यह बचपना पसन्द नहीं। इसे मैं दिल और दिमाग की कमजोरी मानता हूँ। सेन्स की बात करो मेरी मल्का ! तुम्हें क्या हो गया है।'

'वही जो नमाज़ी को नमाज़ के लिये झुकते समय हो जाता है·····जो पुजारी के मूर्ति के सामने माथा टेकते ही सिर से पैर तक—आत्मा की अंतस्तली तक छा जाता है। मेरी फ़िक्र छोड़ दो। मेरा दिमाग ठीक है। मैं तुम्हारी देख रेख नहीं करती रही दीन और दुनिया के मालिक को अपनी फरियादें सुनाती रही·····

सूखी, जलती, दाह-भरी फरियादें ।'

दोनों साथ साथ प्रतिमा के निवास स्थान से बाहर निकले। गाँव में आतंक जैसा कुछ अव्यक्त और अगोचर-सा छाया था। आरती महमूद के आगमन की सूचना देने, ग्यारह बजे उसके व्याख्यान का प्रबन्ध करने में लग गई। महमूद सुकरू के यहाँ अपने दोनों दोस्तों से मिलता हुआ···उन्हें सारी बातें बताता और रात को आनेवाली घटनायें सुनाता हुआ अपनी कोठी में चला गया। शमीम खुशी से उछल पड़ी···ज़ोहरा दौड़कर मामू से लिपट गई। कोठी की एक एक ईंट—एक एक पत्थर खुशी और उम्मीद से बोल उठा। शमीम को सारी बातें विस्तार से बताने के बाद महमूद ने कहा—'आज का दिन और आनेवाली रात हमारे लिए जिन्दगी और मौत का पैगाम लायेगी। हम फतह हासिल करेंगे या मिट जायँगे···हमेशा के लिये मौत के दामन में सो जायँगे। हमारी लाश भी तुम्हें देखने को न मिलेंगी। आजादी की लड़ाई है!'

शमीम फूट फूट कर रोने लगी। ज़ोहरा एक अविज्ञानित भय से भीत हो महमूद के पैरों से जोर के साथ चिमट गई। महमूद ने उसे गोद में उठाकर अपने कंधे और गले से लिपटाते हुए कहा—'देख ज़ोहरा! बड़ी होकर तू इसी तरह अँगरेज दरिन्दों से लड़ना। अभी तू बच्ची है। खुदा ने चाहा एक दिन बड़ी होगी। एक लमहे के लिए तू मत भूलना कि गुलाम है···तेरा देश गुलाम है···तेरी जात···तेरा मजहब···तेरा इल्म सब गुलाम हैं। अपनी मा की मुहब्बत में पड़कर फर्ज़ से मुँह मत मोड़ना। मैं जहाँ रहूँगा दुआयें देता रहूँगा। मर जाऊँगा तो भी छाया की तरह तेरे पीछे लगकर सारी आलामतों से तेरी रक्षा करूँगा। ज़ोहरा! मेरी बेटी! मेरी नूरचश्मी!' कहते कहते महमूद ने उत्कट आवेग से उसके सिर के चुम्बन लेने शुरू कर दिये···उसकी आँखों से जैसे आज बिछुड़ कर फिर कभी न मिल सकने वाली बेवशी और छटपटाहट छलक रही थी। ज़ोहरा ज़ोर ज़ोर से रोने लगी। शमीम पास आकर खड़े खड़े महमूद से लिपट गई।

हिचकियों से उसका गला रुँधा था ··आशंकाओं और भय की भीषण भीति से उसकी आत्मा रुँधी थी। महमूद का हृदय भी उमड़ उठा। बोला—'बाजी! तुम उस बहादुर भाई की बहन हो जो शुरू से आज़ादी की लड़ाई पर अपना तन-मन-धन कुर्बान कर चुका है। तुम्हें यह रोना सोहता नहीं। मैं आसानी से न मरूँगा···न दुश्मन के हाथ आऊँगा। मेरी उम्र दराज़ है। घबराओ मत। मुझे इजाजत दो। दिन में पुलिस और फौज आती है तब सूरत संगीन हो सकती है। नहीं आती है तो रात को हम हमला करेंगे। खुदा ने चाहा तो फतेह होगी। हमारी आज़ादी कायम रहेगी।'

सुबह से दोपहर हुई। महमूद ने बीच बाजार में खड़े होकर व्याख्यान दिया। गाँव के लोग दम साधे दो घंटे तक उसका भाषण सुनते रहे। पूरी स्थिति समझा चुकने के बाद महमूद ने रात के आक्रमण की योजना बतलाई। उसने गाँव के नये खून की माँग की। आज जो पीछे हटता है—अपने गाँव और जिले की रक्षा करने के लिए मैदाने-जंग में नहीं आता वह विश्वासघाती है ··उससे बढ़कर पापी संसार में कोई नहीं। नौजवानों का फ़र्ज़ है वे गंगा किनारे प्रतिमा की झोपड़ी के नीचे मैदान में इकट्ठे हों। दोपहर बीतते बीतते और गाँवों से नौजवान जत्थों का आना शुरू हो जायगा। हम उनका स्वागत करने के लिये अपने प्राण हथेली पर लेकर खड़े रहें। उनके नाम को लज्जित न करें·····

महमूद के आग्रह पर आरती ने भी व्याख्यान दिया। लोग उत्तेजना और उत्साह से भर कर वहाँ से लौटे। सबकी आँखों में कर मिट या मर मिट का खूनी उत्साह था। नवयुवक जल्दी जल्दी अपने घर जाकर निर्दिष्ट स्थान पर इकट्ठा होने के लिए व्याकुल हो रहे थे। किसी के हाथ में तलवार, बल्लम या भाला था तो कोई लाठी और गँड़ासा लिये था। महमूद और आरती गाँव का चक्कर लगाकर, सुकरू के यहाँ से अपने दोनों साथियों को ले जब गाँव के बाहर प्रतिमा की झोपड़ी के टीले के नीचे पहुँचे तो सैकड़ों नवयुवक खड़े

उनका रास्ता देख रहे थे। महमूद और आरती विजयोन्माद से झूमने लगे। दोपहर बीत रही थी। फौज के पर्वतपुर की ओर बढ़ने की सूचना अभी तक न आई थी। इसी प्रकार पूरा दिन बीत जाय तो ईश्वर का कितना बड़ा अनुग्रह हो! उनमें अधिकाँश महमूद के परिचित थे। सभा में महमूद को सबसे अलग अलग बात करने का अवसर न मिला था। यहाँ हँस हँस कर वह प्रत्येक से बात कर रहा था और घर के हाल-चाल-खेती-रोजगार, की बातें कर रहा था। आरती वैसे ही देहाती युवक के वेश में महमूद से सटी खड़ी उसकी बातें सुन रही थी। ज्यों ज्यों समय बीतता था और फौज के आने की संभावना आगे टलती थी त्यों त्यों उसे हर्ष का आवेग होता था। अपरान्ह होते होते इधर उधर के गाँवों से नवजवानों के जत्थे आने शुरू हो गये। महमूद और आरती आनन्द मे उछल पड़े। उनकी आशा पूर्ण हो चली। बीच बीच मे लोग 'इन्किलाब जिन्दाबाद, महात्मा गाँधी की जय, के नारे लगाते थे। शाम होते होते बलराज प्रतिमा और महेन्द्र नवजवानो के बड़े बड़े जत्थे लेकर पहुँच गये। एक हजार से ऊपर लोगों की संख्या हो गयी, निश्चय हो गया कि आज पुलिस न आ सकेगी। लोग छोटी छोटी टुकड़ियों में बँट कर इधर उधर की बातें करने लगे। आरती के उत्साह की सीमा नहीं। मन ही मन महेन्द्र के लिए उसकी श्रद्धा बढ़ रही है जिसने फौज और पुलिस से केवल अपनी रक्षा न कर उस पर आक्रमण करने और आगे बढ़ने का मौका न दे उसे वहा पर खत्म कर देने की योजना सामने रक्खी। इतने में ज़ोहरा आकर महमूद के पास खड़ी हो गयी। महमूद ने सप्रश्न दृष्टि से उसकी ओर देखा। ज़ोहरा ने कहा—'आपको अम्मी ने बुलाया है। जल्द चलिये। ज़रूरी काम है.....'

महमूद ने आरती को इशारा किया। वह पास आ गई। महमूद ने कहा—'बाजी ने बुलाया है। मैं सुबह मिल आया हूँ। अब क्या काम हो सकता है? तुम जोहरा के साथ जाकर सुन आओ। मैं हमले के 'डिटेल्स' बनाता हूँ।'

आरती ने कहा—'तुम्हें बुलाया है·····मैं जाऊँ ! यह ठीक नहीं चले क्यों नहीं जाते ? देर न लगाना। ज़ोहरा को भेजा है तो कुछ काम होगा।'

महमूद न गया। वह जान बूझकर न गया। मोम को बार बार अग्नि के पास ले जाने पर वह पिघलता है। बहन के पास जाने से महमूद जानता है दिल में केवल मोह-ममता की झनकार उठती है। आज मोह का अवसर नहीं···इस जीवन-मरण के उल्कापात में ममता के लिये स्थान नहीं···मजबूरन आरती को ज़ोहरा के साथ जाना पड़ा। रास्ते में ज़ोहरा ने कहा—'मासी ! आज क्या होने वाला है। अम्मीजान सुबह से रो रही हैं। सुबह मामू गये थे तब से उन्हें चैन नहीं। बार बार उठ कर खड़ी हो जाती हैं···बेचैनी से टहलने लगती हैं। तुम हमारे घर क्यों नहीं रहतीं ?'

'बड़े काम हैं बेटी ! तेरे मामू तो कल आये हैं। मैं हफ्तों से यहाँ काम कर रही हूँ। आज रात अँगरेज़ी फौज़ और पुलिस से हमारी लड़ाई है। कुछ ठीक नहीं कौन बचेगा···कौन मरेगा। बाजी यही सोच बेचैन हो उठती होंगी।'

ज़ोहरा ने कहा—'तुम यहाँ रहोगी या जुलूम के साथ जाओगी ?'

'साथ जाऊँगी बेटी ! जितने आदमी तू वहाँ देख आई थी सब जायँगे। और लोग रात होते होते आ जायँगे। आधी रात को हम दुश्मन पर धावा करेंगे। खुदा ने खैरियत की। दिन में यहाँ फौज़ आ जाती तो हम तबाह हो जाते। हमारे किये कुछ न होता। खुदा आज़ादी के दीवानों की मदद करता है ! उसे मालूम है हमारे अन्दर कुर्बानी की आग है। मामू ने तुम्हें प्यार किया ज़ोहरा ! कितना किया ?'

'तुम्हें भी किया होगा मासी ! मामू तुम्हें बहुत प्यार करते हैं न ! क्यों मासी ! मुझे थोड़ा करके रह गये। उन्हें फुरसत कहाँ·····आधा घंटे घर में रुके होंगे—बस। चले आये !'

आरती ने अत्यन्त क्षीण लज्जा से और सुन्दर होकर मन ही मन मुस्कुराते मगर ऊपर गंभीरता धारण कर कहा—'तुम्हें प्यार करने की फ़ुरसत नहीं! कैसी बात कहती हो बेटी! मैं ऐसा कहूँ तो ठीक है। मैं काम में फँसी रहती हूँ····वे काम में डूबे रहते हैं। तुम्हारे लिये उनका दिल मुहब्बत से लबरेज़ है। बाजी उनकी राह देखती होंगी। मुझे देखकर जाने क्या सोचेंगी।'

ज़ोहरा ने कहा—'मुमकिन है मुझे मामू को बुलाने दुबारा भेजें।'

आरती ने कोठी पर पहुँच कर देखा—शमीम की आँखें रोते रोते लाल हो गयी हैं—पपोटे सूजे हुए हैं। पूरा चेहरा अश्रु की नीली रेखाओं से तमिश्र हो उठा है। आरती चुपचाप पास जाकर खड़ी हो गई। अपनी निरत, निष्कंप आँखों को शमीम की ओर फेर कर आरती ने कहा—'क्या है बाजी! महमूद बुरी तरह काम में लगे हैं। तुमने क्यों बुलवाया था? कोई जरूरी बात हो तो मैं अभी उन्हें ले आऊँ। बाहर के गावों से सैकड़ों लोग आ आकर जुटे हैं। सब से मिलना, जुलना, उन्हें मुखतलिफ़ टोलियों में बाँटना—उन्हीं को करना पड़ रहा है। ज़ोहरा से पूछ लो। मैंने बहुत कहा पर न आये।'

बिजली के दहकते रंगीन बल्ब के गुच्छों की तरह शमीम के हाट आवेश से ज्योतिवान थे। बोली—'क्यों नहीं आया महमूद? उसे दस मिनट का वक्त मेरे लिये नहीं। मैं बाँध कर बिठा लेती! मैं जानती हूँ उसे मेरी परवाह नहीं·····इस घर की परवाह नहीं····· खानदान के चलने, खत्म होने की फ़िक्र नहीं। पर मुझे है। मैं चहाती हूँ·····जाने दे आरती! क्या होगा उस बात को सोच कर—कह कर। उसमें कोई सार नहीं। बालू के घरौंदे की तरह बेमानी, बेमसरफ है वह। मैंने खुदा के पाक दामन के नीचे अपने को डाल दिया है। वे चाहेंगे तो हम बनेंगे·····वे चाहेंगे हम मिट्टी में मिलेंगे। अच्छा हुआ तू आगई। महमूद को सिर्फ एक बार

देखने के लिये बुलाया था। मन को बहुत समझाया पर नहीं मानता। यहाँ न आता·····न मिलता····· मुझे पता न चलता तो बात दूसरी थी। आँख के सामने होते कैसे उसे इतनी बड़ी आग में कूदने दूँ! एक बार समझाने के लिये बुलाया था। शायद मेरा कहना मान कर खामोश बैठ रहे। उसे मेरे पास आना कबूल नहीं। अब मुझे नहीं कहना। बैठ न! खड़ी क्यों है! जाने की जल्दी है!'

'जरूर है बाजी! एक एक मिनट हमारे लिये कीमती है। रात को दस बजे हम रवाना हो जायँगे। हमारे आदमी गये हुए हैं जो फौज का पता ठिकाना जान कर आठ बजते बजते आ जायँगे। इस बीच भैया, प्रतिमा दीदी, सुरेन्द्र, मानिक, गोपाल वगैरह दूसरे गाँवों से जत्थे ले लेकर आ रहे होंगे। हमारे पास हथियार की कमी है। दुश्मन गाफ़िल हुआ और हमने उस पर छापा मार दिया तब ठीक है। उसे अपनी मशीनगनों को इस्तेमाल करने का मौका मिल गया तो हमारी खैर नहीं।'

शमीम ने कहा—'तुम लोग जान बूझ कर मौत के मुँह में जा रहे हो। लाठियों का गोलियों का क्या मुकाबला! खुदा खैर करे·····मेरा दिल पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा है। जब से सुना है आँसुओं को रोकने की कोशिश कर रही हूँ पर रुकते नहीं। हर तरह दिल को कड़ा करने की कोशिश करती हूँ पर क़रार नहीं आता। भैया वहाँ थे! उन्हें देखना चाहती हूँ। पर बुलाऊँ कैसे! वे आने से रहे।'

'अभी उमरिया गये हैं। इतनी दौड़ धूप उन्होंने की है कि थके रहते हैं। मोर्चा सिर पर न होता तो मैं उनसे चन्द दिन बिलकुल आराम करने को कहती। हम लोग तोपों के दहानों तक आगये हैं बाजी! अब रुकने, पीछे लौटने का न सवाल है न समय। तुम क्यों घबराती हो। दुआयें दो·····भगवान से हमारी जीत की बिनती करो। यकीन रक्खो हम हार कर न आयेंगे·····

आने ही न पायेंगे। जीतेंगे या मौत के दरिया में डूब जायंगे। तुम हमें उसी सूरत में वापस पा सकती हो जब हमारी फतेह हो। उसके लिये हर साँस में खुदा से फरियाद करो। आज की रात हमारे लिये हश्र की रात है·····'

शमीम अपनी आँखें हाथों से ढाँप कर बड़ी-बड़ी, पीड़ा-भरी हिचकियाँ लेने लगी। नमी के कारण उसकी निगाह धुँधली हो रही थी। दिल की पसली के पास ज़ोर का दर्द उठने के कारण उसकी आँखों के सामने अँधेरा छाया जा रहा था। बर्फ से पटे सीमाहीन खेत की तरह उसकी दृष्टि के सामने काली काली धुन्ध छाई जाती थी। कैसा अभेद्य था यह अन्धकार·····कितना सूना और विदारक·····जिसके भीतर गहरी धँसी हुई असंख्य विक्षिप्त ज्वालायें सुलग सुलग कर दम तोड़ रही थीं। शमीम कल्पना के नेत्रों से देख रही है ··संक्रामक रोग की तरह फैलती हुई ···बाढ़ की तरह आती हुई·····विकट आँधियों के प्रकोप जैसी ·····घोर दुर्दिन की भयानकता। खून की नदियाँ·····फाँसी की थूनियों का चर्र चर्र होना··· ··घायलों का बिलखना··· ··हजारों घायलों की मृत्यु··· ·धधकते गाँव के मकानों पर धुएँ की काली लपटों की त्रासक लहर। उसका खून जमने लगा। जहाँ तक दृष्टि जाती है चारों ओर कब्रें ही कब्रें··· ··काँटीले तारों के जेल कैम्पों में पड़े युवकों का तड़प तड़प कर मरना। जीवन की मुस्कराती उज्ज्वलता, अछोर तक लहराती खेती की हरीतिमा, समुद्र की तरह हवा में झूमती फसलें कहीं कुछ नहीं··· ··कहीं कुछ नहीं। है केवल एक दुःस्वप्न की यातना जो छाती पर बोझ बन कर उसे अशान्त, परेशान कर रही है··· ··करती जा रही है।'

आरती ने कोमलतापूर्वक शमीम का मुँह ऊपर उठा कर कहा—'आज का दिन मेरी बाजो! इस तरह ग़मगीन होने का नहीं। आज का दिन हँस हँस अपने एक नहीं सैकड़ों भाइयों को विदा करने का है जो महमूद के नेतृत्व में दुश्मन को खत्म करने जा रहे हैं। इस तरह की बात कर के··· ··इस तरह के आंसू बहा तुम हमारे

दिलों को कमजोर बनाओगी ! तुम्हें भाभी की मौत इतने जल्द भूल गयी। क्या हमें उस ज़ालिम सरकार का नाश नहीं करना जिसने हमारी प्यारी भाभी की जान ले ली। एक नहीं—दो नहीं—जिसने हमारे असंख्य भाइयों-भाभियों का खून पी पी कर अपनी मदान्धता प्रकट की। सैकड़ों वर्षों तक जिसके अत्याचार-शोषण की सीमा नहीं रही। आँसुओं से भीगी रातों के अन्धकार में जिसकी निःस्वर दासता और आतंक का इतिहास लिखा है। सैकड़ों वर्षों से यह दुख हमारे भीतर भरता·····समाता रहा है। हम इतने झकझोरे गये कि बराबर झुकते चले गये। आज हम तन कर सिर उठा रहे हैं—प्रतिहिंसा से उन्मत्त होकर सदियों का बदला लेना चाहते हैं तब तुम जैसी हमारे रास्ते में ममता-मोहब्बत की रंगीनियाँ पैदा करना चाहती हैं। कैसा स्नेह है यह तुम्हारा जो हमारे आक्रोश की लौ सिर उठाने के बजाय विचलित होने लगती है। हमें अमरपुरी का अमर जीव बना दो बाजी ! वह ताकत हमारे भीतर पैदा कर दो जो तूफानों में न झुके—भूचालों से न मुड़े—प्रलय भी जिसमें कंपन न पैदा कर सके। उल्टे तुम हमें मक्खन की तरह पिघलना सिखाती हो !····· क्यों ?'

शमीम के सामने शीला की मूर्ति घूम गयी। मधुर गीत की झंकृति जैसी जिसकी एक एक दृष्टि उसे दुख से बोझिल अपने युग जैसे लम्बे, रेतीले जीवन को अतीत की बीती मधुर स्मृतियों के सहारे ढोते चलने की प्रेरणा देती थी। वही भाभी जो आकाश में फैले इन्द्रधनुष की तरह झिलमिलाते रंगों के वैभव से परिपूर्ण थी ····· असंख्य फूलों से उड़ा हुआ रंगीन पराग जिसे जंगली चंचलता, शबाब की शुभ्र आभा प्रदान करता था। उनके जीवन के कलरव, आनन्द, मुखरता के उद्यान की रानी वह स्निग्ध नीलाकाश जैसी वरदानमयी भाभी आज नहीं। शमीम की हिचकियाँ दुगना वेग लेकर उमड़ चलीं। उसका चमकता हुआ, विमल पथ के झिलमिल महराब जैसा मन भाभी के मरने के बाद कितना मटैला,

धुँऐला हो गया है। आरती ने इस समय उसकी याद दिलाकर शमीम को जोर से रुला दिया। वह अपने को न रोक सकी —बिलख बिलख कर—फूट फूट कर रोने लगी। जैसे बर्फीले ढेलों के बीच दुबकी पहाड़ी नदी में नया पूर आ गया हो·····जैसे वेदना से परिपूर्ण मौन अपनी अविराम, अबाध अजेयता के पराजित स्वरों में मुखर हो उठा हो। शमीम वैसी ही रोती जा रही थी।

बलराज और महमूद ने भीतर प्रवेश किया। महमूद बहन का रोना सुन कर आरती की ओर सप्रश्न दृष्टि से देखकर फिर बलराज की ओर देखने लगा। बलराज रिक्त आँखों से ताकते रह गये। कभी बाहर के दृश्य को देखते थे·····कभी अपनी स्मृति के सब से गहरे घाव के भीतर भीतर देखने लगते थे। खुली बर्फीली हवा से जकड़ी हुई उनकी भावना की रात में ऐसा घोर सन्नाटा छाया रहता था कि हल्की सी चीख और आवाज़ भी उन्हे साफ साफ सुनाई पड़ जाती थी। उनकी पिघले शीशे जैसी आत्मा की पारदर्शिता में अब आँख का छोटा से छोटा मेघ-भाव का छोटा से छोटा उड़ता पक्षी प्रतिबिंबित हो उठता है। बलराज ने बैठते हुए कहा—'रोओ मत शम्मी! इस तरह के रोने से कुछ नहीं हासिल होता—बहुत कुछ पास का खो जाता है। तुम्हें फिक्र किस बात की है। महमूद मेरे साथ रहेगा। मैं उसकी रक्षा करूँगा। पहले मेरी जान जायगी तब उस पर आँच आयेगी।'

शमीम ने माथे पर साड़ी का पल्ला ठीक करते हुए दूसरे सिरे से आँखें बन्द कर ला—चारो ओर बहे अश्रुओं को पोंछने लगी। उसके स्नायु अपने आशंकित विषाद के तनाव से टूटे जा रहे थे। सारी चीजें उसे अपने चारो तरफ टूटती, घूमती जान पड़ती थीं। नीचे की जमीन गहरा गहरा उभार ले रही है·····वह अपने आप को बेहोशी की शून्य गति में डूबने से नहीं बचा सकती। तब तक महमूद ने पास आकर कहा—'बाजी! भैया की बात सुनी। मैं इसीलिये जेल की दीवारें फाँद कर भागा कि तुम्हें रोता देखूँ····· तुम देश को आज़ादी के लिए लड़ने, जान देने से मुझे रोको!

जिन्होंने नगर के नगर बीरान कर दिये ·····हवा में जिनकी उड़ाई गाँवों की राख उड़ती रहती है, उनसे बदला लेना हमारा सबसे बड़ा कर्तव्य है। मैं वही करने जा रहा हूँ···भैया आरती, सभी तो उसी खून का·····उन्हीं आँसुओं का बदला लेने बढ़ रहे हैं। आरती को देखो। बहादुरी से अपना फर्ज अदा कर रही है। तुम बहादुर सिपाही की बहन होकर बेकरार हो रही हो। जब तक हमारे मुल्क की धरती खून से भीगी है तब तक तुम्हारी आँखो से आँसुओं का गीलापन नहीं, आग के शोले निकलने चाहिये। बुलाया था तो हिम्मत-अफ़जाई करतीं···बहादुरी का शानदार खजाना खोल देतीं। यह सब न कर तुम मुहब्बत का मक्खन बहा रही हो! सोचती हो तुम्हारे रोने धोने से हम अपना रास्ता छोड़ देंगे! उसे छोड़ना दीन दुनिया के साथ धोखेबाजी है। तुम्हारे रोने से— तुम्हारे बहते आँसुओं को याद कर इतना जरूर होगा कि भारी मन ले हम आगे बढ़ेंगे। ऊपर आसमान के काले बुरके से उझक कर रात हवा की कँपकँपाहट और गुनगुनाहट से जोश का सँदेशा भेजती है·· तुम जिन्दगी भर के सबाब के उजले दामन से लिपटी हमारा रास्ता रोककर खड़ी हो जाती हो! वे मा-बहनें भी इसी दुनिया में होती हैं जो अपने अज़ीज़ों की बेदफ़नाई लाशें मैदान में पड़ी देखती हैं··· फाँसी पर झूल रहे सगे मुर्दों को देखकर भी जिनके माथे पर शिकन नहीं पड़ती···एक तुम हो!'

आरती ने कहा—'हम आसानी से मरने वाले नहीं। मरेंगे तो देश जब आज़ाद होगा तब सूरज की सुनहली किरणें बनकर उस पर बिछ जायँगे। तुम हमें हँसी के मोती-भरे मन से बिदा दो। तुमसे कुछ छिपा नहीं। मौत गाँव के चारो ओर चक्कर लगा रही है। गली गली में खेत खेत में वह सफेद बादलों का बवंडर उड़ा रही है। लेकिन जीवन की जय होगी—हम जीतेंगे। मौत की बर्फीली छाया को चीर कर हम जिन्दगी की झकझोर लिए निकल आवेंगे। सुबह उठकर तुम सुनोगी हमने दुश्मन को हरा दिया। हमने पूरी फौज को क़त्ल कर

डाला···कैद कर लिया। हम जीत का सेहरा पहन सुबह तुम्हारी कदम-बोसी के लिए हाजिर हो जाँयगे। मरना जीना खुदा के हाथ में रहता है—यह भी तुम्हें बताना होगा ! उसकी मर्ज़ी के बिना एक पत्ता नहीं हिलता। उसकी रज़ा है तो बन्दूकों, मशीनगनों के सामने से हम बेखौफ़, सही सलामत लौट आयेंगे। यह सोच कर धीरज धरो। हमें बिदा दो ! केवल एक रात की बिदा। सुबह तुम हमें गाँव में तिरंगा झंडा बीच में फहराये घूमती पावोगी····· '

शमीम ने इतनी देर बाद गले को यथासंभव शुष्क बनाते हुए कहा—'मेरा दिल नहीं मानता। तुम लोगों को मौत के मुँह की ओर जाते देखकर कैसे धीरज रहे ? जमाना इस तरह का लगा है। जब से भाभी को खोया है तब से मेरा दिल कमजोर हो गया है। वे आज होतीं तो मैं इतनी मायूस न होती। उनके जाने के बाद मैं बराबर घबराया करती हूँ—जो न सोचना चाहिये सोचने लगती हूँ·····'

बलराज ने कहा—'जो चला गया उसकी चर्चा क्या ? कमजोरी और ताकत अपने घटाने से घटती है·····बढ़ाने से बढ़ती है। तुम्हारी घबराहट की बुनियादें मैं समझता हूँ। दिल को कड़ा करना होता है शर्म्मा ! आदमी अगर घबराहट की फुरहरी में पड़ा रहे जो उसकी जिन्दगी इसी तरह घुलते घुलाते बीत जाय। जीवन की निरुद्देश्य गति तब भीतर भीतर हाहाकार करती रहे। अपने को फौलाद की तरह चट्टानी बना लो। तुम्हें मुड़ना नहीं, काँपना नहीं, झुकना नहीं, टूटना नहीं····केवल ललकारना है ··ज्वालाओं के बन्धन खोलने वाले स्वरों में। तुम्हारी ललकार ऐसी हो जो हमारे भीतर मर मिटने की आग जला दे···हम मौत की छाती चीरते हुए चढ़ चलें।'

बाइस

एक सड़क पूरब से पश्चिम की ओर जाती थी—दूसरी दक्खिन से उत्तर को। दोनों जहाँ समतल मैदान में आकर मिलती थीं वहीं

फौज़ का डेरा पड़ा है। गाँव के बाहर तम्बुओं की कतारें तनी हैं। दोनों सड़कों के अगल-बगल दूर तक सटे हुए खेत हैं। दृष्टि-सीमा के उस पार पक्के, अधपक्के, कच्चे मकानों की पाँत है। पास ही मटीली नीली धार में बहता हुआ नाला है जिसका चमकदार पानी न जाने क्यों अब काला पड़ गया है। सारा गाँव ख़ामोश है। बलिदान के महायज्ञ में अपनी हविष देकर—अपना हिस्सा देकर वह शान्त, क्षीण पड़ा है। ऐसी भयावह ठंडक चारों ओर व्याप्त है—फौज़ की ज्यादतियों की ऐसी भीषण कँपकँपी अभी बाकी रह गई है जो सम्पूर्ण वातावरण को जाड़े की गहरी तहों में लपेटे है··· जैसे एक एक व्यक्ति की गरदन जबर्दस्ती बर्फ के लिहाफ में दबा दी गई हो। पास ही घनी झाड़ियों से होकर रास्ता गया है जो तंग होने के कारण कठिनाई से दृष्टि आता है पर दूर तक चला गया है। और कई पगडंडियाँ वहाँ से फूटती हैं जो गाँव के विभिन्न छोरों पर जाकर समाप्त हो जाती हैं।

रात हो गई है। चारों ओर सन्नाटा छाया है। आम, पीपल, बरगद, शहतूत के घने वृक्षों में अँधेरा घुसा बैठा है। अपमान के भँवर में पड़े हुए, दमन-जर्जर, निष्ठुरता के पैरों तले रौंदे गये गाँव गाँव की त्रस्तता का प्रतीक यह डरावना अन्धकार और डरावना, विदारक जान पड़ता है। कैसी कठोर, शान्त नीरवता है···कितनी जीवन-हीन, पराजयपूर्ण और अवसादी! गाँव के आधे से ज्यादा लोगों को पुलिस ने मार डाला है। चारों ओर सिमटे, झुके दुख अत्याचार के भीतर मानवता का लाल लाल गाढ़ा रक्त है। न जाने कितनी लाशें इधर उधर, रास्ते-रास्ते, गली-गली, कूचे-कूचे में बिखरी पड़ी हैं जिन्हें उठाकर ले जाने, फूँकने, दफ़नाने, बहाने का साहस-शक्ति भी इन रौंदे अपाहिजों में शेष नहीं। गोलियों, संगीनों से छलनी शरीर! किसी की कनपटी के पास गोल सूराख···फटे पाँव, हाथ मुँह और सिर···घुले घावों से बहा और निरुपाय हो वहीं जम गया गाढ़ा गाढ़ा रक्त। जिसने बालों को अपनी काली प्रगाढ़ता में कस रखा

था। दरिन्दों के पंजे की तरह उनके शरीर को छलनी करती····· उसमें दूर तक धँसी गोलियाँ! सब इन गुमनाम शहीदों की अन्तिम तड़पनों की, मृत्यु के क्षण तक भोगी गई यातना की गवाह थीं। उनके मुड़े शरीर दर्द की ऐंठन सहते सहते असमर्थ होकर अपने को ही जकड़ने के लिए इस तरह मुड़ गये थे·····अपने को ही नोचने के लिये···फाड़ खाने के लिये! कहीं कहा मरने के बाद भी जालिमों ने उनके शरीर को संगीनों से खँरोंचा था···बींधा था · यहाँ तक कि हड्डी को खुला छोड़ मुर्दा गोश्त जगह जगह अलग हो गया था—जैसे पैरके नीचे दबकर केले से उसका छिलका अलग हो जाता है।

गाँव में घरों के दरवाजे बन्द हैं। कहीं न प्रकाश हो रहा है न चूल्हे जल रहे हैं जिनका धुँआ ऊपर उठे। अपने भयानक मुर्दने चेहरों और संताप की ग्लानि से जलती आँखें लिये लोग अपने घरों में घुस गये हैं। रास्तों में जगह जगह जमा हुआ गहरा लाल काला खून उन्हें रह रह कर याद आता है···वे सिहर सिहर उठते हैं। अपने यातना-त्रस्त, रक्तहीन चेहरे उन्हें बिना दर्पण देखे दिखाई दे रहे हैं जिस पर फैली गन्दी नीलिमा उन्हें चिढ़ाती···उनकी असमर्थता, लाचारी का नंगा मज़ाक उड़ाती प्रतीत होती है। उनकी पीड़ा भरी हिचकियाँ उनके चेहरों पर जम जम कर साकार हो गयीं·····उनकी कालिमा तह की तह वहाँ जमी पड़ी है। कोई घर··· कोई परिवार ऐसा न था जिस के एक दो व्यक्ति बाहर मैदानों में मृत न पड़े हों। यहाँ तक कि बाहर सड़कों पर कुत्ते भी नहीं दिखाई पड़ते। अँधेरा जल्दी जल्दी बढ़ रहा था···परछाइयाँ गहरी होती जाती थीं। लोगों के हृदय में जो अन्धकार छाया था वह इस बाहरी अंधकार से अधिक सूना, गहरा, अभेद्य था। बड़ी से बड़ी विपदा के समय भी उन्होंने ऐसी खूनी निराशा नहीं अनुभव की। आपस में जब वे घरों के भीतर—बिलों में दुबके चूहों की तरह—भर्राई आवाज़ में एक दूसरे से बात करते थे तो आवाजें उनके होठों के बाहर न निकल पाती थीं···अंदर अंदर प्रतिध्वनित होकर एक

अस्पष्ट गूँज छोड़ती हुई विलीन हो जाती थीं। उनकी गहरी, धँसी, तिलमिलाती आँखों की विह्वल ज्वाला सब कह देती थी···सब सुन लेती थी···इन्द्रियों की सारी चेतना उसी में साकार थी। शेष इन्द्रियाँ इस समय शून्य थीं···महाशून्य !

दिन भर की लूटमार, हत्याकांड, बलात्कार से थके सिपाही रात में अपने अपने तम्बुओं में बैठे दिन भर के कृतित्व का रेखा-लेखा ले रहे थे। दूसरी ओर अफ़सरों के टेन्ट में शराब के दौर चल पड़े थे और खानसामा भोजन की व्यवस्था कर रहे थे। तम्बू इतने काफी न थे कि सब सिपाही उनमें आ जाते। कुछ लारियों के भीतर लेटे, बैठे थे···कुछ ने पास ही खाली पड़े गाँव के मिडिल स्कूल को अड्डा बनाया था। कहीं आग जलाकर चाय बनायी जा रही है···कहीं भाँग बन रही है···कहीं चरस गाँजे की चिलमें भरी जा रही हैं। अफ़सरों की दृष्टि से ओझल होने के कारण स्कूल में डेरा डाले सिपाहियों को ज्यादा सुविधा थी। दिन भर की कड़ी ड्यूटी के बाद अब जाकर उन्हें दम मारने का अवकाश मिला है। कहीं कहीं रात में निकलने और घरों पर हमला करने की योजनायें बन रही हैं। गोरे सिपाहियों की अपेक्षा काले सिपाहियों में अधिक उत्साह है। लूटमार, बलात्कार से उनका मन नहीं भरता। गर्भिणी स्त्रियों को भी नहीं छोड़ते··· बच्चियाँ और वृद्धायें भी उनकी पाशव चेष्टाओं का लक्ष्य रहती हैं। दिन भर की अपनी इन्हीं अनैतिक कारगुजारियों की बातें वे एक दूसरे से कर रहे हैं। किसके हाथ लूटमार में क्या लगा है यह वे बताना नहीं चाहते। पर अपने द्वारा किये गये बलात्कारों की संख्या छिपाने की प्रवृत्ति किसी में नहीं। किसने कितनी स्त्रियों को नंगा कर उन्हें कोड़ों की मार दी·····किसने और कौन कौन अकल्पनीय, शारीरिक अत्याचार किये ये सब बड़े चाव से एक दूसरे से बता रहे हैं। टेन्ट करीब करीब सब गोरे सिपाहियों के लिये हैं। इन काले, साम्राज्यवादी व्यवस्था के हिमायतियों को या तो स्कूल में शरण है या बाहर ओस में। जमीन पर कतार की कतार पड़ी हैं। हँसी मजाक, हल्ला-गुल्ला, धौल-

धप्पा चल रहा है। दिन भर इन्सान का शिकार करने वाले जंगली हिन्सक पशु भी रात में इसी प्रकार गुफाओं में कुलेलें करते हैं! काली पुलिस रात में फिर शिकार खेलने निकलने की सोच रही है। जानवरों का शिकार खेलने में फिर भी भय रहता है। निरीह, निशस्त्र किसान बच्चों-औरतों का आखेट किसी समय किया जा सकता है। उसके लिये दिन-रात का भेद नहीं। आज़ादी के भूखे इन्सान जैसे खतरनाक जानवर का शिकार जितना अधिक किया जाय उतना ही अच्छा। दिन भर भूखे भेड़ियों की तरह औरतों लड़कियों के शरीर नोचने खसोटने के बाद भी उनका चित्त अभी भरा नहीं। किसानों और छोटे छोटे ग्रामीण व्यवसाइयों के यहाँ जितना अनाज, खाद्य सामग्री मिली है सब जब्त कर ली गई है। पर इतने अत्याचार करके भी शिकारी साहबों का दिल भरा नहीं। अभी गाँव इन्सानों के खून से पूरा पूरा लाल नहीं हुआ···जल कर पूरा पूरा खाक नहीं हुआ। अभी राइफल, मशीनगन, ब्रेनगन आदि का पूरा पूरा उपयोग कहाँ हुआ है! दिन भर के बाद भी अभी मन नहीं भरा। ग्रामीणों पर दमन का पहाड़ तोड़ देने के बाद भी उनका रक्त-लोलुप हृदय प्यासा है। ये काले सिपाही रात को यही देखने निकलना चाहते हैं कि कोई भागकर कहीं जाता तो नहीं। इन्सानों का शिकार कल होना है। तब आगे के गाँवों की ओर शिकारियों का दल मुड़ेगा। पहला बड़ा हमला हो चुका··· ··दूसरा होना बाकी है। रायफलों के कुन्दों से मार मार कर ग्राम-निवासी शाम को छोड़ दिये गये थे ताकि दूसरे दिन की मार के लिये वे अपने को तैयार करें। उनके घरों का खाने पीने का सामान ले लिया गया था। रात को भूखों रह कर उन्हें कल की बेरहम मार, यातनाओं के लिये तैयार होना है। उनके शरीर की झनझनाहट उन्हें रह रह कर जला देती है। अपने मरे हुए आदमियों के लिये उन्हें खुलकर रोने का अधिकार नहीं। वे केवल कल की चिन्ता कर सकते हैं····· कल क्या होगा? कौन नये तरीके उन्हें शारीरिक यन्त्रणा देने के ये

नर-पशु सोच निकालेंगे ! स्त्रियों पर बलात्कार कर, उन्हीं के कन्धों पर बन्दूक रख उनके घर वालों को भूना गया है। कितनी ही स्त्रियों ने जान बूझ कर अपने को गोलियों के सामने कर दिया है·····इस प्रकार भ्रष्ट हो जाने के बाद उन्हें जीवित रहना कठिन लगता था। फरार व्यक्तियों की मा-बहिन होने का मूल्य उन्हें सतीत्व हनन और प्राणदान से चुकाना पड़ा···

× × × ×

थोड़ी देर के लिये स्तब्धता छा गई। शमीम अपनी आखों को सुखा भीतर भीतर गहरी दहक का अनुभव करती हुई अनबूझ साहस का संचार पाने लगी। बलराज ने कुछ मिनट के बाद कहा—'तुम्हें इस तरह रोना कैसे भाता है—मैं समझ नहीं पाता। इस तरह तो वे रोती हैं जिनका जीवन परवशता की खोखली नींव पर रहता है···जो कल्पना की शराब के नशे में जीवन की वास्तविकता को बहलाने का यत्न करती रहती हैं। तुमने अपनी ज़िन्दगी में अंगारों की तवारीख देखी है। तुम्हें हँस हँसकर हम लोगों को स्वतंत्रता के लिये अपना सब कुछ कुर्बान कर देने का जलता अहसास देना चाहिये। तुम्हारे भीतर का खून सारी बातें सुनकर·····जानकर नहीं खौलता ! अपने दो भाइयों और बहन को बचाने की बात तुम्हें बेचैन करती है पर अनगिनत भाइयों-बहनों पर होने वाले ज़ालिम अत्याचार तुम्हें बालू पर तड़पती हवा की तरह सनसना नहीं देते। तुम रोती हो !

आरती ने कहा—'इसमें अस्वाभाविक नहीं भैया ! आग के नज़दीक जाने पर घी पिघलता है। दिल के नज़दीक आकर दिल जलता है तब भीतर का जमा बर्फ आँसू बन कर बह चलता है। बाजी की ओर से आप बेफ़िक्र रहें। उनका दिल कड़ा है। बीच में कभी कभी दर्द से भर जाता है। महमूद बहुत दिन बाद मिले थे। अब उनके अन्दर कमज़ोरी नहीं। मैं अपनी बाजी को पहचानती हूँ···खूब पहचानती हूँ।'

लगभग एक घंटे शमीम को समझा बुझाकर आरती, महमूद और

बलराज चले गये। शमीम की समझ में कुछ आ रहा था—कुछ न आ रहा था। जब से उसने होश सँभाला तब से सुख उसके लिये छलना रहा है। इसलिये कभी झूठे उल्लास और उत्साह से वह अपने को धोखा न दे सकी। उसकी अपेक्षा आत्मा को गाढ़ा गाढ़ा फीकापन प्रदान करनेवाली अपनी सूखी जलन ही उसे भाती है। जीवन उसके लिये एक आहुति बन गया है। सच है कि उसमें जितना वह झोंक चुकी है उससे अधिक नहीं झोंकना चाहती। हविष्दान के लिए अब उसके पास क्या बचा है? बलराज, महमूद और आरती ने मिलकर उसे समझा दिया। वह जान गयी—जहाँ अपना बस नहीं, वहाँ रोना—दुख करना—इस प्रकार की भयावह आशंकाओं से व्याकुल होते रहना गुनाह है। खिड़की के पास खड़े होकर वह तीनों को गाँव के बाहर मैदान की ओर जाते देखने लगी। उसके मन का कोहरा बहुत कुछ साफ हो गया था पर उसकी धुन्ध अभी न कटी थी। जोहरा सहमी सहमी मा के पास खड़ी थी। शमीम ने उसकी ओर देखकर उसे कमर से लगाते हुए कहा—'क्या है बेटी! तेरा मुँह इतना सूखा क्यों है? कुछ खाया नहीं?'

ज़ोहरा ने हिम्मत कर कहा—'मामू चले गये अम्मीजान? तुमने ज़बरदस्ती क्यों न रोक लिया। बड़े मामू उन्हें ले गये। कब आयेंगे सब लोग?'

शमीम ने पुचकारते हुये कहा—'घबरा न बेटी! कल सुबह आ जायेंगे।'

जोहरा चुपचाप चारपाई पर उदास मन ले बैठ गयी। शमीम खिड़की के पास खड़ी है। उसकी तनी तनी आँखें भरी आती हैं। विश्व की सारी सत्ताओं की घोर उपेक्षा उसके मन में गूँज उठती है। उसके अंतस्मन की तिलमिलाहट फिर जारी हो गई। जैसे उसे सबने मिलकर ज़बर्दस्ती सुला दिया हो··· वह सो गई हो पर अब उस शक्ति के दूर हो जाने के बाद फिर अपनी यातना के मध्य में जाग उठी हो। उसकी सारी सहिष्णुता जैसे खिड़की

के बाहर उड़ उड़कर जाने लगी। सामने महमूद, बलराज, आरती चले जा रहे हैं। उसके नारीत्व की अमोल तृष्णा रह रहकर सिर धुनने लगी जैसे वीणा के तारों पर झूम झूमकर अपने को विसर्जित करने वाली करुण रागिनी····· जैसे भीतर की आशंकाजनक वेदनाओं का एकत्व उसके हृदय पर केन्द्रित हो रहा हो·····जैसे आतसी शीशे के माध्यम पर सूर्य की किरणों का केन्द्रीकरण होता है जिससे आग फूटती है। शमीम की बिखरी बिखरी जान पड़ने वाली लगन, जलन फिर केन्द्रीभूत हो रही है। आगे स्थिरतापूर्वक बढ़ते हुए तीनों दृढ़ डग आनन्द के आत्मोसर्ग की उगती लीकें हैं जो आप से आप कढ़ती आती हैं। पर शमीम के एकाकी जीवन ने उसके भीतर जिन विश्वासों को पैदा किया है वे आज क्यों नहीं रूप-आकार धारण कर नई, सहज, सन्तोष-तृप्ति का मार्ग उसके लिये खोलते? वह क्यों फिर फूट फूटकर रो पड़ना चाहती है? क्यों नहीं अपने माथे के आँचल को वह इन बहादुरों की जीत का परचम बना लेती? क्यों नहीं ·····क्यों नहीं····· क्यों नहीं। रात नज़दीक आती है। दिन की लालिमा अब भी नदी के पार क्षितिज से सिमटी-सिमटी जल रही है। शमीम भी अपनी अपूर्ति को उभारती हुई रोम रोम से पुकार रही है—मैं जल रही हूँ—अभी जल रही हूँ। रात का अन्धकार दुनिया पर टूट पड़ने के लिये धावा मारे चढ़ा आता है। आज की रात उनके पूरे जिले के लिये कैसी कानाफूसी से भरी है। जीवन-मरण की करवट उसके भीतर है·····गति का उपक्रम····· लय का उपसंहार उसमें काँप रहा है। शमीम को लगता है—आज की रात वह संसार में नहीं है·····जीवन में नहीं है·····चेतना में नहीं है·····प्राण के परिताप में नहीं है·····अपनी स्पृहा की भस्म में नहीं रम रही···अपनी लालसा की परिधि में भय अहं के···निम्नत्व के लघुत्व में नहीं अँट पाती! आज वह विषम आक्रोश है····· निराकार···निरावरण···निर्बल जो शून्यता की तरह चारो ओर घुली जा रही है। लोग उसकी छाया में चल रहे हैं पर जान नहीं पाते यह

उसी की छाया है जो सूनेपन को घनत्व प्रदान करती है···अंधकार के भीतर हवा की सनसनाहट का अंजन भरकर उसे भयंकर रूप में डुबा देती है। ज़ोहरा आकर मा के पास खड़ी हो गई थी। शमीम से बाहर की ओर न देखा जाता था। उसने जोहरा को छाती से लगा लिया। अपनी सहिष्णुता के छल से छलक छलक वह बार-बार ज़ोहरा का मुँह चूमने लगी·····जकड़ जकड़ कर उसे छाती से लगाने लगी। प्यार की झूमने, झूमाने वाली आत्मविभोरता में वह असंबद्ध हो रही थी।

रात शमीम कब सोयी नहीं जानती। जागने की हदें मिल जाती हैं पर सोने की सीमा उसे नहीं अनुभव होती। कमरे में रात भर बराबर कँपकँपी की ठंडी लहरें दौड़ती रहीं। बीच बीच में उसे अपना हृदय पत्थर का लगता प्रतीत होता था पर फिर अपनत्व की आँच सताने लगती थी। सामने मसहरी के नीचे सोई ज़ोहरा की श्वासों का दबावपूर्ण स्वर बीच बीच में आकर उसकी निस्संग आकुलता में विचित्र भीति की भावना पैदा करता है। बाहर चारो ओर जंगल की गहरी उदासी छाई है। पेड़ों की चोटियों पर हवा ज़ोर से बह रही है। बीच बीच में सियारों के रोने-चीखने, चिल्लाने का स्वर आ आकर कमरे के अन्दर टिमटिमाती रोशनी को विषण्य पीतिमा प्रदान करता है। अधीर मन, विषादानत आँखों से शमीम प्रभात की राह देख रही है। अपनी आँखों की सूजी सूजी ललाई वह अनुभव करती है·····अपने आप देख लेती है। मन को हर प्रकार से निर्लिप्त, प्रशान्त बनाने का यत्न करती है पर काली काली छायायें आकर नेत्रों के सामने नाचने लगती हैं। आँखें खोलने पर भी ये कालिमा की पट्टियाँ उसका पीछा नहीं छोड़तीं। कैसा कठिन दुःस्वप्न है जो जाग्रत होकर भी मृत्यु की जड़ता का संचार करता है! शमीम उठ कर खड़ी हो गई। सामने की खिड़की खोल उसने बाहर काले काले दानव जैसे भूमि से आकाश तक लेटे अंधकार की ओर देखा। बाहर की ओर अपनी आँखें गड़ा दीं जैसे वह लड़ाई का दृश्य

देख लेगी—जहाँ पुलिस और फौज के साथ गाँव के नवयुवक जीवन-मरण का संग्राम कर रहे हैं। रात के अन्धकार में एक दूसरे से सटे हुए फीके काले, गहरे काले, भूरे काले रंगों के पेड़-पौधे, मकान, अटारियाँ, बीच बीच में खाली पड़े मैदान सब शमीम को एकाकार लगते हैं। न जाने किस अविजानित आवेग से उसका दिल धड़कने लगता है जैसे भाफ़ के मटीले-नीले बादल उसके अन्दर वेगपूर्वक घुस आये हों और लहरें ले रहे हों। प्राण को आतंकित करने वाला दुःसह पीड़ा का दीर्घ दुःस्वप्न कैसी घोर आत्म-व्यथा है यह! कितनी अधीर और बावली!! जो देखती नहीं, सुनती नहीं, सोचती नहीं···समझती नहीं केवल काटती है ··केवल काटती है···काटती जाती है···ऐसी काटने वाली शक्ति इसमें है। कैसा हुँकारता हुआ अन्धड़ उसके भीतर चल रहा है जो मौत की इस रात में उसकी नींद भगा ले गया है। जाकर शमीम ज़ाहरा के सिरहाने खड़ी हो गई। वह ज़ोर ज़ोर से साँस ले रही थी। जैसे शान्तिपूर्वक सोई बालिका के चिड़िया जैसे नन्हें हृदय की तेज़गति से वह बहकर बाहर आते साँसों के मर्मर को वह अपने भीतर जज़्ब करेगी। धीरे धीरे उसका खोया आत्मविश्वास लौटने लगा। मसहरी के भीतर झिलमिलाती, ज़ोहरा की साँस की लहरियों को सुनने ·····फिर खिड़की के पास खड़े हो क्रमशः पीली पड़ती रात के क्षीण होते घटाटोप को देखते शमीम ने रात काट दी। उषा के ठिठुरते धुंधलके में अंधकार के काले-काले सूराखों को विलीन होते उसने देखा!

× × × ×

गोरे-काले सिपाहियों के बलात्कार के बाद जो न मर पाई थीं वे घरों में छिपी अपने कालिमा-कुंठित फटे फटे मुख को अपनी घृणा के बुर्के में छिपाये मन ही मन रो रही हैं। कैसा भयानक अनुभव उन्हें हुआ है जो किसी के आगे कहना·····जिसकी फ़रियाद करना उनके लिये असंभव है। उनके तुड़े-मुड़े शरीर, उखड़ी-पुखड़ी टाँगें, कसी-कसी सी माँसपेशियाँ जो भर-भराकर टूट पड़ने के लिए विकल हो रही हैं···कैसा दुःसह और नारकी अनुभव है यह! उनके

पतियों, पुत्रों, पिताओं, परिवार के अन्य लोगों ने उनके नग्न शरीर के साथ ज़ालिमों का जघन्य कृत्य अपनी आँखों देखा है उनके सामने जाने में—उनकी दृष्टि के स्पर्श मात्र से उन्हें कितना आत्मसंताप होता है! घर घर में ऐसी स्त्रियाँ थीं जो इस प्रकार अपमानित, गर्हित की जा चुकी हैं—शिकारियों की वासना के पावों तले रौंदी जा चुकी हैं। पृथ्वी उनके सतीत्व के रक्त से भीगी है···उनकी मर्यादा के आँसुओं से गीली··· उनके नारीत्व के पराभवपूर्ण स्खलन से अति लज्जित और अपहरित! रास्ते-रास्ते, मैदान-मैदान, लाशें बेदफ़नाई पड़ी हैं। पर जो जीवित लाशें अपने नारीत्व की फाँसी के झूले पर झूल रही हैं कितनी डरावनी और अपशकुनयुक्त हैं! रक्त से सींची धरती फिर अनाज उत्पन्न करेगी··· जलाकर नष्ट कर दी गई गेहूँ-धानों की फसल फिर से सिन्धु-तरंगों के ज्वार के समान खेत-खेत में लहरायेगी···भय के राज्य का अन्त होने पर फिर चारों ओर सुशासन, सुव्यवस्था, स्वराज्य होगा····· आजादी की उल्लासपूर्ण जीवन्त अरुणिमा चारों ओर फैलेगी पर इन रमणियों का खोया सतीत्व·····सदैव के लिये अपहरित इनका नारीत्व इन्हें फिर न मिलेगा। वे हमेशा वही रहेंगी जो आज होकर रह गयी हैं। इन निष्पीड़ित अभागिनों के लिये सम्मान की राहें बन्द हो गई हैं! देश की स्वतन्त्रता के संग्राम में इन सतीत्व-भ्रष्ट नारियों के बलिदान का मूल्य क्या कम आँका जायगा! उनके त्याग और उत्सर्ग का मूल्य क्या प्राण देने वालों से कम कूता जायगा? ऐसा तो न होना चाहिए! एक-एक खंडित सतीत्व का मूल्य एक-एक कटे सिर से, एक-एक मृत्यु के गर्त में गिरे शरीर से कम नहीं। उनके शीश दान के सम्मुख इनकी गैरत और अस्मत का अपहरण वही ऊँचाई रखता है जो पहाड़ की एक चोटी दूसरी चोटी के सामने रखती है। पर यह भविष्य के इतिहासकार और समाजशास्त्री के समझने की बात है। आज उन रमणियों को कैसे धैर्य मिले जो दानवों के रक्त-रंजित, पाशव अन्याय की शिकार हो अपना खंडित कौमार्य, पत्नीत्व, मातृत्व लिए अपने घर में दबी बैठी हैं·····

जिन्हें सारा संसार···सम्पूर्ण जीवन निकृष्ट व्यंग की तरह सता रहा है। अपने भीतर उछलती घृणा, आत्महिंसा की उत्तप्त-कराल, खूनी ज्वाला उन्हें एक क्षण चैन नहीं लेने देती। ···जैसे किसी ने उनकी कोख में लाल लाल अंगारे पिन्हा दिये है जो अपनी दाहकता को प्रतिक्षण प्रज्वलित करते हैं! उनके मुँहों से गर्म-गर्म प्रश्वास ऐसे निकल रहे हैं जैसे तत्काल जला देने वाले, संक्रामक रोग के कीटाणु। उनकी भीतरी हड्डियाँ जल रही हैं···जलती जाती हैं··· जलती जाती हैं।

रात बढ़ती जाती है। सन सनाती हवा चल रही है। आकाश में तारे टिमटिमा रहे हैं। रात का गहरा होता अन्धकार नीरवता के साथ अधिक हिलमिल कर नाच रहा है। इस अन्धकार में कुछ ऐसी आवाजें भी रह रह कर काँप उठती हैं··· घनीभूत खामोशी को भंग कर देती हैं जिनकी करुण कराह भरी कर्कशता दबाये नहीं दबती। ये उन माताओं के विलाप की प्रतिध्वनियाँ हैं जिनके पुत्रों के कंकाल याद बन बनकर उनकी चेतना की लपटों में उठ रहे हैं···ये उन बहनों के क्रन्दन की चीत्कारें हैं जिनके भाई दिन में पुलिस की गोलियों द्वारा भून दिये गये हैं या तरह तरह के अवर्णनीय निर्दय तरीकों से मारे गये हैं। उन विधवाओं के हृदयों को भून भूनकर उठने वाली आत्मा की चटखारें हैं जिनके सुहाग रक्त से धुल चुके हैं ····जिनका अहिवात संगीनों की नोकों पर झूल चुका है। जल्दी जल्दी बीतती रात का सूनापन हवा के झोंकों पर झूम रहा है। भय-ग्रस्त जानवर की तरह गाँव वाले घरों में दुबके, पिस्सूग्रस्त चूहों की तरह बिलबिला रहे हैं। उनकी गोहारें ऊपर उठती हैं पर आस्मान का दिल नहीं हिलता···आकाश से वज्र नहीं गिरता जो इन नर-पशुओं को चूर चूर कर दे। धुँए की तरह भीतर भीतर घुटने वाले ये इन्सान आज दमन का कमीनापन देख देखकर जड़, निस्पन्द हो रहे हैं। आदमी आदमी को इस बेरहमी से मार सकता है! मच्छरों-खट-मलों को मंग, हैजे जैसे घृणित रोगों के कीटाणुओं को भी कोई इस

निर्दयता से नहीं मारता। शासन के पशु बल का मद आदमी को इतना यंत्रवत, हृदयहीन बना देता है। घरों के भीतर दुबके लोग दिन की एक-एक घटना ···एक-एक मृत्यु को रह रहकर बिसूरते हैं··· ···उनकी पथराई आँखों के पपोटे आवेग से सूज सूज आते हैं! कैसी नारकीय भय-विह्वलता है जिसमें आकंठ डूबे इन बेजुबानों को खाने का होश नहीं ···पानी पीने की सुधि नहीं ·· ··हाजतों का ध्यान नहीं···सोने की आकाँक्षा नहीं। आँखें फाड़ फाड़ कर, दीवारों पर उपहास करती हुई अपनी छायाओं को देख रहे हैं और कान खोले बाहर गाँव होने वाले उस हर्ष उल्लास के कर्कश स्वर को सुन रहे हैं जो फौजियों के कैम्पों से विषदन्त काढ़े उनकी ओर झपटा आ रहा रहा है। दरवाजे बन्द हैं ···खिड़कियाँ बन्द हैं·····दीवारें रन्ध्रहीन, सन्धि हीन हैं फिर भी पशुता का यह जय नाद उनकी छाती चीरता हुआ घर के भीतर घुस आता है। अपमान, विक्षोभ और दुर्गन्धि देकर सड़ते हुये मन के साथ यह नियति का क्रूर हास्य-व्यंग है जो मैदानों में पड़े हुये भाई, पुत्र, पिता, पति की लाशों की सुधि में विक्षिप्त ग्रामीण स्त्री-पुरुषों को बेरहमी से झकझोर रहा है। तरह तरह की भयावनी छायायें घरों के भीतर मध्धिम ज्योति से रोते हुये चिरागों पर अँधेरा कर रहीं हैं मानो अभी से उनके बुझने की प्रतीक्षा में उन पर कालिमा का कफ़न डाल रही हों।

दस बजते बजते चारो ओर सन्नाटा छा गया। काले सिपाहियों को खाते-पीते इतनी थकान ने आ घेरा कि वे रात में शिकार के लिये निकलने का विचार छोड़ बैठे और नींद के मारे खर्राटे भरने लगे। केवल वे ही भरी बन्दूकें लिये मुस्तैदी से इधर उधर घूम घूमकर पहरा दे रहे थे जिनकी ड्यूटी लगी थी। गाँव के बाहर दूर खेतों में केवल सियारों के रोने का शब्द सुनाई देता था। उनके रोदन में मायूसी का भाव था जैसे वे भी भय से ग्रस्त हों। गाँव में इतनी लाशें पड़ी हैं···उनके लिये राज भोग का साज सजा है पर वे वहाँ जाकर मनमानी नहीं कर सकते। चुभती हुई ठंड उनके शरीर में समाई

जा रही है। पर और रोज की तरह वे गाँव में बुझते अलावों की गर्म राख में लोट कर अपने शरीर को गर्मा नहीं कर सकते। उनकी सहज वृत्ति ने आज उन्हें गाँव की ओर जाने से रोक रक्खा है। आत्म-व्यथा से तड़पते—मौत के नगे साये के नीचे दबे गाँव की ओर जाने की आज उन्हें प्रेरणा नहीं होती। अपने विशाल दाँत, वहशी आँखें लिये वे बीच बीच में रोकर रह जाते हैं। हवा बिथर कर चलने लगती है। पाले ने असामान्य रूप से पृथ्वी और आकाश को जकड़ रक्खा है। सुदूर आकाश से उतर उतर कर न जाने कैसी धुन्ध पृथ्वी के छोरों में समाई जा रही है। घरों के भीतर जागते नर-नारियों को पीड़ा चबाये डालती है। अपनी हिन्सक वेदना से वे लहू-लुहान हो रहे हैं। उनका घृणा से तपा रक्त रात की ऐसी शीत में भी ठंडा नहीं होने आता। बीच बीच में अफ़सरों के तम्बुओं से आ आकर सिहरा देने वाला भीषण अट्टहास वे सुन रहे हैं जो अभी तक शराब के दौर में डूबे गिलास पर गिलास खाली किये जा रहे हैं। रात के ये प्रेत जैसे प्रहर दरवाजे बन्द होने पर भी उन्हें कितना आतंकित कर रहे हैं! मकानों की परछाईं के घने अंधकार में कानाफूसी करती प्रगाढ़ नीरवता को दहला कर जब ये अवाजें आती हैं तो लगता है जैसे भूत-लोक की शोषक शाकिनियाँ हैं जो वायु-तरंगों पर अपने रक्तपिपासु मुँह खोले—जबड़े बाये चली आती हों। ऐसी सर्दी में भी उन सतीत्व-भ्रष्ट स्त्रियों का शरीर जल रहा है·····मानों वे आग पर बैठी हैं। पापियों के बलात्कार की नरकानल उन्हें दहका दहका कर तंदूर बनाये दे रही हैं···वे अपने आप में भन्ना रही हैं। घरों के भीतर कोई किसी से बोल नहीं रहा ···कोई किसी से आँख मिलाने की क्षमता भी अपने भीतर नहीं पा रहा। सब अपने अपने निर्दयी शिकंजे में कसे अपने आपको ऊपर उठाने की चेष्ठा करते हैं फिर अपने ही भीतर धँस जाते है। जिस नृशंसता ने उनके शरीर-मन को इस प्रकार चबाया है वह उनके फेफड़ों को भली भाँति साँस लेने का कार्य तक नहीं करने देती। उनका तन, मन, आत्मा सब सुन्न हैं—वे एक

दूसरे की ओर देखकर भी देख नहीं पाते। स्त्रियाँ अपने अधो देश को ही काट कर फेंक देना चाहती हैं ·····पुरुष जिनके सामने उनके घर की नारियों पर एक एक, दो दो, नहीं दरजनों बलात्कार हुए हैं आँखों में पानी भरे एक अति-मानवीय प्रयास द्वारा अपने शरीर की कँपकँपी रोकने का यत्न कर रहे हैं। अपनी फड़कती कनपटियों को दोनों हाथ से दबाये वे सिर गड़ाये भूमि की ओर दृष्टि स्थिर किये बैठे हैं। रह रह कर उनकी प्रस्फुट, घुटी कराहें उनके गले के छेदों से झाँक कर भयानक ऐंठन से मरोड़ें ले उठती हैं। उन के स्नायु भीषण तनाव से टूटे जा रहे हैं ··ऐसा तनाव जो रह रहकर दिमाग़ को बेहोशी की शून्य गति में डुबोने लगता है। कैसी करौंचने वाली पीड़ा उन्हें बेज़ार किये हैं·····बिल्कुल बेज़ार·····

दो घंटे रात और बीती। बाहर से आने वाली कोलाहल अट्टहास की आहट रुक गयी है। सब जाग रहे हैं पर काले, कठोर, कुरूप, जाग्रत स्वप्नों में वे अपने अस्तित्व को भूल भूल जाते हैं। बीच बीच में भर्राहट भरे स्वर में कुछ कहते हैं पर अपनी बुदबुदाहट का अर्थ वे स्वयं नहीं लगा पाते। बाहर ठंड बढ़ती जाती है। अगहन की रात ओस के रंगीन खंभों पर अपने को टिकाये तारिकाओं की स्थिर टिमटिमाहट में न जाने किस झिलमिली चाँदनी का स्वप्न देख रही है···स्वप्न···स्वप्न घरों के भीतर बैठे अर्ध जाग्रत, अर्ध-सुषुप्त प्राणी उन कुटुम्बी लाशों की चिन्ता कर रहे हैं···उनका खूँदता स्वप्न देख रहे हैं जिन्हें उठाकर उन्हें लाने नहीं दिया गया···जिन्हें कुत्तों-सियारों का शिकार बनने के लिए राजपथों पर छोड़ने को उन्हें मजबूर होना पड़ा। किसी पिता, माता, पत्नी, भाई, बहिन का दिल नहीं मानता तो वह खिड़की खोलकर चन्द्रमा के चारो ओर झलक रहे धुँधले मंडल की रोशनी में दूर आँख गड़ा कर अपने प्रिय-जन की लाश देखने का यत्न करती हैं। अंधकार की सूचीभेद्य घनीतिमा में उनकी आँखें कढ़ते कढ़ते गलकर गिरने लगती हैं पर दिल पर रक्खे ममता के अंगारे हवा के पाले, बर्फीले पन से

ज़ख्मी नहीं होते···उनकी दहक मे बल नहीं पड़ता···वे वैसे ही सुलगते जाते हैं···धधकते जाते हैं···आकाश के मटमैले, दूधिया, नीले, अति क्षीण चन्द्रमंडल की तरह उनके दिल रह रह कर चिनकने लगते हैं। बाहर ओस में जमे पड़े रक्तपंकिल, भूलिप्त शवों की सुधि उन्हें रह रह कर उद्ग्रीव, बाहर फैलन वाले भूरे भूरे कुहरे की तरह म्लान कर देती है। उन्हें लगता है यमदूतों का जगली जानवरों जैसा दल हू हू करता बाहर घूम रहा है। एक भेद-भरे भय से उनकी अस्थि-अस्थि, मजा मजा काँप उठती है। बर्फीली चमक उनके भीतर घुम घुम जाती है। सड़क के किनारे खड़े पेड़ों की भयावनी छायायें उन्हें निगलने के लिये दौड़ती नज़दीक आती जान पड़ती हैं। चारो ओर से अपने ऊपर ढही पड़ती मरघटी निर्जनता उन्हें पागल कर हवा में नाचने लगती है। उन्हें लगता है आकाश काँप रहा है··जमीन काँप रही है·· ···उनके घर की दीवारें घरों के दरवाजे-खिड़कियाँ काँप रही हैं। विचित्र तेज, तुन्द झंझावात भयावने राक्षस की तरह बाहर मैदानों में पड़ी लाशों को निगलता हुआ उनकी तरफ बढ़ा आता है·····उन्हें निगलने को मुँह बाये। अविजानित भय से सिहरते हुए वे आँखें बन्द कर लेते हैं।

रात में अन्धकार के पर्दे में छिप छिप कर और भी कितनी आवाजें हैं जो चक्कर खाती हुई दब दबकर रह जाती हैं। एक घर के अन्दर एक गर्भवती स्त्री की कराहें हैं जिस पर सैनिकों ने कई बार बलात्कार किया ··जिसे उस समय से ही प्रसव वेदना हो रही थी··· रक्त-स्राव भयानक, पीड़क दर्द के साथ हो रहा था। उसके पति को पत्नी की रक्षा करने की चेष्टा में गोली मार दी गई। स्त्री की चारपाई के पास उसके बूढ़े सास-ससुर बैठे मूक, अनुभूति-शून्य नेत्रों से कभी भूमि···कभी छत की ओर देखते हैं। सामने दो तीन बच्चे भय मे सिमटे पड़े हैं जो सोते सोते भी अज्ञात आवेग से उत्कंठित, आशंकित होकर अपनी पिल्लों जैसी आँख खोल देते हैं। पर मा के चेहरे पर पशुत्वपूर्ण भीषण वेदना देखकर वे भय से आँखें मूँद

लेते···जैसे जो कुछ हो रहा है वह उनके रोंगटे खड़े कर उन्हें भयावह उत्तेजना का संचार दे रहा है। दूसरे मकान के भीतर महीनों से बीमार पड़ी उस विधवा मा का रुँधा रुँधा विलाप है जिसके दो नवजवान लड़कों को गोली मार दी गई है···जिसकी एक विधवा पतोहू शाम से उसकी चारपाई की पट्टी के नीचे बेहोश पड़ी है···बीच बीच में होश में आ जाती है···फिर बेहोश हो जाती है दूसरी विधवा पतोहू लापता है। या तो सैनिकों की व्यभिचार-लिप्सा का शिकार हो मर गई है या ग्लानिवश अपना मुँह न दिखा सकने के कारण कुएँ में कूद मरी है या अपनी लाज बचाने के लिये भाग निकली है···कहीं दूसरे गाँव की ओर भाग निकली है। मा की झुर्रियाँ पड़ी सूखी सूखी खाल भीतर से उमड़ते क्रन्दन से जलमय हो उठी है। पर यह पानी आँखों से बह नहीं पाता—भीतर भीतर भाफ़ बनकर उफनाता—धुँधआता रहता है। एक घर में दस वर्ष पहले विधवा हुई मा वृद्ध श्वसुर की गोद में मुँह छिपाये रँभाती गाय की तरह लम्बी लम्बी बैठी है जिसके दस और चौदह साल के दो बच्चों को अकारण गोली से उड़ा दिया गया है जिनकी लाशें उठाने के लिये बढ़ते बूढ़े दादा को गोली मारी गई है, जो उसकी कनपटियों को सनसनाती हुई दूसरे सिरे पर खड़े एक नवयुवक को लगी है, जो कटे रूख की तरह फौरन गिर पड़ा है। मृत्यु सफेद बगूलों के रन्ध्रों से छाया की तरह रेंग रेंगकर बाहर निकल रही है·····घरों के भीतर अर्धमृत पड़े इन शेष बचे हतभागों को रह रह कर झकझोर जाती है। उसके शक्तिशाली पंखों की आवाज़ घरों के ऊपर मँडराती उसकी उड़ान में सुनाई पड़ती है। कभी कभी बीच में एक दो लम्बी चीखें सुनाई पड़ जाती हैं पर वे अपवाद रूप हैं। मृत्यु के बर्फीले बादलों में आधे आधे दबे घर जैसे अपने भीतर के अंधड़ों के आन्दोलन को अधिक से अधिक पिये ले रहे थे। गाँव के बीच जोगिन की तरह लट छिटकाये घूमती मृत्यु का नीरव पगचाप सुन सुनकर बिना बदला लिए ही एक अर्थहीन शीतलता से लोगों के कलेजे ठंडे होते जाते थे। बड़ी हैबतनाक

जड़ता थी जो उन्हें घेरे थी।

...सहसा चारो ओर के मौन को दो तीन बहरा कर देनेवाले धड़ाकों ने तोड़ दिया। 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' की गगनभेदी ध्वनि से वायुमंडल काँप उठा। घरों के भीतर लोगों के आश्चर्य से स्थिर पड़े मुँह आप से आप खुल पड़े। सैकड़ों पगों की सशक्त चाप ने रात्रि के सूनेपन को विकंपित कर दिया। नई शक्ति से निकले इस नये जन्म के नारे ने गगन को झकझोर दिया। गाँव के बाहर के मैदान में.....स्कूल के कम्पाउन्ड में भयानक हलचल मच गयी। घटनाये इतनी तेजी से घटने लगा कि लोग अपने घरों में स्थिर न रह सके। अपने अपने दरवाजे खोल कर खड़े हो उस ओर कान लगा स्थिति को समझने की चेष्टा करने लगे जिधर से गोलियों की आवाज़ आ रही थी.....लारियों के बड़े बड़े सर्चलाइट तमक कर जल उठे थे ...अब वहाँ जोरों की लड़ाई शुरू हो गई थी। चारों ओर की पगडंडियों से लोग दल के दल आकर इकट्ठ हो रहे थे उनके हाथ में मसालें थी.....लाठी, बल्लम, भाले, गँड़ासे, बन्दूकें, रायफलें, तमंचे, तलवारें थीं। गोलियों की पड़ पड़ बौछार धीरे धीरे बन्द हो रही थी। पर 'मारो-काटो' की आवेग-भरी ध्वनियाँ बराबर आ रही थी। डंक की तरह निकली किरचों से, भालों, बल्लमों, तलवारों से गाँव के युग युग के निशस्त्र जवान भौचक्के पुलिस वालों और फौजियों पर बढ़ बढ़कर हमला कर रहे थे। गोरी फौज पूर्ण रूप से सजग हो मशीनगनों पर अधिकार कर उन्हें चलाने लगी.....फायरिंग होने लगी। धड़ाधड़ गोलियाँ बरसने लगीं। साथ ही सैकड़ों लाठियों का बरसना.....लोगों का चीत्कार कर कर आहत हो हो गिरना गोलियों की पटापट से भी स्पष्ट सुनाई दे रहा था। सोये हुए सैनिक घबड़ाहट में कूद कूद कर खड़े हो गये थे पर अस्त-व्यस्त फौजी वर्दी को छोड़ कर उन्हें... ...कुछ मिल न रहा था। उनकी भरी रायफलें पहले ही बागियों के हाथों में पहुँच चुकी थीं और वे उनके सीनों को ताक ताक कर उन्हें चला रहे थे। फलस्वरूप वे चारो

ओर फैले अपने अस्त-व्यस्त सामान से टकरा टकरा कर, घायल या निष्प्राण होकर गिरते जाते थे। दिशायें आग उगल रही थीं। अब गाँव से लोग अपने दरवाजों पर खड़े न रह सके। युवक लाठियाँ ले लेकर आगे बढ़े—स्त्रियाँ और वृद्ध उन्हें रोकते ही रह गये। घबराये हुए बौखलाये हुए अफसर रात की पोशाक में रिवाल्वर लिये इधर उधर घूम रहे थे। शराब का नशा अभी जोरों पर था। स्वप्न में भी इस बात की आशंका न थी कि युग-युग से दासता के बूटों के नीचे पिटते रहनेवाला ग्रामीण समाज आकर उनकी मशीनगनों और टामीगनों पर हमला करेगा। स्थिति को ठीक प्रकार से समझकर जब तक वे फायर करने की सोचते तब तक भालों और बल्लमों ने आकर उनकी छातियों को छलनी कर दिया। उनके हाथों से रिवाल्वर छूट छूटकर आक्रमण-कारियों के हाथ में आने लगे ·····भुनाई शुरू हो गई।

सदियों का बिखरा बल, सदियों की छिपी ताकत आज सिमट-सिमटकर, बिजली बन बनकर प्रकट हो रही है। ग्रामीणों के संगठन का उनके सीधे आक्रमण का जादू आज प्रकट हुआ है। आज वे फौज और पुलिस के धावा करने की प्रतीक्षा में बैठे रहकर केवल आत्म-रक्षा की नहीं सोचते। अंगरेज़ी साम्राज्यशाही के खिलाफ उनकी लड़ाई ने एक नया···बिलकुल नया रूप धारण किया है। पहले पुलिस मारती थी·····निर्दयी अफसर उनके धन, दौलत, सम्मान, मर्यादा पर प्रहार करते थे ··वे सह लेते थे। आज उनके भीतर जागृति की · प्रतिहिंसा की लहर उठी है। आज वे उन्मत्त हैं—शत्रु के प्राण के····· उनके खून के प्यासे हैं। उनके देशवासियों पर हुये अत्याचारों ने उन्हें उत्तेजित कर दिया है। आज वे अहिन्सा में विश्वास करने वाले देवता नहीं ·····आज वे शत्रु के आघातों से तिलमिलाकर बाँ बाँकर रह जाने वाले पशु नहीं। आज वे मानव हैं·····आज़ादी की भूख से दर्द भरे मानव ·····फौजियों को विश्वास न हो रहा था कि अपने बिखरे ग्रामीण हथियारों को लेकर ये निरीह,

सदियों की गुलामी से पतित देहाती उन पर संहारक धावा बोल सकते हैं। जो दौड़ दौड़कर उन्हें मालिक कहने में··· ··हुजूर, सरकार, अन्नदाता कहने में होड़ लगाते थे—उनके दामन चूमने के लिये लालायित रहते थे वे सब दिनों का बदला लेने के लिये उमड़ आये हैं। बीच बीच में 'हिन्दुस्तान आज़ाद हो', 'महात्मागाँधी की जय', 'वन्देमातरम्' और 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' के दहलानेवाले नारे निकल रहे थे। ये नारे केवल निष्प्राण कंठ स्वर न थे·····आज उनके भीतर किसी ने ज्वाला का···सर्वभुक ज्वाला का संहारी आसव घोल दिया है। शत्रुओं को भागने की भूमि नहीं मिल रही। मशीनगनें खोलकर वे आग बरसाने की चेष्टा करते हैं पर सैकड़ों लाठियाँ, बल्लम, भाले, उन पर एक साथ टूटते हैं। उनकी फड़कती लोथें लारियों से गिर गिरकर ज़मीन पर लोटने लगती हैं। पीछे के गाँव के नौजवान आकर मिल गये हैं! दिन भर की मुर्दनी और अशक्तता क्षणों में गायब हो गई है। यह जाग्रत जनता का सिंह अभिमान है··· यह विद्रोह से ऊपर उठती मानवता का विस्फोट है जिसकी सीमा नहीं मिलती, जो केवल भभकना जानता है·····केवल भभकना! जो ज्वालामुखी के लावे की तरह गतिशील, विदारक है। प्रतिशोध की धौंकनी ने इस आग को और साकार कर दिया है। महमूद, प्रतिमा आरती, महेन्द्र, जयनाथ, बलराज, मधुसूदन आदि जनता के नेता रह-रहकर अपने प्राणद आह्वानों से उन्हें और उत्तेजित कर रहे हैं। प्रतिमा रणचंडी बनी चुन चुन कर संहार कर रही है मानो काल ने आततायियों को निगलने के लिए अपनी जीभ फैलाई है जो सिकुड़ने का नाम नहीं लेती·····फैलती जाती है·····दिग्दिगन्तों में फैलती जाती है। आग की धारा है यह जो सदियों की दबी आहों के विस्यूवियस से फूटी है। इसकी विकरालता की उपमा नहीं है। वीर रस की सारी उदभावनायें इसका वर्णन करने में असमर्थ हैं।

साम्राज्यवाद के हत्यारों का दल आक्रमण का उत्तर देना चाहता है·····अपनी जान बचाना चाहता है·····इस बार प्राणों के बचने

पर अगली बार इन गाँवों को आमूल फूँक देने का निश्चय करता है। पर अपनी छीनी रायफलों-मशीनगनों से—किरचों-तलवारों से आहत हो हो भूमि पर लोट रहा है। ब्रेन तोपें इस्तेमाल करने की नौबत नहीं आती। कितने लोग जान से मर चुके हैं इसकी गणना रात्रि के अंधकार को—चीत्कार को चीरती हुई मशालों और लारियों की बैटरी के प्रकाश में नहीं की जा सकती। उसके लिए सूर्य के प्रकाश की अपेक्षा है·····दहकते, जाज्वल्यवान रवि के प्रकाश की। रायफलें गरम शीशा उगल रही हैं। फौजी अफसर जानते हैं और कुमक आने की सम्भावना नहीं। उनके दिल बैठे जा रहे हैं। प्रति-क्षण उन्हें सर्वनाश दिखाई देता है। हिम्मत बाँधकर अपने आदमियों को ललकारते हैं। पर उनकी ललकार के उत्तर वे ढेर हो होकर गिर रहे हैं। महमूद और बलराज, महेन्द्र और जयनाथ के हाथों के तमंचे प्रतिक्षण ताक ताककर गोलियाँ बरसा रहे है। पर उनकी गति को अवरुद्ध होना पड़ता है। ऐसा घमासान मचा है कि अपने आदमियों और बैरियों में भेद करना कठिन हो रहा है। डर लगता रहता है कहीं अपनी गोली अपने ही आदमी को घायल न कर दे·····मार न दे। सुरक्षित दूरी पर रहकर लड़ी जाने वाली, पहाड़ों, पेड़ों, दीवारों की ओट से मृत्यु की बाढ़ गिराने वाली लड़ाई यह नहीं। यह सामने से शत्रु को धराशायी करने·····उसे सदा को नेस्तनाबूद कर देने वाली या अपने को ही मौत के भाड़ में झोंक देने वाली लड़ाई है। जितने लोग पर्वतपूर से निकले हैं शत्रु को मारने या स्वयं मृत्यु का आलिंगन करने की शपथ खाकर निकले हैं। वे जान गये हैं अन्तिम संघर्ष ऐसा होगा····अन्तिम स्वतन्त्रता की लड़ाई ऐसी ही होगी। सिर देते देते ही दासता के बन्धन कटेंगे। एक-एक गाँव, एक-एक शहर, एक एक प्रान्त को अपने अधिकार में पाने और रखने के लिए ऐसे ही घमासान युद्ध करने होंगे। स्वतन्त्रता का जन्म भालों की नोकों पर होता है·····तलवारों की धारों पर··· गोलियों की आग उगलती हुँकारों पर होता है। संतों के जादू टोने पर

उन्हें आज विश्वास नहीं रह गया है। जनशक्ति·····संगठित जनशक्ति—प्राणों का सौदा करने वाली·····कफ़न की चिन्ता न कर नंगे मरघट का साज सजाने वाली जनशक्ति ही खोई आज़ादी छीन सकेगी। महमूद की आड़ में खड़ी आरती·····घूम घूमकर, बिजली की तरह संहार का चीर पहने, धुँधुआते विनाश की मूर्ति बनी प्रतिमा, अपने को बचाने की चिन्ता न कर साथियों को ललकारता हुआ, ताक ताककर आक्रमण करता हुआ महमूद सब दीवाने हो गये हैं। मृत्यु का भय मिट जाने पर मानवता का यही रूप हो जाता है।

दो घंटे इस प्रकार लड़ाई होती रही। इस बीच कितने लोग मरे, हताहत हुए इसका हिसाब नहीं। रात का चौथा पहर होते हुए भी—सर्दी का पूरा दौर होते हुए भी पसीने की धार की छोटी छोटी लकीरें लोगों के गले से फूटी पड़ती थीं। बड़े मैदान के चारों ओर के सीमाहीन खेत जैसे इस ओर सिमट कर आ गये थे। हथियार छोड़ छोड़ कर फौजी सिपाही और पुलिस वाले भाग रहे थे। गोरों की टुकड़ी अब तक बराबर जमी थी—गोलियों की बाढ़ छोड़ रही थी। मसालें बुझ चली थीं···उनके स्थान पर नयी जला ली जाती थीं·····जैसे साथियों के गिरने पर उनका स्थान नये साथी ले लेते थे। पाले के निर्दयी नाखून उनके अंगों में चुभते थे पर उन्हें विचलित न कर पा रहे थे। उनकी हड्डियाँ उसके लिये अभेद्य थीं। चारों ओर खून ही खून था ···गहरा लाल लाल ·····कुछ देर बाद काले धब्बों के रूप में परिवर्तित हो जाने वाला खून। सबकी आँखों के सामने वही नाच रहा था। और कुछ दिखाई ही न देता था। लोगों की थकी देहों के भीतर भी खून ज़ोर ज़ोर से फड़क रहा था। विचित्र दृश्य था! लोग घायल थे ·· खून की धारायें उनकी देहों से बह रही थीं फिर भी शत्रु की जान लेने पर तुले थे। अन्त में गोलियों की बाढ़ झेलते झेलते···जानें देते महमूद की टुकड़ी गोरों पर जा टूटी। न जाने कितने लोग इस बीच गिर चुके थे। सुकरू दोनों हाथों में मसालें लिये लिये दस मिनट पहले गोली के शिकार हो चुके थे। उनके गिरते ही अमरसिंह नामक व्यक्ति

ने दोनों मसालें उठा ली थीं। पन्द्रह मिनट बाद वह भी ढेर हो गया। जो अधिक जख्मी हो जाते थे वे शराबियों की तरह लड़-खड़ाते किनारे खड़े हो जाते थे। छोटे-मोटे जख्मों की लोग परवाह न करते थे। इस बार के हल्ले ने गोरों को परास्त कर दिया। विद्रोही उन पर विद्युत वेग से टूट पड़े। उनकी आँखों के सामने अभी अभी न जाने कितने साथियों की जान इन ज़ालिमों ने ली है। अफ़सर पहले मारे जा चुके थे। सिपाहियों ने जिधर रास्ता पाया भागना शुरू कर दिया! जो घायल थे वे तेज दौड़ न पा रहे थे। गिर-पड़ कर सँभलते सँभलते भी उनके पाँव जल्दी जल्दी न उठ रहे थे, पर उनकी ओर ध्यान देने का क्रान्तिकारियों को अवकाश न था। वे इस समय गोरे सैनिकों पर टूट कर उन्हें समाप्त कर देना चाहते थे। जो भाग रहे हैं उनका पीछा कहाँ तक किया जाय! सामने की काली पीली सफेदी में वे विलीन होते जा रहे थे। सहसा एक गोली ने आकर बलराज का वक्ष विदीर्ण कर दिया। महमूद ने उन्हें गिरते देखा। आरती की ओर मुड़ते हुए·····'भैया को सँभालो' कहता महमूद गोरों पर पिला पड़ा था। उसके कसरती फौलादी हाथ तलवार की बाढ़ हो रहे। आरती ने दूसरे सिरे पर भैया को गिरते देखा। बढ़ कर वह उधर निकल गई·····

❀ ❀ ❀ ❀

पौ फटते फटते विद्रोहियों की विजय हो चुकी थी। सैनिक अधिकाँश मारे जा चुके थे या प्राण लेकर भाग गये थे। विद्रोहियों की ओर से भी सैकड़ों मरे थे। गाँव के एक मकान में बलराज के शव को घेरे लोग खड़े थे। प्रतिमा का पता नहीं लग रहा है। महमूद उसकी तलाश में चारो ओर घूम रहा है। महेन्द्र और जयनाथ की लाशें ढूँढ़ निकाली जा चुकी हैं। आरती बलराज की मृत देह गोद में लिए बैठी है। उसकी आँखों के अन्दर से असंख्य रेगिस्तानों का उजड़ापन झाँक रहा है। उसकी दाहिनी जाँघ में गोली लगी है। रह रह कर दर्द की टीस तेज भाले की तरह छेदने लगती है। उसने कस

कर पट्टी बाँध रखी है। गाँव के सारे लोग वहाँ जमा हैं। स्त्रियाँ, बच्चे, बूढ़े, सब घेर घेर कर इन ज्ञात और अज्ञात शहीदों को श्रद्धा की मूक अंजलियाँ प्रदान कर रहे हैं। युद्ध की उत्तेजना शान्त हो चुकी है पर अन्त्येष्टि के लिये पड़ी लाशों का निर्वेदपूर्ण परिताप अभी बाकी है। लाल-काले धब्बों की तरह पड़े शव मानों चुनौती दे रहे हैं·····अपने विनाश के कारण का संहार करने के लिए ललकार रहे हैं। आरती की आँखें भाई के शव की ओर से ऊपर उठती हैं तब महमूद को खोजने लगती हैं। खून की लकीरें उसकी चाँदनी जैसी सफेद आँखों में साफ दिखाई दे रही हैं। चारों ओर घने जंगल के ढूँठे वृक्षों की तरह जनसमूह खड़ा है घेरे·····छोटी छोटी झाड़ियों जैसी बालिकायें, बालक·····खिची हुई,गर्म, निस्तब्ध कँटीली झाड़ियों जैसी नारियाँ इस मिमटे हुए शव के बिखरे····· चारो ओर परिव्याप्त व्यक्तित्व को अपनी प्रणत अंजलि भेंट करने आई हैं। बलराज के मुख पर एक बिगड़ी हुई····· दर्द भरी मुस्कुराहट है जो रुके हुए प्रतीक्षमाण प्राण के निकलने···अन्तिम विदा ले शून्य में बिखरी हताशा के क्षारपुन्ज में एकाकार हो जाने के आनन्द की द्योतक है। आरती उस उनींदी उनींदी मुस्कराहट को देखती है··· देखती है उसके भीतर से फूट फूट कर प्राची में लहराने वाले अरुण अनुराग के ज्वलन्त आत्मत्याग को····· उसकी परिपूरक जीवन्त उष्णता को·····जीवन्त महाप्राणता को·····

महमूद ने दूसरे साथी के साथ प्रतिमा का शव लिये प्रवेश किया। गोलियों से उसकी देह बिंधी है जैसे राष्ट्रीय प्रतिहिन्सा की दानवीय भूख उसके शव के आरपार फैलकर मृत्यु की भव्य पवित्रता को उत्पीड़ित कर रही हो। महमूद के कंधे में गोली लगी है। उसका कुर्ता रक्त से लाल है। उसकी आँखों में आँसू नहीं है। उसके होठों पर कोई कारुणिक अभिव्यक्ति नहीं। चुपचाप उसने प्रतिमा के शव को बलराज के बगल में लिटा दिया। आरती प्रतिमा को देखकर रो उठती है। घंटों के रुके-बँधे आँसू टप टप कर गिरने लगते

हैं। महमूद चुपचाप किनारे खड़ा हो दोनों बुझी जीवन-ज्योतियों की अकंपित लाशों को देख रहा है·····देखता जाता है ····पर जैसे देख देख कर भी नहीं देखता·····नहीं देखता ·····

आकाश में फैलती सूर्य की किरणें अपने विमल पथ के समान चमकती रंगीन झिलमिलाहट लेकर फैल रही हैं। आरती वैसी ही रो रही है पर महमूद के आँखों में आँसू नहीं। सूर्य-किरणों के विविध वर्णों की आभा में लीन होने वाली उसकी चितवन जैसे आरती की आँखों की नमी की ओर देखना नहीं चाहती। रह रह कर वह वीणा के खिंचे तार की तरह कड़ी हो जाती है। प्रतिमा के चेहरे की ओर उसकी दृष्टि जाती है तो उसकी देह के किनारे किनारे जमे रक्त की गहरी सुर्खी—अप्राकृतिक चमक को देख कर वह रोता नहीं····· नम नहीं होता···आँसुओं से खुश्क अपनी रिक्त आँखों से उस ओर ताकता रह जाता है·····सारा दृश्य अपने भीतर खींचता रह जाता है। खुले घावों से चिपके हुए उसके बाल जिन्हें जमे रक्त ने कस रखा है। उसकी अन्तिम तड़प और यातना का गवाह यह खुला बहा रक्त जो पपड़ीला रूप लेकर एक विकृति भरा, अति स्थिर, मृत्यु का टुकड़ा बन गया है। उसके भिचे हुए होठों की दृढ़ कठोरता मरने के बाद भी कितनी आत्मपूर्ण और प्राणद प्रतीत होती है! महमूद की पनिहाई आँखें उसकी बेरंग बरौनियों से बाहर निकलने के लिये बेचैन होने लगा। पारदर्शी मरकत-आलोक के धराशाई पुनीत गुम्बद की भाँति प्रतिमा पड़ी थी जिस ऊपर सूर्य की किरणें विजय-द्वार की तरह फैलती थीं।

महमूद ने चारो ओर घेर कर खड़े लोगों की ओर देखकर कहा—'हमें बहुत काम करने हैं। बैठकर मातम करने का समय नहीं। इन बहादुरों की लाशों को ठिकाने लगाना है। फौज का सामान यहाँ से हटा कर दूसरे गाँवों में पहुँचाना है। मरे दुश्मनों की लाशें हटानी हैं। जो सिपाही भागकर इधर उधर जा छिपे हैं उन्हें गिरफ्तार करना है। खामोश खड़े रहने से काम न चलेगा।'

सब लोग जैसे होश में आ गये·····मृत्यु की गोद से निकल कर जीवन के कर्मक्षेत्र में जाग उठे। आरती आँसू पोंछती एक ओर उठ कर खड़ी हो गयी। पर बार बार कुर्ते के दामन से पोंछने पर भी आँसू न रुकते थे। महमूद ने कहा—'रोती हो! आरती! देर से रो रही हो तुम! बहादुरी की मुजस्सिम शहादत के सिरहाने खड़ी हो रोना ठीक नहीं। हमें सौगंध लेनी है—इनके पाक इरादों की·····इनके क़ौमी वलवलों का···हमें तब तक चैन नहीं जब तक यह सूली का निज़ाम खत्म नहीं होता। इनके सूजे·····फटे फटे··· पपड़ियों से भरे होठों की मुस्कान देखो·····देखो इनकी पेशानी पर जमे खून की गंगा की धार! इस गर्म खून की एक एक गाढ़ी बूँद की सौगन्ध जो छाती के भीतर उफन उफनकर बाहर आती है आरती! शहादत की इन्हीं मोटी पर्तों की कसम, आरती! रोओ मत। रोना गुनाह है। प्रतिज्ञा करो ···दिल में फौलादी कस्द करो! जब तक जियेंगे आज़ाद होकर। गुलामी में फिर न लौटेंगे। मर कर भी मुल्क की सियासत दुश्मन के हाथ न जाने देंगे। यही इन शहीदों को हमारा तिरंगा सलाम है।'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' इन्कलाब जिन्दाबाद···'

आरती ने दीप्त कंठ से कहा—'हिन्दुस्तान आजाद हो····· अँगरेज़ों का नाश हो।'

सैकड़ों कंठों ने क्षुब्ध स्वर से दोनों के नारों को दोहराया। महमूद ने टुकड़ियाँ बना बनाकर लोगों को आदेश देना शुरू कर किया। उन्होंने ने अपने अपने काम पर जाना शुरू किया। वहाँ से तीन चार मील पर गंगा का जंगली घाट था। सारी लाशें एक एक कर वहाँ भेजनी है। बैलगाड़ियों में भर भरकर रवाना कराना है। साथ ही फौज के छूटे सामान पर पहरा भी देना है। कहीं भागकर लौटे सिपाही अवसर पाकर फिर न आजाँय और लारियाँ लेकर चलदें। डेढ़ सौ आदमी, अस्त्र-शस्त्र से तत्पर, मैदान में पहरा देने लगे। शेष लोगों ने मृतकों को गंगा में बहाने के लिये ले जाना शुरू किया। सभी भीतर भीतर अजेय आत्म-विश्वास अनुभव कर रहे थे। कल गाँव मौत और विनाश के

कोहरे में डूबा हुआ था आज जीवन की चढ़ती धूप में खड़ा उल्लास और प्रकाश की साँसें ले रहा है। यह स्वाधीनता का जलता अहसास है·····प्रज्वलित परिपूति है····· पर आरती दोनों लाशें लिये वहीं बैठी है। महमूद बाहर घूम घूमकर सब का संचालन कर रहा है। आरती बैठी दोनों लाशों से मन ही मन बात कर रही है। गाँव की स्त्रियाँ, बच्चे एक एक कर जा चुके हैं। उस मकान के लोग भी अपने काम में लगे हैं। आरती बैठी है—चारो ओर से शून्य····· शून्य·····बिलकुल शून्य-शून्य से भी कम ऋण—साकार ऋण जो स्मृतियों की विवेचना और विफलता को रह रहकर कुरेद रही है। जैसे कैलेन्डर के क्रम में गड़बड़ी नहीं होती·····सोमवार के बाद ही मंगल आता है वैसे ही जीवन की बेतरतीब घटनायें·····भाई के स्नेह की एक एक याद स्मृति के अनुक्रम मे कैसी तरतीब और व्यवस्था के साथ आती है। आरती का हृदय चाबुक खा खाकर अड़ अड़ जाने वाले घोड़े की तरह विरत एवं निष्कंप है! दोनों शवों के चेहरों पर खिची, क्रान्ति की खूनी कराल, अदम्य, दृढ़ रेखाओं को देख देख वह उनके जीवन की मूलाधार जीवित यथार्थतायें अपना रही हैं। घटनायें कितनी द्रुतगति में अपने समय मे पहले ही घटित हो रही हैं। उदारता और साहस की मूर्ति अपने भैया बलराज को आरती कभी समझ न पाई। कैसी अचल श्रद्धा उन्हें सदैव अपने विश्वास पर रही ·····कैसी अचल, चट्टानी, चीड़ के चौड़े तने वाली, भविष्य के बूँद का उठते बैठते उन्माद पिलाने वाली। दुनिया की दृष्टि में जो गर्हित, भयानक, असफल रहा वही उनके निकट आत्मा के आलोक और आस्था की परिपूर्णता में डूबा हुआ था। आरती को लगने लगा—'भैया मरे नहीं···भैया मर नहीं सकते। क्रान्ति के पीछे पीछे वे चले आ रहे हैं····· बराबर चलते आवेंगे। मृत्यु की जो अपदार्थ, मानसिक, अन्धकारमय, भयानक छाया उनके ऊपर वह देख रही है वह उसके मस्तिष्क की कमजोरी है। वे असाधारण····· उनका गौरव असाधारण है···उनका जीवन और जयनाद असाधारण

है···वे महान हैं·····उनकी बहन होने का उसे अभिमान है। आरती भावावेश में आ बलराज के पैर पर सिर रखकर, मूर्ति के सामने श्रद्धानत पुजारिन की तरह बैठ गयी। वह रो रही है·····महमूद के आने के पहले जो भर रो लेना चाहती है। महमूद के सामने वह रो नहीं पाती। पर नारी होकर जो रोयी नहीं वह अपने स्वभाव की प्रेरणा को खो बैठी। उसके आँसू उसे धक्का दे देकर भागते प्रतीत होते हैं। इन्हीं के प्रेम का उन्माद जड़ता से जीवन की रक्षा करता है। अपने छोटे से जीवन में ही आरती ने कितने गोपनतम कोने और मोड़ नहीं देख डाले। कैसे कैसे आनन्दों और दुखों के बीच से होकर वह गुज़री है। मधुरता-विषमता दोनों के स्वाद उसने देखे हैं। कैसी दुरूह अनुभूति रही है उसकी! चट्टानों की दुखमयी, अभिशप्त चेतना, सरिता का द्रुतगामी प्रारब्ध, ज्वालामुखी की आग्नेय वृष्टि उसके अपरिमेय हृदय के कितने निकट रहे हैं ये सब! आज उसकी आत्मा अनुभूति की दंश-भरी गहराई में दफ़नाई जा रही है। प्रकृति की तरह अडिग, शान्त, आत्मतुष्ट पड़ी यह लाश आरती को जीवन की बरसाती रात की बर्फीली पहाड़ी की तरह अवदात और अनन्त जान पड़ती है। मानो कोई पूजनीय दिव्य सत्ता मानव रूप में प्रकट होकर आरोहण कर चुकी हो। आरती प्राणान्तक तृष्णा, अत्यन्त दारुण और आत्मीय अग्नि में जल जल क्षार हुई जा रही है ·····उन्मत्त हो होकर वह बलराज के सिर से और पैरों से लिपट लिपट जाती है। जीवन में जो जब सत्य था उस समय उससे इस प्रकार नहीं लिपटी·····आज जो मिथ्या स्वप्न बन गया है उससे इस प्रकार रह रहकर टकराना आरती को और बिडम्बनापूर्ण जान पड़ता है ···और भी·····और भी। मनुष्य क्यों मरता है··· क्यों उसने मृत्यु का आविष्कार किया है। आरती इसे मानने को तैयार नहीं। ऐसे भी मनुष्य होते हैं·····गत के चिरन्तन भाव की तरह···जो न जन्मते हैं·····न मरते है। जो नक्षत्रों की नाईं— महानद के सलिल प्रवाह की नाईं अजर-अमर है जिनकी निकटता को

आशाओं और कल्पनाओं द्वारा उन्मत्त किया जा सकता है पर जिनकी दूरी को·····वियोग को केवल असहनीयता···एक तीक्ष्ण, असहनीय असहायता के माध्यम से ही जाना जा सकता है। इस परिमिति, सापेक्षता और अपूर्णता के पार उनकी जो विराट अनुभूति होती है वह इस पृथकता को अक्षुब्ध--मानसिक व्यग्रता को शान्त बना देती है। मन भले बुझ बुझ जाता हो पर आत्मा और ज्वलन्त हो जाती है। आँधी में दीपक बुझ जाते हैं पर तंदूर के अंगार और भभक उठते हैं। भैया का शिलीभूत मौन ही जैसे आरती की विपन्न, नग्न, यातना का उत्तर है! कैसा मर्मघाती उत्तर है यह!! सारी चेतना की बलि ले लेकर भी जो तुष्ट नहीं होता नेत्र जिसमें आँसू बहाते हैं, पर विवेक बिना आँसुओं के विलाप करता है! सत्य की कराल, नग्न धवलता जिसके जलते गहन अन्धकार को अनुप्राणित और शीतल नहीं करती! गत दिवस जैसे शून्य भ्रम की निर्व्याजता जिसे अस्थिर आन्दोलित नहीं कर पाती। आरती अब अपने को नहीं रोक पाती। बलराज और प्रतिमा के शवों के बीच सिर ढाँप कर वह फिर फूट फूटकर रोने लगी। कुछ घड़ियों में सदा को लोप हो जायँगे। यह इन्द्रियगम्य अवशेष भी तब न रहेगा·····न रहेगा·····

महमूद ने लगभग घंटे भर बाद कुछ लोगों के साथ देखा—आरती दोनों लाशों के बीच मुँह छिपाये पड़ी है। आहट पाकर उसने अपना मुँह ऊपर उठाया। महमूद ने देखा—आरती की स्वाती जैसी बड़ी बड़ी आँखें विक्षोभ के दाह से अंगारे की तरह सुर्ख हो चुकी हैं। उस की पुतलियाँ जो महमूद के जाने के समय पानी में तैर रही थीं तन्दूर के अंगार की तरह दहक रही हैं। उनमें अश्रु नहीं·····अश्रुओं में बहने वाली··· वह जाने वाली हृदय की वह तड़पन नहीं जो नमी में भीग भीग कर अधिकाधिक घनत्व प्राप्त करती है। जो बह जाने वाले आत्मदान में तन्मय होकर ऊपर उतरा उतरा आती है। महमूद ने यत्नपूर्वक अपने दोनों हाथों से आरती के कुम्हलाये मुखड़े को उठाकर कहा—'क्या सोच रही हो आरती! उठो! इन लाशों का

मोह छोड़ो। इन्हें जलाने की इजाज़त दो। हम लोग यहाँ ज्यादा न रुकेंगे। गाँव में लोग हमारा इन्तज़ार कर रहे होंगे। वहाँ चलना है। और भी काम हैं। उठो·····उठो !'

आरती उठकर खड़ी हो गई। लोगों ने यत्नपूर्वक शवों को उठा लिया। अर्थी सजाने का अवसर न था। वे धीरे धीरे गंगा तट की ओर ले चले। महमूद बलराज के पैरों को थामे था। आरती ने बढ़ कर प्रतिमा का सिर दोनों हाथों पर ले लिया। सब लोग मौन थे। किसी के कंठ से शोक-ध्वनि न निकल रही थी। आरती के हाथ काँप रहे थे पर वह यथासंभव कँपकपी रोकने का यत्न कर रही थी। महमूद गतिशील पाषाण प्रतिमा की तरह आगे बढ़ रहा था। गंगा तट पर आकर लोगों ने लाशों को पहले से बनी लकड़ियों की चिता पर रख दिया। महमूद ने दोनों के शव को लगभग दस मिनट अकम्पित दृष्टि से देखते रहने के बाद आग लगा दी। ज्वालायें ऊपर उठने लगीं। महमूद ने आरती की ओर धीरे धीरे जाकर कहा— 'गाँव चलकर धूमधाम से भैया और प्रतिमा दीदी की क्रिया करना चाहता था। पर लोगों की राय न पड़ी। मजबूरन यहीं सब करना पड़ा। तुम्हारी पीड़ा समझता हूँ ! पर मेरी दिली हालत भी तुमसे छिपी नहीं। यह मातम मनाने का मौका नहीं। शहीदों की मौत पर खुशी के आँसू बहाओ। इन्होंने मुल्क की आज़ादी के लिये लड़ते लड़ते जानें दीं। जब तक जिये शान से जिये·····दूसरों की खिदमत करते करते जिये। मरे तो ऐसी मौत मरे जिस पर परवर-दिगार को भी रश्क हो·····फरिश्ते भी जिस मौत की जलती आँच के सामने निगाह नहीं ठहरा सकते। मोर्चा हमने जीत लिया पर हमारी जीत बड़ी मँहगी पड़ी। भाभी गयीं, दीदी गईं·····भैया भी हमें छोड़ कर चल दिये। आओ हम सौगंद लें·····हम भी ऐसी मौत मरेंगे। दुश्मन के सामने अपनी इज़्ज़त अरपन करने के पेश्तर इसी तरह मौत की नींद में सदा को सो जायँगे। आरती··· आरती·····मेरे दिल पर बिजलियाँ गिर रही हैं। मगर सब बरदाश्त

करना है। होठों पर उफ न लाना। वर्ना इन वीरों की रूहों को अफ़सोस होगा·····गहरा सदमा लगेगा। वे हमें माफ़ न कर सकेंगी। हमें उनके लायक़ बनना है···उनके नक्शेकदम चलना है·····

जैसे जैसे ज्वालायें ऊपर उठने लगीं वैसे वैसे आरती का दिल आस्मान की ऊँचाई चूमने के लिये हवा के साथ सूरज के जलते तवे की ओर जाने लगा। उसकी सारी वेदना···कातरता···विह्वलता उन्हीं लपटों में भस्म होने लगी। सारे शरीर में इस्पाती दृढ़ता दौड़ गई। उसने दृढ़तापूर्वक अपने होंठ दबा लिये और महमूद के कन्धे से सटकर बोली—'तुमने बिल्कुल ठीक कहा। हम इनकी शहीदाना मौत पर अफ़सोस करेंगे तो इतिहास हमें क्षमा न करेगा। हमें इन जैसे बन ऐसे ही लड़ते लड़ते बढ़कर मौत के मुँह का नकाब उलटना है। आज हमारा सिर इतना ऊँचा हो गया है जहाँ से सारा शोक, दुख, दाह और अश्करेज़ी तुच्छ मालूम पड़ती है। तुम कभी मुझे इनकी याद में ग़मगीन न पाओगे। मैं सौगंध खाती हूँ····· तुम्हारी सौगंध खाती हूँ। तुमसे बढ़कर मुझे कौन प्यारा है·····कौन प्यारा है·····तुम्हारी सौगंध!'

'गलत बात'—महमूद ने आरती की ओर·····फिर वहाँ शोक-मग्न खड़े साथियों की ओर देखकर कहा—'बिलकुल गलत। तुम मुझे प्यारी हो ···मैं तुम्हें प्यारा हूँ··· ··पर हमें एक दूसरे से बढ़ कर मुल्क प्यारा है। हम उसी मुल्क की कसम लेते हैं·····हम उसी भारत माता की सौगंध खाते हैं। हम उस आनेवाले इन्किलाबी लाल सबेरे की कसम खाते हैं जिसकी रौशनी में आनेवाली फिज़ा जन्म लेने के लिये तड़प रही है। आज से हम एक दूसरे के लिए नहीं उस पराधीन देश के लिये हैं जिसकी खोई स्वतन्त्रता वापस पाने के लिये इन देवताओं ने वीरगति पाई·····

लकड़ियाँ काफ़ी थीं। लाशों को जलने में देर न लगी। महमूद-आरती ने दोनों चिताओं के पैरों के पास माथा टेक कर बार बार प्रणाम किया। साथियों की आँखें अब इतनी देर बाद गीली होने

लगीं। पर महमूद-आरती के उठकर खड़े होते ही सबने आँखें पोंछ डालीं·····फेफड़ों की सारी शक्ति लगाकर उच्छ्वसित कंठ से जयनाद किया—'हिन्दुस्तान आज़ाद हो'

'इन्क़िलाब जिन्दाबाद'

'ख़ून का बदला, ख़ून से लेंगे'

सबने चिता की राख लेकर माथे पर तिलक लगाये। महमूद आरती का हाथ पकड़ पर्वतपूर की ओर चल पड़ा। बाकी साथी अपने अपने कामों में लग गये। रास्ते में फैली खामोशी को चीर कर महमूद ने कहा—'आरती! कैसा लगता है? दिल बेचैन हो रहा है? मेरी तरफ देखो! मैं तुम्हारे साथ हूँ····· तुम्हारे साथ रहूँगा।'

आरती ने नयी स्फूर्ति से जगमगाता अपना मुँह महमूद की ओर फेर कर कहा—'वही, जो कल रात पर्वतपूर से यहाँ की ओर चलते वक्त लग रहा था·····उससे कहीं ज्यादा पुरजोश—जानदार··· वैसा ही जैसा उबलते ज्वालामुखी पर टकराती सुरज की किरनों को लगता है·····उससे कहीं खूनी और दाहक··· विदारक और बेअख्तियार·····ठीक वैसा जैसा गोले बरसाने के लिये बेताब तोप के दहाने को लगता है·····वैसा ही·····वैसा ही।'